ISSN : 2394 6989

अक्षय खेती

कृषि जानकारी से परिपूर्ण, खेत खलिहान को समर्पित पत्रिका

नवम् वर्ष

2022

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना

अक्षय खेती

कृषि जानकारी से परिपूर्ण, खेत खलिहान को समर्पित पत्रिका

नवम् वर्ष

2022

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर

आई. सी. ए. आर. परिसर

पोस्ट ऑफिसः बिहार वेटनरी कॉलेज, पटना – 800 014 (बिहार)

अक्षय खेती

प्रकाशक

निदेशक

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना

संपादक मंडल

अनिल कुमार सिंह, प्रधान वैज्ञानिक

शिवानी, प्रधान वैज्ञानिक

पंकज कुमार, वरिष्ठ वैज्ञानिक

पुष्पनायक, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी

रजनी कुमारी, वरिष्ठ वैज्ञानिक

तारकेश्वर कुमार, वैज्ञानिक

कुमारी शुभा, वैज्ञानिक

कीर्ति सौरभ, वैज्ञानिक

उमेश कुमार मिश्र, हिंदी अनुवादक

संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति

अनिल कुमार सिंह, प्रधान वैज्ञानिक

शिवानी, प्रधान वैज्ञानिक

पंकज कुमार, वरिष्ठ वैज्ञानिक

पुष्पनायक, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी

रजनी कुमारी, वरिष्ठ वैज्ञानिक

तारकेश्वर कुमार, वैज्ञानिक

कुमारी शुभा, वैज्ञानिक

कीर्ति सौरभ, वैज्ञानिक

प्रभा कुमारी, सहायक प्रशासनिक अधिकारी

उमेश कुमार मिश्र, हिंदी अनुवादक

नोट

अक्षय खेती में प्रकाशित लेखों में विचार, रेखांकन, छाया चित्र एवं अन्य सामग्री लेखकगण की है। इस संबंध में संपादक मंडल की सहमति आवश्यक नहीं है।

मुद्रक

डॉल्फिन प्रिंटो–ग्राफिक्स, 1ई/18, चौथी मंजिल, झंडेवालान, दिल्ली–110055

ई–मेल: dolphinprinto2011@gmail.com

सत्यमेव जयते
डॉ. हिमांशु पाठक
सचिव, डेयर एवं महानिदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Dr HIMANSHU PATHAK
SECRETARY (DARE) & DIRECTOR GENERAL (ICAR)

भारत सरकार
कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग
एवं
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली 110 001
GOVERNMENT OF INDIA
DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH AND EDUCATION (DARE)
AND
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH (ICAR)
MINISTRY OF AGRUCULTURE AND FARMERS WELFARE
KRISHI BHAWAN, NEW DELHI 110 001
Tel.: 23382629, 23386711 Fax : 91-11123384773
E-mail : dg.icar@nic.in

संदेश

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना देश के पूर्वी क्षेत्र के लिए कृषि विकास के साथ–साथ संसाधन विहीन किसानों की आजीविका में सुधार हेतु फसल उत्पादन, भूमि और जल ससांधनों के प्रबंधन, खाद्यान्न, बागवानी, डेयरी प्रबंधन, बकरी पालन, जलीय फसलों, मात्स्यिकी, पशुधन, कुक्कुट पालन, कृषि प्रसंस्करण, मखाना की खेती तथा सामाजिक–आर्थिक पहलुओं पर अनुसंधान कार्य का संचालन कर रहा है।

संस्थान द्वारा किया जा रहा शोध कार्य कृषि क्षेत्र में उत्पादन को बढ़ाने के उद्देश्य से अत्यंत आवश्यक है, ताकि उन्नत तकनीकों की पहुँच हमारे देश के आम किसानों तक आसानी से संभव हो सके तथा निकट भविष्य में किसानों की आय को बढ़ाने में यह सहायक हो।

मुझे यह जानकर हर्ष की अनुभूति हो रही है कि भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना अपनी गृह पत्रिका 'अक्षय खेती' वर्ष 2022 (नवम् वर्ष) का प्रकाशन कर रहा है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह अंक भी पूर्ववर्ती अंकों की भांति कृषि अनुसंधान से संबंधित जानकारी किसानों एवं अन्य हितधारकों तक पहुंचाने में सफल होगा।

पत्रिका के सफल प्रकाशन हेतु हार्दिक बधाइयाँ एवं शुभकामनाएं।

(हिमांशु पाठक)

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कक्ष क्र. 101, कृषि अनुसंधान भवन–II, नई दिल्ली–110 012 भारत
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
Room No. 101, Krishi Anusandhan Bhavan-II, Pusa, New Delhi-110012, India

डॉ. सुरेश कुमार चौधरी
उप महानिदेशक (प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन)
Dr. Suresh Kumar Chaudhari
Deputy Director General (Natural Resource Management)

संदेश

नवीं पंचवर्षीय योजना के अंतिम दौर में भारत के पूर्वी राज्यों में कृषि से संबंधित विषयों को संबोधित करने के अधिदेश के साथ भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना की स्थापना की गई थी। यह संस्थान परिषद के प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन प्रभाग के अंतर्गत देश का अति महत्त्वपूर्ण संस्थान है, जो फसल उत्पादन, मत्स्य पालन, बागवानी, डेयरी प्रबंधन, बकरी पालन, मुर्गी पालन एवं मखाना की खेती आदि विषयों पर अनुसंधान कर नवीनतम तकनीकों को देश के पूर्वी क्षेत्र के किसानों एवं अन्य हितधारकों तक सफलतापूर्वक पहुंचा रहा है।

यह संस्थान कृषि उत्पादकता बढ़ाने, गरीबी उन्मूलन और आजीविका में सुधार लाने के लिए प्रतिबद्ध है। साथ ही, संस्थान समय–समय पर प्रशिक्षण कार्यक्रम, प्रक्षेत्र भ्रमण, प्रक्षेत्र दिवस, जागरूकता कार्यक्रम आदि आयोजित करके किसानों की आय में वृद्धि करने के लक्ष्य में निरंतर प्रयासरत है।

किसानों में जागरूकता लाने एवं उन तक उन्नत तकनीकियाँ पहुंचाने में संस्थान द्वारा प्रकाशित 'अक्षय खेती' पत्रिका की भूमिका सराहनीय है । इस पत्रिका के माध्यम से आम जनमानस तक हिन्दी में वैज्ञानिक लेखन को पहुंचाने के इस प्रयास की मैं सराहना करता हूँ एवं पत्रिका के 9वें वर्ष के सफल प्रकाशन हेतु संपादक मंडल को शुभकामनाएं देता हूँ।

(सुरेश कुमार चौधरी)

भाकृअनुप
ICAR
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि भवन, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मार्ग, नई दिल्ली–110 001

संदेश

विविधता से परिपूर्ण हमारे देश भारत में संस्कृति और भाषाएँ ऐसे दो पुल हैं, जो लोगों को जोड़ने का काम करती हैं। हमारी राजभाषा भी जोड़ने का काम कर रही है– दिलों को और जन–जन को। इसी कड़ी में यह गर्व का विषय है कि भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना 'अक्षय खेती' पत्रिका के 9वें वर्ष का प्रकाशन कर रहा है। आम जनमानस को ध्यान में रखते हुए पत्रिका में सभी वैज्ञानिक आलेखों को सरल हिंदी भाषा का प्रयोग किया गया है। पत्रिका की अनुक्रमणिका को देखकर ही ऐसा प्रतीत हो रहा है कि संपादक मंडल ने पूरी निष्ठा के साथ कृषि से संबंधित विभिन्न आलेखों को विषयवार सुसज्जित कर प्रस्तुत किया है। कृषि की उन्नत तकनीकियों के प्रचार–प्रसार में राजभाषा हिन्दी का महत्वपूर्ण योगदान है। 'अक्षय खेती' पत्रिका के माध्यम से इस परिसर एवं इसके अधीनस्थ संस्थानों में हो रहे अनुसंधान कार्यों की तकनीकों का प्रचार–प्रसार एक सराहनीय प्रयास है।

पत्रिका में राजभाषा कार्यान्वयन से संबंधित विषयों, जैसे राजभाषा नियम, अधिनियम; राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम एवं नेमी टिप्पणियों का शामिल करना गौरव का विषय है। मुझे पूर्ण विशवास है कि पत्रिका के प्रकाशन से राजभाषा हिंदी के कार्यान्वयन की गति को और बल मिलेगा।

इस अवसर पर मैं 'अक्षय खेती' पत्रिका के सफल प्रकाशन पर संपादक मंडल को विशेष बधाई देती हूँ ।

सीमा चोपड़ा

(सीमा चोपड़ा)
निदेशक (राजभाषा)

सत्यमेव जयते
हर्ष प्रकाश, भा.रा.से.
Harsh Prakash, I.R.S.

भारत सरकार
Government of India
प्रधान मुख्य आयकर आयुक्त, बिहार एवं झारखंड
Principal Chief commissioner of Income Tax,
Bihar & Jharkhand
केन्द्रीय राजस्व भवन
Central Revenue Building
बीरचन्द पटेल मार्ग, पटना– 800 001
Bir Chand Patel Marg, Patna-800 001
Tel. : 0612-2504447, Fax : 2504066
E-mail: patna.pccil@incometax.gov.in

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि आपके संस्थान द्वारा 'अक्षय खेती' के 9वें वर्ष का प्रकाशन किया जा रहा है। अत्यंत खुशी की बात है कि आपका संस्थान कृषि अनुसंधान के साथ–साथ राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी गतिविधियों में अग्रसर है। पत्रिका में राजभाषा संबंधी विषयों का शामिल करना बहुत ही गर्व का विषय है। इस पत्रिका के माध्यम से कृषि अनुसंधान की नई तकनीकियों को किसानों एवं अन्य हितधारकों तक पहुंचाने का प्रयास वास्तव में सराहनीय है।

वर्तमान समय में कृषि में हो रही विकास संबंधी विषयों पर हिंदी में लेख का मिलना बहुत ही दुर्लभ है, ऐसे में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना द्वारा 'अक्षय खेती' हिंदी पत्रिका का प्रकाशन सचमुच प्रशंसनीय है।

आशा है कि यह पत्रिका किसानों एवं अन्य हितधारकों के लिए लाभप्रद सिद्ध होगी।

शुभकामनाओं सहित।

(हर्ष प्रकाश)

निदेशक की कलम से...

मुझे अत्यंत हर्ष हो रहा है कि भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना अपनी गृह पत्रिका 'अक्षय खेती' वर्ष 2022 (नवम् संस्करण) का प्रकाशन करने जा रहा है। यह संस्थान कृषि कार्यों से संबंधित विभिन्न प्रकार की महत्त्वपूर्ण जानकारी, जैसे वैज्ञानिक तरीकों से फसल उत्पादन, संसाधन संरक्षण एवं प्रबंधन, मत्स्य पालन, बागवानी, डेयरी प्रबंधन, बकरी पालन, मुर्गी पालन एवं मखाना की खेती आदि विषयों पर देश के पूर्वी क्षेत्र के किसानों के लिए समय–समय पर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करके उनकी आय में वृद्धि करने के लक्ष्य में निरंतर प्रयासरत है। यह संस्थान कृषि अनुसंधान एवं इससे जुड़ी नई तकनीकियों को तकनीकी बुलेटिन, प्रसार पुस्तिका, लोकप्रिय आलेख, शोध सारांश, शोध पत्र आदि को दैनिक समाचार पत्रों एवं विभिन्न इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के माध्यम से जनमानस एवं अन्य हितधारकों तक पहुँचाने के लिए हमेशा तत्पर रहता है।

यह गर्व का विषय है कि जब पूरा देश कोविड–19 की भयावह एवं दैत्यरूपी महामारी को पछाड़ कर आजादी के 75वीं वर्षगांठ के सुअवसर पर आजादी का अमृत महोत्सव मना रहा है, उसी दौरान संस्थान भी अपनी गृह पत्रिका का प्रकाशन कर रहा है, जिसमें कृषि संबंधित महत्त्वपूर्ण लेख तथा कविताएं एवं कहानियाँ आदि सम्मिलित हैं।

मैं सभी लेखकगणों को उनके इस कारगर प्रयास के लिए बहुत–बहुत धन्यवाद देता हूँ, एवं इस पत्रिका के संपादक मंडल एवं संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्यगण भी धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने काफी कम समय में प्राप्त आलेखों को संपादित करके प्रकाशन में अहम भूमिका निभाई। मुझे पूर्ण विश्वास है कि भविष्य में भी सभी लेखकगणों का महत्त्वपूर्ण योगदान इस पत्रिका को मिलता रहेगा।

शुभकामनाओं सहित।

जय जवान, जय किसान, जय विज्ञान, जय अनुसंधान !

आशुतोष उपाध्याय

(आशुतोष उपाध्याय)
निदेशक

संपादकीय

डॉ अनिल कुमार सिंह
प्रधान संपादक

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना द्वारा प्रकाशित वार्षिक पत्रिका 'अक्षय खेती' का वर्तमान अंक प्रस्तुत करते हुए पूरे सम्पादकीय मंडल को आपार खुशी एवं संतोष का बोध हो रहा है। खेती–बाड़ी भारतीय संस्कृति का न केवल मूलाधार है, अपितु अर्थव्यवस्था की रीढ़ भी है, इसलिए यह नितांत आवश्यक है कि अन्नदाता बंधुओं को नवीनतम कृषि तकनीकों एवं पद्धतियों से यथाशीघ्र रूबरू कराया जाए, क्योकि 'उन्नत तकनीकी ज्ञान, खुशहाल किसान की मूलभूत आवश्यकता है। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु हमारी हिंदी पत्रिका 'अक्षय खेती' किसानों एवं प्रसारकर्ताओं को कृषि से संबंधित अद्यतन तकनीकों एवं जानकारियों को पहुंचाने के लिए प्रतिबद्ध है। यूँ तो हिन्दुस्तान ने स्वतंत्रता प्राप्ति से अब तक प्रत्येक क्षेत्र में आशातीत प्रगति की है तथा नित–नवीन कीर्तिमान स्थापित करने में लगा हुआ है, जिसका सुखद परिणाम यह है कि आज हमारा देश भारत विश्व की पाँचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन कर उभरा है। कृषि क्षेत्र में उपलब्धियों की बात करें तो आज भारत का स्थान दुग्ध उत्पादन में विश्व में सर्वप्रथम है। इतना ही नही, अनाज का सबसे बड़ा भंडार भारतवर्ष में ही है। विश्व में सबसे ज्यादा गेहूं एवं चावल उत्पादन के मामले में हिन्दुस्तान द्वितीय स्थान पर विराजमान है वस्तुतः देखा जाए तो

कृषि देश की भाग्य विधाता, कृषक ही देश की शान।
समृद्ध कृषि खुशहाली लाये, अर्थ व्यवस्था में लाये जान।

आज़ादी के अमृतकाल में इस पत्रिका का प्रकाशन हमारे लिए विशेष गौरव का विषय है। अतः इस अंक में हम कृषि तकनीकी एवं उसका सामाजिक–आर्थिक प्रभाव,फसल उत्पादन तकनीकी, पशुपालन तकनीकी, कृषि प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन, कृषि आय अर्जित करने की वैकल्पिक गतिविधियाँ, कृषि सलाहकारी एवं अभिनव योजनाएं आदि विषयों के अंतर्गत लेखों का प्रकाशन कर रहे हैं। इस अंक को रुचिकर बनाने की मंशा से वैज्ञानिक के साथ अन्य कई विविध विषयों के लेखों को भी सम्मिलित किया गया है। इस पत्रिका के प्रकाशन के लिए संस्थान के निदेशक महोदय का मैं विशेष रूप से आभार व्यक्त करता हूँ, जिनके सतत् मार्गदर्शन से इस पत्रिका का प्रकाशन संभव हो सका। सभी लेखकों को हार्दिक बधाई देता हूँ, जिनके ज्ञानवर्धक एवं गुणवत्तायुक्त लेखो ने 'अक्षय खेती' के इस अंक में चार चाँद लगाने का कार्य किया है। साथ ही साथ, उन सभी लेखको को भी आश्वस्त करना चाहता हूँ, जिनके लेखों को स्थानाभाव के कारण वर्तमान अंक में स्थान नही प्राप्त हुआ है, उन लेखों को आगामी अंक में प्रकाशित किया जाएगा। इस अवसर पर मैं व्यक्तिगत तौर पर पूरे संपादक मंडल का भी आभार व्यक्त करता हूँ जिनके अथक प्ररिश्रम से यह अंक वर्तमान स्वरुप में प्रकाशित हो रहा है।

मुझे आशा ही नही अपितु पूर्ण विश्वास है कि, हमारा यह प्रयास कृषि में अभिरुचि रखने वाले सुधी पाठकों के लिए लाभप्रद सिद्ध होगा। अंत में दो शब्दों के साथ अपनी लेखनी को विश्राम देता हूँ।

'अक्षय खेती' ने है ठाना, कृषक को है खुशहाल बनाना।

शुभकामनाओं सहित।

(अनिल कुमार सिंह)
उपाध्यक्ष, संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	आलेख	लेखकगण	पृष्ठ सं.
	प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन		
1.	कृषि में जल संरक्षण व सक्षम जल उपयोग की तकनीकें	आशुतोष उपाध्याय	1
2.	जैविक कृषि को अपनाएं : प्यार और पैसे दोनो कमाएं	अनिल कुमार सिंह, आशुतोष उपाध्याय, सोनका घोष, पवन जीत, प्रेम कुमार सुंदरम एवं विकास सरकार	6
3.	बदलती जलवायु में टिकाऊ कृषि का औचित्य	मनीषा टम्टा, संतोष कुमार, राकेश कुमार एवं अभिषेक कुमार दूबे	11
4.	फास्फोरसधारी उर्वरकों का संतुलित उपयोग : समय की मांग	खुरशिद आलम, रवि सैनी, प्रेम कुमार बा. एवं तिरुनगरी रूपेश	14
5.	पोटाश का फसल उत्पादन में योगदान	इन्दु शेखर सिंह, मनोज कुमार, अशोक कुमार, धीरज प्रकाश एवं आलोक कुमार	17
6.	धान की सीधी बुवाईः संसाधन संरक्षण की एक तकनीक	मान्धाता सिंह, देवकरन, हरि गोविन्द, रामकेवल एवं आरीफ परवेज	20
7.	फसल अवशेष प्रबंधन	हरि गोविन्द, मान्धाता सिंह, देवकरन, रामकेवल एवं आरीफ परवेज	24
8.	कृषि जल उत्पादकता बढाने हेतु सिंचाई निर्धारण में विकसित तकनीकियाँ	आरती कुमारी, आशुतोष उपाध्याय, पवन जीत एवं कीर्ति सौरभ	28
9.	लघु एवं सीमांत कृषकों के लिए सौर ऊर्जा एक वरदान	अतीकुर रहमान एवं आशुतोष उपाध्याय	31
10.	जल लेखा परीक्षाः समय की आवश्यकता	पवन जीत, अनिल कुमार सिंह, प्रेम कुमार सुंदरम, आशुतोष उपाध्याय, बिकाश सरकार एवं मनोज कुमार	34
11.	बिहार में बाढ़ और फसल भूमि पर इसका प्रभाव	अकरम अहमद, आशुतोष उपाध्याय, अनिल कुमार सिंह, मणिभूषण, पी. एस. ब्रह्मानन्द, रोहन कुमार रमण, सुरजीत मंडल एवं वेद प्रकाश	38

क्र.सं.	आलेख	लेखकगण	पृष्ठ सं.
12.	मिट्टी परीक्षण हेतु मृदा का नमूना लेने की विधि एवं मृदा स्वास्थ्य कार्ड	देवकरन, मांधाता सिंह, रामकेवल, हरि गोविंद, आशुतोष उपाध्याय, आरिफ परवेज़ एवं अभिषेक कुमार	44
फसल उत्पादन			
13.	सूखा एवं बाढ़ की परिस्थितियों हेतु स्वर्ण समृद्धि धान	संतोष कुमार, ए. के. चौधरी, कुमारी शुभा एवं अभिषेक कुमार दुबे	49
14.	काले गेहूँ की खेती और उससे होने वाले लाभ	एम. एच. चावड़ा, वाई. बी. वाला, ओमप्रकाश मीणा एवं वेद प्रकाश	53
15.	बारानी क्षेत्रों के लिए मडुआ की वैज्ञानिक खेती	सन्नी कुमार, दुष्यंत कुमार राघव, इन्द्रजीत, धर्मजीत खेरवार, शशिकांत चौबे एवं अरूण कुमार सिंह	56
16.	फैन–पैड हाइड्रोपोनिक्स मक्का–चारा खेती: वैज्ञानिक तकनीकी	संजय कुमार सिंह, गौरेन्द्र गुप्ता, प्रभाकांत पाठक एवं अमित कुमार पाटील	59
17.	फसल विविधीकरण : एक कदम विकास की ओर	शिवानी, संजीव कुमार, कीर्ति सौरभ, कुमारी शुभा एवं सोनका घोष	63
बागवानी			
18.	पुष्टाहार हेतु पोषण वाटिका	कुमारी शुभा, अनिर्बाण मुखर्जी, शिवानी, उज्ज्वल कुमार, संतोष कुमार, टी. के. कोले, अकरम अहमद एवं ए. के.चौधरी	67
19.	अधिक उत्पादन एवं लाभ हेतु करें पपीते की वैज्ञानिक खेती	महेश कुमार धाकड़, बिकाश दास एवं अरूण कुमार सिंह	72
20.	पठारी क्षेत्रों में शकरकंद की लाभदायक खेती	धर्मजीत खेरवार, दुष्यंत कुमार राघव, इन्द्रजीत, सन्नी कुमार एवं शशिकांत चौबे	74
21.	मिथिलांचल की विरासत मखाना की वैज्ञानिक खेती	इंदु शेखर सिंह, बी.आर.जाना, ए.के. ठाकुर, अनिल कुमार, अशोक कुमार, धीरज प्रकाश एवं आलोक कुमार	79
22.	पाम ऑयल की खेती में पलवार का महत्त्व	अनीता पेडपेटी एवं एन वी गणेश	87
23.	झारखण्ड में मशरुम की खेती की संभावनाएं एवं उन्नत उत्पादन तकनीक	अजित कुमार झा, वीरेंद्र कुमार यादव, प्रेरणा नाथ, विकाश कुमार एवं अरुण कुमार सिंह	89
24.	फल और सब्ज़ियों का निर्जलीकरण: ग्रामीण आजीविका का उत्तम अवसर	प्रेरणा नाथ, एस. जे. काले एवं अरुण कुमार सिंह	94
25.	लघुवाटिका की अनोखी दुनिया : टेरारियम	कीर्ति सौरभ, आरती कुमारी, अनिल कुमार सिंह, आशुतोष उपाध्याय, शिवानी एवं अतिश कुमार	98
पशुधन एवं मात्स्यिकी प्रबंधन			
26.	बकरियों में परजीवियों से होने वाले रोग एवं उनका प्रबंधन	राकेश कुमार, रजनी कुमारी, पी.सी. चंद्रन, शंकर दयाल, प्रदीप कुमार राय, ज्योति कुमार,अमिताभ डे एवं कमल शर्मा	104

क्र.सं.	आलेख	लेखकगण	पृष्ठ सं.
27.	बैकयार्ड मुर्गी पालन : आजीविका का उत्तम स्रोत	रीना कमल, पी.सी. चंद्रन, अमिताभ डे, विकाश दास, महेश धाकड़, कमल शर्मा, रजनी कुमारी एवं अरूण कुमार सिंह	107
28.	पशु वीर्य लिंग निर्धारण : एक आधुनिक तकनीक	रजनी कुमारी, शंकर दयाल, पी सी चंद्रन, प्रदीप कुमार राय, ज्योति कुमार, राकेश कुमार एवं अमिताभ डे	112
29.	आर्सेनिक ग्रसित क्षेत्रों में पशु प्रबंधन	मनोज कुमार त्रिपाठी, पंकज कुमार, अंजली, अमिताभ डे एवं कमल शर्मा	115
30.	आकर्षक रंगीन मछलियों की एक झलक	तारकेश्वर कुमार, कमल शर्मा, सुरेन्द्र कुमार अहिरवाल, जसप्रीत सिंह, विवेकानंद भारती एवं पंकज कुमार	118
31.	मत्स्य बीजों का परिवहन प्रबंधन	विवेकानंद भारती, कमल शर्मा, तारकेश्वर कुमार, जसप्रीत सिंह, सुरेंद्र कुमार अहिरवाल एवं देवनारायण	124
32.	जलीय खाद्य श्रृंखला एवं मानव जीवन पर सूक्ष्म (माइक्रो) प्लास्टिक का प्रभाव	जसप्रीत सिंह, इंदु, तारकेश्वर कुमार, सुरेंद्र कुमार अहिरवाल, विवेकानंद भारती, पंकज कुमार, सौरभ कुमार, गोविन्द मकराना, देवनारायण एवं कमल शर्मा	131
33.	जानलेवा नैरोबी मक्खी: जानकारी ही बचाव है	सुदीपा कुमारी झा एवं मो. मोनोब्रुल्लाह	134
34.	रेबीज : एक जानलेवा पशु से मनुष्य में होने वाला रोग	पंकज कुमार, मनोज कुमार त्रिपाठी, मृत्युंजय कुमार एवं रश्मि रेखा कुमारी	136
35.	लंपीवायरस: पशुओं की जानलेवा बीमारी	अनिल कुमार सिंह एवं रजनी कुमारी	138
	पादप संरक्षण		
36.	खरीफ फसलों का खरपतवार प्रबंधन	इन्द्रजीत, दुष्यंत कुमार राघव, धर्मजीत खेरवार, सन्नी कुमार, सन्नी आशिष बालमुचू एवं शशिकान्त चौबे	139
37	जलवायु परिवर्तन – विषाणुजनित रोगों के लिए वरदान या अभिशाप	अभिषेक कुमार दूबे, संतोष कुमार, मनीषा टम्टा, शुभा कुमारी, राकेश कुमार एवं एन. भक्ता	144
38.	पौधों में रोग प्रबंधन के गैर रासायनिक तरीके	अभिषेक कुमार दूबे, संतोष कुमार, मनीषा टम्टा, कुमारी शुभा एवं राकेश कुमार	147
39.	रबी की प्रमुख सब्जियों में कीट प्रबंधन	रामकेवल, देवकरन, मांधाता सिंह, प्रेम कुमार सुंदरम, धीरज कुमार, दुष्यंत कुमार राघव, उज्ज्वल कुमार, अभय कुमार, मो. मोनोब्रुल्लाह एवं हरि गोविंद	151
40.	आम के शूट गॉल सिल्ला कीट : जानकारी एवं प्रबंधन	जयपाल सिंह चौधरी, बिकाश दास एवं अरुण कुमार सिंह	155
41.	कीट प्रबंधन में सूक्ष्मजीवों की भूमिका	मो. मोनोब्रुल्लाह एवं सुदीपा कुमारी झा	157

क्र.सं.	आलेख	लेखकगण	पृष्ठ सं.
	सामाजिक–आर्थिक एवं प्रसार		
42.	सफलता की कहानी : एकीकृत कृषि प्रणाली	सुनीति शमा भेंगरा, सनी उरांव, राय ओमप्रकाश अग्निवेश, पवनजीत, अजीत कुमार झा, जयपाल सिंह चौधरी, दुष्यंत कुमार राघव, अरुण कुमार सिंह एवं बिकाश दास	161
43.	भारतीय लघु एवं सीमांत किसानों के लिए किसान उत्पादक संगठन का महत्व	अनिर्बाण मुखर्जी, धीरज कुमार सिंह, कुमारी शुभा, श्रेया आनंद, राजू कुमार एवं उज्ज्वल कुमार	163
44.	जैविक कृषि एवं जैव प्रमाणिकीकरण	बाल कृष्ण झा, सुशांत कुमार नायक, जयपाल सिंह चौधरी, अरुण कुमार सिंह, रेशमा शिंदे, अणिमा प्रभा एवं निर्मला कुमारी	167
45.	कृषि में सूचना प्रोद्योगिकी की महत्ता	हिमानी बिष्ट, शालू एवं मनीषा टम्टा	174
46.	स्मार्ट जल प्रबंधन हेतु आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस तकनीकों का उपयोग	सोनका घोष, पवन जीत, अनिल कुमार सिंह एवं शिवानी	178
47.	आईओटी आधारित स्मार्ट कृषि प्रणाली	मणिभूषण, आशुतोष उपाध्याय, अनिल कुमार सिंह, अकरम अहमद एवं आरती कुमारी	182
48.	मोबाइल ऐप : आधुनिक कृषि के लिए एक वरदान	रोहन कुमार रमण, धीरज कुमार सिंह, सुदीप सरकार, अभय कुमार, उज्ज्वल कुमार एवं राकेश कुमार	186
49.	मेघदूत ऐपः मौसम की जानकारी के लिए एक वरदान	दुष्यंत कुमार राघव, शशि कान्त चौबे, इन्द्रजीत, धर्मजीत खेरवार एवं सन्नी कुमार	190
	विविध		
50.	भारतीय गरीबी का संभावित समाधान	पुष्पनायक	193
51.	खाना बस मखाना	पुष्पनायक	202
52.	कोई नहीं बनना चाहता किसान	सरफराज अहमद	202
53.	संपादकीय संकलनः बदलता भारत		203
54.	हिन्दी पखवाड़ा – 2021 : शुभारंभ एवं समापन रिपोर्ट		204
55.	राजभाषा अधिनियम, 1963		207
56.	राजभाषा नियम, 1976		210
57.	प्रशासनिक टिप्पणियाँ		215
58.	राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम 2022–23		223
59.	अखबारों से		226

कृषि में जल संरक्षण व सक्षम जल उपयोग की तकनीकें

आशुतोष उपाध्याय
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

परिचय

- जल कृषि उत्पादन में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।
- इसके बिना जीव जन्तु या वनस्पति में जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती हैं।
- जल पृथ्वी पर पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध था, परंतु निरंतर बढ़ती जनसंख्या के दवाब के कारण और जल के लिए कारखानों, शहरी व घरेलू माँगों में बढ़त के कारण कृषि के लिए जल की उपलब्धता दिन प्रति दिन कम होती चली जा रही है।
- भारत विश्व के कुल भौगोलिक क्षेत्र का मात्र 2.5 प्रतिशत है परंतु इस पर विश्व की लगभग 17 प्रतिशत आबादी तथा 18 प्रतिशत पशुधन का बोझ है।
- एक आकलन के अनुसार, देश में उपयोग हेतु उपलब्ध जल संसाधन कुल उपलब्धता का लगभग 4 प्रतिशत है।
- प्राचीन काल में भी जल के महत्व के पहचाना गया था जैसा कि नारद स्मृति, एकादश, 19 में दृष्टिगोचर होता है– ''जल के बिना अन्न का एक दाना भी उत्पन्न नहीं हुआ, लेकिन जलाधिक्य से अनाज सड़ भी जाते हैं।
- अन्न की वृद्धि के लिए बाढ़ भी उतनी ही हानिकारक है जितना दुर्भिक्ष।
- आज करीब अस्सी देशों में निवास करने वाली विश्व की चालीस प्रतिशत आबादी जल के गंभीर संकट से जूझ रही है।
- अतः जल का संरक्षण व सदुपयोग करना अत्यन्त आवश्यक है, अन्यथा भविष्य में यह समस्या और विकराल रूप धर लेगी और आगे आने वाली पीढ़ियाँ हमको माफ नहीं करेंगी।
- यदि कुछ जल संरक्षण तकनीकों को कृषि में अपनाया जाये तो कम जल का सक्षम उपयोग कर अधिक कृषि उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

इस विषय पर मैंने काव्यात्मक शैली में अपनाने योग्य ग्यारह महत्वपूर्ण जल संरक्षण तकनीकों का चयन किया है, जिनको अपनाकर किसान भाई जल संरक्षित करते हुए अपनी उपज बढ़ा सकते हैं. यह जल संरक्षण तकनीकें हैं–

- धान के खेत में मेडबंदी द्वारा वर्षा जल संरक्षण
- नहर के कुशल प्रचालन, रख रखाव व सहभागिता द्वारा जल संरक्षण
- उचित पम्पिंग सेट व भूमि का चयन करके भू जल का सक्षम उपयोग करके जल संरक्षण
- नहर व भूजल का संयुक्त उपयोग करके जल उत्पादकता में वृद्धि
- खारे व मीठे जल का संयुक्त उपयोग करके जल संरक्षण व जल उत्पादकता में वृद्धि
- जल संरक्षण के लिए उचित सिंचाई विधि का चयन
- जल संरक्षण के लिए मल्चिंग या पलवार का उपयोग
- बलुई व केवाल मिट्टी में सिंचाई के तरीके में परिवर्तन करके जल संरक्षण
- लेज़र लैंड लेवलिंग द्वारा जल संरक्षण
- जल का बहु आयामी उपयोग/समेकित कृषि प्रणाली अपनाकर जल संरक्षण
- जल वायु जलवायु परिवर्तन से निपटने हेतु फसल परिवर्तन व अन्य तकनीक

उचित मात्रा में अच्छी गुणवत्ता के, हों यदि सारे आदान और सही समय पर हो उपयोग, तो दूर हों सारे

व्यवधान कृषि उत्पादन में वृद्धि की, तभी हो सकती है राह आसान जब 'प्लाऊ से प्लेट तक', प्रबंधन पर रखेंगे सतत ध्यान :

1. जल तो है सीमित संसाधन, जल संरक्षण अपनाना होगा कैसे हो जल का सदुपयोग?, यह सबको समझाना होगा भारत में विश्व के भूभाग का, है लगभग ढाई प्रतिशत यहाँ निवास करती जनसंख्या, विश्व की सत्तरह प्रतिशत और यहाँ पशुधन भी है ज्यादा, विश्व का अठारह प्रतिशत पर सब के पोषण को उपलब्ध जल है, मात्र चार प्रतिशत कितना दबाव इस जल पर है, यह सबको बतलाना होगा जल तो है सीमित संसाधन, जल संरक्षण अपनाना होगा कैसे हो जल का सदुपयोग?, यह सबको समझाना होगा

जल की महिमा अपरम्पार
यह है जीवन का आधार
यदि चाहो जल रहे सतत
आओ मिलकर करें बचत

जल का संचय जल की पूजा
जल जैसा नहिं धन है दूजा
कल चाहो अच्छा उत्पादन
आज करो तुम जल संरक्षण

मेड़बंदी द्वारा वर्षा जल का सक्षम उपयोग

किसानों ने 7.5–10 से.मी. की बजाय 20–25 से. मी. ऊँची मेड़ बनाकर धान के खेत में वर्षा जल संचय करके सक्षम उपयोग किया

18 से.मी. ऊँची मेड़

- ✓ धान के खेत में काफी दिनों तक नमी रही
- ✓ धान में 1–2 सिंचाई की बचत देखी गयी
- ✓ 15–20% जल की बचत हुई
- ✓ उत्पादन में 15–20% वृद्धि हुई

2. है वर्षा का पानी अनमोल, न बहने दें यूँ ही बेकार करें इसका भंडारण, दें तालाब पोखरों को आकार धान का खेत भी है, वर्षा जल भंडारण का प्रकार नौ इंच ऊंची मेड़ बनायें, करें वर्षा जल संचय साकार धान की उपज बढ़ाकर, भूजल स्तर भी उठाना होगा जल तो है सीमित संसाधन, जल संरक्षण अपनाना होगा कैसे हो जल का सदुपयोग?, यह सबको समझाना होगा खेतों के चारो तरफ, ऊँची और मजबूत मेड़ बनायें वर्षा जल संचय कर, कम पटवन से अधिक उपजायें

ढेकुली से सिंचाई

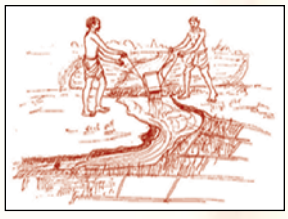

बेडी से सिंचाई

रहट से सिंचाई

डीजल पम्प

विद्युत चालित

सौर उर्जा चालित पम्प

5. नहर का जल भी उत्पादन वृद्धि में, देता है अद्भुत योगदान जब होता कुशल संचालन, प्रबंधक जरुरत का रखता ध्यान सही समय पर उचित मात्रा में जल, उत्पादकता वृद्धि को वरदान कम करने को नहर जल ह्रास, उचित रखरखाव बस एक निदान जल उपभोक्ताओं व प्रबंधकों के बीच, आपसी सहयोग बढाना होगा जल तो है सीमित संसाधन, जल संरक्षण अपनाना होगा कैसे हो जल का सदुपयोग?, यह सबको समझाना होगा

खर पतवार व सिल्ट हटायें
नहर तंत्र मजबूत बनायें
वितरणी समिति व समूह बनायें
मिलकर अपनी समस्या सुलझायें
जल प्रबंध में भागीदारी बढ़ायें
सहभागिता का मंत्र अपनायें

आउटलेट पर गेट लगाओ
जल पर अपना नियंत्रण पाओ
कम जल से अधिक उपजाओ
सबका जीवन खुशहाल बनाओ

वर्षा में जल मग्नता

अवरोध उत्पन्न करके नहर जल स्तर बढ़ाया

नहर में खरपतवार की अधिकता

आउटलेट पर गेट लगा है

कुछ दिनों बाद गेट उखाड़ दिया गया

आउटलेट अनाधिकृत काटा गया

नहर में अवरोध उत्पन्न करते हुए

अवरोध उत्पन्न करके नहर जल स्तर बढ़ाया

6. वर्षा विलंब से होने पर, धान भी देर से रोपा जाता धान पकता देर से, और गेहूँ विलंब से बोया जाता समय से बीज न बोने से, फसलोत्पादन घट जाता रोहिणी में नर्सरी लगाने से, भूजल उपयोग हो जाता नहर भूजल संयुक्त उपयोग को, किसानों तक पहुँचाना होगा जल तो है सीमित संसाधन, जल संरक्षण अपनाना होगा कैसे हो जल का सदुपयोग?, यह सबको समझाना होगा बिन पानी के अन्न नहीं होता, जानते हैं यह सभी लोग इसकी कमी या अधिकता से, फसल में लगते कई रोग कृषि उत्पादन में वृद्धि का, तब ही हो सकता है योग जब वर्षा नहर एवं भू जल का, होवे समेकित उपयोग।

7. खारे पानी से सिंचाई का मित्रों!, फसलोत्पादन पर पड़ता दुष्प्रभाव किसान फिर भी करते हैं सिंचाई, क्योंकि मीठे पानी का है अभाव खारे और मीठे पानी को मिलाकर, सिंचाई से होगा अच्छा प्रभाव फसलोत्पादन भी बढ़ जायेगा, और फसल का मिलेगा अच्छा भाव खारे मीठे के संयुक्त उपयोग को, किसानों तक पहुँचाना होगा जल तो है सीमित संसाधन, जल संरक्षण अपनाना होगा कैसे हो जल का सदुपयोग?, यह सबको समझाना होगा।

खारे–मीठे पानी का संयुक्त उपयोग

8. सिंचाई के हैं कई तरीके, कहाँ कौन सा तरीका उपयुक्त रहेगा? खेत की आकृति, ढाल, मिट्टी, मौसम एवं फसल यह तय करेगा जल का स्रोत व उपलब्धता भी, सिंचाई विधि को प्रभावित करेगा बाढ़, पट्टीदार, थाला, कूंड, या दाबीय सिंचाई पद्यति चुनना होगा कौन सी सिंचाई पद्यति को अपनायें?, यह सबको बतलाना होगा जल तो है सीमित संसाधन, जल संरक्षण अपनाना होगा कैसे हो जल का सदुपयोग? यह सबको समझाना होगा।

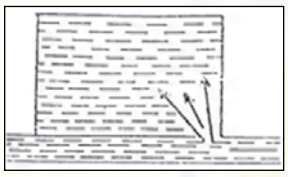

(i) बाढ़ सिचाई

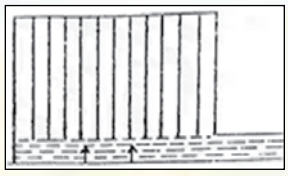

(ii) कूंड सिचाई

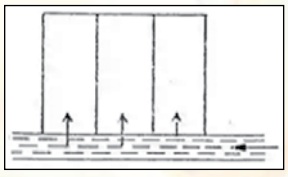

(iii) पट्टीदार सिचाई

(iv) समोच्च सिचाई

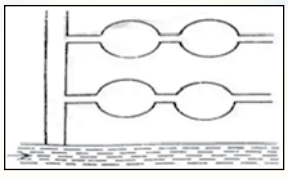

(v) थाला सिचाई

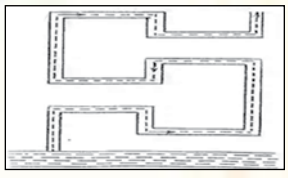

(vi) सर्पाकार सिंचाई विधि

चित्र– सतही सिंचाई की विभिन्न विधियाँ

9. पट्टीदार विधि से, गेहूँ जौ चारा दालें आदि सींची जाती हैं। बेसिन सिंचाई विधि से, धान जैसी फसलें सींची जाती हैं। थाला द्वारा वृक्षों को, क्यारी द्वारा सब्जियां सींची जाती हैं। मक्का मूंगफली आलू कपास, कूंड विधि से सींची जाती हैं। जल मिट्टी व फसल अनुसार, सिंचाई विधि अपनाना होगा। जल तो है सीमित संसाधन, जल संरक्षण अपनाना होगा। कैसे हो जल का सदुपयोग?, यह सबको समझाना होगा।

10. सिंचाई के हैं कई तरीके, कहाँ कौन सा तरीका उपयुक्त रहेगा, खेत की आकृति, ढाल, मिट्टी, मौसम एवं फसल यह तय करेगा जल का स्रोत व उपलब्धता भी, सिंचाई विधि को प्रभावित करेगा स्प्रिंकलर, ड्रिप व लेवा से सिंचाई कर, जल का

सक्षम उपयोग रहेगा कैसे करें सही सिंचाई विधि का चुनाव, यह सबको बतलाना होगा लगायें जल तो है सीमित संसाधन, जल संरक्षण अपनाना होगा कैसे हो जल का सदुपयोग, यह सबको समझाना होगा।

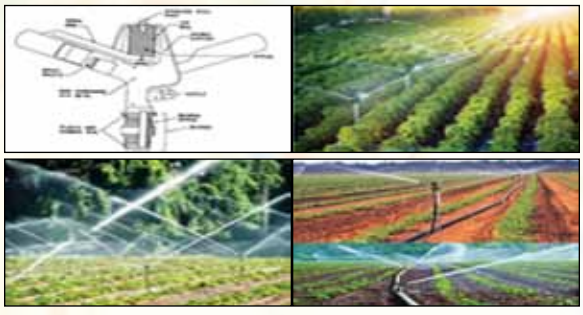

स्प्रिंकलर (फब्बारा) या बौछारी सिंचाई पद्धति

12. जहाँ जल की बहुत कमी है, वहाँ टपक सिंचाई को अपनायें प्लास्टिक पाइप एवं ड्रिपर से, बूंद बूंद जल जड़ में पहुँचायें जल व उर्वरकों का करें सक्षम उपयोग, और क्षय से बचायें समय उर्जा मजदूरी में बचत करें, एवं उत्पादन में वृद्धि पायें गुणवत्तापूर्ण उत्पाद पाने को, टपक सिंचाई अपनाना होगा जल तो है सीमित संसाधन, जल संरक्षण अपनाना होगा कैसे हो जल का सदुपयोग?, यह सबको समझाना होगा।

13. मिट्टी में जल रहे संरक्षित, इसके करने होंगे प्रयास वाष्पीकरण को रोकने का, मल्चिंग ही है उपाय खास, फसल अवशेष या प्लास्टिक बिछाने से, उगती नहीं है घास पौधा भी अच्छा फलता है, क्योंकि जल रहता है आस पास इसलिए मल्चिंग तकनीकी को, किसानों तक पहुँचाना होगा जल तो है सीमित संसाधन, जल संरक्षण अपनाना होगा कैसे हो जल का सदुपयोग?, यह सबको समझाना होगा।

प्लास्टिक मल्चिंग

14. बलुई मिट्टी में मित्रों, जल का बहुत रिसाव होता है। और केवाल मिट्टी में जल, कम अवशोषित होता है। बलुई मिट्टी में कम, पर कई बार जल देना होता है। केवाल मिट्टी में ज्यादा, पर कम बार जल देना होता है। मिट्टी की किस्म के अनुसार, जल प्रबंधन अपनाना होगा। जल तो है सीमित संसाधन, जल संरक्षण अपनाना होगा कैसे हो जल का सदुपयोग?, यह सबको समझाना होगा।

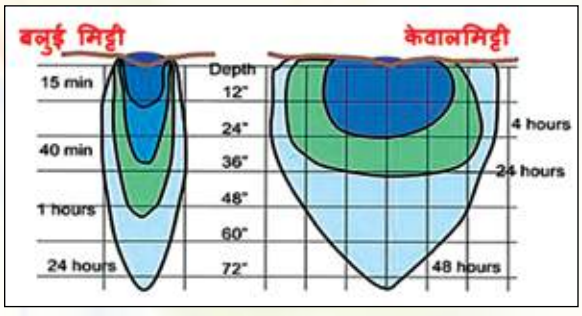

15. भूमि समतलीकरण द्वारा भी, जल ह्रास कम हो जाता है। फसल को मिलता बराबर पानी, उत्पादन भी बढ़ जाता है। लेज़र लेंड लेवलिंग लाभकारी है, अनुभव तो यही बताता है। जल की बचत और उत्पादन में वृद्धि, किसको नहीं सुहाता है। तो लेज़र लैंड लेवलिंग तकनीकी, किसानों तक पहुँचाना होगा। जल तो है सीमित संसाधन, जल संरक्षण अपनाना होगा। कैसे हो जल का सदुपयोग?, यह सबको समझाना होगा।

लेज़र लेंड लेवलिंग तकनीकी

जन, जल, जमीं, जानवर, जंगल
हों विकसित तो जीवन मंगल
हो जब इनका कुशल प्रबंधन
बढ़ेगी आय और जीविकोपार्जन
जीविकोपार्जन में वृद्धि का सपना
होवे साकार यह ध्येय है अपना
पूर्वी क्षेत्र में बढ़ रही है, अब विकास की चाह
यह संस्थान दिखा रहा, समेकित खेती की राह।

जैविक कृषि को अपनाएं : प्यार और पैसे दोनो कमाएं

अनिल कुमार सिंह, आशुतोष उपाध्याय, सोनका घोष, पवन जीत, प्रेम कुमार सुंदरम एवं विकास सरकार

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

जैविक कृषि एक समूल जीवन पद्धति है, एक जीवन शैली है जोकि हमे नैसर्गिक रूप से प्राकृतिक ढंग द्वारा दैनिक कृषि क्रियाओं को सम्पादित करने को प्रेरित करती है। कृषक बंधु, जैविक खेती को अपनाकर को ना केवल मानव जाति को भयंकर बीमारीयों के प्रकोप से बचाने के साथ– साथ प्रकृति एवम् पर्यावरण का भी संरक्षण करेगे अपितु अधिकाधिक लाभ भी कमायेंगे।

परिचय

भारत वर्ष में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि है। जैविक कृषि एक सदाबहार कृषि पद्धति है, जो पर्यावरण की शुद्धता, जल व वायु की शुद्धता, भूमि का प्राकृतिक स्वरूप बनाये रखने वाली, जल धारण क्षमता बढ़ाने वाली, धैर्यशील कृत संकल्पित होते हुए रसायनों का उपयोग आवश्यकता अनुसार कम से कम करते हुए कृषक को कम लागत से दीर्घकालीन स्थिर व अच्छी गुणवत्ता वाली पारम्परिक कृषि संचालन व्यवस्था है। जैविक कृषि'' कृषि की वह विधि है जो संश्लेषित उर्वरकों एवं संश्लेषित कीटनाशकों के प्रयोग ना करने या न्यूनतम प्रयोग पर आधारित है तथा जो भूमि की उर्वरा शक्ति को बचाये रखने के लिये फसल चक्र, हरी खाद, कम्पोस्ट आदि का प्रयोग करती है।

जैविक कृषि की आवश्यकता

संपूर्ण विश्व में बढ़ती हुई जनसंख्या एक गंभीर समस्या है। बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ भोजन की आपूर्ति के लिए मानव द्वारा खाद्य उत्पादन की होड़ में अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए तरह–तरह की रासायनिक खादों, जहरीले कीटनाशकों का उपयोग, प्रकृति के जैविक और अजैविक पदार्थो के बीच आदान–प्रदान के चक्र को (इकोलाजी सिस्टम) प्रभावित करता है, जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति खराब हो जाती है। साथ ही वातावरण प्रदूषित होता है, तथा मनुष्य के स्वास्थ्य में गिरावट आती है। पिछले कुछ समय से रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों के अन्धाधुन्ध व असन्तुलित प्रयोग का कुप्रभाव ना केवल मनुष्य व पशुओं के स्वास्थ्य पर हुआ है, बल्कि इसका कुप्रभाव पानी, भूमि एंव पर्यावरण पर भी स्पष्ट दिखाई देने लगा है। प्राचीन काल में मानव स्वास्थ्य के अनुकूल तथा प्राकृतिक वातावरण के अनुरूप कृषि की जाती थी। जिससे जैविक और अजैविक पदार्थों के बीच आदान–प्रदान का चक्र निरन्तर चलता रहता था। जिसके फलस्वरूप जल, भूमि, वायु तथा वातावरण प्रदूषित नहीं होते थे।

चित्र : जैविक खेती के द्वारा तैयार होती आम की फसल

तालिका 1: भारत मे कुल प्रमाणिक जैविक कृषि का क्षेत्रफल (हेक्टेयर)

राज्य	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)
अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	321.28
आंध्र प्रदेश	12325.03
अरुणाचल प्रदेश	71.49
असम	2828.26
बिहार	180.60

राज्य	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)
छत्तीसगढ़	4113.25
दिल्ली	0.83
गोवा	12853.94
गुजरात	46863.89
हरयाणा	3835.78
हिमाचल प्रदेश	4686.05
जम्मू और कश्मीर	10035.38
झारखंड	762.30
कर्नाटक	30716.21
केरल	15020.23
लक्षद्वीप	895.91
मध्य प्रदेश	232887.36
महाराष्ट्र	85536.66
मणिपुर	0.0
मेघालय	373.13
मिजोरम	0.0
नगालैंड	5168.16
ओडिशा	49813.51
पांडिचेरी	2.84
पंजाब	1534.39
राजस्थान	66020.35
सिक्किम	60843.51
तमिलनाडु	3640.07
त्रिपुरा	203.56
उत्तर प्रदेश	44670.10
उत्तरांचल	24739.46
पश्चिम बंगाल	2095.51
कुल	**723039.00**

चित्र : जैविक खेती के द्वारा तैयार लीची के फलों से लदा पेड

चित्र : जैविक खेती के द्वारा तैयार शिमला मिर्च

चित्रः जैविक विधि से बाजरा की खेती

चित्रः जैविक विधि से केला उत्पादन

चित्रः करेले का जैविक विधि से उत्पादन

प्रमुख जैविक खाद

- हरी खाद
- बायोगैस स्लरी
- वर्मी कम्पोस्ट
- नाडेप
- जैव उर्वरक (कल्चर)
- नील हरित काई
- नाडेप फास्फो कम्पोस्ट
- पिट कम्पोस्ट या गोबर की खाद (इंदौर विधि)
- सींग खाद

प्रमुख पादप सुरक्षा पदार्थ

जैविक पध्दति द्वारा बनाई गई कृषि रोग नियंत्रक

- गौ–मूत्र
- नीम–पत्ती का घोल/निबोली/खली

- मट्ठा
- मिर्च/लहसुन
- लकड़ी की राख
- करंज खली
- ट्राईकोडर्मा
- बीजामृत
- जीवामृत
- नीमास्त्र
- ब्रम्हास्त्र
- तशपर्णी अर्क
- तशपर्णी अर्क

जैविक कृषि के मार्ग में बाधाएं

भूमि संसाधनों को जैविक कृषि से रासायनिक में बदलने में अधिक समय नहीं लगता लेकिन रासायनिक से जैविक में जाने में समय लगता है। शुरूआती समय में उत्पादन में कुछ गिरावट आ सकती है, जो कि किसान सहन नहीं करते है। अतरजैविक कृषि अपनाने हेतु उन्हें अलग से प्रोत्साहन देना जरूरी है।आधुनिक रासायनिक कृषि ने मृदा में उपस्थिति सूक्ष्म जीवाणुओं को लगभग नष्ट कर दिया हैए अत उनके पुनः निमार्ण में 3– 4 वर्ष लग सकते हैं।

जैविक कृषि को बढ़ावा देने हेतु योजनाएं

भारत सरकार विभिन्न योजनाओं कार्यक्रमों के माध्यमों से जैविक कृषि को बढ़ावा दे रही है स्थायी कृषि के लिए राष्ट्रीय मिशन, परम्परागत कृषि विकास योजना, राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, बागवानी के समन्वित विकास के लिए मिशन, तिलहन एवं पाम तेल पर राष्ट्रीय मिशन, एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा संचालित जैविक कृषि पर नेटवर्क कार्यक्रम आदि प्रमुख योजनाएं, जैविक कृषि को बढ़ावा दे रही हैं।

जैविक उत्पादों का प्रमाणीकरण एवं चिन्हीकरण

उत्पादों के लिए प्रमाणीकरण जहाँ बाजार को सुलभ बनाता है, वहीं ग्राहकों के लिए सुरक्षा व गुणवत्ता की गारंटी है। हमारे देश में अनेक उत्पादों पर एग्मार्क का चिन्ह ISI मार्क है ठीक उसी प्रकार इंडिया आर्गेनिक मार्क जैविक उत्पादों पर प्रमाणीकरण के पश्चात् लगाया जाता है।

जैव उत्पादन पंजीकरण प्रक्रिया : प्रदेशों में जैविक खेती के द्वारा विभिन्न फसलें, फल, सब्जी एवं औषधीय फसलें आदि उगाये जा रहे हैं तथा शनैः–शनैः उनका क्षेत्र विस्तार भी हो रहा है। कृषकों को जैविक उत्पादन का उचित मूल्य मिल सके, इसलिए जैविक–विधि से उत्पादित उत्पाद के पंजीकरण की व्यवस्था किया जाना आवश्यक है। हमारे देश में मानको का निर्धारण अन्तर्राष्ट्रीय मापदण्डों के आधार पर होने की प्रक्रिया चल रही है। संभवतः इसमें देर होने की संभावना है। इन परिस्थितियों में कृषकों के हित में यह आवश्यक होगा कि प्रदेशों में जैविक उत्पाद के पंजीकरण की व्यवस्था तत्काल शुरू कर दी जाए ताकि अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के निर्धारण तक हमारे गांवो के विशुध्द जैविक उत्पाद प्रमाणीकरण पर खरे उतरें और उसके साथ ही उनके विक्रय की व्यवस्था हो।

पी.जी.एस. जैविक चिन्ह एवम उनका प्रयोग

पी. जी. एस. जैविक चिन्ह तभी लगाया जा सकता है जब वह उत्पाद उत्पादक समूह या उत्पादक किसान द्वारा या उसकी देखरेख में पैक किया गया हो। चिन्ह का प्रयोग उत्पाद की केवल उतनी ही मात्रा पर किया जाना चाहिये जिसकी जानकारी प्रादेशिक परिषद को दी गई है और वेबसाइट पर डाली गई है।बिना विशिष्ट पहचान कोड के चिन्ह का प्रयोग नहीं किया जायेगा। प्रमाणीकृत जैविक तथा परिवर्तन कालावधि उत्पादों पर अलग–अलग चिन्हों का प्रयोग किया जायेगा।

पी जी एस चिन्ह

पी. जी. एस. जैविक : पूर्णतया प्रमाणित जैविक उत्पाद

पी. जी. एस. हरित : परिवर्तन कालवधि उत्पाद

वर्तमान भारत में जैविक कृषि परिदृश्य

देश के अंदर जैविक कृषि का महौल पैदा करने के उद्देश्य से वर्ष 2005 में जैविक कृषि नीति तैयारी की गई। इसकी अनेकानेक योजनाएं जैविक कृषि हेतु मील का पत्थर सावित हुई। राष्ट्रीय जैविक कृषि परियोजना के अंतर्गत जैविक प्रबंधन के प्रचार प्रसार तथा जैविक कृषि क्षेत्र के विस्तार हेतु अनेक योजनायें शुरू की गई हैं। पूर्वोत्तर राज्य सिक्किम देश का प्रथम पूर्णतया जैविक राज्य बन चुका है। देश में जैविक कृषि, कृषि मंत्रालय के दायरे में आता है जबकि जैविक कृषि के उत्पादों का निर्यात वाणिज्य मंत्रालय के अधीन है। राष्ट्रीय गोकुल मिशन के तहत जैविक कृषि को प्रोत्साहन देने के लिए किसानों की सहायता का प्रावधान है।

चित्रः जैविक विधि से तैयार होती मक्के की पौध

तालिका 2 : जैविक कृषि पर आँकड़े उपलब्ध कराने वाले विश्व के प्रमुख देश भूभाग (लाख हेक्टेयर)

वर्ष	जैविक कृषि मे संलग्न देशो की संख्या	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर)
1999	77	11.0
2000	86	14.9
2001	97	17.3
2002	100	19.8
2003	110	25.7
2004	121	29.9
2005	122	29.2
2006	135	30.1
2007	140	31.5
2008	155	34.4
2009	161	36.3
2010	161	35.7
2011	162	37.5
2012	164	37.6
2013	170	43.2
2014	172	43.7

तालिका 3 : जैविक कृषि मे संलग्न राष्ट्र एवं भूभाग

राष्ट्र	भूभाग (लाख हेक्टेयर)
आस्ट्रेलिया	17.2
अर्जेंटीना	3.1
यूएसए	2.9
चीन	1.9
स्पेन	1.7
इटली	1.4
उरग्वे	1.3
फ्रांस	1.1
जर्मनी	1.0
कनाडा	0.9

तालिका 4 : वर्ष 2014 मे विश्व के 10 बडे जैव उत्पादक देश

राष्ट्र	जैविक पदार्थ उत्पादक (संख्या)
भारत'	650000
युगांडा	190552
मेक्सिको'	169703
फिलीपींस	165974
तंजानिया'	148610
इथियोपिया*	135827
तुर्की	71472
पेरू	65126
परागुआ	58258
इटली	48662
2013*	

जैविक कृषि के लिए जन जागरूकता तथा अन्य प्रयास

सरकार द्वारा गाँवों में प्रदर्शनी आदि जैसे विभिन्न उपायों के माध्यम से जैविक कृषि के बारे में ब्लॉक स्तर पर जागरूकता बढ़ाने के लिए निरंतर प्रयास किया जा रहा है। किसान भाईयो को प्रयोगशालाओ और जैविक कृषि के उत्पादो के विपणन के बारे में भी जागरूक बनाने की आवश्यकता है। जैविक कृषि के प्रमाणन की प्रक्रिया के सरलीकरण एवम कृषि विज्ञान केन्द्रों कृषि विश्वविद्यालयो तथा आई सी ए आर संस्थानो में जैविक कृषि पर अनुसंधान तथा फसलों के अवशिष्ट के उचित इस्तेमाल को बढ़ावा देकर जैविक कृषि को किसानों के बीच लोकप्रिय बनाया जा रहा है।

सारांश

यह बहुत ही सुखद बात है कि भारत आज भी जैविक खाद्य उत्पादन मे सिरमौर है, जैविक कृषि कम लागत में ही मृदा की उर्वरता एवं कृषको की उत्पादकता बढ़ाने में पूर्णत सहायक है। वर्षा आधारित क्षेत्रों में जैविक कृषि की विधि और भी अधिक लाभदायक है। जैविक विधि द्वारा कृषि करने से उत्पादन की लागत तो कम होती ही है इसके साथ ही कृषकों को अधिक आय प्राप्त होती है।

तालिका 5 : वर्ष 2014 मे विश्व जैविक कृषि सूचकांक

सूचकांक	विश्व
प्रमाणित जैविक कृषि पर सूचना देने वाले देश (संख्या)	172 (2014)
जैविक कृषि भूमि (मलियिन हेक्टेयर)	43.7 (2013)
जैविक कृषि का कुल कृषि भूमि मे हिस्सेदारी (%)	0.99% (204)
गैर–कृषि जैविक क्षेत्र (मुख्य रूप से जंगली क्षेत्र)	376 लाख हेक्टेयर (2014)
जैव पदार्थ उत्पादक (संख्या)	23 लाख (2013)
जैव बाजार का आकार ($)	$ 80 अरब (2014)
प्रति व्यक्ति खपत ($)	+ 11
जैविक नियम पालन कर्ने वाले देश (संख्या)	87 (2015)
IFOAM सहयोगियों की संख्या	177 देशो से 784 सद्स्य (2014)

बदलती जलवायु में टिकाऊ कृषि का औचित्य

मनीषा टम्टा, संतोष कुमार, राकेश कुमार एवं अभिषेक कुमार दूबे

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

जलवायु परिवर्तन न केवल कृषकों अपितु दुनियाभर के शोधकर्ताओं और नीति निर्माताओं के लिए भी खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से चिंता का एक प्रमुख विषय बना हुआ है। बीते कुछ वर्षों से परिवर्तनीय मौसम के बिंदु जैसे कि गर्मी, सूखा, बाढ़ और बदलते वर्षा पैटर्नों के रूप में कृषि उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव डाल रहे हैं। एक मूल्यांकन के अनुसार 2080 के दशक तक विश्व कृषि उत्पादकता में 3–16% तक की कमी की संभावना जताई गई है (एफएओ, 2010)। वातावरण में हरितगृह गैसों की सांद्रता लगातार बढ़ने के कारण पृथ्वी के तापमान में प्रतिवर्ष 0.2 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो रही है। वैश्विक उष्मन के कारण समुद्रतल प्रतिवर्ष 0.3 से.मी. बढ़ रहा है। कृषि हमारे देश कि अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। हमारी अधिकतर आबादी कृषि पर निर्भर है, और अधिकतर जनसँख्या गांव में निवास करके कृषि को ही अपना प्रमुख जीविकोत्पार्जन माध्यम मानती है। जलवायु परिवर्तन के कारण फसलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता में कमी आएगी तथा अनेक फसलों के उत्पादन क्षेत्रों में परिवर्तन होगा। जैसा कि एक शोध में भी प्रकाशित किया गया है कि आने वाले समय में यह संभव है कि तापमान में बढ़ोत्तरी के कारण ऋतुओं की अवधि और आने के समय में भी परिवर्तन होगा जिससे फसल चक्र प्रभावित होगा, सम्भवतः शरद ऋतु में भी धान और मक्का की खेती की जाएगी। यदि तापमान में 1 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि होती है तो गेहूँ का उत्पादन प्रति हेक्टेयर 400 किलोग्राम तक घट सकता है। आईपीसीसी 2007 की रिपोर्ट के अनुसार 32 डिग्री सेल्सियस से ऊपर तापमान में 1 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि पर धान की पैदावार में 5% तक की कमी आ सकती है। तापमान में वृद्धि की फलस्वरूप फसलों की वानस्पतिक वृद्धि, पुष्पन तथा परिपक्वन अवधि में भी परिवर्तन होंगे। जलवायु परिवर्तन के कारण सूखा, बाढ़, अतिवृष्टि तथा चक्रवात जैसी प्राकृतिक आपदाओं में वृद्धि, खेती के लिए जल की उपलब्धता में कमी, मृदा अपरदन, कार्बन की कमी तथा उर्वरकता में कमी जैसी कई समस्याओ से मुख्य रूप से विकासशील देशों के गरीब किसानों को जूझना पड़ेगा। इस परिदृश्य में विश्व के अधिक आबादी वाले देशों को अवश्य ही बढ़ती आबादी की खाद्य आपूर्ति की समस्या का सामना करना पड़ेगा।

आईपीसीसी ने अपनी 2013 की रिपोर्ट में यह कहा है की 1950 के दशक से अब तक हज़ार वर्षों की तुलना में जलवायु परिवर्तन कई मायनो में अभूतपूर्व है और जलवायु प्रणाली पर वामग का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। वायुमंडल और महासागर गर्म हो चुके है, बर्फ और बर्फ की मात्रा में कमी हो गई है, समुद्र का स्तर बढ़ गया है और हरितगृह गैसों की सांद्रता में वृद्धि हुई है। उत्तरी गोलार्ध में पिछले 1400 वर्षों में 1983 से 2012 तक सर्वाधिक 30 गर्म वर्ष थे (आकृति 1)। भूमि और महासागर की सतह के औसत तापमान ने विश्व स्तर पर 1980 से 2012 की अवधि के दौरान 0.83 डिग्री सेल्सियस की वार्मिंग दर्शायी है। वर्ष 1850 से 1900 और 2003 से 2012 की अवधि के बीच कुल औसत तापमान में वृद्धि 0.78 डिग्री सेल्सियस तक रहा। उत्तरी गोलार्ध के मध्य–अक्षयांश भूमि क्षेत्रों में औसतन वर्षा 1901 से बढ़ी है। वर्ष 1950 के बाद से कई चरम मौसम और जलवायु कार्यक्रमों में परिवर्तन देखा गया है, संभावना है की ठन्डे दिनों और रातों की संख्या में कमी आयी है और वैश्विक स्तर पर गर्म दिनों और रातों की संख्या में वृद्धि हुई है। वर्ष 1901 से 2010 की अवधि के दौरान वैश्विक स्तर पर औसतन समुद्री स्तर 0.19 मी. बढ़ गया है। वर्ष 2011 में हरितगृह गैसों की सांद्रता जैसे कार्बन डाई ऑक्साइड (CO_2), मीथेन (CH_4) और नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O), 391 पीपीएम, 1803 पीपीबी और 324 पीपीबी पाई गई है जो कि पिछले औद्योगिक स्तरों से क्रमशः 40%, 150% और 20% बढ़ गई है। लगभग 30% मानववंशीय

उत्सर्जित CO_2 अवशोषित करने के कारण महासागरों का अम्लीकरण हो रहा है। कुल रेडिएटिव फोर्सिंग सकारात्मक है और जलवायु परिवर्तन द्वारा ऊर्जा में वृद्धि हुई है, जिसमे सबसे बड़ा योगदान 1750 के बाद CO_2 की वायुमंडलीय सांद्रता में हुई वृद्धि का रहा है।

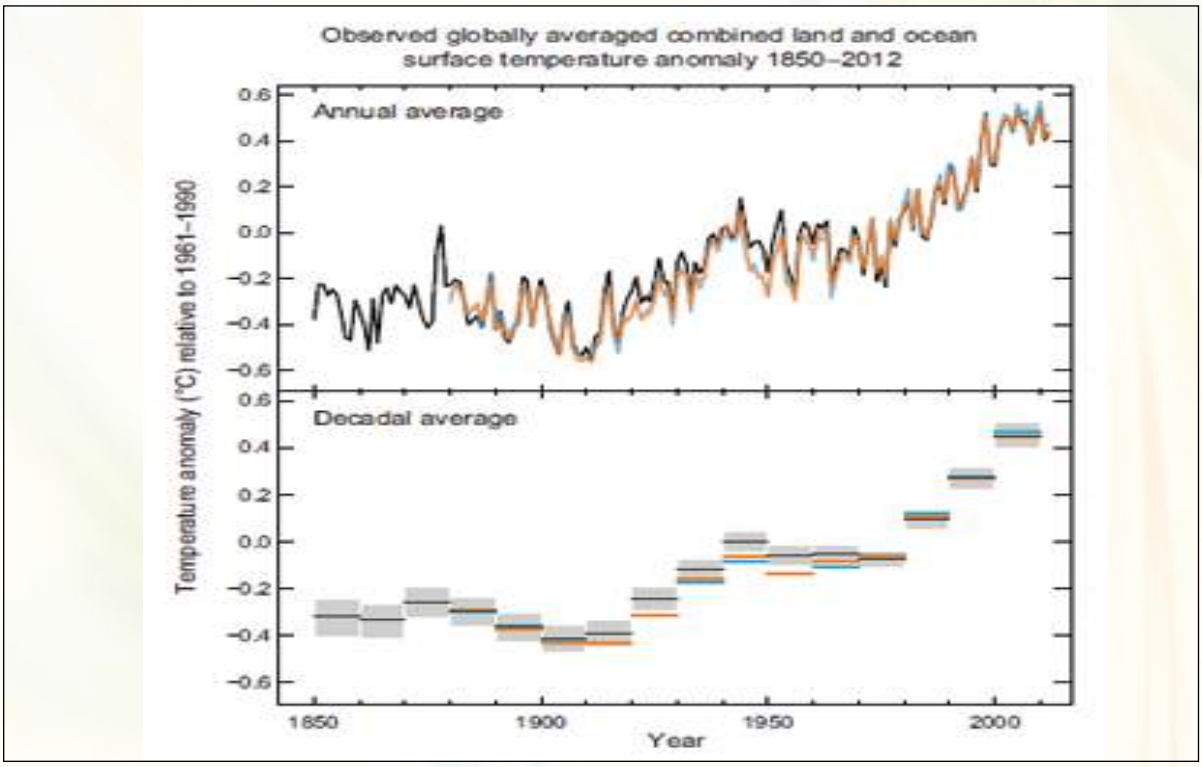

आकृति 1: 1961–1990 के सापेक्ष में तापमान विसंगति

आईपीसीसी ने अपनी पाँचवी आंकलन रिपोर्ट में ही चार नए जलवायु परिवर्तन परिदृश्यों का एक सेट परिभाषित किया है जिसे रिप्रेजेन्टेटिव कंसन्ट्रेटीव पाथवे (आरसीपी) के रूप में दर्शाया है, इनकी पहचान 1750 के सापेक्ष 2100 में कुल रेडिएटिवे फोर्सिंग से की गई है, आरसीपी 2.6 के लिए 2.6 वाट प्रति मीटर (शमन परिदृश्य), आरसीपी 4.5 के लिए 4.5 वाट प्रति मीटर तथा आरसीपी 6.0 के लिए 6.0 वाट प्रति मीटर (स्थिरीकरण परिदृश्य) और आरसीपी 8.5 के लिए 8.5 वाट प्रति मीटर (उच्च परिदृश्य)। इन सभी परिदृश्यों में तापमान और समुद्री जल स्तर का अनुमान तालिका 1 में दर्शाया गया है। संभावना है की गर्म तरंगों की आवृत्ति और अवधि उच्च मात्रा में घटित होंगी।

तालिका 1 : 1986–2005 की अवधि के सापेक्ष 21वीं शताब्दी के मध्य और 21वीं शताब्दी के अंत के लिए वैश्विक स्तर पर औसतन सतही वायुमंडलीय तापमान और औसतन समुद्री स्तर वृद्धि में अनुमानित परिवर्तन।

	परिदृश्य	2046–2065		2081–2100	
		औसत	संभावित सीमा	औसत	संभावित सीमा
वैश्विक औसत सतही तापमान में परिवर्तन (डिग्री सेल्सियस)	आर.सी.पी. 2.6	1.0	0.4 – 1.6	1.0	0.3 – 1.7
	आर.सी.पी. 4.5	1.4	1.9 – 2.0	1.8	1.21 – 2.6
	आर.सी.पी. 6.0	1.3	0.8 – 1.8	2.2	1.4 – 3.1
	आर.सी.पी. 8.5	2.0	1.4 – 2.6	3.7	2.6 – 4.6
वैश्विक औसत समुद्री सतह में वृद्धि (मीटर)	आरसीपी 2.6	0-24	0-17 – 0-32	0-40	0-26 – 0-55
	आर.सी.पी. 4.5	0.26	0.19 – 0.33	0.47	0.32 – 0.63
	आर.सी.पी. 6.0	0.25	0.18 – 0.32	0.48	0.33 – 0.63
	आर.सी.पी. 8.5	0.30	0.22 – 0.38	0.63	0.45 – 0.82

भविष्य में फसल उत्पादकता में सुधार करने के लिए तथा जलवायु शमन लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए CO_2 और गैर– CO_2 हरितगृह उतसर्जनो दोनों को काफी कम करने की आवश्यकता है। गैर–कार्बन डाईआक्साईड उत्सर्जन कुल वैश्विक हरितगृह उतसर्जन और रेडिएटिव फोर्सिंग के लिए लगभग 30% योगदान देता है। इसमें सबसे महत्वपूर्ण हरितगृह गैसें मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड हैं और कृषि इन दोनों के उत्सर्जन में लगभग 10 –12% योगदान देता है। मीथेन उतसर्जन के सबसे प्रासंगिक स्त्रोतों में से आतंरिक किण्वन (20 – 40%) धान की खेती (9–11%) है। नाइट्रस ऑक्साइड उतसर्जन के लिए सबसे प्रासंगिक स्त्रोत पशुधन (37–77%) और कृत्रिम उर्वरकों (12%) का उपयोग है। अतः कृषि क्षेत्र मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड में कमी के माध्यम से जलवायु शमन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। आने वाले वर्षों में हमें कृषि को एक टिकाऊ आयाम के रूप में बनाए रखने के लिए परम्परागत अथवा आधुनिक तकनीकियों को अपनाना ही होगा, जिनमें से कुछ संभावित शमन विकल्प इस प्रकार हैं–

संरक्षित कृषिः यह विकल्प मुख्य रूप से कृषि संसाधन संरक्षण और कृषि स्थिरता को बढ़ावा देता है, फसल उत्पादन में सुधार, संसाधन उपयोग दक्षता में वृद्धि करने और मौसम चरम सीमाओं से निपटने में भी मदद करता है। यह प्रणाली उत्पादन लागत को काफी हद तक कम करती है (23%) लेकिन परंपरागत प्रणाली से लगभग बराबर या उससे भी अधिक उत्पादन देता है अतः इस प्रकार उत्पादन प्रणाली की आर्थिक लाभप्रदता में वृद्धि करता है। यह पारम्परिक उत्पादन प्रणालियों की तुलना में उच्च तापमान (पौध में 1–4 डिग्री सेल्सियस तापमान में कमी) और सिंचाई जल उत्पादकता में वृद्धि (66–100% तक) के प्रभाव को भी नियंत्रित करता है। इसके आलावा सीए आधारित धान और गेहूँ प्रणाली परंपरागत प्रणालियों की तुलना में 10–15% कम हरित गृह गैसों का उत्सर्जन करती हैं।

एकीकृत कृषि प्रणालीः इसमें विभिन्न कृषि उद्यमों जैसे कि फसल, पशुपालन, मत्स्य पालन, वानिकी आदि का एकीकरण किया जाता है जो कृषि अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करता है। इसमें सभी खेती के अपशिष्टों का पुनः चक्रीकरण किया जाता है जिससे कृषि में होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है। ये उद्यम न केवल आय के पूरक एवं पोषक सुरक्षा प्रदान करते हैं अपितु परिवार में श्रमिक रोजगार को बढ़ाने में भी मदद करते हैं।

जलवायु स्मार्ट कृषि : यह विकल्प स्वयं में कई तकनीकों, नीतियों और संस्थागत हस्तक्षेपों जैसे बीज, पानी, ऊर्जा और पोषक तत्वों को सम्मिलित करता है। यह कृषि को स्थिरता देता है और इस प्रकार किसानों पर जलवायु परिवर्तन के जोखिम को कम करने में मदद करता है। इसके अंतर्गत निम्न जलवायु स्मार्ट प्रौद्योगिकियों का चयन किया जा सकता है–

1. **वाटर स्मार्ट प्रौद्योगिकीः** यह एक ऐसा इंटरवेंशन जो उपज के सामान या उच्च उत्पादन के लिए पानी की आवश्यकता को कम करता है। इसमें वर्षा जल प्रबंधन, लेजर एडेड भूमि समतलीकरण, धान की श्री विधि, अलटरनेट वेटिंग और ड्राइंग और फरो सिंचित रेस्ड बीएड सिस्टम तकनीकें आती है।
2. **ऊर्जा स्मार्ट प्रौद्योगिकीः** यह विकल्प उपज के स्तर को प्रभावित किये बिना भूमि को बुवाई के लिए तैयार करने के दौरान ऊर्जा की खपत को कम करता है और साथ ही पानी की आवश्यकता को भी कम करने में मदद करता है। इसमें किसान धान की सीधी बुवाई और शून्य/ न्यूनतम जुताई की विकल्प को अपना सकते है।
3. **पोषक तत्वों की स्मार्ट प्रौद्योगिकीः** यह तरीका फसलों के लिए रासायनिक उर्वरकों के उपयोग को कम करने तथा मिटटी में कार्बन के स्तर को बनाए रखने में मदद करता है। इसके अंतर्गत हरी खाद का प्रयोग, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन, कार्बनिक एवं रासायनिक उर्वरकों का एकीकृत उपयोग और ग्रीन लीफ चार्ट तकनीकें आती है।
4. **मौसम स्मार्ट प्रौद्योगिकीः** यह तरीका किसानों को वित्तीय सुरक्षा और मौसम सलाह सम्बंधित सेवाएं प्रदान करता है। इसमें मुख्यतः फसल बीमा, पशु बीमा और जिला स्तरीय कृषि मौसम सलाह सम्मिलित है।
5. **तनाव सहिष्णु फसलों और फसल विविधीकरण का चयनः** इसके अंतर्गत ऐसी फसलों और प्रजातियों का चयन किया जाता है जो मौसम में बदलाव से उत्पन्न तनाव जैसे कि तापमान में वृद्धि और पानी की कम उपलब्धता को सहन कर सकती है और साथ ही यह मिटटी की विभिन्न परतों से पोषक तत्वों का उपयोग करने में भी सक्षम होती हैं। इसमें बाढ़ अवरोधी प्रजातियों, सूखा सहिष्णु प्रजातियों और फसल विविधीकरण को एक विकल्प के रूप में चुना जा सकता है।

फास्फोरसधारी उर्वरकों का संतुलित उपयोगः समय की मांग

खुरशिद आलम, रवि सैनी, प्रेम कुमार बा. एवं तिरुनगरी रूपेश

भा.कृ.अनु.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

फास्फोरस पौधों के लिए एक प्रमुख पोषक तत्व है, जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पौधों में सभी शारीरिक प्रक्रियाओं को प्रभावित करता है। यह अनुमान लगाया गया है कि विश्व स्तर पर फास्फोरस की कमी 40% से अधिक खेती योग्य भूमि को प्रभावित करती है, जिससे फसल की उपज कम हो जाती है। भारत में, 90% से अधिक जिलों में अग्रिम फसल उपज प्राप्त करने के लिए फास्फोरस उर्वरक की आवश्यकता होती है। फास्फोरस सबसे कम गतिशील और अत्यधिक क्रियाशील तत्व है, जो आसानी से मृदा में स्थिर हो जाता है। कुल मृदा फास्फोरस का केवल एक छोटा अनुपात ही पौधे को उपलब्ध होता है, भले ही मृदा में कुल फास्फोरस का पर्याप्त भण्डार हो। फास्फोरस की सीमित उपलब्धता कृषि उत्पादन में एक प्रमुख बाधा है, उच्च अपवाह और क्षरण–प्रवण आवासों में फॉस्फेटिक उर्वरकों का अधिक प्रयोग जल प्रदूषण और संबंधित पर्यावरणीय समस्याओं का एक प्रमुख कारण बन गया है। पौधों के प्रमुख पोषक तत्वों में से, विश्व में फॉस्फोरस के संसाधन सबसे कम हैं, इसलिए वैश्विक स्तर पर, संसाधनो संरक्षित करने और कृषि उत्पादकता को बनाए रखने और बढ़ाने के लिए फॉस्फोरस का यथासंभव कुशलता से उपयोग किया जाना चाहिए। दुनिया भर में उच्च श्रेणी के रॉक फॉस्फेट के गैर–नवीकरणीय भंडारो के निरंतर खनन के कारण, प्राकृतिक रॉक फॉस्फेट के भंडार विलुप्त होने के कगार पर हैं। भविष्य में विभिन्न प्रबंधन तकनीको के माध्यम से कृषि में फास्फोरस की उपयोग दक्षता में वृद्धि करना आवश्यक है। सतत फास्फोरस प्रबंधन को अब वैश्विक खाद्य सुरक्षा के शीर्ष मुद्दों में स्थान दिया गया है।

फास्फोरस की उपयोग दक्षता को बढ़ाकर फास्फोरस उर्वरक की आवश्यकता को कम करने के विभिन्न उपायः

फास्फोरस की उपयोग दक्षता बढ़ाने के लिए उपयुक्त पाए गए विभिन्न उपायो और तकनीकों की यहां संक्षेप में चर्चा की गई हैः

1. **फास्फेटिक उर्वरक के प्रयोग का समयः**

   मौसमी फसलों के लिए, बुवाई/रोपण के समय या कुछ समय पहले बेसल के रूप में फास्फेटिक उर्वरकों का प्रयोग आम बात है। भारत में फास्फोरस की कुल अनुशंसित खुराक को विभाजित करके फसल में प्रयोग पर आधारित बहुत से परीक्षण किए गए है, जो अच्छे परिणाम देने में विफल रहे और उनके परिणाम भी असंगत थे। यह दावा किया गया है कि जब धान–गेहूं फसल प्रणाली में फास्फोरस की पूरी खुराक धान के बजाय गेहूं की फसल में दिया जाता है, तो पौधे में कुल फास्फोरस की मात्रा और कुल बायोमास उत्पादन में सुधार होता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि यह रणनीति अगली धान की फसल पर बेहतर अवशिष्ट प्रभाव डालती है।

2. **फास्फेटिक उर्वरकों के प्रयोग की विधिः**

   पारंपरिक जल–घुलनशील फास्फोरस उर्वरकों का बैंड प्लेसमेंट, अपलेंड फसलों के लिए फास्फोरस की उपयोग दक्षता बढ़ाने के लिए प्रसारण विधि की तुलना में एक बेहतर उपाय है। फास्फोरस उर्वरक को बैंड के किनारे और बीज की पंक्तियों के नीचे, बीज से थोड़ा नीचे, या पंक्तियों के बीच में रखा जाता है, जहां विकासशील जड़ों की उर्वरक तक पहुंच आसान हो। उर्वरक आमतौर पर 2 इंच की दूरी पर और बीज या पौधों से 2 इंच की गहराई पर दिया जाता है। बैंड–प्लेसमेंट में मृदा–उर्वरक संपर्क कम होने से, फास्फोरस की उपयोग दक्षता अधिक होती है, जो कि कम फास्फोरस स्थिरीकरण और आपूर्ति किए गए फास्फोरस के प्रभावी उपयोग

के कारण हो सकती है। हालांकि, ऐसे उर्वरक, जिनमे फास्फोरस (नाइट्रोफॉस्फेट) का केवल एक हिस्सा ही पानी में घुलनशील है, या कोई भी फास्फोरस पानी में घुलनशील नहीं है (रॉक फॉस्फेट), मिट्टी–उर्वरक संपर्क को अधिकतम करने के लिए सतह प्रसारण के बाद मिट्टी में मिलाना, प्लेसमेंट से बेहतर होता है।

3. अम्लीय मृदा में चूने का प्रयोग:

चूना मृदा में बड़ी संख्या में कार्बोनेट आयन (CO_3^{2-}) जोड़ता है, जो हाइड्रोलिसिस के माध्यम से हाइड्रॉक्साइड आयनों (OH^-) का उत्पादन करते है, और इस प्रकार, मृदा का चभ बढ़ जाता है। अम्लीय मृदा का पीएच बढ़ने पर एल्यूमीनियम और लौह फॉस्फेट की घुलनशीलता बढ़ जाती है, जिससे मृदा में फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ती है। इसके अलावा, हाइड्रॉक्साइड आयन, ऑक्साइड सतहों से भी फॉस्फेट का आदान–प्रदान कर सकता है, जो मृदा में पौधों के लिए उपलब्ध फास्फोरस की मात्रा बढ़ाता है। इस प्रकार चूने का प्रयोग लगभग एक तिहाई भारतीय मृदाओ, जिनकी प्रकृति अम्लीय हैं, में फास्फोरस की उपयोग क्षमता बढ़ाने के लिए एक साध्य उपाय हो सकता है। दूसरी ओर, आवश्यकता से अधिक चूने का प्रयोग करने से बचना चाहिए क्योंकि यह फास्फोरस के स्थिरीकरण को बढ़ाता है और घुलनशील फॉस्फेट को अघुलनशील कैल्शियम फॉस्फेट के रूप में अवक्षेपित करता है।

4. कार्बनिक पदार्थ या खाद का प्रयोग:

मृदा में कार्बनिक अवशेषों के अपघटन से विभिन्न प्रकार के कार्बनिक अम्ल उत्पन्न होते हैं, जो अंतर्निहित मृदा फास्फोरस को गतिशील बनाने में मदद करते हैं। उच्च आणविक भार वाले कार्बनिक अणु, फास्फोरस विनिमय के स्थानों को कवर करके फास्फोरस स्थिरीकरण को सीमित करते हैं। इसके अलावा, विभिन्न कार्बनिक यौगिकों से युक्त कार्बनिक अवशेष, जो आम तौर पर प्रकृति में ऋणायनी होते हैं, ध्रुवीय अधिशोषण में फॉस्फेट आयनों के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं और फॉस्फोरस स्थिरीकरण को कम करते हैं। फार्म क्षेत्र की खाद (एफ वाई एम) जैसे जैविक मृदा सुधारक, मृदा में सूक्ष्मजैविक गतिविधियो को बढ़ावा देते हैं, जो विभिन्न कार्बनिक अपशिष्टों पर कार्य करते है, उन्हें विघटित करते है और विभिन्न प्रकार के कार्बनिक अम्लों का उत्पादन करते है। सूक्ष्मजीव कार्बनिक पदार्थों का अपघटन करके पोषक तत्वों को कार्बनिक से अकार्बनिक रूप बदलने में भी सहायता करते हैं, और पोषक तत्वों को फसलों के लिए धीरे–धीरे छोड़ते है, जिसके परिणामस्वरूप फास्फोरस की उपयोग दक्षता में बढ़ोतरी होती है।

5. जैव उर्वरकों का प्रयोग:

जैव उर्वरक एक ऐसा पदार्थ है जिसमें जीवित सूक्ष्म जीव होते हैं, और इनका बीज, पौधों की सतहों या मृदा में उपयोग करने पर, राइजोस्फीयर या पौधे के आंतरिक भाग को उपनिवेशित करते हैं और मेजबान पौधे को प्राथमिक पोषक तत्वों की आपूर्ति या उपलब्धता में वृद्धि करके विकास को बढ़ावा देते हैं। जैव उर्वरक नाइट्रोजन स्थिरीकरण और फास्फोरस को घुलनशील बनने जैसी प्राकृतिक प्रक्रियाओं के माध्यम से पोषक तत्व जोड़कर और विकास को बढ़ावा देने वाले पदार्थों के संश्लेषण के माध्यम से पौधों की वृद्धि को उत्तेजित करते हैं। फॉस्फेट को घुलनशील बनाने वाले सूक्ष्मजीव लाभकारी सूक्ष्मजीवों का एक समूह है, जो कार्बनिक और अकार्बनिक अघुलनशील फास्फोरस यौगिकों को घुलनशील फास्फोरस के रूप में हाइड्रोलाइज करने में सक्षम है, जिसे पौधों द्वारा आसानी से ग्रहण किया जा सकता है। इन फॉस्फेट यौगिकों को घुलनशील बनाने वाले सूक्ष्मजीवों में जीवाणु (बैसिलस, स्यूडोमोनास, और राइजोबियम) और कवक (पेनिसिलियम और एस्परगिलस) उल्लेखनीय हैं। इन सूक्ष्मजीवों द्वारा मुक्त कार्बनिक अम्ल अघुलनशील यौगिकों से फास्फोरस की रिहाई के साथ–साथ एल्यूमीनियम, लोहा, कैल्शियम जैसे धनायनों के अच्छे बंधक के रूप में कार्य करते हैं। फॉस्फेट को घुलनशील बनाने वाले सूक्ष्मजीवों द्वारा कार्बनिक अम्लों और हाइड्रोजन आयनों का स्राव माध्यम के पीएच में कमी का कारण बनता है, जिससे कैल्शियम फॉस्फेट के यौगिक घुलनशील हो जाते है। इन सूक्ष्मजीवों द्वारा कई हाइड्रोलाइटिक एंजाइम जैसे फॉस्फेटेस, फाइटेस (मुख्य रूप से कवक द्वारा) स्रावित होते हैं, जो कार्बनिक

फास्फोरस के अकार्बनिक रूप में बदलने का कारण बनते हैं। आदर्श परिस्थितियों में, वे 30–35 किलोग्राम P_2O_5 प्रति हेक्टेयर तक बढ़ा सकते हैं। हालांकि, मृदा में फॉस्फेट को घुलनशील बनाने वाले सूक्ष्मजीवों की उच्च दक्षता के लिए कार्बन स्रोत की प्रचुरता एक पूर्व–आवश्यकता है। दूसरी ओर, जैव उर्वरक के रूप में वेसिकुलर अर्बुस्कुलर माइकोराइजा जैसे फॉस्फेट मोबिलाइजर्स का उपयोग भी एक साध्य विकल्प है। माइकोराइजा जड़–सहजीवन हैं जो मृदा के फास्फोरस की जैव उपलब्धता को बढ़ाते हैं।

6. मृदा में सिलिकॉन का प्रयोगः

विशेष रूप से फास्फोरस की कमी वाली मृदा में पौधों के फास्फोरस पोषण को बढ़ावा देने के लिए सिलिकॉन प्रयोग किया जाता है। कुछ शोधकर्ताओं का मानना है कि सिलिकॉन जड़ों से कार्बनिक अम्ल के उत्सर्जन को बढ़ाता है, जो राइजोस्फीयर में अकार्बनिक फास्फोरस को मोबिलाइज करता है। इसके अतिरिक्त, सिलिकेट आयन विशिष्ट मृदा अधिशोषण स्थलों के लिए फॉस्फेट के साथ प्रतिस्पर्धा करता है, फास्फोरस अधिशोषण को कम करता है और फास्फोरस की उपलब्धता को बढ़ाता है। हालांकि, अधिकांश सिलिकॉन स्रोत, जैसे कि सिलिकेट साल्ट या स्लैग–आधारित उर्वरक, मृदा में उपयोग के लिए अत्यधिक महंगे हैं और अधिकांश किसानों के लिए उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। वर्तमान में, कृषि अनुप्रयोग के लिए लागत प्रभावी और पर्यावरण के अनुकूल सिलिकॉन के स्रोतों की पहचान करने के लिए अनुसंधान किया जा रहा है।

पोटाश का फसल उत्पादन में योगदान

इन्दु शेखर सिंह, मनोज कुमार, अशोक कुमार, धीरज प्रकाश एवं आलोक कुमार

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर–
मखाना अनुसंधान केन्द्र, दरभंगा (बिहार)

पोटाश क्या है?

(क) पोटाश पादप वृद्धि के लिए एक आवश्यक पोषक तत्व है तथा अधिक उपज वाली खेती की उत्पादकता बनाये रखने के लिये अति आवश्यक है। (ख) पौधों के लिए इसकी नत्रजन के बराबर या अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है। (ग) पोटाश ना केवल उपज बढ़ाता है बल्कि यह फसल की गुणवत्ता को भी सुधारता है जिससे किसान को अच्छी पैदावार मिलती है, और परिणामस्वरूप अधिक लाभ प्राप्त होता है।

पोटाश और पादप वृद्धि

पोटाश, पौधों की बहुत सी क्रियाओं के लिये आवश्यक है:–

(क) पौधें में कुल शुष्क पदार्थ का 1 से 4 प्रतिशत तक पोटाश पाया जाता है। (ख) एन्जाइम (Enzyme) पौधों की बहुत शारीरिक क्रियाओं के लिए आवश्यक है । पोटाश 80 से अधिक एन्जाइम्स को क्रियान्वित करता है। (ग) एन्जाइम्स को क्रियान्वित करना एक सबसे महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जो कि पोटाश द्वारा ही संभव है। (घ) पौधों में अन्य धनआयनों की अपेक्षा पोटाश धनआयन ज्यादा होते है और पौधों में जल के अनुपात को नियन्त्रित करते है। इसलिये जिन पौधों में या मृदा में पोटाश की कमी हो वे पौधे जल की कमी (water stress) वाले क्षेत्रों में जल्दी ही मर जाते है। (ङ) पोटाश तत्व पौधों की पत्तियों पर पाये जाने वाले छिद्रों (stomata) के खुलने व बन्द होने की प्रक्रिया को नियमित करता है, जो कि वाष्पोत्सर्जन व प्रकाश संश्लेषण जैसी भौतिक व रासायनिक प्रक्रियाओं के लिऐ अति आवश्यक है। उदाहरणार्थ– यदि मटर में पोटाश तत्व की पूर्ति कम कर दी जाये तो उसकी वाष्पोत्सर्जन की दर भी कम हो जाऐगी। (च) उच्च उर्जा वाले फास्फेट परमाणु (ए.टी.पी.) बनाने के लिए वो रैशियम तत्व आवश्यक है। ए.टी.पी. प्रकाश संश्लेषण व स्वसन प्रक्रिया के दौरान बनते है। (छ) पोटाश भोज्य पदार्थो के संग्रहण व स्थानान्तरण को बढ़ाता है। (ज) पौधों में नत्रजन ग्रहण करने व प्रोटीन के संश्लेषण के लिए पोटाश आवश्यक है।

फसले पोटाश उर्वरकों के प्रयोग का क्यों प्रतिपादन करती है?

सभी फसलें (खाघान फसलें, तिलहन, कन्द और मूल वाली फसलें, रेशेदार फसलें, सब्जी, चुकंदर और गन्ना फल, तम्बाकू, मसालेदार एवं दहलनी फसलें) पोटाश को एक नियमित दर से ग्रहण करती है इसलिये ये फसलें पोटाश उर्वरकों के प्रयोग का प्रतिपादन करती है । पोटाश उर्वरकों का प्रयोग बहुत से पादप कार्यो, जिसके लिये पोटाश बहुत आवश्यक है, पर सकारात्मक प्रभाव छोड़ता है:–

(क) पोटाश पौधों की शुष्क सहनशीलता को बढ़ाता है। (ख) पोटाश पौधों की शीत कठोरता व पाले से लड़ने की क्षमता को बढ़ाता है। (ग) पौधों मे होने वाली बीमारियों व कीट–मकोड़े के आक्रमण को पोटाश कम करता है (घ) पोटाश पेड़ पौधों को मृदा की सतह पर गिरने से बचाता है। (ङ) पोटाश पेड़ पौधों की जड़ों की वृद्धि व विकास में सहायक है। (च) पोटाश दरहनी फसलों की जडत्रों में होने वाले नत्रजन स्थिरीकरण को बढ़ाता है। (छ) पोटाश पौधों में नत्रजन की उपयोग क्षमता को बढ़ाता है।

पोटाश फसलों की गुणवत्ता को कैसे बढ़ाता है ?

पोटाश फसल उत्पादन में एक गुणवत्ता बढ़ाने वाला पोषक तत्व माना जाता है–

(क) पोटाश दाने में प्रोटीन की मात्रा को बढ़ाता है। (ख) पोटाश फसलों में माड, वसा व विटामिन– 'सी'

की मात्रा को बढ़ाता है। (ग) पोटाश फलों एवं कन्द वर्गीय फसलों के कन्द के आकार को बढ़ाता है। (घ) पोटाश फल व फूलों के रंग एवं सुगंध को बढ़ाता है। (ङ) कृषि उत्पादों के भण्डारण व ढुलाई की क्षमता को पोटाश बढ़ाता है।

पोटाश पौधों को रोग व कीट रोधी बनाने में कैसे सहायक है?

(क) पोटाश पौधों को मोटी कोशिका भिति बनाने में सहायक है। (ख) ये पौधों का मजबूत तना व डन्ठल बनाने में सहायक है। (ग) पोटाश पौधों में शर्करा संचित नहीं होने देता। (घ) पौधों में नत्रजन की संतुलित पूर्ति करता है।

उपरोक्त सभी बिन्दु पौधों को विषाणु, जीवाणु, कवक, व कीटों से होने वाले संक्रमण से बचाते है।

फसलें मृदा से कितना पोटाश ग्रहण कर सकती है?

पौधों को पोटाश की मात्रा लगभग नत्रजन के बराबर या अधिक मात्रा में आवश्यक होती है । औसतन पांच टन उपज देने वाली एक धान की फसल लगभग 110 किलोग्राम नत्रजन, 38 किलोग्राम फास्फोरस और 156 किलोग्राम पोटास प्रति हेक्टेयर ग्रहण करती है।

क्रमांक	चावल: पोषक तत्वों की आवश्यकता	प्रतिशत	मक्का: पोषक तत्वों की आवश्यकता	प्रतिशत
1.	गंधक (S)	1	गंधक (S)	3
2.	कैलशियम ऑक्साईड (CaO)	6	कैलशियम ऑक्साईड (CaO)	9
3.	मैगनेशियम ऑक्साईड (MgO)	7	मैगनेशियम ऑक्साईड (MgO)	11
4.	फॉस्फेट (P_2O_5)	13	फॉस्फेट (P_2O_5)	13
5.	नत्रजन (N)	32	नत्रजन (N)	29
6.	पोटास (K_2O)	35	पोटास (K_2O)	35

तालिका –1 फसलों द्वारा पोषक तत्वों का उपयोग

क्रमांक	फसल का नाम	उपज (मैं. टन/हें.)	पोषक तत्वों का ग्रहण कि.ग्रा./हे.		
			N	P2O5	K2O
1.	मक्का	6	120	50	120
2.	गेहूँ	6	170	75	175
3.	आलू	40	175	80	310
4.	टमाटर	50	140	65	190
5.	सोयाबीन	3	220	40	170
6.	सूरजमुखी	3	120	60	240
7.	नींबू जातीय	30	270	60	350
8.	कपास	1	120	45	90
9.	गन्ना	100	130	90	340

पौधों में पोटाश की कमी के लक्षण

वे फसलें जिनको पोटाश पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं होता है उनमें पोटाश की कमी के लक्षण आसानी से पहचाने जा सकते है।

(क) पोटाश की कमी से पुरानी व नीचे वाली पतियाँ सबसे प्रभावित होती है जिन पर सफेद, पीले, संतरी रंग के धब्बे दिखाई देते है जो कि पत्ती की नोक से शुरू होते हैं।

(ख) ऐसे पौधों की पत्तियों का रंग हरे से भूरा हो जाता है और पत्ती सिकुड़ जाती है। ऊतक भूरे रंग के हो जाते है और मर जाते है। अन्ततः पत्तियां सूख जाती है ।

(ग) पौधों में पोटाश की कमी के लक्षण पुरानी पत्तियों से धीरे–धीरे उपर की नई पत्तियों की और फैलते है । नई पत्तियां छोटी व हरी–नीली हो जाती है ।

(घ) पोटाश की कमी से पौधों का डंठल पतला व भंगुर हो जाता है परिणामस्वरूप पौधा नीचे गिर जाता है।

(ङ) पौधों की जड़ बहुत ही कम विकसित होती है और प्रायः सड़ने लगती है।

(च) फसलों में कीट व्याधियों का प्रकोप बढ़ जाता है ।

(छ) फलों को आकार छोटा व कम रसीला हो जाता है और उनका रंग भी फीका पड़ जाता है।

फसलों में पोटाश उर्वरकों का प्रयोग कब व कैसे करें ?

जब फसल पर पोटाश की कमी के लक्षण दिखाई देते है तब तक फसल को भारी नुकसान हो चुका होता है । कई बार पौधों में एक स्थिति ऐसी भी आती है कि पोटास की कमी होते हुये वे कमी के लक्षण प्रदर्शित नहीं करतें, ऐसी स्थिति को छिपी हुई भूख कहते है। इसलिऐ कभी भी किसान को पोटाश को कमी के लक्षणों का इन्तजार किये बिना फसल की आवश्यकतानुसार पोटाश उर्वरक डाल देना चाहिए ।

हालांकि भारत की मृदाओं में पोटास तत्व की मात्रा सभी अन्य आवश्यक पोषक तत्वों से ज्यादा है और भारतीय किसान पोटाश तत्व को अतिरिक्त उर्वरक डाल कर पूरा नही करते, मगर लगातार एक के बाद एक फसल उगाने से हमारे देश की मृदा में भी इस तत्व की कमी देखी जा रही है । मुख्य कारण अधिक उपज देने वाली जातियों द्वारा विशाल मात्रा में पोषक तत्त्वों का दोहन है उसमें से पोटाश भी एक तत्व है । यदि पर्याप्त पोटाशियम उर्वरकों का प्रयोग नही किया गया तो मृदा में पोटाश की कमी हो जाऐगी । अतः पोटाश उर्वरकों के बिना, अधिक उपज लेना असंभव है ।

तालिका –2 कुछ मुख्य पोटाश उर्वरक

क्रमांक	उर्वरक	फार्मूला	% K_2O	सामान्य नाम
1.	पोटाश क्लोराइड	KCI	60	म्यूरेट आफ पोटश (एम. ओ.पी.)
2.	पोटाश सल्फेट	K_2SO_4	50	एस.ओ.पी.
3.	पोटाश नाइट्रेट	KNO	46	एन.ओ.पी.
4.	मोनो पोटाश फास्फेट	KH_2PO_4	34	एम.के.पी.

मृदा में पोटाश उर्वरक डालने पर होने वाली अभिक्रिया

मृदा में पोटाशिक उर्वरक डालने पर वह धनायन (पोटाश आयन) व ऋणआयन (क्लोराइड, सल्फर या नाइटेटिं) में टूट जाता है। पोटाश आयन पर धन आवेश होता है जो कि मृदा में उपस्थित ऋण आवेश क्ले पर अभिशोषित हो जाता है। अधिशोषित पोटाश विनिमयशील होता है जो कि या तो सीधे ही पौधों की जड़ो द्वारा ''केटायन एक्सचेन्ज फिनोमीना'' (Cation Exchange Phenomena) के सिद्धान्त से ले लिया जाता है या फिर मृदा विलियन में आकर पौधों द्वारा ग्रहण किया जाता है।

तालिका 3 पोटाश रूपान्तरण गुणांक

क्रमांक	दिया गया	चाहिए	गुना कीजिए
1.	K	K_2O	1.20
2.	K_2O	K	0.83
3.	KCI	K_2O	0.60
4.	K_2o~	KCI	1.67
5.	K_2SO_4	K_2O	0.50
6.	K_2O	K_2SO_4	2.00
7.	KNO_3	K_2O	0.46
8.	K_2O	KNO_3	2-17

धान की सीधी बुवाई : संसाधन संरक्षण की एक तकनीक

मान्धाता सिंह, देवकरन, हरि गोविन्द, रामकेवल एवं आरीफ परवेज
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर– कृषि विज्ञान केंद्र, बक्सर (बिहार)

धान की सीधी बुवाई यह धान उत्पादन की नई तकनीक है जिसमे कम पानी में धान की अच्छी पैदावार ली जा सकती है। ज़्यादातर धान की खेती रोपाई बिधि से की जाती है जिसमे पानी की बहुत ही ज्यादा जरूरत होती है तथा पानी का ज्यादा नुकसान भी होता है। इस तरह से धान की उत्पादन का विचार सबसे पहले चीन में आया जिसमे कम पानी में भी धान का उत्पादन किया जा सकता है। इसमे धान की बुवाई सीधे तैयार किए गए खेत में कर देते है। धान की बुवाई का तरीका गेंहू व जौ की फसल की तरह ही होता है। धान की नर्सरी नहीं तैयार करते है। इस विधि से खेती करने में खेत में लगातार पानी लगाने की जरूरत नहीं होती है। धान की फसल को जरूरत के अनुसार समय–समय पर पानी दिया जाता है। इस प्रकार से उगाई गई फसल में 35 से 40% पानी की बचत होती है।

खेत की तैयारी : रबी की फसल की कटाई के बाद खेत को अच्छी तरह से मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई कर लेना चाहिए जिससे मिट्टी में उपस्थित कीट व फफूद के अंडे तथा खरपतवार के बीज नष्ट हो जाये। गहरी जताई होने पर वायु का संचार भी अच्छा होता है तथा मिट्टी की जल संचयन क्षमता भी बढ़ती है। पहली जुताई के 15–20 दिन बाद खेत को कल्टीवटोर से दो बार जुताई करके पाटा लगा दे। यदि खेत में पर्याप्त नमी नहीं है तो बुवाई के पूर्व खेत में हल्की सिचाई कर दे।

प्रमुख प्रजातीया: धान की सीधी बुवाई के लिये सहभागी धान, शुष्क सम्राट, अभिषेक, स्वर्ण श्रेया, सबौर अर्ध जल, नरेन्द्र धान 359 व नरेन्द्र 97, राजेन्द्र मंसूरी 1, बी. पी. टी. 5204, सम्भा सब–1, अराइज़ 6444, स्वर्णा सब–1 प्रजातीय अच्छी है।

बीज का चयन: धान की सीधी बुवाई के लिये धान के स्वस्थ व गुणवत्ता युक्त बीजों का चयन करना चाहिए, बीज रोग व विमारियों से मुक्त हो। बीज कटे न हो तथा उसमे किसी अन्य प्रजाति या खरपतवार के बीज न मिले हो। बीज के लिये यदि प्रमाणित बीज का प्रयोग किया जाए तो अच्छा रहता है। चुनी हुई किस्मों का बीज किसी मान्यता प्राप्त संस्था से ही लेना चाहिए। एक बार प्रमाणित बीज लेने के बाद उसे तीन साल तक बदलने की आवश्यकता नहीं होती है। अगर किसान अपना बीज प्रयोग कर रहे है तो इस बात का विशेष ध्यान रखें कि बीज का अंकुरण प्रतिशत 80–90 प्रतिशत होना चाहिए। बुआई से पहले स्वस्थ बीजों का चयन कर लेना चाहिए। इस तरह साफ व स्वस्थछांटा हुआ 25 कि.ग्रा. बीज महीन दाने वाली किस्मो में तथा 30 कि.ग्रा. बीज मोटे दानों की किस्मोंमें एक हैक्टेयर की वुवाई करने के लिए पर्याप्त होता है।

बीज का उपचार

बीजजनित व मृदाजनित रोगों से बचाव करने के लिये बीजों का उपचार किया जाता है। बीजाई से पहले बीज को 2 ग्राम जीवाणुनाशी स्ट्रेप्टोसाइक्लीन तथा 20 ग्राम फफूदनाशी कार्बेण्डाजीम प्रति 10 किग्रा बीज दर से उपचारित कर लेना चाहिये। इस उपचार से जड़ गलन (फूट राट), झुलसा (ब्लास्ट) और पत्ती झुलसा रोग

(बैक्टीरियल लीफ ब्लाइट) आदि बीमारियों के नियंत्रण में सहायता मिलती है।

बीज की बुवाई: सीधी धान की बुवाई, तैयार किये गए खेत में जिसमे पर्याप्त मात्रा में नमी हो सीड ड्रिल के द्वारा किया जा सकता है। सीड ड्रिल से बुवाई करने पर बीज उचित गहराई पर तथा समान दूरी पर गिरते है जिससे बीज का जमाव अच्छा होता है। इसके लिये 25 से 30 किग्रा बीज पर्याप्त होता है। धान की बुवाई करते समय बीज की गहराई 3–4 सेमी तक रखना चाहिये।

खाद व उर्वरक प्रबंधन: धान की सीधी बुवाई से अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिए पोषक तत्व का प्रबंधन अति आवश्यक है। धान की फसल में वुवाई के समय 120 किग्रा नत्रजन, 50 किग्रा फास्फोरस, 40 किग्रा पोटाश व 5 किग्रा ज़िंक की आवश्यकता होती है। नत्रजन की 1/3 मात्रा, फास्फोरस की पूरी मात्रा, पोटाश की आधी मात्रा वुवाई के समय देनी चाहिए। जब धान के पौधे 4–5 पत्ती के हो जाये अथवा 25 दिन बाद नत्रजन की 1/3 मात्रा व ज़िंक सल्फ़ेट की पूरी मात्रा उपर निवेशन के द्वारा देनी चाहिए। शेष 1/3 भाग नत्रजन व आधा भाग पोटाश गाभा निकलने के समय देना चाहिए। इस प्रकार से प्रबन्ध करने पर उत्पादन अच्छा होता है।

खर–पतवार प्रबंधन: सीधी बुवाई वाले धान में खरपतवार का प्रबन्ध बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमे धान के साथ ही खरपतवार भी उगते है। धान की वुवाई के तुरन्त बाद पेंडिमेथिलीन 30 EC नामक शाकनाशी की 1.0 लिटर सक्रिय तत्व मात्रा को 500 लिटर पानी के साथ छिड़काव करने पर खरपतवार कम उगते है जिससे शुरू की अवस्था में धान की फसल अच्छी हो जाती है। वुवाई के 25–30 दिन बाद कुछ चौड़ी पत्ती वाले व मोथा कुल के खरपतवार उगने लगते है जिनकी रोकथाम के लिए बिस्पायरी बॅक सोडियम नामक रसायन की 200 ग्राम मात्रा प्रति है? की दर से 375 लिटर पानी के साथ करने से सभी उगे हुये खरपतवार नष्ट हो जाते है।

कीट व रोग प्रबंधन

धान की फसल के प्रमुख कीट

धान का तना छेदक कीट (Yellow stem borer)

इस कीट की सूड़ी अवस्था ही क्षतिकर होती है। कीटों की सूंडिया पीले या मटमैले रंग की चिकनी सी होती है। सबसे पहले अंडे से निकलने के बाद सूड़ियां मध्य कलिकाओं की पत्तियों में छेदकर अन्दर घुस जाती हैं और अन्दर ही अन्दर तने को खाती हुई गांठ तक चली जाती हैं। पौधों की बढ़वार की अवस्था में प्रकोप होने पर

बालियां नहीं निकलती हैं। बाली वाली अवस्था में प्रकोप होने पर बालियां सूखकर सफ़ेद हो जाती हैं और दाने नहीं बनते हैं।

प्रबन्धः फसल की प्रारम्भिक अवस्था में क्लोरण टनिलिप्रोल 0.4 जी के 10 किग्रा या फिप्रोनिल 0.3 जी के 25 किग्रा या करटोप हाइड्रो क्लोराइड 4 जी के 20 किग्रा प्रति है के दर से खेत में बुरकाव करे। इस समय खेत में 3 से 5 सेमी पानी होना चाहिये। यदि कीट का प्रकोप रोपाई के 40–45 दिन बाद हो तो क्लोरण्टनिलिप्रोल 20 एस सी के 150 मिली/है? या फ्लूबेंडियामाइड 480 एस सी के 75 मिली/है याफिप्रोनिल 5 एस सी के 1 लीटर/है या करटोप हाइड्रो क्लोराइड 50 डब्लू डी पी के 600 ग्राम/है या क्लोरीपयरीफास 20 ई सी के 2.5 लीटर/है का 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करे। रोपाई के 15 दिन के अन्दर 20 मी. ग 10 मी. की दूरी पर पौधे की ऊपरी सतह से 30 सेमी की ऊँचाई पर फेरोमेन प्रपंच लगाकर बिना कीटनाशी रसायन के ही इस कीट का नियंत्रण किया जा सकता है। प्रपंच में ल्यूर को 25–30 दिन के अन्तराल पर बदलना चाहिये।

धान का हिस्पा कीट

यह छोटे काले रंग के कीट होते है, जिसके शरीर पर छोटे–छोटे काँटे होते है। यह पत्तियों को खुरचकर खाते है। पत्तियों पर सफ़ेद समानांतर रेखाये बन जाती है।

प्रबन्धः क्लोरीपयरीफास 20 ई सी के 1.25 लीटर/है? या ट्राइजोफोस 40 ई सी के 700 मिली/है? को 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करे।

पत्ती लपेटक कीट (Leaffolder)

मादा कीट धान की पत्तियों के शिराओं के पास समूह में अंडे देती हैं। इन अण्डों से छह–आठ दिनों में सूड़ियां बाहर निकलती हैं। ये सूड़ियां पहले मुलायम पत्तियों को खाती हैं और बाद में अपने लार से रेशमी धागा बनाकर पत्ती को किनारों से मोड़ देती हैं और अन्दर ही अन्दर खुरच कर खाती है।

प्रबन्धः कीट प्रबन्ध हेतु क्लोरण्टनिलिप्रोल 20 एस सी के 150 मिली/है याफ्लूबेंडियामाइड 480 एस सी के 75 मिली/है या करटोप हाइड्रो क्लोराइड 50 डब्लू डी पी के 600 ग्राम/है? को 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करे।

भूरा फुदका कीट (Brown Plant Hopper)

यह छोटा हरा या भूरा रंग का होता है। यह तने व पत्तियों का रस चुसता है। समूह में पौधे पीले एवं बाद में जले हुये गोलाई में दिखते है।

प्रबन्धः बुप्रोफेजीन 25 एस सी के 1 लीटर या थीयामेथोक्ज़ेम 20 डब्लू एस जी के 100 ग्राम या एसिटामिप्रिड 20 एस जी के 100 ग्राम या क्लोथियानिडिन 50 डब्लू डी पी के 30 ग्राम/है? को 500 लीटर पानी में घोलकर तने के पास जहाँ कीट रस चूसते है, छिड़काव करे।

गाल मिज कीट (Gall midge)

गंधी बग कीट (Gundhi bug)

वयस्क लम्बा, पतले और हरे–भूरे रंग का उड़ने वाला कीट होता है। इस कीट की पहचान कीट से आने वाली दुर्गन्ध से भी कर सकते हैं। इसके व्यस्क और शिशु दूधिया दानों को चूसकर हानि पहुंचाते हैं, जिससे दानों पर भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं और दाने खोखले रह जाते हैं।

प्रबन्धः कीट प्रबन्ध हेतु मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत को 20–25 किग्रा/है? की दर से सुबह या शाम के समय प्रयोग करे।

धान की फसल के प्रमुख रोग

जीवाणु जनित पर्ण अंगमारी झुलसा (Bacterial leaf blight)

यह जीवाणु जनित रोग है। पत्तिया किनारे अथवा नोक से सूखने लगती है। सूखे हुये किनारे अनियमित एवं टेढ़े–मेढ़े होते है, गंभीर रूप से संक्रमित पौधे झुलसकर मर जाते है।

रोग प्रबंधः संक्रमण होने पर 15 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लीन व 500 ग्राम कॉपर आक्सी क्लोराइड को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति है की दर से छिड़काव करे। 7–10 दिन पर दुबारा छिड़काव करे।

भूरी चित्ती/ पर्ण दाग (Brown spot)

इस रोग के लक्षण मुख्यतया पत्तियों पर छोटे–छोटे गोलाकार भूरे रंग के धब्बे के रूप में दिखाई देतें है। पौधो के बढ़वार कम होती है एवं दाने भी प्रभावित हो जाते है। उग्र संक्रमण होने पर ये धब्बे आपस में मिल कर पत्तियों को सूखा देते हैं और बालियां पूर्ण रूप से बाहर नहीं निकलती हैं। इससे बीज के अंकुरण क्षमता में कमी आ जाती है।

रोग प्रबंधः इस रोग के रोकथाम के लिए बुवाई से पहले बीज को ट्राईसाइक्लेजोल दो ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। पुष्पन की अवस्था में जरुरत पड़ने पर कार्बेन्डाजिम 50 प्रतिशत घुलनशील ध ूल की 1.0 किग्रा या कॉपर आक्सी क्लोराइड 500 डब्लू पी के 1.25 किग्रा प्रति है की दर से रोग के लक्षण दिखाई देने पर 10–20 दिन के अन्तराल पर या बाली निकलते समय दो बार आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।

पर्णच्छद अंगमारी (Sheath blight)

इस रोग के लक्षण मुख्यतः पत्तियों एवं पर्णच्छदों पर दिखायी देतें है। पर्णच्छद पर पत्ती की सतह के ऊपर 2–3 से.मी. लम्बे हरे–भूरे या पुआल के रंग के क्षत स्थल बन जाते हैं। क्षत स्थलबढ़कर तना को चरों ओर से घेर लेते है।

रोग प्रबंधः रोग के लक्षण दिखायी देने पर प्रोपीकोनेजोल 5000 मिलीप्रति है? या हेक्साकोनाजोल 1 लीटर प्रति है? की दर से छिड़काव करे। 10 दिन के अंतराल पर दूसरा छिड़काव करे।

आभासी कंड/कंडुआ रोग (False Lewr)

यह एक फफूंदीजनित रोग है। रोग के लक्षण पौधों में बालियों के निकलने के बाद ही स्पष्ट होते हैं। रोगग्रस्त दाने भूरे, हरे,पीले अथवा काले रंग के गोल आकार के हो जाते है। दाने कही–कही ही बनते है।

रोग प्रबंधः रोग के लक्षण दिखाई देने पर पहला छिड़काव बाली बनते समय प्रोपीकोनेजोल 1 मिली प्रति लीटर पानी अथवा क्लोरोथीलेनाल 75 डब्लू पी 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के साथ करे। दूसरा छिड़काव बालियो के पूर्णतः बाहर निकलने के बाद करे।

पर्ण प्रध्वंस/ झोंका रोग (Leaf blast): असिंचित धान में इस रोग का प्रकोप बहुत अधिक होता है। इस रोग का प्रकोप होने पर पत्तियों, गाठों, बालियों पर आँख की आकृति के धब्बे बनते हैं जो बीच में राख के रंग के तथा किनारे गहरे भूरे रंग के होते हैं। तनों की गाठ पूर्णतया या उसका कुछ भाग काला पड़ जाता है और वह सिकुड़ जाता है, जिससे पौधा सिकुड़ कर गिर जाता है। बालियो पर प्रकोप होने पर बालिया टूट सकती है।

रोग प्रबंधः बीजों को बोने के पहले ट्राईसाइक्लेजोल दो ग्राम प्रति किग्रा. बीज अथवा कार्बेन्डाजिम दो ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। पत्तियों पर रोग के लक्षण दिखाई दे तो एक छिड़काव बाली निकलते समय एवं दूसरा आवश्यकतानुसार 500 ग्राम कार्बेन्डाजिम 50 डब्लू पी अथवा ट्राईसाइक्लेजोल 75 डब्लू पी के 500 ग्राम को 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करे।

खैरा रोगः यह रोग मिट्टी में जिंक की कमी के कारण होता है। इस रोग के लक्षण पत्तियों पर पहले हल्के पीले रंग के धब्बे जो बाद में कत्थई रंग के हो जाते हैं के रूप में दिखायी देतें है। पौधा बौना हो जाता है एवं कल्ले कम निकलते है।

रोग प्रबंधः लक्षण दिखाई देते ही 5 किग्रा जिंक सल्फेटको 20 किग्रा यूरिया या 2.5 किग्रा बुझा हुआ चूना को 1000 लीटर पानी में मिलकर 10 दिन के अंतराल पर दो बार छिड़काव करे।

कटाई

जब बालियो के 80 प्रतिशत दाने पुआल के रंग के हो जाये तब फसल कटाई योग्य हो जाती है। धान के कटाई के 15–20 दिन पूर्व खेत में पानी देना बंद कर देना चाहिए, इससे दानों में नमी का प्रतिशत कम हो जाता है।

फसल अवशेष प्रबंधन

हरि गोविन्द, मान्धाता सिंह, देवकरन, रामकेवल एवं आरीफ परवेज

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर–

कृषि विज्ञान केंद्र, बक्सर (बिहार)

धान–गेहूँ की कटाई के उपरांत बचे हुए फसल अवशेष (पराली) जो खेत मे छूट जाते है तथा जिनको मुख्यतः किसान भाई अपने खेत में ही जला देते उससे पर्यावरणीय तथा स्वास्थ्य संबंधी अनेक समस्यायें उत्पन्न हो रही हैं। शोध रिपोर्टो के अनुसार एक टन पराली जलाने पर करीब 3 किलो पार्टिकुलेट मैटर, 60 किलो कार्बन मोनोआक्साइड, 1460 किलो कार्बन डाई ऑक्साइड, 199 किलो राख और 2 किलो सल्फर डाई ऑक्साइड हवा में जाती है। धान की पुआल में लगभग 40–45% कार्बन, 0.62–0.68% नाइट्रोजन, 0.20–0.23% फास्फोरस एवं 0.78–1.15% पोटेशियम होते है जो जलाने के उपरांत पौधों के लिए जरूरी पोषकतत्व नष्ट हो जाते हैं। एक टन भूसा जलाने से मृदा में उपस्थित कार्बनिक पदार्थ, कार्बन–डाई–ऑक्साइड के रूप में उड़ जाता है तथा अन्य पोषक तत्व जैसे– 5.5 किलोग्राम तक नत्रजन, 25 किलोग्राम तक पोटेशियम, 2.3 किलोग्राम तक फॉस्फोरस तथा 1.2 किलोग्राम तक सल्फर का नुकसान हो जाता हैं। पराली जलाने से वायु प्रदुषण के कारण श्वांस संबंधी रोग बढ़ रहे हैं। यदि अवशेषों को मृदा में ही मिला दिया जाये तो कार्बनिक पदार्थ में वृद्धि होगी, पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जायेगी। मृदा उर्वरकता में सुधार के कारण फसल उत्पादकता में वृद्धि होगी।

फसल अवशेषों को जलाने से मृदा स्वास्थ्य पर होने वाले हानिकारक प्रभाव

मृदा के भौतिक तथा रासायनिक गुणों पर प्रभावः फसल अवशेषों को जलाने के कारण मृदा के तापक्रम में वृद्धि होती है जिसके परिणाम स्वरुप मृदा सतह कठोर हो जाती है। जिससे मृदा जल धारण क्षमता में कमी आती है तथा मृदा में वायु संचरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है. फसल अवशेषों को जलाने से मृदा में उपलब्ध कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन, नत्रजन, सल्फर नष्ट हो जाते है।

मृदा पर्यावरण पर प्रभावः फसल अवशेषों को जलाने से मृदा में उपस्थित सूक्ष्म जीवों की संख्या पर बुरा प्रभाव पड़ता है और इसके कारण लाभदायक कीटों की संख्या में भी कमी आती है।

मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों की कमीः फसल अवशेषों को जलाने के कारण मृदा में उपस्थित मुख्य पोषक तत्व नाइट्रोजन, फास्फोरस, एवं पोटाश की उपलब्धता में कमी आती है।

मृदा क्षरणः मृदा की उपरी सतह में जैव पदार्थ एवं पोषक तत्वों से भरपूर होती है और अधिकांश पौधे पोषक तत्वों की आवश्यकता भी इसी सतह से करते है। फसल अवशेषों को जलाने से मृदा का क्षरण जल एवं वायु द्वारा होता है तथा मृदा की उर्वरता में कमी आती है।

जैव विविधता पर प्रभावः अधिक तापमान की वजह से मृदा में उपस्थित हानिकारक एवं फायदेमंद सूक्ष्मजीवों की मृत्यु हो जाती है तथा जैव विविधता में कमी आती है।

फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने के फायदे

कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धिः कार्बनिक पदार्थ ही एक मात्र ऐसा स्रोत है जिसके द्वारा मृदा में उपस्थित विभिन्न पोषक तत्व फसलों को उपलब्ध हो पाते है तथा कम्बाइन द्वारा कटाई किये गये उत्पादित अनाज की तुलना में लगभग 1.3 गुना फसल अवशेष होते है। ये खेत में सड़कर मृदा में कर्वानिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि करते है।

पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धिः फसल अवशेषों में सभी आवश्यक पोषक तत्व पाये जाते हैं, जो सड़कर फसलों को उपलब्ध होते हैं।

मृदा की उर्वरा शक्ति में सुधार: फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने से मृदा के रासायनिक गुणों जैसे पोषक तत्वों की उपलब्धता, मृदा की विधुत चालकता एवं मृदा पी एच में सुधार होता है। फसल अवशेषों को खेत में मिलाने से मिट्टी अधिक उपजाऊ हो जाती है किसानों के खाद के खर्च पर करीब दो हजार प्रति हैक्टेयर की बचत होती है। फसल अवशेष जलने से प्रदुषण फैलता है, जहरीली गैसों से स्वास्थ को हानि पहुँचती है।

फसल उत्पादकता में वृद्धि: फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने पर आने वाली फसलों की उत्पादकता में वृद्धि होती है।

- फसल अवशेष प्रबंधन के मुख्य उपाय
- फसल अवशेषों से जैविक खाद बनाना
- फसल अवशेषों को पशु चारे के रूप में उपयोग करना
- फसल अवशेषों को मिट्टी में मिलाना
- फसल अवशेषों का पलवार या मल्च के लिये उपयोग
- धान के फसल अवशेष का हैप्पी सीडर सुपर/सीडर द्वारा प्रबन्ध तथा गेंहू की बुवाई
- धान के खेत में जीरो टिलेज से गेंहू की बुवाई
- फसल अवशेषों का स्ट्रॉ–बेलर स्ट्रॉ रीपर के द्वारा प्रबन्ध
- सुपर स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम द्वारा प्रबंधन

फसल अवशेषों से जैविक खाद बनाना: धान के फसल अवशेषों को इकट्ठा कर वेस्ट डिकम्पोजर के प्रयोग से अपघटित कर आवश्यकता अनुरूप जैविक खाद के रूप में उपयोग किया जा सकता हैं। कृषि अपशिष्ट अपघटन (वेस्ट डीकम्पोजर) के प्रयोग हेतु समतल स्थान पर फसल अवशेषों को तह बना कर एक टंकी में 200 लीटर पानी लेकर उसमें 2 किलों गुड़ डालकर अच्छी तरह से मिलाने के उपरांत वेस्ट डीकम्पोजर की एक बोतल को मिश्रण में अच्छी तरह मिला लें।

इस ड्रम अथवा टंकी को पेपर/कपड़े से बाँधकर 7 दिनों के लिए छोड़ दे। इसके उपरांत इस घोल से इकट्ठा किये गये फसल अवशेषों को अच्छी तरह से भिगों दे तथा 7 दिनों के अंतराल पर इन अवशेषों को उलट–पुलट करते रहे। 60 दिनों में यह अवशेष पूरी तरह कम्पोस्ट के रूप में तैयार हो जायेगी जिसे खेत में मिलाकर जैविक उर्वरकता को बढ़ाया जा सकता हैं। 1 बोतल वेस्ट डीकम्पोजर से 55–60 दिनों में 1 लाख मिट्रिक टन जैव अपघटक तैयार किया जा सकता हैं।

पूसा वेस्ट डीकम्पोजर कैप्सूल की सहायता से भी फसल अवशेषों को गलाकर खाद बनायीं जा सकती है। इसके लिये 150 ग्राम गुड़ को 5लीटर पानी में डालकर अच्छी प्रकार से उबाल ले तथा छाननी की सहायता से गंदगी को निकाल ले. अब घोल को किसी बर्तनध्टब में निकालकर ठंडा होने दे जब हल्का गुनगुना रहे तो उसमे 50 ग्राम बेसन डालकर मिला दे तथा तैयार घोल में पूसा वेस्ट डीकम्पोजर कैप्सूल को खोलकर उसमे डाल दें, अब घोल को ढककर सुरक्षित छायेदार स्थान पर रख दें, दो दिन बाद हल्की मलाई जमने लगेगी तथा पांच दिन बाद अलग–अलग रंग के जाले दिखाई देने लगेगे 10 दिन में कल्चर तैयार हो जायेगा। मिश्रण को अच्छी तरह से मिलाकर एक टन अवशेष में प्रयोग करे। इस कल्चर से और घोल तैयार करना हो तो उसमे फिर पांच लीटर पानी में गुड़ को उबालकर ठंडा करके इस घोल में डाल दे, इस प्रकार एक पैकेट पूसा वेस्ट डीकम्पोजर कैप्सूल से 25 लीटर घोल तैयार कर सकते है. तैयार कल्चर को फसल अवशेष पर डालकर खाद बना सकते है तथा इसका प्रयोग खेत में भी अवशेषों को गलाने के लिये कर सकते है।

अवशेषों को पशु चारे के रूप में उपयोग करना– धान के पुआल का युरिया या कैल्सियम हाइड्रेट से उपचार या प्रोटीन से संबर्धन कर पशु चारे के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं। स्ट्रॉ–बेलर से फसल अवशेष का ब्लॉक बनाकर भंडारित कर चारे के रूप में उपयोग कर सकते हैं।

फसल अवशेष को मिट्टी में मिलाना– धान के फसल की हार्वेस्टर से कटाई के बाद मल्चर की सहायता से मिट्टी में मिला दिया जाता है। मिट्टी में मिलाने के उपरान्त खेत में एक सिंचाई कर देने से फसल अवशेष मिट्टी में मिलकर अगली फसल के लिये पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाते है। मल्चर फसल अवशेष धान की पराली इत्यादि को काटकर उनके टुकड़े करता है, जिससे जलने की जरुरत नहीं पड़ती है. इसका प्रयोग करने से फसल अवशेषों में आग लगाने की वजह से पर्यावरण तथा भूमि के स्वास्थ को होने वाले नुकसान से बचाव कर सकते है. धान की कटाई के बाद गेंहू की तुरन्त बुवाई को सरल बनाता है। भूमि में उपलब्ध पोषक तत्वों व् जीवाणुओं को संरक्षित करता है. मल्चर के उपयोग से मिट्टी में मौजूद नमी संरक्षित होती है. फसल अवशेषों जैसे पराली, पत्तियाँ व् डंठल आदि मिट्टी में घुलकर जैविक खाद बन जाते है। गेंहू की फसल की कटाई के उपरान्त शेष बचे हुये अवशेषों को रोटावेटर की सहायता से मिट्टी में मिला देते है तथा सिंचाई करके 20 किग्रा प्रति एकड़ की दर से यूरिया डाल देने पर फसल अवशेष जल्दी खेत में मिल जाते है।

फसल अवशेषों का पलवार या मल्च करना: फसल अवशेषों का पलवार या मल्च के लिये आसानी से प्रयोग किया जा सकता है. सब्जी वाली फसलों जैसे भिन्डी, लोबिया, बैंगन, शिमला मिर्च, बिन्स, मिर्च आदि में फसल अवशेष का उपयोग पलवार के लिये किया जा सकता है। अवशेषों को पलवार या मल्चिंग करने से मृदा की उर्वरकता में वृद्धि के साथ–साथ खरपतवार के प्रकोप को कम कर मृदा अपरदन में कमी की जा सकती हैं।

धान के फसल अवशेष का हैप्पी सीडर सुपर/ सीडर द्वारा प्रबन्ध तथा गेंहू की बुवाई–

धान की कटाई के बाद गेहूँ की सीधी बुआई हेतु ट्रैक्टर ऑपरेटेड हैप्पी सीडर मशीन द्वारा आसानी से की जा सकती हैं। इससे खेत को तैयार करने की आवश्यकता नही पड़ती तथा सीधी बुआई से संसाधनों की बचत तथा अधिक लाभ प्राप्त होता हैं। हैप्पी सीडर मशीन एक तरफ धान की डंठलों के उपरी भाग को काटकर हटाती है तथा साथ ही साथ कतार से गेहूँ की बुआई भी करती हैं। धान के शेष अवशेषों को खेत में दबा देती हैं जिससे बोये गये गेहूँ के बीजों के अंकुरण के समय पुआल से अच्छी तरह से नमी प्राप्त हो सके। धान की पराली को आग लगाने से होने वाले बड़े पैमाने से प्रदूषण की रोकथाम एवं भूमि के स्वास्थ में आ रही गिरावट को इस मशीन के प्रयोग से रोका जा सकता है। पराली का बचा हुआ मल्च पराल रूपी सतह में खेत में होने से पानी की नमी ज्यादा समय बनी रहती है एवं खरपतवार कम पैदा होती है बिना जुताई हैप्पी सीडर से गेंहू की सीधी बिजाई करने से 800–1000 रूपये तक की बचत होती है।

धान के खेत में जीरो टिलेज से गेंहू की बुवाई

धान की कटाई के बाद कुछ फसल अवशेषों को खेत से निकालकर गेंहू की सीधी बुआई जीरो टिलेज मशीन द्वारा आसानी से की जा सकती हैं। इससे खेत को तैयार करने की आवश्यकता नही पड़ती तथा सीधी बुआई से संसाधनों की बचत तथा अधिक लाभ प्राप्त होता हैं। इस विधि द्वारा गेंहू की बिजाई करने पर धान के पाने जलाने नहीं पड़ते. पाने चाहे कितने भी बड़े क्यों न हो उसी में ही गेंहू की बिजाई हो जाती है। जिससे भूमि

की उर्वरा शक्ति एवं संरचना उत्तम बनी रहती है। इस विधि द्वारा गेंहू की बिजाई करने पर गेंहू का जमाव अच्छा होता है तथा पौधे ज्यादा स्वास्थ व् गहरे रंग के निकलते है। इस विधि द्वारा बिजाई करने पर पहली सिंचाई करने पर गेंहू का मामा का 30–40 प्रतिशत कम जमाव होता है क्योकि इस मशीन द्वारा भूमि के साथ कम से कम छेड़ छाड़ होती है।

फसल अवशेषों का स्ट्रॉ–बेलर/स्ट्रॉ रीपर के द्वारा प्रबन्ध

स्ट्रॉ बेलर की सहायता से धान के फसल अवशेषों को बंडल/ब्लाक बनाकर भंडारित कर इसका उपयोग पशु चारा, संवर्धित पशु चाकलेट, लुगदी, बायोचार आदि के लिये किया जा सकता है।

स्ट्रॉ–रीपर की सहायता से गेंहू के फसल अवशेष का भूसा बनाकर सुखा चारे के रूप में उपयोग कर सकते हैं।

सुपर स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम द्वारा प्रबंधन

सुपर स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम लगे हार्वेस्टर के द्वारा फसल की कटाई करने पर यह फसल के अवशेष को छोटे छोटे टुकड़ों में करके खेतों में विखेर देता है। जिसमें फसल अवशेष को आसानी से मृदा में मिलाया जा सकता है। फलस्वरूप फसल अवशेष को जलाना नहीं पड़ता और मृदा की उर्वरक क्षमता में वृद्धि होती है।

कृषि जल उत्पादकता बढ़ाने हेतु सिंचाई निर्धारण में विकसित तकनीकियाँ

आरती कुमारी, आशुतोष उपाध्याय, पवन जीत एवं कीर्ति सौरभ
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

बढ़ती आबादी, कृषि योग्य भूमि में लगातार कमी एवं जल संसाधन पर बढ़ते दवाब के कारण खाद्य सुरक्षा हासिल करना विकासशील देशों के लिए एक चुनौती बन गयी है। प्रति बून्द पानी से अधिक फसल उत्पादन के लिए उचित सिंचाई प्रबंधन अतिआवश्यक है जिसमें मृदा सेंसर्स (सवेदक) प्रमुख भूमिका निभा सकते हैं। इस लेख के माध्यम से कृषि क्षेत्र में जल उत्पादकता बढ़ाने हेतु सिंचाई निर्धारण में विकसित मृदा सेंसर्स के प्रकार, अनुप्रयोग, भारत में चुनौतियां आदि विषय पर विस्तृत चर्चा कर किसानों के बीच जागरूकता फैलाने का अथक प्रयास किया गया है।

परिचय

पिछले कुछ दशकों से विश्वस्तर पर ही नहीं बल्कि भारत के लिये भी जल संकट बहुत बड़ी समस्या है। कोई भी जल की उपयोगिता से अनभिज्ञ नहीं है। आधारभूत पंचतत्वों में भी जल को जीवन का आधार माना गया है। भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसका 195 मिलियन हेक्टेयर भूमि कृषि योग्य है और इसमें 63 प्रतिशत वर्षा आधारित और शेष सिंचित है। अतः कृषि उत्पादकता बढ़ाने हेतु सिंचाई में जल का कुशल उपयोग अतिमहत्वपूर्ण है। ओईसीडी 2050 रिपोर्ट के अनुसार पर्यावरणीय दृष्टिकोण से भारत 2050 तक गंभीर जल संकट का सामना करेगा। इसलिए वर्तमान में, आवश्यक खाद्य पदार्थों का उत्पादन हेतु जल पर्याप्त है, लेकिन भविष्य के लिए अपर्याप्त हो सकता है। भारत के अधिकांश हिस्सों जैसे तमिलनाडु,राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात और केरल आदि राज्यों में जल संकट विकराल रूप धारण किया है वहीं राज्यों के मध्य पानी से जुड़े विवाद भी बढे हैं। भूगर्भीय जल का अत्यधिक दोहन होने के कारण पेय जल संकट और कृषि में सिंचाई की समस्या बढ़ी है, वहीं जल की लवणीयता बढ़ने से भी कृषि में समस्या विकट हुई है। इसलिए भूगर्भीय जल का अनियंत्रित दोहन को रोकने तथा कृषि जल उत्पादकता बढ़ाने के लिए विवेकपूर्ण जल प्रबंधन की आवश्यकता है। भारत में अधिकांशतः किसान छोटे और सीमांत हैं और वे सतही सिंचाई के माध्यम से मैन्युअल रूप से अपने खेतों की सिंचाई बाढ़ सिंचाई की तरह अनियंत्रित बाढ़ के रूप में अथवा सीमा, चैक बेसिन, फरो की तरह नियंत्रित बाढ़ आदि के रूप में नियमित अंतराल पर खेतों को सिंचते हैं। लेकिन सतही सिंचाई की सिंचाई दक्षता काफी कम (35–50 प्रतिशत) हैं। अधिकांश किसान ऑन–फार्म सिंचाई समस्या से ग्रस्त हैं यानी वे फसलों के इष्टतम उत्पादन के लिए सिंचाई की उचित समय और मात्रा के बारे में अनजान हैं जिसका मुख्य कारण किसानों के मध्य नए उपकरणों की जागरूकता में अभाव, सिंचाई के लिए मिट्टी की नमी का आकलन करने के लिए कम लागत वाले विश्वसनीय उपकरणों की उपलब्धता में कमी आदि हैं। अधिक या कम मात्रा में सिंचाई से फसल की उपज और उसकी गुणवत्ता में कमी होती है। वास्तविक रूप से किसानों का अंतिम लक्ष्य अधिकतम कृषि लाभ है। किसान भाई पानी की कम खपत वाली प्रौद्योगिकियों जैसे स्प्रिंकलर और ड्रिप को अपनाकर 75–95 प्रतिशत सिंचाई दक्षता बढ़ा सकते हैं। हाल ही में सेंसर आधारित सिंचाई शेड्यूलिंग विकसित की गई है जो वास्तविक सिंचाई समय निर्धारण में काफी कारगर साबित हो सकते हैं।

व्यावहारिक दृष्टि से सिंचाई समय का निर्धारण निम्नलिखित विधियों को अपनाकर किया जा सकता है:–

- पौधे के वाह्य गुणों को देखकर अथवा पत्तियों की नमी पादप सेंसरों द्वारा पता कर।

- मृदा में नमी की स्थिति को छूकर या देखकर।
- भूमि में प्राप्त जल की मात्रा मृदा सेंसर की मदद से पता कर या गुरुत्वाकर्षण विधि से नमी की मात्रा का पता कर।
- जलवायु सम्बन्धी आँकड़ों के आधार पर सिंचाई का निर्धारण कर।
- पौधों की वृद्धि की क्रान्तिक अवस्था के आधार पर।

लेकिन मृदा में नमी की मात्रा को तुरंत पता करने के लिए मृदा सेंसर जैसे टेंसिओमेटेर्स, वाटरमार्क्स, रे. जिस्टेंस ब्लॉक्स, टाइम डोमेन रेफ्लेक्टोमेट्री (टी डी आर) और फ्रीक्वेंसी डोमेन रेफ्लेक्टोमेट्री (एफ डी आर) काफी लाभदायक है (चित्र संख्या 1)।

चित्र संख्या 1: मृदा में नमी की मात्रा को तुरंत पता करने के लिए विविध मृदा सेंसर्स

विभिन्न प्रकार के मृदा सेंसर्स के अपने फायदे और परिसीमाएं है, अतः मिट्टी के प्रकार, लागत आदि के आधार पर मृदा सेंसर्स का चुनाव किया जाता है। विभिन्न मिट्टी नमी सेंसर्स के फायदे और नुकसान को तालिका 1 में प्रदर्शित किया गया है:

तालिका 1: विभिन्न मृदा सेंसर्स के फायदे और नुकसान

मृदा सेंसर्स	फायदे	नुकसान
टेंसिओमेटेर्स	• मिट्टी के पानी के तनाव को मापना • सरल और सस्ता	• मैन्युअल रीडिंग और डेटा संग्रह • बार–बार निरीक्षण और रिफिलिंग की आवश्यकता • मापन सीमा (0 और 85 किलोपास्कल) • रेतीली मिट्टी के लिए उपयुक्त नहीं • तापमान के प्रति संवेदनशील • उपयोग से पहले आवश्यक स्वस्थानी अंशांकन
वाटरमार्क्स	• मापन सीमा (0 से 200 सेंटीबार) • कम लागत • डेटा लॉगर्स के साथ जोड़ कर निरंतर फील्ड मॉनिटर की व्यवस्था	• अत्यधिक परिवर्तनशील आउटपुट • कम सटीक • तापमान और मिट्टी की लवणता के प्रति संवेदनशील
टाइम डोमेन रेफ्लेक्टोमेट्री (टी डी आर)	• वॉल्यूमेट्रिक मिट्टी की नमी को मापने में सक्षम	• मिट्टी–विशिष्ट अंशांकन की जरुरत • रॉड की सिमित लम्बाई के कारण सिमित प्रभावी क्षेत्र • उच्च लागत
फ्रीक्वेंसी डोमेन रेफ्लेक्टोमेट्री (एफ डी आर)	• कई गहराई पर माप • तत्काल मिट्टी की नमी माप में सक्षम	• उच्च लागत

सेंसर कैसे स्थापित करें?

स्थापना की विधि सेंसर के डिजाइन पर निर्भर करता है। निर्माता द्वारा दिए गए इंस्टॉलेशन निर्देशों का पालन करना चाहिए। सामान्य तौर पर, मृदा नमी संवेदक की स्थापना दो तरीकों जैसे छेद या गड्ढा खोदकर और अलग–अलग गहराई पर क्षैतिज या लंबवत रूप से सेंसर स्थापित करके की जाती है (चित्र 2)। सेंसर को बड़े आकार के छेद में स्थापित नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे रिक्तियां और वायु अंतराल हो सकते हैं। हवा के अंतराल को रोकने के लिए, उपयोगकर्ता स्थापना के दौरान मिट्टी और पानी (मिट्टी का घोल) के मिश्रण का उपयोग भी करते हैं। खेतों में अलग–अलग गहराई और स्थानों पर सेंसर लगाए जाने चाहिए। आमतौर पर, सेंसर जोड़े में फसल जड़ क्षेत्र के एक तिहाई और दो तिहाई भाग की गहराई में रखे जाते हैं। साथ हीं जिन क्षेत्रों में भारी और हल्की दोनों प्रकार की मिट्टी होती है, वहां सिंचाई के लिए मिट्टी की निगरानी और प्रबंधन अलग से करने की अनुसंशा की जाती है। इसके अलावा विभिन्न प्रकार की मिट्टी की पहचान करने के लिए फील्ड मैपिंग तकनीकों जैसे विद्युत चुम्बकीय चालकता (ईएम) मानचित्रण का उपयोग किया जा सकता है और अलग–अलग जल धारण क्षमता की पहचान करके, प्रबंधन क्षेत्र बनाए जा सकते हैं जिन्हें अलग से प्रबंधित किया जा सकता है।

चित्र 2: मृदा सेंसर्स स्थापना विधि

निष्कर्ष

भारत की औसत सतही सिंचाई क्षमता केवल 38प्रतिशत है और सीमित जल संसाधन के कारण इसका कुशल उपयोग अतिआवश्यक है। किसान का लक्ष्य हमेशा कुशल जल उपयोग के साथ कृषि लाभ को अधिकतम करना है। हालांकि, सिंचाई दक्षता सुधार के लिए कृषि पद्धतियों को आधुनिक बनाने की बहुत आवश्यकता है, जिसमें स्प्रिंकलर और ड्रिप सिंचाई के माध्यम से सटीक जल अनुप्रयोग को अपनाकर 75 से 95 प्रतिशत प्राप्त की जा सकती है। सटीक सिंचाई समय की मांग है जिसमें मृदा सेंसर्स सिंचाई निर्धारण में अदुतिये भूमिका निभा सकते हैं। अधिक लागत के कारण इसका उपयोग केवल शोधस्थल तक हीं सीमित हैं और कम लागत वाली घरेलु स्तर पर मृदा सेंसर्स विकसित हुए हैं स स्वचालित सिंचाई प्रणाली की परिकल्पना भी मृदा सेंसर्स के बगैर संभव नहीं है। अतः वह दिन दूर नहीं जब ये छोटे एवं सीमांत किसानों की पहुंच तक होगें और वो भी इसका उपयोग कर कृषि जल उत्पादकता बढ़ा सकते हैं।

लघु एवं सीमांत कृषकों के लिए सौर ऊर्जा एक वरदान

अतीकुर रहमान एवं आशुतोष उपाध्याय
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

सौर ऊर्जा तकनीकी की विभाज्यता, स्थिरता और पर्यावरण सुगमता के कारण इसके कई फायदे हैं। कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में इस तकनीकी के उपयोग की अपार संभावनाएं और अवसर हैं। हालांकि कई लाभों के बावजूद सौर ऊर्जा तकनीकी का उपयोग केवल कुछ बड़े किसानों तक ही सीमित है। इसके पीछे सबसे महत्वपूर्ण कारण है उच्च प्रारंभिक निवेश लागत और तकनीकी के लाभों के बारे में जागरूकता की कमी। यह लेख छोटे जोत धारकों के लिए सौर फोटोवोल्टिक प्रौद्योगिकी विकल्प जैसे भूजल दोहन, दबीए विधि से फसलों की सिंचाई, घने भंडारित मत्स्य तालाबों में घुलित ऑक्सीजन सांद्रता में सुधार, डेयरी पशु शेड में माइक्रॉक्लाइमेट का प्रबंधन, स्वच्छता बनाए रखने के लिए पशु शेड की धुलाई और सफाई इत्यादि के बारे में वर्णन करता है। एकल सौर सरणी द्वारा सक्रिय यह प्रणाली समग्र लागत को कम करता है और इसकी प्रयोज्यता और लाभप्रदता को देखते हुए यह छोटे धारकों के लिए काफी लाभप्रद है।

भारत में, अधिकांश किसान छोटे और सीमांत श्रेणी के हैं। कृषि जनगणना 2015–16 प्रदर्शित करता है कि बिहार जैसे राज्य में औसत भूमि जोत का आकार 0.25 हेक्टेयर है और 16.4 मिलियन जोतों में से 91.1% सीमांत हैं । इन छोटे भूमि धारकों को बढ़ती लागत लागत और जलवायु परिवर्तन कारकों के कारण कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। इनकी कृषि उत्पादकता काफी कम है हालांकि दक्षता की दृष्टि से छोटे जोत, बड़े जोत के बराबर या बेहतर होते हैं। इसके पीछे सबसे महत्वपूर्ण कारण है पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं पर उनकी प्रत्यक्ष निर्भरता और इसमें बदलते संदर्भों को अनुकूलित करने की क्षमता की कमी। फसलों, बागवानी, पशुपालन और मत्स्य पालन के एकीकरण के माध्यम से इन छोटे जोत के किसानो की उत्पादकता बढ़ाने के लिए कई प्रयास किए जा रहे हैं। यह एकीकरण गहन, सहजीवी और सहक्रियात्मक है लेकिन इस एकीकरण के सफल कार्यान्वयन के लिए आवश्यक जल आपूर्ति सुनिश्चित करना आवश्यक है।.

एकीकरण में मत्स्य घटक भी शामिल होता है जो उच्च भंडारण घनत्व वाले मिट्टी के तालाबों में किया जाता है। इस प्रकार के तालाबों में पानी ज्यादातर गन्दा होता है और उष्मीय स्तरीकरण बनते हैं। इन कारकों के कारण तालाब के पानी में घुलित ऑक्सीजन में कमी हो जाती है और मत्स्य की वांछित उत्पादकता घट जाती है क्योंकि कम ऑक्सीजन सांद्रता फ़ीड सेवन को कम कर देती है, फ़ीड रूपांतरण अनुपात को बढ़ाती है, विकास में कमी हो जाती है और रोगों की संवेदनशीलता को बढ़ाती है। तालाब की सतह का कृत्रिम वातन घुलित ऑक्सीजन सांद्रता में सुधार के लिए एक अच्छी विधि है। कृत्रिम वातन एक स्प्रिंकलर, पैडल व्हील या वायु प्रसार प्रकार के होतें हैं। वातन एक लंबी अवधि की सतत प्रक्रिया है इसलिए लंबे समय तक चलाने में अधिक मात्रा में ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। डीजल की कीमतों में अभूतपूर्व वृद्धि के कारण इस उद्देश्य के लिए सौर ऊर्जा का उपयोग एक बेहतर विकल्प है।

बेहतर लाभ के लिए उच्च दुग्ध उत्पादन करने वाले डेयरी मवेशियों को सामान्य रूप से प्रणाली में एकीकृत किया जाता है। इन डेयरी मवेशियों को प्रतिदिन भरपूर पानी की आवश्यकता होती है क्योंकि एक वयस्क डेयरी मवेशी के शरीर में कुल पानी की मात्रा उसके शरीर के वजन के 56 से 81 प्रतिशत के बीच होती है और शरीर के कुल पानी का 20 प्रतिशत भी नुकसान घातक हो सकता है। जलवायु परिवर्तन के कारण तापमान में वृद्धि ने इनकी दैनिक पानी की आवश्यकता को और बढ़ा दिया है। उच्च तापीय आर्द्रता सूचकांक दूध उत्पादन, हार्मोनल प्रबंधन और उच्च दूध उत्पादन करने वाले डेयरी मवेशियों की प्रजनन क्षमता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है क्योंकि उच्च तापमान और कम आर्द्रता मवेशियों के मुँह की श्लेष्म झिल्ली को निर्जलित करता है और इसलिए वायरस और बैक्टीरिया की चपेट

में आने का खतरा बढ़ जाता है। इसलिए, डेयरी प्रबंधन को मवेशी शेड में उपयुक्त माइक्रॉक्लाइमेट के रखरखाव की आवश्यकता होती है और इस के कुछ प्रबंधन प्रथाओं में ह्यूमिडिफ़ायर का उपयोग शामिल है।

सुनिश्चित अनुपूरक सिंचाई के अभाव में किसान उच्च मूल्य वाली फसलों को अपनाने से बचतें हैं क्योंकि इन फसलों को अधिक पानी की आवश्यकता होती है। परन्तु उच्च उत्पादकता के लिए उच्च मूल्य वाली फसलों को सिस्टम में एकीकृत करने की आवश्यकता होती है। पूरक सिंचाई का मुख्य स्रोत भूजल है हालांकि अत्यधिक दोहन से भूजल संसाधन में कमी आती है और गुणव ा में गिरावट होती है। यह किसानों को पानी की बचत करने वाले उपकरणों को अपनाने के लिए अनिवार्य बनाता है। उच्च दबाव प्रणाली की लागत अधिक होती है और छोटे धारकों के लिए वाहनीये नहीं होती है अतः कम दबाव वाली सिंचाई प्रणाली इन के लिए उपयुक्त प्रणाली है।

पूर्वी क्षेत्र के राज्यों में अच्छी मात्रा में सौर विकिरण प्राप्त होता है जो की 3.5–6.6 किलो वाट ऑवर पर्ति वर्ग मीटर दिन के बीच होता और वर्ष में 250–300 तेज धूप वाले दिन होते हैं। इसलिए, सौर ऊर्जा साल भर ऊर्जा का अच्छा स्रोत हो सकता सकती है। लेकिन फोटोवोल्टिक तकनीक अभी भी महंगी है और छोटे धारकों के लिए वाहनीये नहीं है। परन्तु, यदि कम लागत वाली प्रणाली बहुउद्देश्यीय उपयोग के लिए डिज़ाइन की जाए तो यह छोटे धारकों के लिए लाभदायक हो सकती है। छोटे किसानों की उत्पादकता और लाभप्रदता बढ़ाने के लिए एकीकृत कृषि दृष्टिकोण के तहत भू जल निकासी करने, दबाव वाली सिंचाई प्रणाली को संचालित करने, पशु शेड को आर्द्र करने और तालाब में घुलित ऑक्सीजन एकाग्रता को बढ़ाने जैसे बहुउद्देश्यीय सौर प्रणाली की डिजाइन एकल सौर पैनल के इस्तेमाल की जा सकती है।

उथले भूजल गहराई के लिए पानी निकासी के लिए पनडुब्बी पंप या सतही पंप का उपयोग किया जाता है। हालांकि, जलवायु परिवर्तन के मौजूदा परिदृश्य में पनडुब्बी पंप एक अच्छा विकल्प है क्योंकि अनियमित वर्षा के कारण भूजल की गहराई में अत्यधिक उतार–चढ़ाव होता है। इसके अलावा, उच्च प्रारंभिक निवेश लागत के कारण छोटे किसान कम क्षमता वाले सौर पंपों को पसंद करते हैं। क्योंकि सौर पंप की बड़ी क्षमता के लिए बड़े आकार की सौर सरणी की आवश्यकता होती है और इसलिए लागत अधिक होती है। हालांकि कम क्षमता वाले सौर पंप कम डिलीवरी हेड प्रदान करते हैं और इसलिए दाबिये सिंचाई प्रणाली के संचालन के लिए पाइप नेटवर्क के माध्यम से सीधे फीडिंग संभव नहीं है। यह छोटे किसानों को दबाव वाली सिंचाई तकनीक का उपयोग करने से रोकता है। इसलिए एक अधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण विकसित किया जाना चाहिए ताकि एक कम क्षमता वाली सौर प्रणाली भूजल पंपिंग कर सके और दबाव वाली सिंचाई प्रणाली को संचालित करने के लिए अच्छी डिलीवरी हेड प्रदान कर सके और छोटे किसान की समग्र उत्पादकता बढ़ाने के लिए अन्य कार्य भी कर सके। इन आवश्यकताओं को पूरा करने वाली प्रणाली में एक पंपिंग इकाई, एक भंडारण इकाई (टैंक/तालाब) और एक वितरण इकाई शामिल है, जिसे चित्र–1 में दिखाया गया है।

चित्र 1– पंपिंग इकाई और भंडारण टैंक/तालाब के साथ सौर प्रणाली

इस व्यवस्था में पंपिंग यूनिट एक कम क्षमता वाला पंप है जो स्वतंत्र रूप से भंडारण तालाब में पानी निकालता है और यह तालाब मछली पालन के लिए जल भंडार के रूप में कार्य करता है। वितरण इकाई तालाब से पानी निकालती है और सिंचाई के लिए खेतों में पानी पहुंचाती है। वितरण इकाई एक कम क्षमता का सौर पंप है जो पंपिंग इकाई के समान प्रकृति और समान विद्युत मापदंडों का है। यह व्यवस्था दोनों इकाइयों को वैकल्पिक रूप से संचालित करने के लिए एक ही सौर सरणी के उपयोग की सुविधा प्रदान करती है। चूंकि डिलीवरी यूनिट बहुत कम सक्शन हेड का सामना करती है इसलिए यह एक बहुत ही उच्च वितरण शीर्ष प्रदान करता है और दबावयुक्त सिंचाई की सुविधा प्रदान करता है। बिहार के अधिकांश हिस्सों में भूजल की गहराई उथली है और मानसून पूर्व और मानसून के बाद 5–8 मीटर के बीच होती है, जिसमें औ 2 से औ 4 मीटर की वार्षिक उतार–चढ़ाव होती है। इस तरह के भूजल

गहराई के तहत 1.2 किलोवाट पीक सौर सरणी द्वारा सक्रिय 1.0 अश्वशक्ति सौर सबमर्सिबल पंप इस मॉडल के लिए सबसे उपयुक्त है। इस सौर पंप का प्रदर्शन चित्र 2 में दिखाया गया है। डिलीवरी पंप का चयन करते समय उपयोगकर्ता को हाई–हेड कम डिस्चार्ज वाले मॉडल का चयन करना चाहिए। यह वितरण इकाई 0.6–8.0 किग्रा/सेमी2 की सीमा में एक दबाव शीर्ष प्रदान करती है जब 600–900 वाट/ मी2 के बीच तात्कालिक विकिरण होता है जो की वर्ष भर में सुबह 9:00 बजे से दोपहर 2.00 बजे के बीच उज्ज्वल दिनों में अधिकांश महीनों में होता है। इसलिए उपयुक्त समय सीमा के तहत दिन में एक ही सौर पैनल का उपयोग फसलों की सिंचाई के लिए दबाव वाली विधियों से किया जा सकता है।

चित्र 2. स्प्रेयर प्रकार सौर जलवाहक

उच्च मछली भंडारण घनत्व, रोगाणुओं की उपस्थिति, और कार्बनिक पदार्थ इत्यादि तालाबों में घुलित ऑक्सीजन को तेजी से समाप्त करते हैं। तापमान में वृद्धि के कारण मछलियों में श्वसन दर त्वरित हो जाता है और ऑक्सीजन की मांग अधिक बढ़ जाती है। यदि एक जलवाहक का उपयोग किया जाता है तो यह हवा से पानी में ऑक्सीजन के हस्तांतरण की दर को बढ़ा देता है। तालाब के पानी का संचलन थर्मल स्तरीकरण को भी तोड़ता है । सामान्य तौर पर, जलवाहक मुख्य रूप से पानी में हवा के प्रसार या पानी में लहर के लिए आंदोलन पैदा करने के सिद्धांतों पर काम करता है। हालाँकि, अगर पानी को हवा में छिड़का जाये (चित्र 2) तो तालाब के पानी में भी पर्याप्त वृद्धि देखी गई है। हवा में पानी के इस छींटे से पानी का तापमान भी कम हो जाता है और उष्मीय स्तरीकरण टूटता है। उष्मीय स्तरीकरण के टूटने से शीर्ष ऑक्सीजन युक्त सतह परत को उप सतह परतों और पानी के स्तंभ की निचली परतों के साथ मिलने की अनुमति मिलती है। नीचे की परतों का दिन के समय ऑक्सीजनकरण, आनेवाली रात के लिए ऑक्सीजन आरक्षित हो जाता है। इस प्रकार यदि पंपिंग इकाई चालू नहीं है और सिंचाई नहीं की जा रही है तो इस अवधि के दौरान वितरण पंप एक छिद्रित पाइप के माध्यम से तालाब के पानी को परिचालित करके जलवाहक के रूप में कार्य कर सकता है।

गर्मियों के महीनों में दिन के समय तापमान 32 – 45 डिग्री सेल्सियस के बीच रहता है। इस तरह के उच्च तापमान और कम आर्द्रता की स्थिति मवेशी शेड के तापमान–आर्द्रता सूचकांक बढ़ जाता है। प्रतिकूल माइक्रॉक्लाइमेट को पशु शेड में कुछ आर्द्रता प्रवाहित कर संशोधित किया जा सकता है । यह प्रक्रिया नमी को बढ़ाती है और डेयरी मवेशी शेड के तापमान को कम करती है और टीएचआई को आरामदायक स्तर तक कम कर देती है।

चूंकि, डिलीवरी पंप एक अच्छा दबाव हेड प्रदान करता है इसलिए अच्छी आर्द्रता और कम तापमान की स्थिति बनाए रखने के लिए जानवरों के शेड के अंदर पानी के छिड़काव उपकरणों को संचालित करना चाहिए जो की डिलीवरी पंप के माध्यम से किया जा सकता है । इसके अलावा, पशु शेड में अच्छी स्वच्छता बनाए रखना काफी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह डेयरी मवेशियों के समग्र प्रदर्शन पर प्रभाव डालता है। हालांकि, इसके लिए शेड की नियमित सफाई के साथ–साथ डेयरी पशुओं के शरीर के लिए दाबिए पानी की आवश्यकता होती है। चूंकि डिलीवरी पंप अच्छे दबाव में पानी प्रदान करता है इसलिए इसका उपयोग इस उद्देश्य के लिए किया जा सकता है।

चूंकि एक निश्चित अंतराल के बाद फसल सिंचाई कार्यक्रम की जाती है, पशु शेड की धुलाई आमतौर पर दिन में एक बार आवश्यक होती है, मध्याह्न के घंटों के दौरान कम अवधि के लिए आर्द्रीकरण किया जाता है। इसलिए, शेष अवधि के लिए भूजल को निकालने के लिए या मछली तालाब को वातन करने के लिए इस प्रणाली का उपयोग किया जा सकता है। एक विचारशील और विवेकपूर्ण समय प्रबंधन के साथ इन कई कार्यों को एकल सौर पैनल द्वारा सक्रिय छोटी क्षमता वाले सौर पंपों के उपयोग के साथ किया जा सकता है। प्रणाली की प्रभावी लागत कम है; इसलिए, छोटे जोतदारों के लिए उनकी भूमि के छोटे टुकड़े की समग्र उत्पादकता बढ़ाने में उपयोगी हो सकते हैं।

जल लेखा परीक्षाः समय की आवश्यकता

[1]पवन जीत, [1]अनिल कुमार सिंह, [1]प्रेम कुमार सुंदरम,
[1]आशुतोष उपाध्याय, [1]बिकाश सरकार एवं [2]मनोज कुमार'
[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)
[2]'भा.कृ.अनु.प.– भारतीय मृदा और जल संरक्षण संस्थान, चंडीगढ़

परिचय

जल सजीव प्राणियों के लिए एक आवश्यक नवीकरणीय प्राकृतिक संसाधन है। आजकल पानी की मांग बढ़ती जा रही है लेकिन पानी की आपूर्ति सीमित या कम हो रही है। यह परिस्थिति जनसंख्या वृद्धि, खाद्य आपूर्ति की बढ़ती मांग, मौसम की चरम स्थिति, सतह के साथ–साथ भूजल की असमान आपूर्ति, जल संसाधनों के खराब जल प्रबंधन इत्यादि कारणों से उत्पन्न हो रही है। जल मूल्यांकन का महत्व हाल के दिनों में सिंचाई, घरेलू जल आपूर्ति, उद्योग और बिजली जैसे सभी जल उपयोग क्षेत्रों में जल संसाधनों के महत्वपूर्ण उपयोग के कारण बढ़ गया है। जैसा की हम जानते हैं की सभी जल प्रणालियों में विभिन्न कारणों से जल की कुछ मात्रा का हानि होता है। कितना पानी बर्बाद हुआ, इसके कोई विशेष आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। वाटर ऑडिट एक तरीका है जो हमें बताता है कि पानी की आपूर्ति प्रणाली से कितना पानी बर्बाद हो गया है और इस पानी की उपयोगिता पर कितना खर्च आ रहा है। यह न केवल पानी से संबंधित समस्या का समाधान करता है बल्कि बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधनों और सार्वजनिक धन की भी बचत करता है।

जल लेखा परीक्षा क्या है?

यह विभिन्न गतिविधियों में जल की खपत को पहचानने, मापने, निगरानी करने और कम करने का एक व्यवस्थित और वैज्ञानिक तरीका है। यह एक लेखा प्रक्रिया है जो जल की मात्रा को मापता है जो एक जल प्रणाली द्वारा उत्पादित या आपूर्ति की जा रही है, लेकिन वह ग्राहकों को वितरित या बिल नहीं किया जा रहा है। यह जल के वर्तमान उपयोग के आकलन की अनुमति देता है साथ ही साथ जल और राजस्व हानियों को कम करने के लिए आवश्यक डेटा प्रदान करता है और भविष्य में जल के जरूरतों के पूर्वानुमान की अनुमति देता है। यह न केवल खर्च बचाने में मदद करता है, बल्कि मिट्टी, पानी और पौधे इत्यादि प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण को भी प्रोत्साहित करता है। जल लेखा परीक्षा का व्यापक अध्ययन जल वितरण प्रणाली और जल उपयोगकर्ताओं का एक विस्तृत रूपरेखा देता है, जिससे जल के आसान और प्रभावी प्रबंधन में मदद मिलता है।

यह कोई नई अवधारणा नहीं है, फिर भी, भारत में जल लेखा परीक्षा के लिए कोई दिशानिर्देश या बीआईएस कोड उपलब्ध नहीं है। इसे ध्यान में रखते हुए, केंद्रीय जल आयोग (2005) ने "जल लेखा परीक्षा और जल संरक्षण के लिए सामान्य दिशा–निर्देश" प्रकाशित किया है। दिशा–निर्देशों में मुख्य रूप से सिंचाई, घरेलू जल आपूर्ति और औद्योगिक जल उपयोग शामिल हैं।

जल लेखा परीक्षा क्यों जरूरी है?

- वैज्ञानिक मूल्यांकन जल खपत की गुणवत्ता, मात्रा और स्वरूप की पहचान करने में मदद करता है।
- यह अप्रभावी उपयोगों, समस्याओं या जोखिम वाले क्षेत्रों की पहचान करने में मदद करता है, जहां जल संरक्षण और उपचारात्मक उपाय किए जा सकते हैं।
- यह उपयोग किए गए पानी के स्रोतों की स्पष्ट पहचान करने में मदद करता है।
- यह जल वितरण प्रणाली के कुशल जल प्रबंधन, उपचार और निगरानी के लिए उपर्युक्त होता है।
- यह जल प्रबंधन नीति के निर्माण के लिए डेटाबेस निर्माण करने में मदद करता है।
- यह जल उपयोग दक्षता में सुधार और नुकसान को कम करने में मदद करता है।

जल लेखा परीक्षा के लाभ

जल लेखा परीक्षा का मुख्य उद्देश्य रिसाव, निष्क्रिय प्रणाली नियंत्रण और बिना मीटर वाले स्रोतों जैसे कुओं या नहरों के कारण वितरण प्रणाली से पानी के नुकसान का अनुमान लगाना है। यह पानी के नुकसान के अन्य कारणों को भी सूचीबद्ध करता है जैसे सिस्टम से पानी की चोरी, अनधिकृत या अवैध निकासी। जल लेखा परीक्षा निम्नलिखित लाभ प्रदान करता है जिसका विवरण नीचे दिया गया है:

- यह जल वितरण प्रणाली, समस्या और संकट वाले क्षेत्रों के ज्ञान और प्रलेखन में सुधार करता है और स्रोत बिंदु को छोड़ने के बाद पानी के साथ क्या हो रहा है, इसकी बेहतर समझ रखने में मदद करता है।
- यह जल प्रणाली में उपयोग किए जाने वाले जल उपयोगिता कर्मियों के लिए निर्णय लेने के उपकरण के रूप में काम करता है साथ ही साथ समय, श्रम और धन जैसे निवेश के बारे में निर्णय लेने की अनुमति प्रदान करता है।
- यह रिसाव का पता लगाने वाले कार्यक्रमों में मदद करता है जो जल वितरण प्रणाली से रिसाव को कम करता है और छोटी समस्याओं के बड़े होने से पहले उनका समाधान करता है।
- यह जल उपयोगकर्ताओं के बीच व्यर्थ या अतिरिक्त पानी के प्रबंधन और स्थायी उपयोग के लिए बचत करने के लिए सक्रिय कदम उठाने के लिए जागरूकता फैलाता है।
- इससे (a) पानी के नुकसान में कमी, (b) बेहतर वित्तीय प्रदर्शन, (c) जल आपूर्ति प्रणाली की बेहतर विश्वसनीयता, (d) जल वितरण प्रणाली के ज्ञान में वृद्धि, (e) मौजूदा जल आपूर्ति का कुशल उपयोग, (f) सार्वजनिक स्वास्थ्य और संपत्ति के लिए बेहतर सुरक्षा, (g) बेहतर जनसंपर्क, (h) कानूनी दायित्व कम करना, और (i) व्यवधान कम, जिससे ग्राहकों को सेवा के प्रदर्शन में सुधार करने में मदद मिलता है।

जल लेखा परीक्षा के लिए अपनाई गई पद्धति

जल लेखा परीक्षा को दो प्रणालियों में किया जाता है (i) संसाधन लेखा परीक्षा या आपूर्ति पक्ष लेखा परीक्षा और (ii) खपत लेखा परीक्षा या मांग पक्ष लेखा परीक्षा।

जल लेखा परीक्षा में निम्नलिखित तत्व शामिल हैं:

- उपलब्ध पानी की मात्रा का अभिलेख
- विभिन्न क्षेत्रों में पानी का उपयोग (मीटर और बिना मीटर वाले उपयोगकर्ता)
- वितरण प्रणाली में नुकसान, और
- सिस्टम से पानी की कमी को दूर करने के उपाय

मानक जल संतुलन जल लेखा परीक्षा सभी जल उपयोगों की मात्रा निर्धारित करने की रूपरेखा है। इसे 2000 में अमेरिकन वाटर वर्क्स एसोसिएशन (ए डब्ल्यू डब्ल्यू ए) और इंटरनेशनल वाटर एसोसिएशन (आई डब्ल्यू ए) द्वारा संयुक्त रूप से विकसित किया गया था। इस मानक जल संतुलन विधि में, पानी की मात्रा को अधिकृत उपयोग और जल हानि (तालिका 1) को दो श्रेणियों में विभाजित किया गया है।

तालिका 1: ए डब्ल्यू डब्ल्यू ए / आई डब्ल्यू ए जल संतुलन प्रणाली

<table>
<tr><td rowspan="8">उत्तम इनपुट मात्रा</td><td rowspan="2">अधिकृत खपत</td><td>बिल अधिकृत खपत</td><td>बिल मीटर का खपत</td><td rowspan="2">राजस्व जल</td></tr>
<tr><td></td><td>बिना मीटर के बिल की गई खपत</td></tr>
<tr><td rowspan="2"></td><td>बिना बिल के अधिगकृत खपत</td><td>बिना बिल का मीटर खपत</td><td rowspan="5">गैर–राजस्व जल</td></tr>
<tr><td>बिना बिल का बिना मीटर की खपत</td></tr>
<tr><td rowspan="4">जल नुकसान</td><td rowspan="3">स्पष्ट नुकसान</td><td>व्यवस्थित डेटा हैंडलिंग त्रुटि</td></tr>
<tr><td>मीटरिंग अशुद्धियाँ</td></tr>
<tr><td>अनधिकृत खपत</td></tr>
<tr><td rowspan="3">वास्तविक नुकसान</td><td>ट्रांसमिशन और डिस्ट्रीब्यूशन मेन में लीकेज</td></tr>
<tr><td>उपयोगिता भंडारण टैंकों में रिसाव और अतिप्रवाह</td></tr>
<tr><td>ग्राहक मीटरिंग के बिंदु तक सेवा कनेक्शन पर रिसाव</td></tr>
</table>

जल संतुलन विधि में निम्नलिखित महत्वपूर्ण संबंधों का उपयोग किया गया था ।

सिस्टम इनपुट मात्रा = अधिकृत खपत + जल नुकसान

जल नुकसान = स्पष्ट नुकसान + वास्तविक नुकसान

स्पष्ट नुकसान = मीटरिंग अशुद्धियाँ + अनधिकृत खपत

गैर–राजस्व जल = जल नुकसान + बिना बिल के अधिकृत खपत

राजस्व जल = अधिकृत खपत – बिना बिल के अधिकृत खपत

अमेरिकन वाटर वर्क्स एसोसिएशन (ए डब्ल्यू डब्ल्यू ए) "वाटर ऑडिट्स एंड लीक डिटेक्शन" नामक एक मैनुअल प्रकाशित करता है जो जल नुकसान की मात्रा का आकलन करने के लिए वाटर ऑडिट पद्धति का वर्णन करता है। जल लेखा परीक्षा की तैयारी के दौरान, निम्नलिखित घटकों की समीक्षा और विश्लेषण करना आवश्यक होता है:

- कुल जल आपूर्ति
- कुल जल खपत (बिल और बिल न किया गया)
- जल नुकसान (स्पष्ट और वास्तविक) और रिसाव
- वित्तीय संकेतक (राजस्व और गैर–राजस्व जल)

जल लेखा परीक्षा के निम्नलिखित चरण हैं जिसपर जल लेखा परीक्षा के दौरान विचार किया जाता है:

- जल आपूर्ति और उपयोग अध्ययन
- प्रक्रिया अध्ययन
- सिस्टम ऑडिट
- निर्वहन विश्लेषण
- जल लेखा परीक्षा रिपोर्ट

जल लेखा परीक्षा के पहले लेखा परीक्षा चरणों में जल आपूर्ति और उपयोग अध्ययन के साथ–साथ प्रक्रिया अध्ययन पूरा किया जाता है।

जल आपूर्ति और उपयोग अध्ययन

इसका वाटर ऑडिट के प्री–ऑडिट में एक बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है। इसमें जल स्रोतों का ख़ाका तैयार करना, वितरण नेटवर्क, जल उपयोगकर्ताओं के लिए निकास केंद्र और अतिरिक्त पानी का वापसी प्रवाह शामिल है। जल स्रोतों के ख़ाका में जल आपूर्ति के प्रमुख बिंदुओं पर स्थापित प्रवाह माप उपकरणों के स्थान और क्षमता, जल आपूर्ति प्रणाली में पाइप आयाम और फिटिंग, पाइप और फिटिंग सहित प्रवाह नियंत्रण उपकरणों और नियंत्रण उपकरणों के स्थान और विवरण शामिल होता है। विभिन्न क्षेत्रों के लिए जल स्रोतों की उपलब्धता और पिछले खपत पैटर्न का अध्ययन वर्तमान जल उपयोग और भविष्य की आवश्यकता के लिए प्रोजेक्ट परिदृश्यों को समझने के लिए आवश्यक है। इसमें वर्षा जल संचयन और अपशिष्ट पुनर्चक्रण के माध्यम से जल के स्थायी स्रोत के विकास के आंकड़ों को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।

प्रक्रिया अध्ययन

इस चरण में सभी जल आपूर्ति बिंदुओं पर प्रवाह माप उपकरण स्थापित किए जा सकते हैं ताकि विभिन्न घटकों जैसे कच्चे पानी के स्रोत, अनुपचारित जल के स्रोत से उपचार संयंत्र तक परिवहन प्रणाली, उपचार संयंत्र से उपचारित जल भंडारण प्रणाली, उपचारित जल भंडारण प्रणाली से वितरण नेटवर्क तक जल नुकसान इत्यादि का नियमित अंतराल पर मूल्यांकन किया जा सकता है। प्रवाह जल में मौजूद दूषित पदार्थों के स्तर और स्वभाव का पता लगाने के लिए जल आपूर्ति बिंदुओं पर वितरण प्रणाली की जल गुणवत्ता की नियमित रूप से निगरानी करने की आवश्यकता है। जल वितरण प्रणाली, रिसाव मात्रा का ठहराव आदि जल लेखा परीक्षा के इस चरण का एक अभिन्न अंग है।

सिस्टम ऑडिट

इस चरण के अंतर्गत सिंचाई, घरेलू जल आपूर्ति, उद्योग, जल विद्युत और अन्य जैसे विभिन्न क्षेत्रों के तहत पानी के उपयोग के लिए वर्तमान जल उपयोग और प्रणालियों का अध्ययन करने की आवश्यकता है ताकि सिस्टम की परिचालन दक्षता और रखरखाव के स्तर की जांच की जा सके। यह कदम अनुचित अपशिष्ट जल उत्पादन की पहुंच की पहचान करने में मदद करेगा।

निर्वहन विश्लेषण

इस चरण के अंतर्गत घरेलू अपशिष्ट जल, सिंचाई से वापसी प्रवाह, और उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्टों का पर्यावरण मानकों के अनुरूप अध्ययन करने की आवश्यकता शामिल है साथ ही साथ मूल्यवान उप–उत्पादों की वसूली की संभावना और अपशिष्ट जल के पुनर्चक्रण के अवसर भी मिलते हैं।

जल लेखा परीक्षा रिपोर्ट

इसमें जल उपयोग दक्षता का निर्धारण, जल की खपत का सामूहिक संतुलन, डेटा प्रोसेसिंग और अंतराल विश्लेषण शामिल हैं। इसमें रिपोर्ट परिणामों, सुधार के दायरे, सिफारिशों और निष्कर्ष पर चर्चा भी शामिल है।

निष्कर्ष

जल लेखा परीक्षा जल संसाधनों के संपूर्ण उपयोग, वितरण प्रणाली, पूंजी और इसकी परिचालन लागत को कम करने के लिए एक कुशल माध्यम है। यह जल की कमी से संबंधित समस्या, रिसाव और नुकसान के निवारण करने का एक महत्वपूर्ण उपकरण है। जन जागरूकता को बढ़ावा देना, जल उपयोगकर्ताओं की सक्रिय भागीदारी, जल प्रबंधन के लिए उपयुक्त और प्रभावी नियामक ढांचा, सफल और बेहतर जल उपयोग और जल के नुकसान के नियंत्रण करने में बहुत ही प्रभावी होता है।

बिहार में बाढ़ का फसल भूमि पर प्रभाव

अकरम अहमद[1], आशुतोष उपाध्याय[1], अनिल कुमार सिंह[1], मणिभूषण[1], पी. एस. ब्रह्मानन्द[2], रोहन कुमार रमण[1], सुरजीत मंडल[1] एवं वेद प्रकाश[1]

[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

[2]डॉ. राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, बिहार

उत्तर बिहार भारत के सबसे अधिक बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में से एक है। उत्तर बिहार की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि आधारित है। उत्तर बिहार में हर साल बाढ़ विभिन्न सीमा और तीव्रता के साथ आती है और फसल को नुकसान पहूंचाती है। इस अध्ययन में, रिमोट सेंसिंग (आरएस) और भोगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) तकनीको का उपयोग करके बाढ़ के कारण नुक्सान की आशंका वाली फसलो की मैपिंग की गई है। यह देखा गया है कि कृषि भूमि उत्तर बिहार के भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 85 प्रतिशत है। उत्तर बिहार का लगभग 769.0 वर्ग किलोमीटर और 518.3 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र उच्च और बहुत बाढ़ जोखिम के अंतगर्त आता है। जिसमे क्रमशः 336.5 वर्ग किलोमीटर और 285.6 वर्ग किलोमीटर फसल भूमि क्षेत्र शामिल है। विश्लेषण और क्षेत्र सर्वेक्षण से यह देखा गया है कि उच्च और बहुत अधिक बाढ़ जोखिम वाले क्षेत्रों में खेती की जाने वाली फसलें यानि चावल, मक्का और जूट बाढ़ के कारण पूरी तरह से क्षतिग्रस्त हो जाती है।

परिचय

बिहार में बाढ़ सबसे आवर्ती और विनाशकारी प्राकृतिक खतरा है जिससे जीवन संपति, विभिन्न सेवाओं और बुनियादी ढांचे के साथ–साथ कृषि क्षेत्र को भारी नुक्सान होता है जो कि बिहार की अर्थवयवस्था का मुख्य आधार है। उत्तर बिहार मुख्य रूप से बिहार का बाढ़ प्रभावित हिस्सा है और बिहार राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (बीएसडीएमए) के अनुसार उत्तरी बिहार के भौगोलिक क्षेत्र का 73.63 प्रतिशत बाढ़ से ग्रस्त माना जाता है। सभी नदी घाटियों में से लगभग 89 प्रतिशत जल ग्रहण क्षेत्र में बाढ़ कोसी बेसिन में अधिकतम है और कोसी को ''बिहार का शोक'' के रूप में जाना जाता है। पूरा उत्तर बिहार घाघरा, गंडक, कोसी, कमला– बालन आदि प्रमुख नदियों से होकर गुजरता है, जो अंततः गंगा नदी में मिलती है। उत्तरी बिहार की प्रमुख नदियों का नेपाल और तिब्बत में हिमालयी मूल में जलग्रहण क्षेत्र है और उनके जलग्रहण क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण हिस्सा ग्लेशियर से ढका हुआ है। इसलिए, ये नदियों बर्फ से ढकी और प्रवाह में बारहमासी है। इसके अलावा, ये मानसून के दौरान बहुत प्रचुर मात्रा में वर्षा प्राप्त करते हैं जिससे इनके निर्वहन में कई गुना वृद्धि होती है। यह मानसून के दौरान उत्तर बिहार के एक बड़े हिस्से में बार–बार बाढ़ का कारण बनता है।

बिहार में बाढ़ के नुकसान को बाढ़ मानचित्रण योजना, विश्लेषण और उपयुक्त संरचनात्मक और गैर– संरचनात्मक उपायों को लागू करके कम किया जा सकता है और उस उददेश के लिए, सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकताएं, विश्वसनीय, सटीक और वास्तविक समय की जानकारी हैं। भू सर्वेक्षण और हवाई पर्यवेक्षण पारंपरिक तरीको का उपयोग करते हुए बाढ़ मानचित्रण एक कठिन कार्य है। ये विधियां एक विस्तारित अवधि विशाल जनशक्ति और उच्च लागत से जुड़ी हैं। इसलिए रियल टाइम डेटा का अभाव है। इस संदर्भ में रिमोट सेंसिंग और जीआईएस जैसे भू–स्थानिक उपकरण महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। जलमग्न क्षेत्र की स्थानिक सीमा के अर्जित ज्ञान को क्षति मूल्यांकन के लिए घटना के बाद आपातकालीन राहत प्रयासों के दौरान लागु किया जा सकता है। वर्तमान में सेंसर द्वारा प्राप्त ऑप्टिकल डेटा का उपयोग जलमग्न क्षेत्रों को मैप करने के लिए किया जा रहा है। लेकिन प्रमुख बाधा ख़राब मौसम/बादल की स्थिति की उपस्थिति है। स्पेसबोर्न रडार सिस्टम अपनी विशिष्ट क्लाउड प्रवेश क्षमता के कारण जलमग्न क्षेत्रों के वास्तविक समय के आकलन के लिए बहुत उपयोगी। इसलिए बाढ़ की निगरानी के लिए रडार इमेजरी अधिक उपयोगी है।

उत्तर बिहार में बहने वाली नदियों के जलग्रहण क्षेत्र में होने वाली वर्षा की मात्रा के आधार पर हर साल उत्तर बिहार मानसून के दौरान बाढ़ के पानी से प्रभावित होता है। उत्तर बिहार में बाढ़ पर विभिन्न शोधकर्ताओ दवारा समय–समय पर विभिन्न अध्ययन किये गए है। हालांकि उत्तरी बिहार में इसके स्थानिक कवरेज के साथ फसलों का आकलन नहीं किया गया है, जो इस बार–बार आने वाली बाढ़ के कारण क्षति के लिए अतिसंवेदनशील है। इस अध्ययन में रिमोट सेंसिंग (आरएस) और भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) तकनीकों का उपयोग करके बाढ़ के पानी के कारण फसल के प्रकार और फसल क्षेत्र को नुकसान होने का आकलन किया गया है।

सामग्री और तरीके

अध्ययन क्षेत्र

उत्तरी बिहार अक्षाश 25°20'01'' उत्तर से 27°31'15'' उतर और देशांतर 83°19'50'' पूर्व से 88°17'04'' पूर्व (चित्र 1) के बीच स्थित है। उत्तर बिहार का कुल भोगोलिक क्षेत्रफल 54233.02 वर्ग किलोमीटर है और इसमें बिहार के 38 जिलों में से 21 जिले शामिल है। गंगा नदी बिहार के पशिचम से पूरब दिशा की ओर बहती है और बिहार को दो भागो यानि उत्तर और दक्षिण बिहार में विभाजित करती है। उत्तर बिहार की प्रमुख नदियाँ गंडक, बूढी गंडक, बागमती, कमला, कोसी और महानंदा है। अधिकांश नदियों का उद्गमभारत के बाहर और भारत के बाहर स्थित नदी के जलग्रहण क्षेत्र है। (चित्र 1) भारत में प्रवेश करने के बाद ये नदिया उत्तरी बिहार के मैदानी इलाको से होकर बहती है और अंत में गंगा से मिल जाती है। बिहार उष्णकटिबंधीय मानसून की जलवायु क्षेत्र में आता है। बिहार की वार्षिक वर्षा (1205 मिलीमीटर) का लगभग 80–90 प्रतिशत मानसून (जुलाई–सितम्बर) के दौरान होता है।

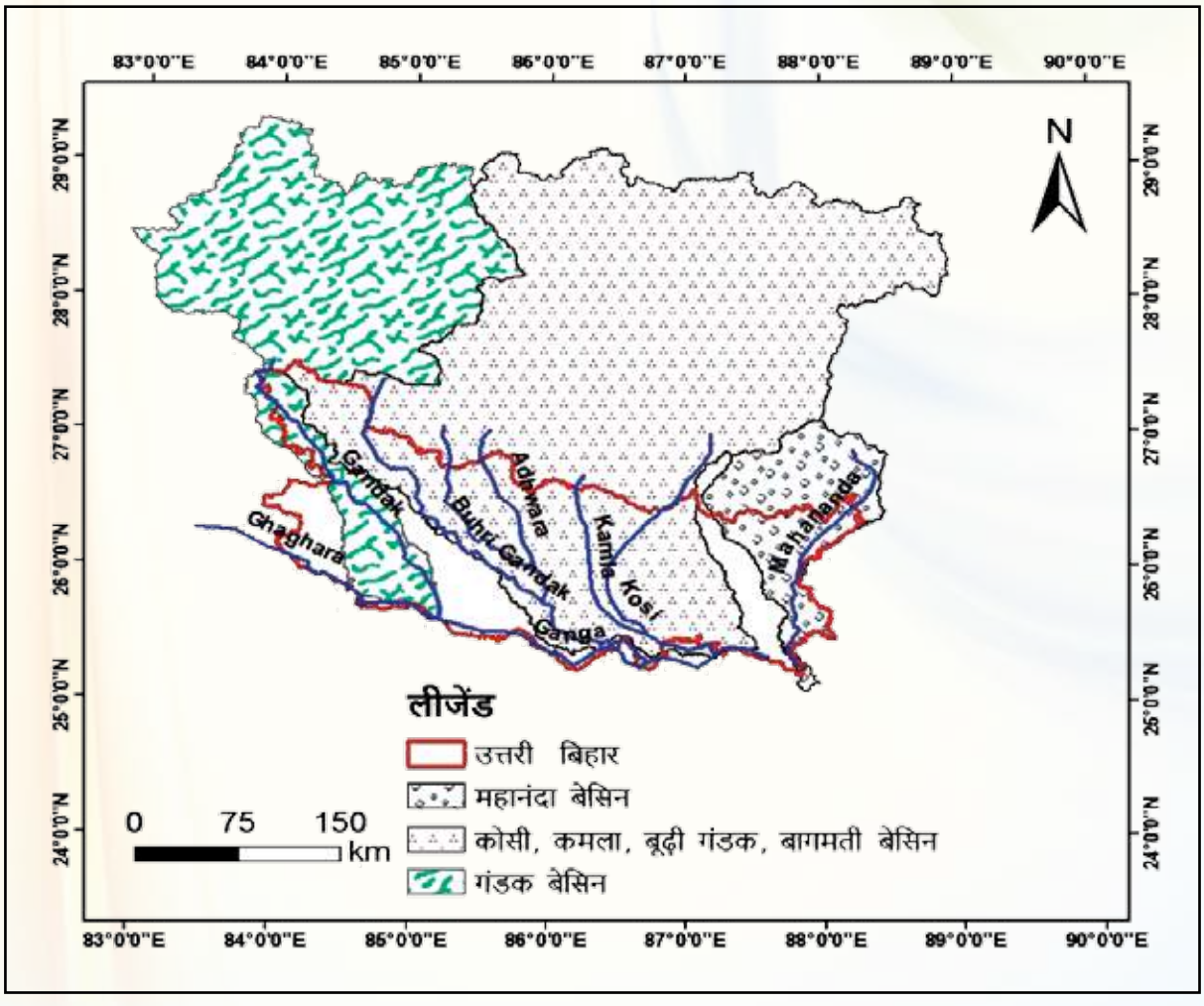

चित्र 1.उत्तरी बिहार की नदियाँ एवं उनके जल ग्रहण क्षेत्र

इस्तेमाल किया गया डेटा

इस अध्ययन के लिए 2000–2010 की वार्षिक बाढ़ परते/एनुअल फ्लड लेयर्स (एएफएल) और बिहार के 2015–16 के लैंडयूज लैंडकवर (एलयूएलसी) मानचित्र को भुवन से वेब मैप सर्विसेज (डब्लूएमएस) का उपयोग करके डाउनलोड किया गया था, जो भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) का एक भू–मंच है। फिर उत्तरी बिहार के लिए (एएफएल) और एलयूएलसी को आर्कमैप 10.1 सॉफ्टवेयर का उपयोग करके सम्बंधित एएफएल और बिहार के एलयूएलसी को निकाला गया।2015–16 के उत्तर बिहार के प्रत्येक एएफएल और विभिन्न एलयूएलसी से बाढ़ और गैर बाढ़ क्षेत्रो को मैक्सिमम लाइवलीहुड क्लासिफिकेशन मेथड का उपयोग करके क्लासिफाय किया गया है। उत्तर बिहार के एक वर्ष का एएफएल इसके कुमुलेटिव/संचयी क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करता है जहां उस वर्ष के दौरान कम से कम एक बार बाढ़ आते है। उत्तर बिहार के प्रमुख फसल पैटर्न मानचित्र को भारत में फसल प्रणाली अनुसंधान परियोजना निदेशालय, मोदीपुरम, भारत दवारा प्रकाशित एटलस ऑफ़ क्रोप्पिंग सिस्टम से डिजिटल किया गया है।

विभिन्न बाढ़ जोखिम क्षेत्रों में फसल भूमि का मानचित्रण

इस अध्ययन के लिए अपनाई गई पद्धति का संक्षेप में फ्लोचार्ट (चित्र 2) में वर्णन किया गया है ताकि उत्तर बिहार में विभिन्न बाढ़ जोखिम क्षेत्रों के अंतर्गत आने वाली फसल भूमि का मानचित्रण किया जा सके।

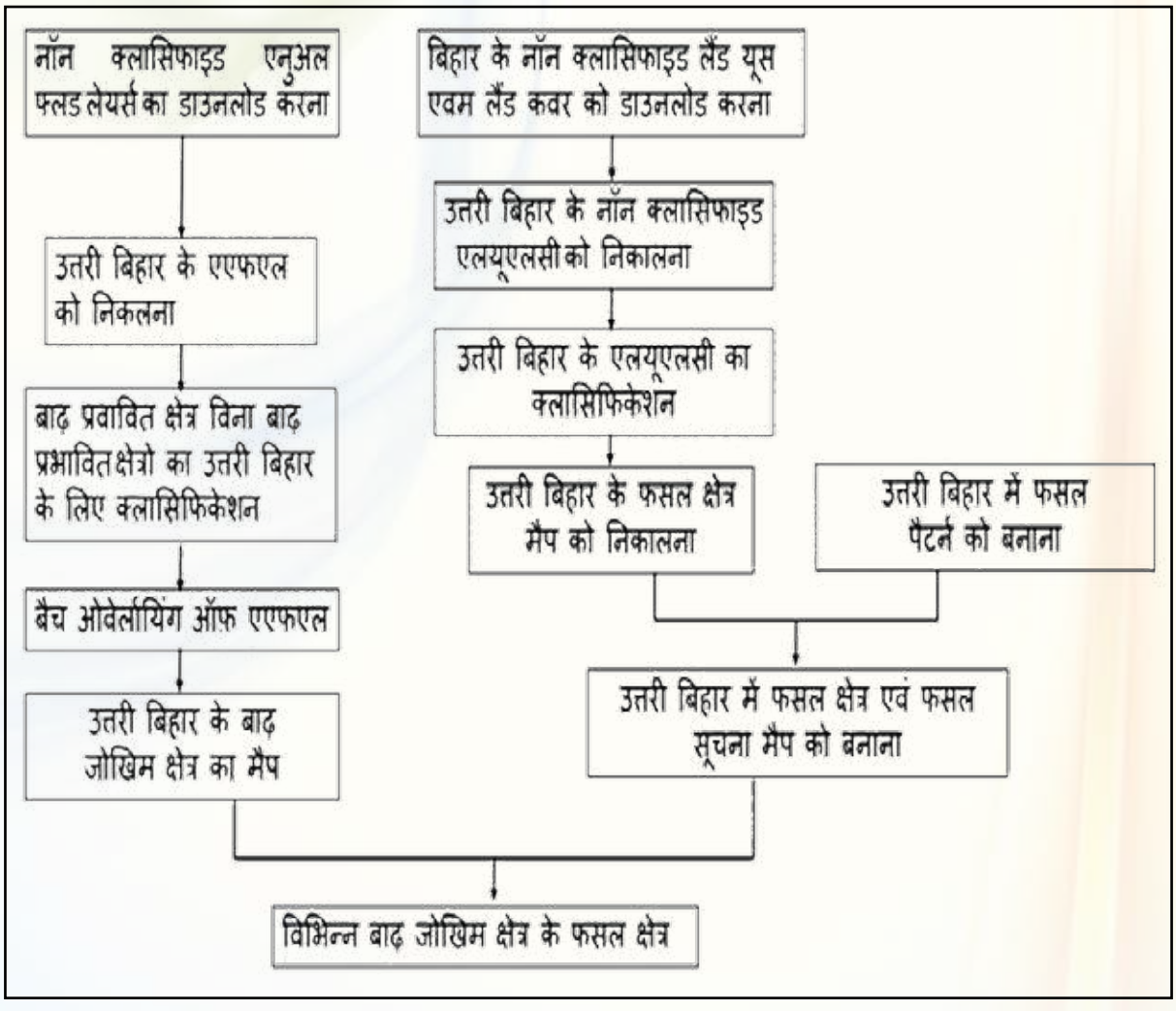

चित्र 2.बाढ़ प्रमाणित फसल क्षेत्र के मानचित्रण के तरीके

परिणाम और चर्चा

2000–2010 के दौरान उत्तरी बिहार में बाढ़ क्षेत्र का परिमानिकरण/ मात्रा निर्धारण

2000–2010 के दौरांन प्रत्येक वर्ष उत्तर बिहार में बाढ़ वाले बाढ़ प्रभावित क्षेत्र की गणना उत्तर बिहार के प्रत्येक एएफएल परमैक्सिमम लाइवलीहुड क्लासिफिकेशन मेथड से की गई है। 2000 में उत्तर बिहार के विभिन्न जिलो में बाढ़ को चित्र (3) में दिखाया गया है। यह दर्शाता है की 2000 में सीतामढ़ी, दरभंगा, मुज़फ्फ़रपुर, समस्तीपुर, सहरसा, और खगड़िया जिले केअधिकतम हिस्से में बाढ़ आई थी। 2000–2010 के दौरान उत्तरी बिहार में बाढ़ का क्षेत्र तालिका 1 में दिखाया गया है। उत्तरी बिहार में सबसे अधिक बाढ़ वाला क्षेत्र 2007 में देखा गया था।

तालिका 1: 2000 –2010 में उत्तरी बिहार के बाढ़ प्रभावित क्षेत्र

वर्ष	बाढ़ प्रभावित क्षेत्र (वर्ग किलोमीटर)
2000	2659.8
2001	2643.10
2002	3221.6
2003	4353.4
2004	8870.2
2005	3168.7
2006	2509.11
2007	12497.1
2008	7851.3
2009	3644.5
2010	2652.9

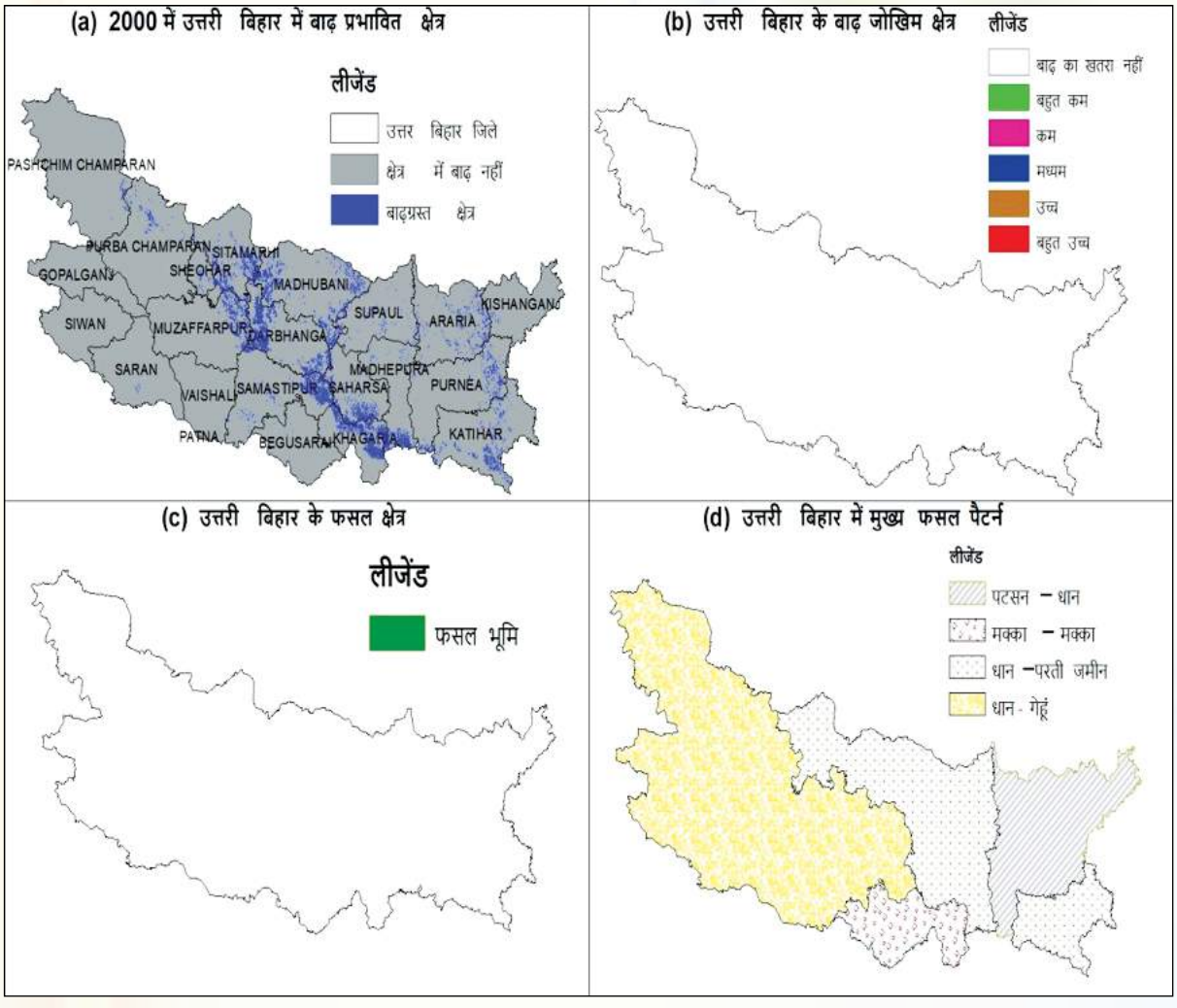

चित्र 3. (a) 2000 में उत्तरी बिहार में बाढ़ प्रभावित क्षेत्र; (इ) उत्तरी बिहार के बाढ़ जोखिम क्षेत्र; (ब) उत्तरी बिहार के फसल क्षेत्र; (क) उत्तरी बिहार में मुख्य फसल पैटर्न

उत्तर बिहार में बाढ़ जोखिम क्षेत्र

उत्तर बिहार के 2000–2010 (11) वर्षो के क्लासिफायड बाढ़मानचित्रों को बैच मेंओवरलेड गया है ताकि यह पता चल सके कि 11 वर्षो के अध्ययन के दौरान उत्तर बिहार में प्रत्येक मानचित्र इकाई (पिक्सेल) में किंतनी बार बाढ़ आयी है। उत्तर बिहार में विभिन्नबाढ़ जोखिम क्षेत्रों के अंतर्गत आने वाले क्षेत्रों को चित्र (3 बी) में दिखाया गया है। एक पिक्सेल को बाढ़ जोखिम क्षेत्र श्रेणी के अंतर्गत रखने के लिए अपनाये गए मानदंड का उल्लेख तालिका 2 में किया गया है। उदाहरण के लिए,'बहुत अधिक' बाढ़ जोखिम श्रेणी के अंतर्गत एक पिक्सेल आने का अर्थ है कि यहाँ 11 बार में से 9–11 बार बाढ़ आयी है। उत्तर बिहार में विभिन्न श्रेणीयो के अंतर्गत बाढ़ संभावित क्षेत्रो की मात्रा तालिका 2 में दर्शाई गई है।

तालिका 2 : उत्तरी बिहार में बाढ़ जोखिम क्षेत्र

बाढ़ जोखिम क्षेत्र के प्रकार	क्षेत्र (वर्ग कि. मी.)
बहुत कम	11902.9
कम	4194.6
मध्यम	2079.7
उच्च	769.0
बहुत उच्च	518.3

उत्तर बिहार में फसल क्षेत्रा और प्रमुख फसल पैटर्न

उत्तर बिहार के क्लासिफायड एलयूएलसी मानचित्र से पता चलता है कि उत्तरी बिहार की अधिकांश भूमि फसल भूमि है। परिणामो से पता चला कि उत्तरी बिहार के लगभग 85.1 प्रतिशत क्षेत्र में कृषि की जाती है। अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि का स्थानिक वितरण चित्र (3ब) में दिखाया गया है। उत्तर बिहार में प्रचलित प्रमुख फसल प्रणाली चावल–गेहू प्रणाली है (चित्र 3क)।

बाढ़ प्रभावित फसल भूमि क्षेत्रों का निर्धारण

बाढ़ से प्रभावित उत्तर बिहार में फसल भूमि क्षेत्र को बाढ़ जोखिम क्षेत्र के नक्शे के साथ फसल भूमि के नक्शे को काटकर निर्धारित किया जाता है। विभिन्न बाढ़ जोखिम क्षेत्रों के तहत विशलेषण अवधि (2000–2010) के दौरान बाढ़ से प्रभावित फसल का प्रकार और फसल क्षेत्र चित्र 4 में दिखाया गया है। चित्र (4) में यह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है कि सरल रेखा के साथ दिखाया गया बहुभुज चावल–गेहू फसल प्रणाली का प्रतिनिधित्व करता है जो उत्तर बिहार के उत्तर पश्चिमी जिलो में प्रचलित है। इस बहुभुज के भीतर दिखाए गए काले रंग के क्षेत्र खरीफ मौसम के दौरान के उगाये गए चावल उगने वाले क्षेत्रो का प्रतिनिधित्व करते है, जिनमे बाढ़ का खतरा बहुत कम होता है। इसी तरह मक्का–मक्का फसल प्रणाली की सीमा के भीतर दिखाए गए काले बिंदु खरीफ मौसम के दौरान मक्के की खेती का प्रतिनिधित्व करते है, जिनमे बाढ़ का जोखिम भी बहुत कम होता है। विभिन्न बाढ़ जोखिम क्षेत्रों के तहत बाढ़ से प्रभावित फसल के प्रकार और फसल क्षेत्र को तालिका 3 में दिखाया गया है। इसी तरह बहुत कम, निम्न, मध्यम, उच्च और बहुत अधिक बाढ़ जोखिम वाले क्षेत्रों में बाढ़ से प्रभावित फसल के प्रकार और फसल क्षेत्र को दिखाया गया है (चित्र 4)।

तालिका 3: उत्तरी बिहार के बाढ़ प्रभावित और बिना बाढ़ प्रभावित फसल क्षेत्र (वर्ग कि.मी.)

बाढ़ जोखिम क्षेत्र	धान / चावल	जूट / पटसन	मक्का
बहुत कम	1503.3	321.2	10.9
कम	823.1	76.6	33.5
मध्यम	600.2	41.1	43.7
उच्च	289.8	7.2	39.5
बहुत उच्च	245.2	1.3	39.1

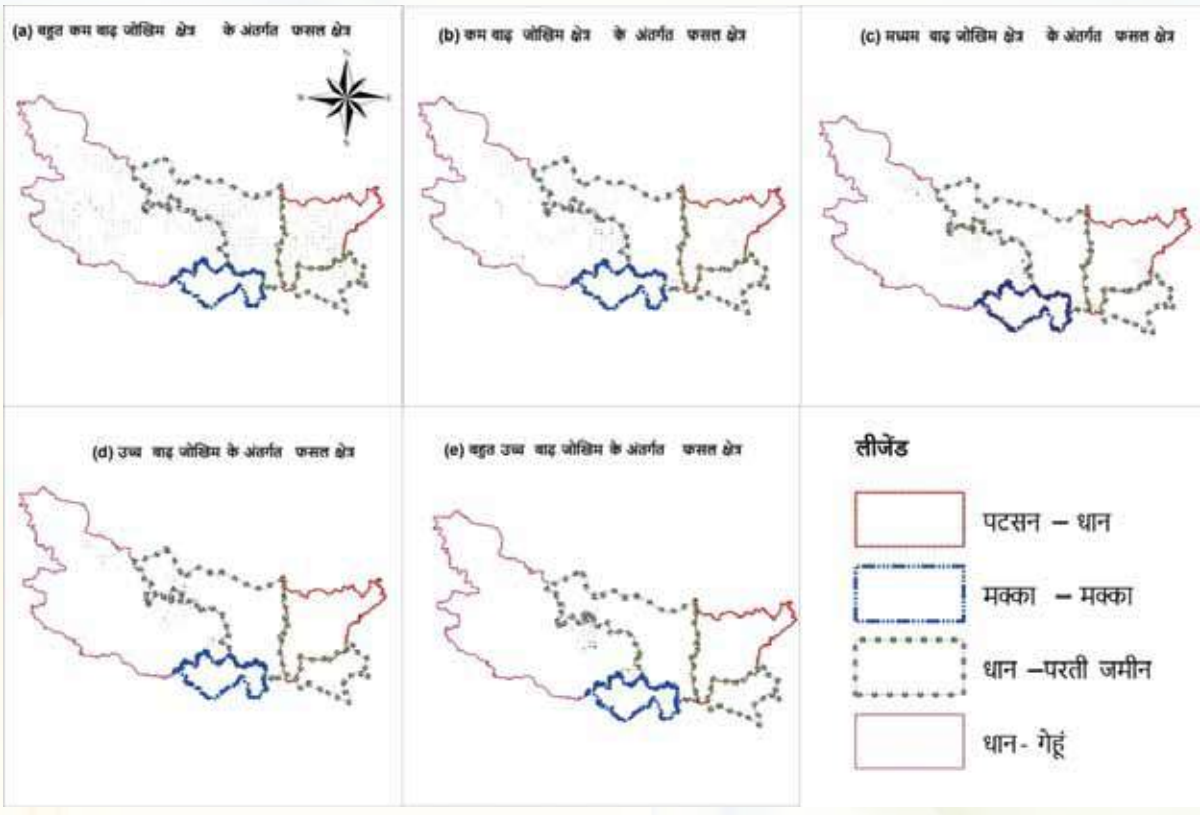

चित्र 4. अनेक बाढ़ जोखिम क्षेत्र में प्रमाणित फसल क्षेत्र

बाढ़ के दौरान फसल की स्थिति

उत्तर बिहार के मुज्ज़फरपुर, पूर्व चंपारण, सीतामढ़ी, और मधुबनी जिलो के विभिन्न गाँवो में 2020 और 2021 में बाढ़ के दौरान व्यापक क्षेत्र का दौरा किया गया। इसके अलावा एक प्रशनावली तैयार की गई और किसानो से फसलों को हुए बाढ़ से हुए नुक्सान की जानकारी जुटाई गई। बाढ़ जोखिम क्षेत्र के नक्शे पर उन स्थानो को ओवरलेईग करते समय यह देखा गया है कि बहुत अधिक और उच्च बाढ़ जोखिम क्षेत्रो में स्थित फसल के खेत बाढ़ के कारण वर्ष के अधिकतम समय में पुरी तरह से क्षतिग्रस्त हो जाते है और कई किसान खेती नहीं करते है। इन क्षेत्रो में बाढ़ के पानी की गहराई 1.0 – 2.5 मीटर होती है और बाढ़ का पानी 11 –20 दिनों तक रहता है। हालाकिं मध्यम बाढ़ जोखिम वाले क्षेत्र में स्थित फसल के खेतो से फसल की उपज पानी के ठहराव के कारण 30–40 प्रतिशत कम हो जाती है। इस क्षेत्र में बाढ़ के पानी की गहराई 0.5–1.0 मीटर के बीच होती है और बाढ़ का पानी 6–10 दिनों तक रहता है। किसानो के साथ चर्चा से यह भी देखा गया है कि मध्यम उच्च और बहुत अधिक बाढ़ जोखिम वाले क्षेत्रो के अंतर्गत आने वाली फसल के खेत साल में कई बार बाढ़ की चपेट में आ जाते है जिसके कारण किसान खरीफ सीजन में फसलो का उत्पादन नहीं कर पाते है। विशेष रूप से बहुत कम और कम बाढ़ जोखिम वाले क्षेत्रो में उगाई जाने वाली धान की फसले महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित नहीं होती है।

निष्कर्ष

यह देखा गया है कि उत्तरी बिहार का एक बड़ा फसल क्षेत्र बाढ़ की चपेट में आता है। चावल का लगभग 535.0 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र जुटे का 8.5 वर्ग किलोमीटर और मक्का की खेती का 78.6 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र बाढ़ के कारण क्षति के लये उच्च जोखिम में होते है और किसान उन क्षेत्रो को परती रखते है। इसके विपरीत चावल का लगभग 600.2 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र जुट का 41.1 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र और मक्का का 43.7 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र मध्यम बाढ़ जोखिम वाले क्षेत्र में बाढ़ से प्रभावित होते है और जिसके कारण फसलों की उपज में 40 प्रतिशत तक की कमी दर्ज की गयी है।

मिट्टी परीक्षण हेतु मृदा का नमूना लेने की विधि एवं मृदा स्वास्थ्य कार्ड

[1]देवकरन, [1]मांधाता सिंह, [1]रामकेवल, [1]हरि गोविंद,
[2]आशुतोष उपाध्याय, [1]आरिफ परवेज़ एवं [1]अभिषेक कुमार
[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर– कृषि विज्ञान केंद्र, बक्सर (बिहार)
[2]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

बढ़ती जनसंख्या, घटते संसाधन, घटते कृषि क्षेत्रफ़ल एवं जलवायु परिवर्तन के चुनौतियों आदि समस्याओं को देखते हुये, खाद्यान की मांग को पूरा करने के लिए अधिक उत्पादन बहुत जरूरी है, जिस तरह मानव शरीर की उर्जा के लिए भोजन की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार हमारी फसलों को भी पोषक तत्वो की खुराक देने हेतु रसायनिक एवं जैविक खादों की जरूरत पड़ती है। मृदा स्वास्थ्य के लिए जरुरी है कि मृदा जाँच आधारित संतुलित उर्वरक का प्रयोग किया जाये। मिट्टी जाँच, रसायनिक विश्लेषण की वैज्ञानिक विधा है जिससे मिट्टी के उर्वरता स्तर का पता चलता है और इस विश्लेषण के आधार पर फसलो के लिए जरुरी संतुलित उर्वरक की मात्रा को अनुसंसित किया जा सकता है।

मृदा परीक्षण के आधार पर उर्बरक प्रयोग से पर्यावरण एवं वातावरण को सुरक्षित रखने में सहायक है। साथ ही साथ फसलोत्पादन में लागत में कमी एवं मिट्टी की उर्वरता व उत्पादकता बढ़ाने में महतवपूर्ण भूमिका है।

मृदा परीक्षण या "भूमि की जाँच" एक मृदा के किसी नमूने की रासायनिक जांच है जिससे भूमि में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा के बारे में जानकारी मिलती है। इस परीक्षण का उद्देश्य भूमि की उर्वरकता मापना तथा यह पता करना है कि उस भूमि में कौन से पोषक तत्व कितनी मात्रा में उपलब्ध है तथा किन पोषक तत्वों की कमी है।

मृदा परीक्षण क्यों?

- मृदा पोषक तत्वों का स्तर जानने के लिए।
- पौधों को स्वस्थ रहने के लिए।
- लवणों की मात्रा और पी.एच.मान का पता चलता है।
- भूमि की भौतिक बनावट मालूम होती है।
- जो हम फसल बोने जा रहे हैं उसमें खादों की कितनी–कितनी मात्रा डालना आवश्यक होगा।
- भूमि में किसी भूमि सुधारक रसायन जैसे कि ऊसर भूमि के लिए जिप्सम, फॉस्फो जिप्सम या पाइराईट्स और अम्लीय भूमि में चूने की आवश्यकता है या नहीं। यदि है तो किसी भूमि सुधारक की कितनी मात्रा डालनी चाहिए?

पौधों के लिये आवश्यक पोषक तत्व

पौधों को अपना जीवन चक्र पूरा करने के लिए 17 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है।

मुख्य तत्व

- (गैर खनिज तत्व) कार्बन, हाइडोजन, आक्सीजन
- (खनिज तत्व) नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश
- (गोण खनिज तत्व) कैल्सिशयम, मैग्नीशियम, सल्फर।

सूक्ष्म तत्व

- जस्ता, मैगनीज, ताँबा, लोहा, बोरोन, मोलिबडेनम, क्लोरीन व निकिल

मृदा परीक्षण के उद्देश्य

- मृदा की उर्वरा शक्ति की जांच करके फसल व किस्म विशेष के लिए पोषक तत्वों की संतुलित मात्रा की सिफारिश करना तथा यह मार्गदर्शन करना कि उर्वरक व खाद का प्रयोग कब और कैसे करें।
- मृदा में लवणता, क्षारीयता तथा अम्लीयता की समस्या की पहचान व जांच के आधार पर भूमि सुधारकों की मात्रा व प्रकार की सिफारिश कर

भूमि को फिर से कृषि योग्य बनाने में योगदान करना।

- फलों के बाग लगाने के लिए भूमि की उपयुक्तता का पता लगाना।
- किसी गांव, विकास खंड, तहसील, जिला, राज्य की मृदाओं की उर्वरा शक्ति को मानचित्र पर प्रदर्शित करना तथा उर्वरकों की आवश्यकता का पता लगाना।
- इस प्रकार की सूचना प्रदान कर उर्वरक निर्माण, वितरण एवं उपयोग में सहायता करना
- उर्वरक मांग एवं पूर्ति, फसल लागत व्यय को कम करने में सहयोग करना।

मिट्टी नमूना कब लें?

- मिट्टी का नमूना कभी भी ले सकते हैं, परन्तु रबी मौसम की फसल की कटाई के बाद खाली जमीन से तथा अक्तूबर में या रबी की बुआई से पहले नमूना लेना चाहिए।
- यदि खड़ी फसल से मिट्टी का नमूना लेना हो तो कतारों के बीच से नमूना लें। परन्तु ध्यान रखें कि खेत में उर्वरक या कोई जैविक खाद लगाए कम से कम 25–30 दिन हो गए हों अन्यथा परिणाम गलत हो सकता है।
- आमतौर पर तीन साल में एक बार मिट्टी का नमूना लेना ठीक रहता है।

नमूना लेने के लिए आवश्यक सामग्री

- किसान के पास उपलब्ध छोटे यंत्र ।
- नमूना लेने के लिए सभी सामान साफ होने चाहिए जिससे मृदा दूषित न हो।
- खुरपी, फावडा, लकडी, या प्लास्टिक की खुरचनी
- ट्रे या प्लास्टिक की थैली।
- पेन, धागा, मृदा का नमूना, सूचना पत्रक

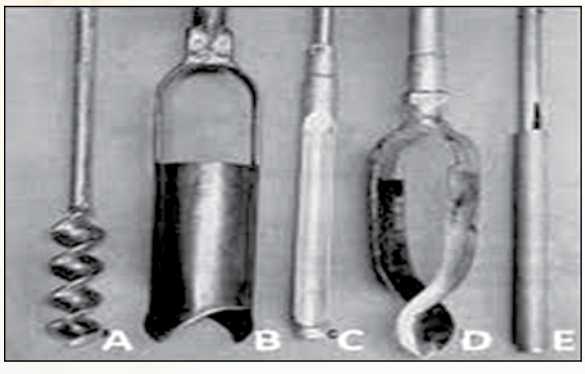

मृदा का नमूना लेने की विधि/मिट्टी जाँच के तरीके

1. मृदा के ऊपर, चुनी गई जगह की उपरी सतह पर यदि कूडा करकट या घास इत्यादी हो तो उसे हटा दें।
2. जिस जमीन का नमूना लेना हो उस क्षेत्र पर 10 जगहों पर निशान लगा लें।
3. भूमि की सतह से हलकी गहराई (0–15 सेंटीमीटर) तक मृदा परीक्षण टयूब या बर्मा द्वारा मृदा कोड़े। यदि आप को कुदाल या खुरपी का प्रयोग करना हो तो 'अ' के आकार का 15 से.मी. गहरा गड्ढा बनाए। अतः एक ओर से ऊपर से नीचे तक 2–3 सेंटी मीटर मोटाई की मिट्टी की एक समान टुकड़ा काटें।
4. एक खेत में 10–12 अलग–अलग स्थानों से मृदा की टुकड़ियों को लें और उन सबको एक भगोने या साफ कपड़े में इकट्ठा करें।
6. अब पूरी मृदा को अच्छी तरह हाथ से मिला लें तथा साफ कपडे या टब में डाल कर ढेर बना लें। अंगुली से इस ढेर को चार बराबर भागों में बांट दें।
7. आमने सामने के दो बराबर भागों को वापिस अच्छी तरह से मिला लें। यह प्रक्रिया तब तक दोहराएं जब तक लगभग आधा किलो मृदा न रह जाए।
8. इस प्रकार से एकत्र किया गया नमूना पूरे क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करेगा।
9. नमूने को साफ प्लास्टिक की थैली में डाल दें। अगर मृदा गीली हो तो इसे छाया में सूखा लें।
10. अगर खड़ी फसल से नमूना लेना हो, तो मृदा का नमूना पौधों की कतारों के बीच वाली खाली जगह हो तो मृदा का नमूना ले।

बाग व अन्य वृक्ष लगाने के लिए नमूनाः

- पेड़ों की जड़ें प्रायः भूमि में काफी गहरी जाती हैं। बागवानी के लिए मिट्टी के 2 मीटर तक गहराई की जांच करानी चाहिए।
- इस उद्देशय हेतु मिट्टी का लगभग 500 ग्राम नमूना 0–15, 15–30, 30–60, 60–90, 90–120, 120–150 और 150–200 से.मी. गहराई से लेना चाहिए।

सावधानियां

- मृदा का नमूना इस तरह से लेना चाहिए जिससे वह पूरे खेत की मृदा का प्रतिनिधित्व करें।
- जब एक ही खेत में फसल की बढ़वार में या जमीन के गठन में, रंग व ढलान में अंतर हो या फसल अलग–अलग बोयी जानी हो या प्रबंध में अंतर हो तो हर भाग से अलग नमूने लेने चाहिए। यदि उपरोक्त सभी स्थिति खेत में एक जैसी हो तब एक ही नमूना लिया जा सकता है।
- ध्यान रहे कि एक नमूना ज्यादा से ज्यादा दो हैक्टेयर से लिया जा सकता है।
- मृदा का नमूना खाद के ढेर, पेडों, मेडों, ढलानों व रास्तों के पास से तथा ऐसी जगहों से जो खेत का प्रतिनिधित्व नहीं करती है न लें।
- मृदा के नमूने को दूषित न हो ने दें।
- इसके लिए साफ औजारों से नमूना एकत्र करें तथा साफ थैली में डालें। ऐसी थैली काम में न लाएं जो खाद एवं अन्य रसायनों के लिए प्रयोग में लाई गई हो।
- मृदा का नमूना बुआई से लगभग एक माह पूर्व कृषि विकास प्रयोगशाला में भेज दें।
- जिससे समय पर मृदा की जांच रिर्पोट मिल जाएं एवं उसके अनुसार उर्वरक एवं सुधारकों का उपयोग किया जा सके।
- यदि खडी फसल में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई दें और मृदा का नमूना लेना हो तो फसल की कतारों के बीच से नमूना लेना चाहिए।
- जिस खेत मे कंपोस्ट, खाद, चूना, जिप्सम तथा अन्य कोई भूमि सुधारक तत्काल डाला गया हो तो उस खेत से नमूना न लें।
- मृदा के नमूने के साथ सूचना पत्र अवश्य डालें जिस पर साफ अक्षरों में नमूना संबधित सूचना एवं किसान का पूरा पता लिखा हो।
- सूक्ष्म तत्वों की जांच के लिए नमूना लेते समय अतिरिक्त सावधानियां रखे।
- धातु से बने औजारों या बर्तनों को काम में नहीं लाएं क्योंकि इनमें लौह, जस्ता व तांबा होता है।
- जहां तक संभव हो, प्लास्टिक या लकडी के औजार काम में लें।
- यदि मृदा खोदने के लिए फावड़ा या खुरपी ही काम में लेनी पड़े तो वे साफ होनी चाहिए। इसके लिए गडडा बना लें व एक तरफ की परत लकडी के

चौडे फट्टे या प्लास्टिक की फट्टी से खुरचकर मृदा बाहर निकाल दें। फिर इस प्लास्टिक या लकडी के फट्टे से 2–3 सेमी मोटी परत उपर से नीचे तक 15 सेमी और पूर्व बताई गई विधि के अनुसार 10–15 जगहों से मृदा एकत्र करके मृदा का नमूना तैयार कर सूचना पत्रक सहित कृषि विकास प्रयोगशाला में भेज दें।

सूचना पत्रकः (मृदा के नमूने के साथ पर्चे)

- खेत का नंबर अथवा नाम
- नमूना लेने की तिथि
- अपना पता
- नमूना का प्रयोग (बीज वाली फसल और किस्म)
- मृदा का स्थानीय नाम
- सिंचाई का साधन
- भूमि के नीचे पानी की गहराई
- फसलों की अदल–बदल
- खादों या रसायनों का ब्यौरा जो प्रयोग किया हो
- कोई औ समस्या जो भूमि से संबंधित हो।

मिटटी परीक्षण के लिए संपर्क करेः (मिटटी परीक्षण के लिए नमूना)

1. जिला कृषि पदाधिकारी कार्यालय .
2. कृषि विज्ञान केन्द्र
3. कृषि विश्वविद्यालय
4. इफको कम्पनी लि.

मृदा स्वास्थ्य कार्ड

यह मृदा से सम्बंधित एक बहुउपयोगी दस्तावेज है, जिसमे में खेत की मिटटी के विशलेषण परिणाम के आधार पर निम्नांकित बातो की जानकारी उपलब्ध होती है एवं परीक्षण के आधार पर उर्वरकों की संस्तुति की जाती है।

1. **मृदा पी. एच.** : यह मिटटी की अम्लीय/ क्षारीय स्तर का माप है।
2. **मृदा में विदुत चालकता** : इस परीक्षण से मिटटी के खारेपन की जानकारी होती है।
3. **मृदापोषक तत्वः** रासायनिक विधि से मृदा परीक्षण कर उसमे उपलब्ध जैविक कार्बन, नत्रजन, स्फुर, एवं पोटाश की उपलब्ध मात्रा ज्ञात की जाती है।
4. **मृदा में उपलब्ध सूक्ष्म पोषक तत्व की मात्रा ज्ञात करना।**

उपरोक्त पोषक तत्व के परीक्षण परिणाम के आधार पर फसल एवं फसल की लक्षित उपज के अनुसार रासायनिक एवं गैर रासायनिक उर्बरको की संस्तुति की जाती है।

मृदापरीक्षण परिणामो का वर्गीकरण (अखिल भारतीय स्तर पर)

क्र. सं.	पोषक तत्व तथा अन्य निर्धारित मन	वर्ग		
		अल्प	मध्यम	उच्च
1	मृदा पी. एच.	6 से कम, अम्लीय 6–8.5, सामान्य	8.6–9.0 अल्प क्षारीय	9 से अधिक क्षारीय
2	विधुत चालकता (250 सेन्टीग्रेड पर विधुत चालकता डेसी सैमिन्स / मिली मोह्स)	1 से कम सामान्य 1–2 बीजो के अंकुरण के लिए नाजुक	2–3 लवणता के सहन न कर सकने वाली फसलों की बृधि के लिए नाजुक	3 से अधिक अधिकांस फसलों के लिए नाजुक
3.	कार्बनिक कार्बन (जैव कार्बन)	0.5% से कम	0.5– 0.75%	0.75% से अधिक
4	प्राप्य नत्रजन (कि. ग्राम/ हेक्टेयर)	250 से कम	250–560	560 से अधिक
5	प्राप्य फोस्फोरस (कि. ग्राम/ हेक्टेयर)	10 से कम	10–25	25 से अधिक

क्र. सं.	पोषक तत्व तथा अन्य निर्धारित मन	वर्ग		
		अल्प	मध्यम	उच्च
6	प्राप्य पोटैसियम (कि. ग्राम/ हेक्टेयर)	120 से कम	120–280	280 से अधिक
7.	प्राप्य सल्फर (मिली ग्राम/ कि.ग्राम मिटटी)	10 से कम	10–15	15 से अधिक
8.	प्राप्य जिंक (मिली ग्राम/ कि.ग्राम मिटटी)	0.75 से कम	0.75–1.5	15 से अधिक
9.	प्राप्य ताँबा (मिली ग्राम/ कि.ग्राम मिटटी)	0.20 से कम	0.20–0.40	0.40 से अधिक
10	प्राप्य लोहा (मिली ग्राम/कि.ग्राम मिटटी)	4.50 से कम	4.50–7.50	7.50 से अधिक
11	प्राप्य मैगनीस (मिली ग्राम/ कि.ग्राम मिटटी)	2.0 से कम	2.0–4.0	4.0 से अधिक
12	प्राप्य बोरोन (मिली ग्राम/ कि.ग्राम मिटटी)	0.5 से कम	0.5–0.75	0.75 से कम
13	प्राप्य मोलिबैडीनम (मिली ग्राम/ कि.ग्राम मिटटी)	0.10 से कम	0.10–0.20	0.20 से कम

प्रायः मृदा स्वस्थ्य कार्ड पर उर्बरकों की संस्तुति अंकित होती है, यदि उर्बरकों का आंकलन करना है तो मिटटी परीक्षण के परिणाम को सरणी से मिलान कर फसल आधारित उर्वरक की सामान्य संस्तुति को मिटटी परीक्षण परिणाम कम है तो 25% पोषक तत्व की मात्रा को बढ़ाकर, यदि मिटटी परीक्षण के परिणाम को सरणी से मिलान कर फसल आधारित उर्वरक की सामान्य संस्तुति को मिटटी परीक्षण परिणाम के मध्यम है तब उर्वरक की सामान्य संस्तुति एवं यदि मिटटी परीक्षण के परिणाम को सरणी से मिलान कर फसल आधारित उर्वरक की सामान्य संस्तुति को मिटटी परीक्षण परिणाम से अधिक है, तब 25% पोषक तत्व कम प्रयोग करना है।

सूखा एवं बाढ़ की परिस्थितियों हेतु स्वर्ण समृद्धि धान

संतोष कुमार, ए. के. चौधरी, कुमारी शुभा एवं अभिषेक कुमार दुबे
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

धान एक प्रमुख खरीफ फसल होने के साथ–साथ, भारतीय अर्थव्यवस्था, पोषण सुरक्षा एवं किसानों की समृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान रखती है। धान की खेती अनुकूल सिंचित से लेकर असिंचित भूमि, गहरे पानी से लेकर विभिन्न भौगोलिक पारिस्थितिकी में भी की जाती हैं। भारत में इसकी खेती लगभग 44 मिलियन हेक्टेयर में की जाती है, जिसका उत्पादन और उत्पादकता क्रमशः 116.48 मिलियन टन एवं 2.64 टनप्रति हेक्टेयर है। पूर्वी भारत में किसानों की जटिल आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थिति, जलवायु समस्या तथा उन्नत प्रजातियों की कमी के कारण धान की उत्पादकता अन्य प्रमुख राज्यों की तुलना में में काफी कम है। बिहार राज्य में लगभग 3.31 मिलियन हेक्टेयर (फसली क्षेत्र के 60 प्रतिशत) क्षेत्रफल में धान की खेती की जाती है एवं प्रदेश में वार्षिक धान का उत्पादन 8.09 मिलियन टन तथा उत्पादकता 2.44 टन प्रति हेक्टेयर है। राज्य के अधिकतर आबादी का मुख्य खाद्य का स्रोत होने के बावजूद अन्य राज्यों की तुलना में इसकी उत्पादकता बहुत कम है। बिहार में धान के उत्पादकता में कमी की विभिन्न कारणों में से जलवायु परिवर्तन एक मुख्य कारण है। धान की खेती का मॉनसून पर अधिक आश्रित होने एवं दक्षिण पश्चिम मानसून की अनिश्चितता के कारण जलवायु परिवर्तन इसकी खेती को अधिक प्रभावित करती है। बिहार राज्य में लगभग 7.25 लाख हेक्टेयर क्षेत्र सूखे एवं 11.5 लाख हेक्टेयर क्षेत्र बाढ़ से अधिक प्रभावित रहता है। भविष्य में बदलती जलवायु परिस्थितियों के तहत सूखे एवं बाढ़ की आवृत्ति और तीव्रता बढ़ने से संभवतः धान के उत्पादन पर और ज्यादा नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। ऐसी बदलती जलवायु परिस्थितियों में निरंतर बढ़ती जनसंख्या की खाद्य आपूर्ति तथा किसानों की आय दोगुनी करने के लक्ष्य को सुनिश्चित करने हेतु उच्च उपज वाली बहु तनाव सहिष्णु धान की नई किस्मों को विकसित एवं प्रसारित करने की तत्काल आवश्यकता है।

बदलती जलवायु परिस्थितियों में अनियमित मानसून की समस्या से निपटने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना ने अंतरराष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, मनीला, फिलीपींस के सहयोग द्वारा उच्च उपज वाली बहु तनाव सहिष्णु धान की एक उन्नत प्रजाति ''स्वर्ण समृद्धि धान'' विकसित की है, जिसे भारत सरकार द्वारा बिहार राज्य के लिए अधिसूचित किया गया है। यह प्रजाति बिहार की सिंचित और असिंचित उथली तराई पारिस्थितिकी में, प्रतिरोपित स्थिति में खेती के लिए उपयुक्त है। स्वर्ण समृद्धि धान एक मध्यम अवधि वाली (135–140 दिन), अर्ध–बौनी, उच्च उपज (5.5–6.0 टन/हे.) एवं बहु तनाव सहिष्णु (सूखा, बाढ़, रोग और कीट) धान की प्रजाति है। इस प्रजाति के चावल में पसंदीदा गुणवत्ता जैसे की लंबे पतले दाने के साथ उच्च साबुत चावल मात्रा (55.6%), तथा एमिलोजकी मात्रा (24.33%) है। यह एक अर्ध–बौनी (105–110 सेंटीमीटर) धान की किस्म है जो लगभग 100–105 दिनों में फूलती है और 135–140 दिनों में परिपक्व हो जाती है। यह प्रजाति फसल के गिरने और दाने के बिखरने के लिए प्रतिरोधी एवं उर्वरक के प्रति अनुक्रियाशील है। स्वर्ण समृद्धि धान फसल के प्रमुख रोगों जैसे पर्णच्छद अंगमारी, आभासी कंड, झोंका, जीवाणु पर्ण झुलसा, टुंगरू रोग, भूरी चित्ती एवं पर्ण गलन के साथ– साथ प्रमुख कीटों जैसे तना छेदक, माहू

और पत्ती लपेटक के लिए भी सहिष्णु है। धान की यह प्रजाति अनियमित वर्षा को झेलने में भी सक्षम है। सूखा सहिष्णु होने के साथ–साथ यह किस्म 10–12 दिनों तक बाढ़ जैसी स्थिति को भी सहन कर सकती है।

अनुशंसित क्षेत्र

स्वर्ण समृद्धि धान बिहार राज्य की सिंचित और वर्षा आधारित उथली तराई पारिस्थितिकी में प्रतिरोपित स्थिति के तहत खेती के लिए उपयुक्त है। इसकी खेती बिहार के सीमित पानी वाले सिंचित क्षेत्रों में भी की जा सकती है।

उत्पादन तकनीक

भूमि की तैयारी

गर्मी के मौसम में खेत की एक गहरी जुताई करने से खरपतवार, कीड़े और रोगों के प्रबंधन में मदद मिलती है। शुरुआती हल्की बारिश के बाद या पिछली फसल की कटाई के तुरंत बाद ट्रैक्टर से भूमि की सूखी स्थिति में अच्छे से जुताई करना चाहिए। गुणवत्ता व अधिक उत्पादन के लिए गोबर की सड़ी खाद (5 टन/हे.) या वर्मीकम्पोस्ट का उपयोग लाभदायक होता है। धान के पौधों की रोपाई से पहले पडलिंग की प्रक्रिया बेहद जरुरी होती है। यह एक तरह से खेत की गीली जुताई होती है। इसके लिए खेत की अंतिम जुताई के बाद खेत में पानी भरकर देशी हल, कल्टीवेटर की मदद से मिट्टी को अच्छी तरह जोता जाता है। इससे मिट्टी नरम हो जाती है तथा रोपाई में आसानी होती है। पडलिंग की प्रक्रिया से पौधों को आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता आसानी से हो जाती हैतथा खरपतवार के नियंत्रण मे मदद होती हैं। इससे मिट्टी की उर्वरक क्षमता में इजाफा होता है। पूरे खेत में एक समान जल स्तर बनाए रखने के लिए भूमि को समतल करना आवश्यक होता है ।

बीजों का चयन और उपचार

बीजों के एक समान और स्वस्थ अंकुरण के लिए आनुवांशिक रूप से शुद्ध और स्वस्थ बीजों का उपयोग करें। बीज जनित रोगों को नियंत्रित करने के लिए बुवाई से पहले बीजों का स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस से 10 ग्राम प्रति किलो बीज अथवा कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचार करना चाहिए ।

बुवाई का समय और विधि

स्वर्ण समृद्धि धान के बीज को नर्सरी में बोने का सही समय जून के दूसरे से तीसरे सप्ताह तक है, लेकिन इसे किसी स्थान विशेष के अनुसार समायोजित किया जा सकता है। स्वर्ण समृद्धि धान के लिए लगभग 25–30 किग्रा / हेक्टेयर की बीज की दर की आवश्यकता होती है। बुवाई के 25 से 30 दिन के बाद का पौध रोपण के लिए उपयुक्त होता है। रोपाई के लिए पंक्ति से पंक्ति 20 सेंटीमीटर और पौधे से पौधे 15 सेंटीमीटर की दूरी पर 1 से 2 पौध प्रति हिल लगाई जाती है।

पोषक तत्व प्रबंधन

पौधे की उचित वृद्धि के लिए, प्रति हेक्टेयर 120 किलोग्राम नत्रजन, 60 किलोग्राम फास्फोरस और 40 किलोग्राम पोटाश की जरुरत होती है। जिसमें से बुवाई हेतु भूमि की अंतिम तैयारी के समय फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी खुराक और नत्रजन उर्वरक की केवल एक तिहाई मात्रा का उपयोग बेसल के रूप में किया जाना चाहिए । शेष नत्रजन उर्वरक को दो बराबर भागों में बांटकर, एक भाग को कल्ले (टिलर) आने के समय (बुवाई के 40–45 दिन बाद) तथा दूसरे भाग को बाली आने के समय (बुवाई के 60–65 दिन बाद) देना चाहिए। जिंक की कमी वाली मिट्टी भूमि की अंतिम तैयारी के समय जिंक को 25 किग्रा/हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। नत्रजन उपयोग दक्षता को बढ़ाने के लिए लीफ कलर चार्ट (एलसीसी) का उपयोग करें। उर्वरकों

के प्रयोग के समय मिट्टी में पर्याप्त नमी सुनिश्चित की जानी चाहिए ताकि पौधों को पोषक तत्व ठीक से उपलब्ध हो सकें। कई बार बहुत लम्बे समय से एक ही खेत में लगातार धान की खेती करने पर कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्वों की कमी हो जाती है, ऐसे में हरी खादों जैसे सनहेम्प या ढैंचा अथवा अन्य दलहनी फसलों को फसल चक्र में शामिल करने से मृदा स्वास्थ्य में सुधार होता है और मिट्टी की उर्वरकता बढ़ती है।

जल प्रबंधन

स्वर्ण समृद्धि धान के लिए अन्य प्रतिरोपित धान की किस्मों की तरह सिंचाई की जाती है । हालांकि, सूखे की स्थिति में फसल को विकास की महत्वपूर्ण अवस्थाओं (बुवाई के बाद, कल्ला आते समय, गाभा फूटते समय, फूल लगते समय और दाना बनते समय) पर सिंचित किया जाना चाहिए ।

खरपतवार प्रबंधन

धान के खेती में विभिन्न प्रकार के खरपतवार उगते हैं तथा फसल के साथ प्रतिस्पर्धा कर उपज को कम करते हैं तथा कीट एवं बीमारियों के लिए भी आश्रय का कार्य करते हैं। खरपतवार केउचित नियंत्रण हेतु रोपाई के एक सप्ताह के अंदर बुटाक्लोर 1.5 लीटर/हेक्टेयर की दर से पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। यदि आवश्यक हो तो रोपाई के बाद 18–20 दिनों के बीच खरपतवारों की 3–4 पत्ती अवस्था में आने के बाद खरपतवार नाशी (बिस्पायरी बैक सोडियम 25 ग्राम सक्रिय तत्व/हेक्टेयर की दर) का छिड़काव करें। यदि आवश्यक हो तो बुवाई के 35 दिन बाद और 55 दिन बाद एक या दो बार हाथों से अथवा यंत्रों द्वारा निराई की जा सकती है।

रोग प्रबंधन

यद्यपि स्वर्ण समृद्धि धान बहुत से रोगों के प्रति सहिष्णु है परन्तु फिर भी कई अन्य छोटे–बड़े रोगों के प्रकोप को देखने और समझने के लिए नियमित रूप से फसल की निगरानी करना अनिवार्य है, ताकि आवश्यकतानुसार समय रहते रोगों का उचित प्रबंधन कर फसल उत्पादन में होने वाले नुकसान से बचा जा सके। फफूंद जनित रोगों से बचाव के लिए कार्बेन्डाजिम 50 डब्लूपी (2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर) या ट्राईसाइक्लाज़ोल 75 डब्लूपी (1.5 ग्राम प्रति किलो बीज की दर) जैसे कवकनाशी से बीज उपचार करें। समय–समय पर रोगों के प्रकार और उनकी गंभीरता के अनुसार रासायनिक कवकनाशी का सही मात्रा में छिड़काव करना चाहिए, जैसा कि नीचे दी गई तालिका में बताया गया है।

रोग	प्रबंधन
भूरीचित्ती	बुवाई से पहले 2 ग्राम प्रतिकिलो बीज की दर से कार्बेन्डाजिम के साथ बीज का उपचार करें। बाद में खड़ी फसल पर 2 मिलीलीटर/लीटर पानी की दर से प्रोपीकॉनाजोल का छिड़काव करें।
आभासी कंड	कॉपर ऑक्सी क्लोराइड का 3 ग्राम प्रतिलीटर अथवा प्रोपीकोनाजोल 25 ई सी का 2 मिलीलीटर/लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।
झोंका	कासुगामायसीन 3 एसएल का 1.5 मिलीलीटर प्रतिलीटर अथवा ट्राईसाइक्लाजोल 75 डब्लूपी का 0.6 ग्राम प्रति लीटर की दर से पानी का घोल बना कर फसल पर छिड़काव करें।
जीवाणु पर्ण झुलसा	स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट 90 प्रतिशत + टेट्रासाइक्लिन हाइड्रोकोलोराइड 10 प्रतिशत एस पी का 150 पीपीएम अथवा स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट का 150 पीपीएम और कॉपर ऑक्सी क्लोराइड का 2 ग्राम/लीटरपानी की दर से छिड़काव करें।
पर्णच्छद अंगमारी	वलिडामाइसीन 3 एल का 2 मिलीलीटर प्रतिलीटर अथवा प्रोपीकॉनाजोल 25 एससीका 2 मिलीलीटर/लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

कीट प्रबंधन

सामान्यतः प्राकृतिक परिस्थितियों में स्वर्ण समृद्धि धान तना छेदक, माहू और पत्ती लपेटक जैसे प्रमुख कीटों के लिए सहिष्णु पाई गई है, फिर भी अन्य सभी प्रकार के कीटों के उचित समय पर प्रबंधन हेतु कीटनाशकों का वैज्ञानिकों द्वारा सुझाई गयी मात्रा के अनुसार उपयोग करना चाहिए जैसा कि नीचे दी गई तालिका में बताया गया है।

कीट	प्रबंधन
गंधीबग	सुबह और शाम के समय कार्बारिल 50 डब्लूपी का 1500 ग्राम प्रतिहेक्टेयर की दर से भुरकाव करें अथवा मिथाइल पैराथियन 2 डी का 25 किलो प्रतिहेक्टेयर या मैलाथियान 1 ओडीपी का 30 किलो प्रतिहेक्टेयर की दर से भुरकाव करें।
तना छेदक	थिआक्लोप्रिड 21.7 एससी का 500 मिलीलीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव, कार्टाप 50 डब्लूपी का 1 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से भुरकाव अथवा क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसीका 1.2 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
भूरामाहू	क्लोरपाइरिफॉस 20 ई सी का 2.5 लीटर प्रति हेक्टेयर अथवा कुविनालफॉस 25 ई सी का 2 लीटर प्रति हेक्टेयर अथवा इमिडाक्लोप्रिड 200 एसएल का 0.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
पत्ती लपेटक	कुविनालफॉस 25 ईसी का 1.6 लीटर प्रति हेक्टेयर अथवा ट्राईएजोफॉस 40 ईसी का 0.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव अथवा कार्टाप 4 जी का 25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से भुरकाव करें।
दहिया	कार्बोफ्यूरॉन (3 ग्राम) का 25 किलो प्रति हेक्टेयर अथवा क्लोरपाइरिफॉस (10 ग्राम) या फोरेट (10 ग्राम) का 10 किलो प्रति हेक्टेयर अथवा बूप्रोफेज़िन 625 ग्राम सक्रीयतत्व प्रति हेक्टेयर की दर से केवल संक्रमित क्षेत्रों में ही प्रयोग करें।
दीमक	बीजों का क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसी के साथ 3.75 लीटरप्रति 100 किलो बीज की दर से उपचार करें । क्लोरपाइरिफॉस 20 ईसी का 2.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव भी कर सकते हैं। दीमक की टर्मिनटोरियम (मांद) कोक्लोरपाइरिफॉस का घोल डालकर नष्ट करें।

कटाई, पिटाई एवं बीज भंडारण

फसल को तभी काटें जब बालियों में लगभग 80–85 प्रतिशत तक दाने पक जाएं (फूल आने के 30–35 दिन बाद) और साथ ही कटाई के समय यह भी सुनिश्चित कर लें कि दानों में नमी की मात्रा केवल 20–24 प्रतिशत तक ही हो। फसल कटाई के तुरंत बाद पौंधों की पिटाई करके धान के दानों को बालियों से अलग कर लें। इसके उपरान्त दानों को बीज भंडारण के लिए 12 प्रतिशत तक नमी तथा कुटाई कर उपयोग के लिए 14 प्रतिशत तक नमी की मात्रा तक छाया में सुखाएं।

उपज क्षमता

स्वर्ण समृद्धि धान की उपज क्षमता 5.5 से 6.0 टन प्रति हेक्टेयर तक पाई गई है । यह प्रजाति रुक–रुककर पड़ने वाले सूखे को भी झेलने में सक्षम है। यह प्रजाति मध्यम सूखे की स्थिति में भी 3.0 से 3.5 टन प्रति हेक्टेयर तक का उत्पादन देता है। सूखा सहिष्णु होने के साथ–साथ यह किस्म 10–12 दिनों तक बाढ़ जैसी स्थिति को भी सहन कर सकती है।

काले गेहूं की खेती और उससे होने वाले लाभ

एम. एच. चावड़ा[1], वाई. बी. वाला[2], ओमप्रकाश मीणा[3] एवं वेद प्रकाश[4]

[1]सरदार कृषि नगर दांतीवाड़ा कृषि विश्वविद्यालय, सरदार कृषि नगर, गुजरात
[2]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, कृषि विज्ञान केंद्र, बनासकांठा–I, गुजरात
[3]भाकृअनुप–काजरी, जोधपुर, राजस्थान
[4]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

परिचय

गेहूं विश्व की प्रमुख फसलों में से एक है। ये घास (ग्रामिनी) परिवार के अनाज मे से हैं जो मानव आहार में एक प्रमुख भूमिका निभाते हैं, क्योंकि इन्हें मुख्य भोजन के रूप में लिया जाता है। FAO के अनुसार, 2019 में विश्व मे गेहूं का उत्पादन लगभग 765.7 मिलियन टन है। काला गेहूँ एक प्रकार का गेहूँ है जिसमें विभिन्न रंगद्रव्य होते हैं जो इसके बाहरी आवरण (पेरीकार्प) पर एक गहरा रंग दिखाते हैं। इस काले गेहूं के अलावा, लाल गेहूं, नीला गेहूं, बैंगनी गेहूं भी है। गेहूं का अलग रंग एंथोसायनिन की उपस्थिति के कारण होता है। यह माना जाता है कि काले गेहूं में सभी रंग रेखाओं में सबसे अधिक एंथोसायनिन वर्णक होता है, जिसमें लगभग 60% अधिक लोह तत्व होता है। एंथोसायनिन पानी में प्राकृतिक रूप से घुलनशील वर्णक होते हैं और एंथोसायनिन की विभिन्न सांद्रता के आधार पर अधिकांश फलों और सब्जियों को लाल, नारंगी, काला, नीला और बैंगनी रंग देते हैं। एंथोसायनिन एक एंटीऑक्सीडेंट है। काला गेहूं अब अपने पौष्टिक गुणों के कारण आकर्षण का केंद्र बनता जा रहा है। विभिन्न अध्ययनों से पता चला है कि काला गेहूं मे विटामिन के, प्रोटीन, आहार रेशा और अन्य पोषक तत्वों जैसे फास्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, मैंगनीज, सेलेनियम और तांबे से भरपूर होता है। काले गेहूं के बीजों में सामान्य गेहूं (पीले गेहूं) की तुलना में पॉलीसेकेराइड और प्रोटीन का स्तर अधिक होता है। ऐसा अनुमान है कि औसतन 100 ग्राम काले गेहूं में 71 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 13 ग्राम प्रोटीन, 10 ग्राम रेशा और 3.40 ग्राम वसा होती है।

काले गेहूं की खोज:

काले गेहूं को इंस्टीट्यूट ऑफ क्रॉप जेनेटिक्स, शांक्सी एकेडमी ऑफ एग्रीकल्चरल सायन्स ने उनके 20 साल के अथक प्रयासों के बाद विकसित किया है। काले अनाज वाले गेहूं की खोज नीले बैंगनी हेक्साप्लोइड गेहूं की किस्म (नीला बैंगनी 114) और बैंगनी हेक्साप्लोइड गेहूं किस्म (बैंगनी 12–1) के संकरण के बाद हुई थी। पहले निर्मित काले अनाज की किस्म को ब्लैक 76' नाम दिया गया है।

भारत में काले गेहूं की पहली किस्म राष्ट्रीय कृषि–खाद्य जैव प्रौद्योगिकी संस्थान (NABI), मोहाली में डॉ. मोनिका गर्ग के 7 साल लंबे काम और समर्पण

के बाद बनाया गया था। नई विकसित किस्म का नाम 'NABI MG' रखा गया था, क्योंकि इसे जापानी किस्म (EC866732) के साथ उच्च उपज देने वाली किस्म PBW621 के साथ संकरित किया गया था।

भारत में काले गेहूं की खेती

काले गेहूं की खेती की प्रणाली लगभग सामान्य गेहूं की तरह ही है। काला गेहूँ उगाने की प्रारंभिक अवस्था में यह हरे डंडी और दानों के साथ भी दिखाई देता है लेकिन दाने के परिपक्व होने की अवस्था में यह काले रंग के दिखाई देते है। भारतीय जलवायु परिस्थितियों में गेहूं को 130–135 दिनों में पूरी तरह से पकने पर कटाई की आवश्यकता होती है। सामान्य गेहूं की तुलना में काले गेहूं की पैदावार कम होती है और दाने का आकार छोटा होता है। हालांकि पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, बिहार, गुजरात और छत्तीसगढ़ सहित भारत के कुछ राज्यों के किसानों ने काले गेहूं की खेती शुरू कर दी है। वर्ष 2018–19 में काले गेहूं की खेती का कुल क्षेत्रफल लगभग 700 एकड़ था। वर्तमान में, मध्य प्रदेश 300 एकड़ से अधिक भूमि में काले गेहूं की खेती करके काले गेहूं के उत्पादन में अग्रणी है। काले गेहूं के बीज वर्तमान स्थिति में बाजार में उपलब्ध नहीं हैं, लेकिन NABI या उन किसानों से प्राप्त किए जा सकते हैं जिन्होंने पहले इसकी खेती की है। लेकिन सामान्य गेहूं (लगभग 2400 किलो/एकड़) की तुलना में इसकी कम उपलब्धता और उत्पादकता (2000 किलो/एकड़) के बावजूद, यह अपने विभिन्न अच्छे गुणों के कारण बाजार में अधिक कीमत (100–120 रुपये/किलो) प्राप्त कर सकता है।

काले गेहूं से होने वाले लाभ

- ✓ कुल कार्बोहाइड्रेट सामग्री का केवल 75% काले गेहूं के भ्रूणपोष में होता है और काले अनाज वाले गेहूं मे प्रोटीन सामान्य गेहूं की तुलना में 10–15% अधिक होता है।
- ✓ इसमें 62.10% कार्बोहाइड्रेट, 20.50% खाद्य प्रोटीन, 2.40% खाद्य रेशा, 1.60% वसा और 1.90% राख होता है।
- ✓ इसमें अरेबिनोक्सिलन भी होता है जो एक संरचनात्मक बहुलक है जैसे नोन स्टार्च पॉलीसेकेराइड, आहार रेशा, चीनी, लिग्नन, सेल्युलोज।

- ✓ कुछ आवश्यक अमीनो एसिड, विटामिन (विटामिन E, विटामिन B3 और B5, विटामिन K) और खनिज जैसे जिंक, तांबा, कैल्शियम और फास्फोरस और लोह मौजूद हैं।
- ✓ काले गेहूं के दाने शरीर निर्माण और शरीर में पानी के संतुलन को बनाए रखने में मदद करते हैं।
- ✓ असंतृप्त फैटी एसिड की उपस्थिति हृदय के स्वास्थ्य में सुधार करके संवहनी समस्याओं से छुटकारा पाने में मदद करती है।
- ✓ कब्ज और बड़ी आंत की समस्या में राहत होती है।
- ✓ तनाव से पीड़ित लोगों के लिए काला गेहूं वरदान है। ऐसा इसलिए है क्योंकि विभिन्न शोधों से पता चला है कि काला गेहूं अगर हमारे दैनिक आहार में इस्तेमाल किया जाए तो यह तनाव से निपटने में मददगार होता है।
- ✓ यह एक बेहतर आहार पूरक के रूप में उभरा है क्योंकि शोधकर्ताओं ने पाया है कि काले गेहूं की खपत प्रभावित कैंसर कोशिकाओं को पुनः उत्पन्न करने में मदद करती है। कैंसर के विकास को कम करता है और ट्यूमर के गठन को रोकता है।

- ✓ काला गेहूं एक बेहतर आहार पूरक है जो उम्र बढ़ने में देरी करता है, अत्यधिक रक्तचाप को नियंत्रित कर सकता है और शरीर में वसा के स्तर को नियंत्रित कर सकता है।
- ✓ काले गेहूं के आटे का इस्तेमाल बिस्कुट और ब्रेड बनाने के लिए किया जा सकता है।

नुकसान और भविष्य की जरूरतें

- ✓ काले गेहूं के उत्पादन की मुख्य बाधा पारंपरिक गेहूं की किस्मों की तुलना में इसकी कम उत्पादकता है जो प्रति हेक्टेयर 1000 किलोग्राम से कम उपज देती है। इसके बेहतर उत्पादन के लिए अच्छी विशेषता वाली किस्मों के चयन की आवश्यकता है।
- ✓ भारत मे लोकप्रिय होने के लिए विभिन्न जलवायु क्षेत्रों में अनुकूलन क्षमता भी एक बहुत महत्वपूर्ण कारक है क्योंकि भारत में विभिन्न जलवायु क्षेत्र हैं।
- ✓ रोग और कीट प्रतिरोध के मामले में, काले गेहूं को उपज के मामले में अच्छे प्रदर्शन के लिए कुछ अच्छे शोध समर्थन की भी आवश्यकता है।
- ✓ काले गेहूं को महत्व देने और किसानों के बीच इसे लोकप्रिय बनाने के लिए सरकार से अच्छे विस्तार कार्य और पहल की आवश्यकता है।
- ✓ बाजार में इसकी उपलब्धता बढ़ाकर और आम जनता को इसकी उपयोगिता समझाकर इसके उत्पाद को लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता है।

कोविड महामारी के दौरान कैसे मददगार होगा काला गेहूं?

आपका संपूर्ण स्वास्थ्य और प्रतिरक्षा आपके द्वारा खाए जाने वाले भोजन से निर्धारित होता है। इस समय मे, समृद्ध और पौष्टिक आहार खाने से प्रतिरक्षा शक्ति को बढ़ावा देना महत्वपूर्ण है। काले गेहूं के इस्तेमाल से शरीर की स्थितिस्थापकता और संक्रमण के खिलाफ प्रतिरक्षा को बढ़ावा देने में मदद कर सकता हैं। यह उच्च मधुमेह और अत्यधिक तनाव जैसे प्रमुख बीमारियों को कम करने में मदद करता है, और बुजुर्गों या बीमारी वाले लोगों में स्थितिस्थापकता को मजबूत करने में मदद करता है।

निष्कर्ष

काला गेहूं बायोफोर्टिफिकेशन का परिणाम है, इसके पोषक तत्वों की उपलब्धता वास्तव में प्रभावशाली है। लेकिन भविष्य की खाद्य जरूरतों को पूरा करने के लिए इसकी उत्पादकता को बढ़ाने के लिए अभी भी कुछ प्रयासों की आवश्यकता है क्योंकि गेहूं मुख्य फसल है। आज तक, काले गेहूं की कुछ ही किस्में विकसित की गई हैं। रोग और कीट प्रतिरोधी किस्मों में विकास के लिए आनुवंशिक इंजीनियरिंग और नई प्रजनन तकनीकों जैसे आधुनिक आनुवंशिक दृष्टिकोणों का उपयोग करने की आवश्यकता है।

बारानी क्षेत्रों के लिए मडुआ की वैज्ञानिक खेती

[1]सन्नी कुमार, [1]दुष्यंत कुमार राघव, [1]इन्द्रजीत, [1]धर्मजीत खेरवार,
[1]शशिकांत चौबे एवं [2]अरूण कुमार सिंह'

[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर – कृषि विज्ञान केंद्र, रामगढ़ (झारखंड)
[2]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर – कृषि प्रणाली का पहाड़ी एवं पठारी अनुसंधान केंद्र, राँची (झारखंड)

पठारी क्षेत्र में मडुआ फसल की खेती धान के विकल्प के रूप में की जा सकती है क्योंकि इसमें सूखे एवं खर–पतवार के प्रति काफी सहनशीलता होती है। मडुआ को ऊपरी भूमि में धान के साथ अन्तः फसल के रूप में लगाया जा सकता है। झारखण्ड में इसे मंडिया, रागी आदि नामों से भी जाना जाता है। और अंग्रेजी में इसे फिंगर मिलेट कहते हैं। इसका वानस्पतिक नाम एलुसिन कोराकाना है। यहाँ के अधिकतर किसान इस फसल की अच्छी पैदावार नहीं ले पाते हैं, क्योंकि वे इसकी खेती पुराने ढंग से करते हैं। पुराने ढंग से खेती करने पर मडुआ की उपज 4–7 क्विटंल प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है। परन्तु वैज्ञानिक ढंग से करने पर औसतन उपज 16–18 क्विंटल और अच्छी उपज 23 क्विंटल प्रति हेक्टेयर कम खर्च में आसानी से प्राप्त की जा सकती है। अनुसंधानों के दौरान मडुआ की अधिकतम उपज 40 क्विटंल प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त हुई है।

झारखण्ड में मडुआ की उपज कम होने के निम्नलिखित मुख्य कारण है।

पौधों की संख्या में कमी होना

साधारणतः किसान मडुआ की बुआई छींटकर करते हैं। मडुआ के बीज बहुत छोटे और महीन होते हैं बोने के समय किसान बीज को छींट कर जुताई कर देते हैं, और ऐसा करने से कुछ बीज अधिक गहराई में चले जाते हैं और उग नहीं पाते। कुछ बीज जमीन की सतह पर ही रह जाते हैं जिन्हें चीटियाँ तथा पंछी चुग जाते हैं और कुछ बीज जो उचित गहराई में गिरते हैं वे ही अंकुरित हो पाते हैं। मडुआ के वे बीज जो ज्यादा गहराई में चले जाते हैं, वर्षा होने पर मिट्टी की ऊपरी सतह पर पपड़ी बन जाने के कारण अंकुरित ही नहीं पाते हैं अतः पौधों की संख्या कम हो जाती है। पौधों की संख्या में कमी होने का एक दूसरा कारण यह है कि किसान छींटा विधि से बोई हुई फसल को बोने के 25–30 दिनों बाद बिचाई कर देते हैं। बिचाई करते समय कुछ पौधे मिट्टी में दब कर सड़ जाते हैं। अतः पौधों की संख्या कम हो जाती है।

उर्वरक और जैविक खादों का प्रयोग न करना

किसान, जैविक खाद जैसे गोबर या कम्पोस्ट का कहीं– कहीं पर प्रयोग करते हैं, लेकिन बहुत कम मात्रा में। इस फसल के लिए उर्वरकों का प्रयोग तो प्रायः करते ही नहीं हैं। उर्वरकों के आभाव में पौधों को उचित मात्रा में पोषक तत्व नहीं मिल पाते हैं जिससे पौधों का विकास ठीक ढंग से नहीं हो पाता और उपज में भारी कमी आ जाती है।

खरपतवार का समय पर नियंत्रण न करना

ऐसा देखा जाता है कि जिस समय धान की रोपनी का काम जारी रहता है उसी समय मडुआ की फसल में प्रथम निकौनी करने की जरुरत पड़ती है। किसान धान की रोपनी को प्राथमिकता देते हैं। धान की रोपनी समाप्त करके ही मडुआ में निकौनी का काम शुरू करते हैं। अतः प्रथम निकौनी करने में देर हो जाती है और खतपतवार के चलते मुख्य फसल के पौधों का विकास ठीक से नहीं हो पाता है तथा उपज में कमी आ जाती है।

पौध संरक्षण के उपाय नहीं अपनाना

इस क्षेत्र की टांड जमीन में दीमक का प्रकोप फसलों पर अधिक होता है। प्रायः किसान इसकी रोक. थाम के उपाय नहीं करते हैं । दीमक से पौधों का काफी नुकसान पहुंचता है और पौधों की संख्या में कमी आ जाता है। झुलसा रोग के प्रकोप से भी उपज में भारी कमी आ जाती है, क्योंकि किसान प्रायः इसकी रोकथाम पर ध्यान नहीं देते हैं।

उन्नत किस्मों की खेती न करना

स्थानीय किस्मों की अपेक्षा उन्नत किस्मों की उपज क्षमता अधिक होती है। किसान स्थानीय किस्मों को ही उगाते हैं और फलस्वरूप मडुआ की उपज कम हो जाती है।

मडुआ की अधिक उपज प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना जरुरी है।

जमीन का चुनाव और तैयारी

मडुआ की खेती के लिए टांड जमीन (टांड 2 या 3) उपयुक्त है। जिस खेत में पानी का जमाव होता है उस खेत में मडुआ नहीं लगाना चाहिए, क्योंकि मडुआ के पौधे पानी का जमाव सहन नहीं कर सकते हैं। मडुआ की फसल के साथ यह विशेषता है कि इसकी खेती कम उपजाऊ जमीन में भी हो सकती है। मडुआ की खेती के लिए साधारणतः तीन जुताई की जरूरत पड़ती है। खेत की पहली जुताई मोल्ड बोर्ड हल से एवं दूसरी तथा तीसरी जुताई देशी हल से करके मिट्टी को भुरभुरी कर लें। गोबर की सड़ी खाद या कम्पोस्ट (सम्भवतः बुआई के तीन–चार सप्ताह पहले) लगभग 10 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में बिखेर दें ताकि वर्षा के पानी का जमाव खेत में कहीं भी न हो पावे।

उन्नत किस्में

उन्नत प्रभेद	तैयार होने की अवधि (दिनों में)	औसत उपज (क्विंटल/हेक्टेयर)
दिव्या	85–90	17.0
चम्पावती	90–95	24.0
बी.एल. 149	95–100	22.0
शुभ्रा	100–105	21.5
भैरवी	105–106	27.0
बी.आर. 2	105–110	25.0
बी.आर. 3	110–115	28.0
जी.पी.यू. 28	115–120	22.0
जी.पी.यू. 67	115–120	23.0
गोदावरी	115–120	28.0
चिलिका	110–115	26.0
ए. 404	115–120	28.0
आर.ए.यू. 3	95–100	20.0
आर.ए.यू. 8	115–120	26.0

ए. 404, जे.पी.यू. 28 एवं जे.पी.यू. 48 किस्में झुलसा रोग के प्रतिरोधी हैं।

बीज बोने का समय

इस क्षेत्र में साधारणतः मानसून की वर्षा 15 जून के बाद शुरू होती है। बुआई का काम वर्षा शुरू होते ही प्रारंभ करें और 30 जून तक पूरा कर लें। अगर रोपा द्वारा खेती करनी हो तो इसके लिए भी पौधशाला (नर्सरी) में बुआई का काम उचित समय पर (15 से 30 जून के अदंर) करना जरुरी है। रोपनी के लिए 21 से 25 दिनों के बिचड़े का प्रयोग करें इससे 10–20 दिन और अधिक उम्र वाले बिचड़ों को भो रोपने पर उपज में कोई खास अंतर नहीं होता है। रोपनी का काम जुलाई माह के तीसरे सप्ताह तक पूरा कर लें।

बीज दर एवं बीज उपचार

क. सीधी बुआई के लिए 8–10 किलो बीज प्रति हेक्टेयर व्यवहार करें।

ख. बीज बोने के पहले बीज को बैविस्टीन नामक दवा से 2 ग्राम प्रति किलो की दर से उपचारित करना सुनिश्चित करें।

सीधी बुआई के लिए

क. सीधी बुआई (हल के पीछे) के समय प्रति हेक्टेयर 45 किलो यूरिया, 187 किलो सिंगल सुपर

फास्फेट और 33 किलो म्यूरेट ऑफ़ पोटाश का व्यवहार करें। हल के पीछे सीधी बुआई करते समय रासायनिक खाद को मिट्टी में मिलाकर डालना अच्छा होता है। जिससे कि रासायनिक खाद और बीजों के बीच सीधा सम्पर्क न हो सके। नालियों में पहले रासायनिक खादों को डालें और बाद में बीज बोयें।

ख. बुआई के करीब एक महीना बाद 45 किलो यूरिया का प्रति हेक्टेयर की दर से खड़ी फसल में भुरकाव करें।

रोपा द्वारा खेती के लिए

क. रोपनी के समय खेत में 45 किलो यूरिया, 187 किलो सिंगल सुपर फास्फेट और 33 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से दें।

ख. रोपनी के 20–25 दिन बाद पुनः 45 किलो यूरिया का प्रति हेक्टेयर की दर से खड़ी फसल में भुरकाव करें। ऐसा करने से पौधों का विकास तीव्र गति से होता है और उपज पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

सीधी बुआई विधि

सीधी बुआई करने के लिए 20–25 सेंटीमीटर की दूरी पर छिछली नालियाँ (2–3 सेंटीमीटर गहरी) घिसे हुए देशी हल से खोलें। इन नालियों में पहले रासायनिक खादों को बराबर मात्रा में मिट्टी मिलाकर डालें। उसके बाद बीज और सुखी मिट्टी या बालू 1:1 के अनुपात में मिलाकर इस प्रकार नालियों में बोवें कि बीज ठीक–ठीक पुरे खेत में बोने के लिए पर्याप्त हो जाए। बुआई करते समय इस बात का ध्यान रखें कि बीज न अधिक घना गिरा और न अधिक पतला। बुआई समाप्त करने के बाद हल्का पाटा चला दें।

नर्सरी रोपने की विधि

रोपने के लिए पौधशाला (नर्सरी) में लगाये गए तीन–चार सप्ताह के उम्र वाले बिचड़ों को उखाड़कर तैयार किए गए खेत में लावें। रोपनी के लिए कतारों के बीच की दूरी सीधी बुआई के समान ही 20–25 सेंटीमीटर रखी जाती है तथा रोपनी करते समय एक पौधे से दूसरे पौधे की दूरी 15 सेंटीमीटर रखें। एक जगह पर केवल एक ही बिचड़ा रोपें।

निकाई–गुड़ाई

सीधी बुआई वाली फसल में बोने के 15–20 दिनों बाद पहली निकाई–गुड़ाई कतारों के बीच में डच हो चलाकर करें। पहली निकाई–गुड़ाई उचित समय पर करना नितांत आवश्यक है, क्योंकि इस समय तक घास–पात बहुत ही छोटे–छोटे रहते हैं, इसलिए उनका नियंत्रण आसानी से हो जाता है। दूसरी निकौनी आवश्यकतानुसार करें।

रोपी गई फसल में भी रोपनी के 15–20 दिनों बाद पहली निकाई–गुड़ाई कतारों के बीच डच हो चला. कर करें। दोनों ही हालातों (सीधी बुआई और रोपा) में नेत्रजन का भुरकाव करने के पहले प्रथम निकाई–गुड़ाई का काम पूरा कर लें।

पौधा संरक्षण

मडुआ की फसल में कीड़े और रोग कम लगते हैं। बालियाँ में दाना भरते समय गंधी कीड़े का आक्रमण फसल पर हो सकता है। गोड़ा धान और मडुआ दोनों फसलों की खेती इस क्षेत्र में खरीफ मौसम में की जाती है। तथा दोनों ही फसलों पर इस कीड़े का आक्रमण होने पर इसकी रोकथाम के लिए 1.5% इकालक्स या लिडेन धुल का 20–25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से खड़ी फसल पर भुरकाव करें। इस क्षेत्र में मडुआ की फसल में प्रायः झुलसा रोग लगता हैं। इसकी रोकथाम के लिए 1 लीटर हिनोसन नामक दवा को 100 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से रोग लगते ही फसल पर छिड़काव करें।

कटनी तथा दौनी

बाल पक जाने पर फसल काट लें। बालियों को 2–3 दिनों तक धूप में सुखाने के बाद बैलों से दौनी कर लें। अनाज को अच्छी तरह सुखाने के बाद गोदाम या भंडार में रखें।

मडुआ के मूल्यवर्धक पौष्टिक उत्पाद

- मडुआ लड्डू,
- मडुआ का हलुआ,
- मडुआ केक,
- मडुआ इडली,
- मडुआ चिल्ला,
- पौष्टिक रोटी,
- मडुआ बिस्कुट आदि पौष्टिक उत्पाद तैयार किए जाते हैं।

फैन–पैड हाइड्रोपोनिक्स मक्का–चारा खेतीः वैज्ञानिक तकनीकी

**संजय कुमार सिंह, गौरेन्द्र गुप्ता,
प्रभाकांत पाठक एवं अमित कुमार पाटील**

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झाँसी

दुनियाभर में शहरों का विस्तार तेज होने से अर्बन फार्मिंग का चलन बढ़ता जा रहा है। छतों पर पार्किंग में या फिर कहीं भी उपलब्ध सीमित जगह का इस्तेमाल अब सब्जियों की खेती में किया जा रहा है। भारत ने पिछले कुछ वर्षों में बागवानी क्षेत्र में काफी विकास–विस्तार किया है। अब वागवानी फसलों की खेती करने वाले किसान पुराने तरीकों के बजाय खेती के नये तरीके अपना रहे है। इन्हीं खास तरीकों में शामिल है बिना मिट्टी व केवल पानी से खेती यानी हाइड्रोपोनिक्स फार्मिंग (Hydroponics Farming), जो कम जमीन वाले किसानों, बिना उपजाऊ वाले क्षेत्रों या शहरी क्षेत्रों में खेती करने का सर्वोत्तम तरीका है। हाइड्रोपोनिक्स पर्यावरण के अनुकूल तो है ही, साथ इसमें कीडे, बीमारियाँ और खरपतवार जैसे जोखिमों की संभावना भी नही होती। पारम्परिक खेती के मुकाबले हाइड्रोपोनिक्स से पानी की लगभग 90% बचत होती है। इसके जरिये खेती करने पर पानी का खर्चा तो कम होता ही है, साथ ही पौधों को जरूरी पोषक तत्व सीधा पानी के जरिये पहुचाये जाते हैं, जिससे उर्वरकों की बर्बादी नहीं होती। अगर हाइड्रोपोनिक्स के साथ ग्रीनहाउस तकनीक का इस्तेमाल साथ में किया जाय, तो हाइड्रोपोनिक्स से और भी ज्यादा अच्छे नतीजे मिल सकते है। मौसम की मार से बचने के लिए नेट–शेड या पालीहाउस की जरूरत होगी। इस तकनीक के जरिए नियन्त्रित वातावरण में खेती होती है। इसलिए अक्सर किसान ऐसी सब्जियों का उत्पादन करते है। जिसकी मार्केट में कीमत ज्यादा होती है। परम्परागत खेती की तुलना में, इसमें कम जगह में काम हो जाता है एवं उत्पाद की गुणवत्ता भी अच्छी होती है। कई देशों में इस तकनीक के जरिये सिर्फ सब्जी ही नहीं बल्कि फल, धान और गेहूं की खेती भी की जा रही है। इसके अलावा अपने घर में धनिया, पुदीना, पिपरमिट, साग, पालक, फूलगोभी, ब्रोकली, पत्तागोभी, बैगन, टमाटर, खीरा इत्यादि उगा सकते है।

हाइड्रोपोनिक्स खेती कैसे करें?

सबसे पहले हाइड्रोपोनिक्स फार्म तैयार करें, तत्पश्चात पाइप फ्रेम का मल्टी–लेयर ढ़ाचा बनायें। पौधें एक मल्टी–लेयर फ्रेम के सहारे टीके पाइप या हाइड्रोपोनिक्स ट्रे में उगते है। और उनकी जडे पाइप के अन्दर पोषक तत्वों से भरे पानी में छोड़ दी जाती है। हाइड्रोपोनिक्स के अन्तर्गत सामान्य तौर पर पानी की पूर्ति, आक्सीजन की पूर्ति, पोषक तत्वों की पूर्ति, प्रकाश की पूर्ति, जलवायु का निर्माण, पौध का ध्यान एवं हाइड्रोपोनिक्स खेती व्यापार की योजना का ध्यान रखते है। हाइड्रोपोनिक्स तकनीक में आमतौर पर कोको पीट या लीका वाल्स का इस्तेमाल पौधों की जड़ों को सपोर्ट देने के लिए करते है।

पानी की पूर्तिः– इस तकनीक में फसल के लिए पानी का स्तर उतना ही रखा जाता है जितना फसल को जरूरी होता है। इसमें पानी की सही मात्रा,पी.एच.स्तर और सूरज की रोशनी से पौधे के पर्याप्त पोषक तत्व मिल जाते है। इसलिए पौधे का विकास तेजी से और संतुलित तरीके से होता है। हाइड्रोपेनिक्स खेती में मिट्टी की जगह पानी ले लेता है, लेकिन पानी ऐसा होना चाहिए जिसमें मिट्टी वाले पोषक तत्व हो एवं पानी खारा नहीं होना चाहिए।

पोषक तत्वों की पूर्तिः– परम्परागत तरीके से खेती करने पर जमीन में जैविक पदार्थ डालकर पोषक तत्व बढ़ाए जाते है, लेकिन हाइड्रोपोनिक्स के जरिए खेती करने के लिए पानी के अन्दर पोषक तत्वों को संतुलित मात्रा में मिलाया जाता है। पौधों की जड़ें उससे अपना न्यूट्रिशन लेती है। पोषक तत्वों को रखने के लिए एक पोषण टैंक एवं पोषक तत्वों को पौधों तक भेजने के

लिए एक पम्प चाहिए होता है। साथ ही साथ एक चैनल जिससे पोषक तत्वों को पौधे तक भेजा जा सके एवं बचे हुए पोषक तत्व दोबारा टैंक में वापस भेजे जा सकें, होना चाहिए।

आक्सीजन की पूर्ति:– मिट्टी में जब खेती की जाती है तब पौधे को ऑक्सीजन मिट्टी से ही मिलती है, लेकिन हाइड्रोपोनिक्स तकनीक में पानी से पौधे आक्सीजन ले कर बड़े होते है। ये ठीक उसी तरह से है जैसे घर में बनी मछलीघर में मछलियां, टैंक के अन्दर ही पानी से आक्सीजन लेती है।

हाइड्रोपोनिक्स चारा उत्पादन क्यों?

वैश्विक दृष्टिकोण से हमारे पशुओं की दूध और मांस की औसत उत्पादन क्षमता बहुत कम है इसके कई कारण है, जैसे– आहार (चारा व दाना), प्रजनन, स्वास्थ्य व प्रबन्धन इत्यादि सम्बन्धित विभिन्न कारक। इस उत्पादकता में कमी के आधे हिस्से के लिये चारा व दाना (50 प्रतिशत) की कमी एवं गुणवत्ता उत्तरदायी है। इसके बाद नस्ल व प्रजनन (21.1 प्रतिशत) से (17.9 प्रतिशत) तथा प्रबन्धन (10.5 प्रतिशत) सरीखे कारक इत्यादि भी जिम्मेदार है। पशुओं को मक्के का हाइड्रोपोनिक्स हरा चारा के रूप में खिलाकर ज्यादातर समस्याओं को कम किया जा सकता है। हाइड्रोपोनिक ढ़ाचे के अंदर आमतौर पर मक्का, ज्वार, जौ, बाजरा इत्यादि का सही उत्पादन तकनीकियों का उपयोग करके चारे का उत्पादन करते हैं। अपने देश में हाइड्रोपोनिक्स विधि द्वारा हारे चारे का उत्पादन निम्न कारणों से आवश्यक है:

1. किसानों के पास या तो कृषि योग्य भूमि कम है या हरे चारे के उत्पादन के लिए भूमि नहीं है।
2. वर्षा की अनियमितता या सिंचाई जल की उपलब्धता की कमी।
3. भारतीय कृषि क्षेत्र में श्रमिकों की कमी।
4. परंपरागत विधि में लागत अधिक लगती है क्योंकि कीट, रोग व खरपतवार नियत्रण, निराई–गुडाई पर होने वाले खर्च ज्यादा आते है।
5. समय पर गुणवत्ता बीज व जीव–नाशकों की उपलब्धता कम होना।
6. परंपरागत विधि में श्रम की अधिक जरूरत होती है।
7. पशुपालकों को वर्ष भर पौष्टिक चारा उपलब्ध नहीं होता, जिससे पशु के स्वास्थ्य तथा उत्पाद की गुणवत्ता में गिरावट होना लाज़मी है।

उपरोक्त आवश्यकता को देखते हुए, भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झाँसी वाष्पीकृत शीतल हाइड्रोपोनिक पद्धति द्वारा चारा उत्पादन हेतु एक संरचना का विकास किया गया है। यह संरचना वाष्पीकृत शीतलन पद्धति पर कार्य करता है। हाइड्रोपोनिक संरचना लोहे की पाइप फ्रेम से बना हुआ एवं प्लास्टिक/शेडनेट से ढ़का हुआ ऐसा ढ़ाचा होता है जिसके अंतर्गत वातावरण को नियंत्रित करके, बिना मिट्टी का उपयोग किये एवं कम पानी में उच्च गुणवत्तायुक्त चारे का उत्पादन करते हैं। आवश्यकतानुसार इसके अंदर तापमान, आपेक्षित आर्द्रता एवं प्रकाश के स्तर को नियंत्रित करते हैं। संरचना के अंदर आमतौर पर औसतन 22–25 डिग्री सेल्सियस तापमान, 50–70 प्रतिशत आपेक्षित आर्द्रता एवं 2000 लक्स प्रकाश स्तर की आवश्यकता होती है। वातावरण नियंत्रित होने की वजह से रोगमुक्त, अच्छी उत्पादकता के साथ, वर्ष भर चारे की फसलों को ले सकते हैं।

फैन–पैड हाइड्रोपोनिक मक्का चारा उत्पादन तकनीक

1. हाइड्रोपोनिक्स का निर्माण

- चारा उत्पादन के लिए एक **12**′ से **12**′ से **9**′ का ढ़ाचाँ वनाया गया। ढाँचे की कम्प्यूटर एडेड डीजाइन, तीन विमीय दृश्य तथा ढाँचे के अन्दर चारा उत्पादन का एक दृश्य चित्र **1** में दर्शाई गई है।
- हाइड्रोपोनिक ढाँचे के चारों तरफ **3** फीट ऊँची ईंट की दीवार बनाया, जिसके ऊपर **38** मिमी से **38** मिमी की **6** फीट ऊँची लोहे की फ्रेम बनायी गयी।
- फ्रेम को **200** माइक्रन की पराबैगनी किरणों से स्थिरीकृत प्लास्टिक सीट से ढका गया है और उसके ऊपर **70** प्रतिशत शेडनेट से ढ़क देते हैं। प्लास्टिक को एल्युमिनियम या लोहे की पत्ती से कस देते हैं।
- ढाँचे की पीछे वाली दीवार के ऊपर एक **9** फीट चौड़ी एवं **3** फीट ऊँची शीतलन पैड की व्यवस्था की गयी एवं सामने वाली दीवार में एक पंखा लगाया गया।

चित्र 1: फैन–पैन हाइड्रोपोनिक्स की कम्प्यूटर एडेड डिजाइन, प्रोटोटाईप की तीन विमीय दृश्य तथा ढ़ाचे के अन्दर चारे के उत्पादन का एक दृश्य

- फसलों में सिंचाई हेतु **450** लीटर पानी की टंकी, **1.0** एच.पी. पम्प, पानी हस्तानांतरण के लिए पी.वी.सी. पाइप तथा **300** मिली ली./मिनट वाली मिस्टिंग नोजल (फब्बारा पद्धति) लगाया गया।
- चारे के पौधों को उगाने के लिये बास की सहायता से **7** परतों वाली रैक का निर्माण किया गया।

2. हाइड्रोपोनिक्स के अन्दर मक्का चारा का उत्पादन

- मक्के के बीज को अच्छी तरह साफ–सुथरा करके 1.0 प्रतिशत सोडियम हाइपोक्लोराइड के घोल में आधे घण्टे के लिये भिगों कर उपचारित कर देते हैं। तत्पष्चात उपचारित बीज को 12–16 घण्टे के लिये पानी में भिगों (सोकिंग) देते हैं।
- भिगोने के पश्चात बीज को छान लेते हैं एवं उन्हें साफ जूट की बोरी में लपेटकर गठ्ठर बनाकर, 24 घण्टे के लिये छायेदार जगह में रख देते हैं जिससे की बीज अंकुरित हो जाये।
- अंकुरित बीज को 300–350 ग्राम प्रति वर्ग फीट की दर से हाइड्रोपोनिक ट्रे (2 फीट से 1.5 फीट से 3 इंच) में रखकर बॉस की बनी हुई हाइड्रोपोनिक रैक में रख देते हैं। याद रखे कि बीजों का अंकुरण होने के बाद ही ट्रे में रखें।
- सिंचाई के लिये, दिन में 4 बार चार–चार घण्टे के अंतराल में एक–एक मिनट के लिए फब्बारा पद्धति को चलाते रहते हैं।
- चार से दस दिन तक पौधों में वृद्धि होती रहती है।
- प्रारंभ में जमे हुए बीजों पर लगातार पानी का छिड़काव करें।
- लगातार इस प्रक्रिया के प्रयोग से 7 से 8 दिन के अंदर पशुओं को खिलाने योग्य हरा चारा बन जाएगा।

फैन– पैड हाइड्रोपोनिक ढ़ाचे अन्तर्गत मौसम, शीतलन दक्षता एवं पानी की खपत

ढ़ाचे के अन्दर गर्मी के मौसम (वर्ष 2021) में परीक्षण कर यह देखा गया कि ढ़ाचे के अन्दर प्रति दिन औसतन तापमाप 20.5 से 29.7 डिग्री सेल्सियस एवं आपेक्षित आद्रता 74–84 प्रतिशत आती है जो चारा उत्पादन के लिए अनुकूल वतावरण है। इसी तरह प्रति दिन औसतन न्यूतम–अधिकतम तापमाप 23.3 से 34.6 डिग्री सेल्सियस एवं आपेक्षित आद्रता 40–99 प्रतिशत एवं शीतलन पैड कि औसत दक्षता 78.3 प्रतिशत प्राप्त हुआ। ढ़ाचे के अन्दर फब्बारा पद्धति द्वारा सिंचाई पानी कि उपयोग दक्षता 0.81 लीटर प्रति किलो हरा चारा पाया गया। यह भी देखा गया कि एक किग्रा हरा मक्का चारा उत्पदान में 1.5 पानी की आवश्यकता पड़ी ऐसा इसलिए होता है क्योकि पानी की सप्लाई पुनः परिचालित पद्धति द्वारा की जाती है। जबकि खुले खेत में पानी की जरूरत प्रति किग्रा चारा उत्पादन हेतु 50–60 लीटर होता है।

पोषक गुण

निम्न तालिका 1 से ज्ञात होता है कि मक्का चारा प्रोटीन से समृद्ध है। इसके अलावा इसमें रेशा, शुष्क तत्व भी बहुतायत में पाया जाता है। प्राप्त चारा प्रोटीन–युक्त

एवं पाचक होने के कारण पशुओं की दूग्ध उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है।

तालिका 1: शुष्क भार के आधार पर मक्का चारा का रासायनिक संघटन

क्र.सं.	पोषक तत्व	मत्रा (प्रतिशत) में
1.	प्रोटीन	13.88
2.	रेशा	15.15
3.	शुष्क भार	13.62
4.	कार्बनिक पदार्थ	96.42
5.	वसा अमन (इथर इक्सट्रेक्ट)	3.17
6.	कुल राख	3.58
7.	अम्ल में अघुलनशील राखे	0.28

हाइड्रोपोनिक मक्का चारा उत्पादकता एवं आर्थिक विश्लेषण

फैन–पैन हाइड्रोपोनिक्स में बेहतर प्रबंधन होने के वजह से **7–8** दिन में गुणवत्ता वाली चारा फसलों का उत्पादन कई गुना बढ़ जाता है। परीक्षण उपरान्त अधिकतम उत्पादकता **5.5** किग्रा द्वारा चारा प्रति किग्रा बीज की दर से प्राप्त हुई बीज को **12** घण्टे भिगोया गया एवं हाइड्रोपोनिक ट्रे में **300** ग्राम बीज प्रति वर्ग फीट क्षेत्रफल में रखा गया । इस हरे चारे का महत्व इसलिए और बढ़ जाता है कि ये उत्पाद उस समय प्राप्त होते है, जबकि खुले खेत में इनका उत्पदन संभव नहीं होता। हाइड्रोपोनिक के निर्माण में जो लागत आती है, उसमें सरंचना की लागत आवरण को लागत, टूट–फूट मरम्मत व देखभाल आदि समिलित है। आर्थिक विश्लेषण के आधार पर यह पाया गया कि लागत पूर्ति का समय **3** वर्ष से कम है एवं चारा उत्पादन की इस पद्धति का आय व्यय अनुपात **1.32** है। इसके अलावा हाइड्रोपोनिक में प्रोट्रे में नर्सरी तैयार करके पौध को भी अच्छे मूल्यों पर बेचा जा सकता है।

फैन–पैड हाइड्रोपोनिक्स का रखरखाव एवं ध्यान देने योग्य बातें

1. हाइड्रोपोनिक्स ढ़ाचे को छायेदार स्थान या छप्पर की नीचे बनाना ज्यादा लाभदायक रहाता है क्योकि हाइड्रोपोनिक पौध अधिक ठण्ड या गर्मी सहन नहीं कर पाता।
2. समय–समय पर पानी के पी.एच. मान की जांच करते रहना चाहिए । फसल की अच्छी बढ़वार के लिए **6–7.5** पी.एच. मान उत्तम माना गया है ।
3. पानी की टंकी में एक–एक माह के अन्तराल पर पानी बदल देना चाहिए। टंकी से निकाली गई पानी को सब्जियों या फूलों मे देना लाभदायक रहता है क्योंकि इस पानी में पोषक तत्व होता है।
4. शीतलन पैड का इस्तेमाल गर्मियों (मार्च से लेकर जून/जुलाई) तक करना चाहिए जिसकी वजह से ढ़ाचे के अंदर की हवा का तापमान गिरने लगता है। परीक्षण उपरांत पाया गया कि शीतलन पैड की सहायता से तापमान को **10–12 °C** तक कम कर सकते हैं एवं पैड की शीतल दक्षता **78%** आती है। सर्दियों में शीतलन पैड एवं शेडनेट का इस्तेमाल नहीं करते हैं क्योंकि सर्दियों में ग्रीनहाउस प्रभाव की वजह से, ढ़ाचे के अंदर आवश्यक तापमान उत्पन्न हो जाता है।
5. बरसात के मौसम में या जब कभी भी आपेक्षित आर्द्रता का स्तर ज्यादा हो उसके लिये सामने वाली दीवार में इक्जास्ट पंखे का प्रयोग करते हैं।
6. कीटों की रोकथाम के लिए यह आवश्यक है कि हाइड्रोपोनिक्स का दरवाजा हमेशा बन्द रखा जाय व शीतलन (कूलिंग) पैड को प्लास्टिक की एक महीन जाली से ढ़क दिया जाये जिससे कीटों का प्रवेश संभव न हो सके।
7. समय–समय पर हाइड्रोपानिक रैक हाइड्रोपोनिक ट्रे एवं पानी की टंकी को सोडियम हाइपोक्लोराइड से शोधित करते रहना चाहिए।

निष्कर्ष

हमारे देश में पशुपालन व्यवसाय लघु एवं सीमान्त किसानों, ग्रामीण महिलाओं और भूमिहीन कृषि श्रमिकों को रोजगार के प्र्याप्त व सुनिश्चित अवसर प्रदान कर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को ठोस आधार प्रदान करता है। प्रायः यह देखने में आता है कि पशुपालकों को हरा चारा मानसून में तो मिल जाता है, मगर अन्य मौसम में पशुओं को केवल फसल अवशेषों एवं भूसे आदि पर पालना पड़ता है। इससे पशुओं की बढ़ोत्तरी, उत्पादन एवं प्रजनन क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। दिनों–दिन घटती खेती योग्य जमीन और मौसम की अनिश्चितताओं के कारण किसान भाई, पशुओं के लिए हरे चारे के संकट से जूझ रहे है। इस समस्या से उभरने के लिए हाइड्रोपोनिक्स मक्का चारा की खेती एक वरदान साबित हो सकती है।

फसल विविधीकरण : एक कदम विकास की ओर

**शिवानी, संजीव कुमार, कीर्ति सौरभ,
कुमारी शुभा एवं सोनका घोष**

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

वर्तमान दौर में जहां एक तरफ प्रति इकाई कृषि क्षेत्र से अधिक उत्पादन की आवश्यकता है वहीं जलवायु परिवर्तन और मृदा का गिरता स्वास्थ्य कृषि उत्पादकता में रूकावट पैदा कर रहे हैं। प्रति व्यक्ति कृषि योग्य क्षेत्रफल में लगातार कमी तथा वैश्विक प्रतिस्पर्धा के कारण आज हमारे सामने खाद्य सुरक्षा, खाद्य पोषण सुरक्षा, पर्यावरण संतुलन एवं रोजगार सृजन जैसे चुनौतीपूर्ण लक्ष्य हैं। फसल विविधीकरण जिसमें धान्य फसलों के साथ–साथ दलहनी, तिलहनी, चारे वाली फसलें, रेशेदार फसलें, मसाले वाली फसलें एवं अन्य मूल्यवान फसलें उगाई जाएं; एक उत्तम विकल्प हो सकता है। इस प्रकार फसल विविधीकरण सूखे या असमान वर्षा की प्रतिकूल जलवायु वाली परिस्थितियों में फसल की विफलता के जोखिम को कम करता है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसकी 70 प्रतिशत से अधिक आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है जो कृषि पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से निर्भर है। भारतीय कृषि में छोटे और सीमांत किसान जोत इसकी विशेषता है। आज हमारे देश के सकल कृषि क्षेत्रफल का लगभग 85 प्रतिशत खाद्यान्न आधारित फसल प्रणाली जैसे धान–गेहूं, धान– धान, बाजरा–गेहूं, ज्वार–गेहूं, और मक्का–गेहूं इत्यादि के अंतर्गत है। कृषि में हरित क्रांति के आने से खाद्यान्न फसलों के उत्पादन में कई गुना वृद्धि ने हमें कृषि उत्पादन में आत्मनिर्भर तो बनाया है पर साथ ही साथ एक ही फसल प्रणाली की पुनरावृति ने अनेक नई चुनौतियों जैसे उत्पादन क्षमता में गिरावट, जल एवं भूमि संसाधानों का ह्रास, खरपतवारों एवं रोग तथा कीटों का बढ़ता प्रकोप, मौसम परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभाव को भी आमंत्रित किया है। इसके अलावा बढ़ती हुई जनसंख्या और अधिकतम संख्या में पशुधन के कारण पोषण युक्त भोजन एवं प्रचुर मात्रा में चारा उत्पादन एक बड़ी चुनौती है। दूसरी ओर कृषि उत्पादन और उत्पादकता के वांछित लक्ष्य को प्राप्त करने में उपयोग की जाने वाली प्रौद्योगिकियॉ प्राकृतिक संसाधनों का बड़ी मात्रा में उपयोग करती हैं। संसाधनों का अंधाधुन्ध प्रयोग व दोषपूर्ण उत्पादन प्रथाओं के असंतुलित और गैर–विवेकपूर्ण उपयोग ने मिट्टी की उर्वरता, मिट्टी का क्षरण, विषाक्तता, जल संसाधनों में कमी, भूमिगत जल प्रदूषण, लवणता, खरपतवार प्रतिरोधकता, कीटों की रोकथाम, कम गुणवत्ता वाले उत्पादन और जलवायु परिवर्तन पर नकारात्मक प्रभाव डाला है। इन समस्याओं के कारण किसानों का ध्यान कृषि से हटने लगा है तथा वे अच्छे रोजगार और बेहतर जीविकोपार्जन के लिए शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं।

सिंधु–गंगा के उत्तर–पश्चिमी मैदानी इलाकों में धान–गेहूं फसल प्रणाली एक प्रमुख एवं परंपरागत फसल प्रणाली है। यह लगभग 10.3 मिलियन हेक्टेयर में फैली हुई है। भारत के कुल खाद्यान्न का लगभग 30 प्रतिशत अनाज इसी क्षेत्र की धान–गेहूं फसल प्रणाली से आता है लेकिन इन क्षेत्रों में संसाधनों की लगातार हो रही कमी के कारण धान का उत्पादन पहले की तुलना में कम लाभप्रद हो गया है। निरंतर घटते कृषि संसाधनों एवं जलवायु परिवर्तन की स्थिति में बढ़ती जनसंख्या के लिए खाद्य मांग के लक्ष्य को पूरा करना एक बड़ी चुनौती है। मौजूदा कृषि प्रणालियों में उभरती चुनौतियों एवं खाद्यान्नों की बढ़ती मांग के मद्देनजर कृषि प्रणालियों में विविधीकरण को अहम् भूमिका अदा करनी होगी।

परंपरागत फसल प्रणाली से नुकसान

मृदा स्वास्थ्य में लगातार गिरावट

धान व गेहूं दोनों ही अदलहनी फसलें है। इन दोनों फसलों की पोषक तत्व मांग भी अधिक है। इस पद्धति के लगातार अपनाने से बहुत सारे प्रमुख एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी मृदा में होती जा रही है। इसके साथ ही कार्बनिक पदार्थ की कमी व मृदा से पोषक तत्वों का निक्षालन होने से मृदा उर्वरता में भी कमी आ रही है।

भूमिगत जलस्तर का लगातार गिरना

पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश में धान के बाद लगभग 95 प्रतिशत क्षेत्रफल में गेहूं की खेती की जाती है। धान और गेहूं की लगातार खेती से बहुत सी समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। मृदा स्वास्थ्य के साथ–साथ भूमिगत जल पर भी संकट के बादल मंडराने लगे हैं। लगातार धान–गेहूं की खेती करने के कारण भूमिगत जल प्रतिवर्ष 0.1 से 1 मीटर तक नीचे जा रहा है, जो कि आने वाले समय में एक बड़ा संकट है।

फसल उत्पादन लागत में वृद्धि

पारंपरिक धान की खेती में ज्यादा संसाधनों (पानी, श्रम तथा ऊर्जा) की आवश्यकता होती है। लगातार एक ही प्रकार की फसल उगाने से विभिन्न आदानों/संसाधनों जैसे–उर्वरक, पीड़कनाशी आदि की दक्षता में कमी आ रही है, जिसके कारण प्रति इकाई उत्पादन लागत में वृद्धि हो रही है।

पर्यावरण प्रदूषण

गेहूं की बुआई के समय पर पंजाब, हरियाणा एवं उत्तर प्रदेश में धान की कटाई के बाद फसल अवशेषों को खेतों में जला दिया जाता है। इससे काफी मात्रा में वायु प्रदूषण के साथ–साथ मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों की हानि होती है एवं बहुत सारे लाभकारी सूक्ष्मजीवों को भी नुकसान होता है। अनुसंधानों में यह पाया गया है कि धान के खेत से जलमग्न दशा में मीथेन गैस निकलती है, जिसका वैश्विक तापमान बढ़ाने में प्रमुख योगदान है।

फसल विविधीकरण क्यों आवश्यक?

वर्तमान दौर में जहां एक तरफ प्रति इकाई कृषि क्षेत्र से अधिक उत्पादन की आवश्यकता है वहीं जलवायु परिवर्तन और मृदा का गिरता स्वास्थ्य कृषि उत्पादकता में रूकावट पैदा कर रहे हैं। प्रति व्यक्ति कृषि योग्य क्षेत्रफल में लगातार कमी तथा वैश्विक प्रतिस्पर्धा के कारण आज हमारे सामने खाद्य सुरक्षा, खाद्य पोषण सुरक्षा, पर्यावरण संतुलन एवं रोजगार सृजन जैसे चुनौतीपूर्ण लक्ष्य हैं। देश में बढ़ती कृषि लागत, श्रम, ऊर्जा और जल की कमी के साथ ही साथ खाद्य उत्पादों के मूल्यों में अत्यधिक उतार– चढ़ाव, मौसमी और कम समय के लिए मूल्य वृद्धि और अनियमित मानसून को देखते हुए कृषि क्षेत्र में शामिल सभी हितधारकों के लिए यह एक कठिन चुनौती है। बारम्बार परम्परागत फसल प्रणालियों को अपनाने से प्राकृतिक संसाधनों के ऊपर नकारात्मक प्रभाव तथा शुद्ध आय में कमी आ रही है जो यह सोचने को मजबूर करती है कि वर्तमान फसल प्रणाली में बदलाव लाना आवश्यक है। फसल विविधीकरण जिसमें धान्य फसलों के साथ–साथ दलहनी, तिलहनी, चारे वाली फसलें, रेशेदार फसलें, मसाले वाली फसलें एवं अन्य मूल्यवान फसलें उगाई जाएं; एक उत्तम विकल्प हो सकता है। विभिन्न जलवायु परिस्थितियों के अनुसार उपयोगी फसलों का चयन करके फसल विविधीकरण द्वारा न केवल खेती की बढ़ती समस्याओं से छुटकारा पाया जा सकता है बल्कि अधिक उत्पादकता के साथ–साथ गुणवत्तायुक्त खाद्यान्न एवं टिकाऊ खेती भी सुनिश्चित की जा सकती है। अत्याधुनिक कृषि उपकरणों एवं मशीनों का फसल विविधिकरण के साथ समावेश करके खेती को और भी लाभकारी बनाया जा सकता है।

फसल विविधीकरण के लाभ

- गुणवत्तायुक्त एवं संतुलित भोजन
- प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण
- सीमांत एवं छोटे किसानों की आय में वृद्धि
- खरपतवार, कीट एवं रोग में कमी
- पशुओं के लिए चारे की गुणवत्ता में सुधार एवं अधिक उत्पादन
- अनियमित मौसम के प्रभावों को कम करना
- पर्यावरण प्रदूषण में कमी
- प्रतिकूल परिस्थितियों में मूल्य के उतार– चढाव के जोखिम से बचाव।

गुणवत्तायुक्त एवं संतुलित भोजन

फसल विविधिकरण में फसलों के साथ–साथ दलहनी, तेलहनी, बागवानी तथा कृषि वानिकी को सम्मिलित करके न सिर्फ भोजन की मांग को सुनिश्चित किया जा सकता है बल्कि भोजन में स्वास्थ्य के लिए अनिवार्य पोषक तत्व जैसे प्रोटीन, विटामिन और अन्य खनिजों की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध कराता है। यदि धान्य फसलों के बीच में दलहनी फसलें उगाई जाएँ तो प्रोटीन युक्त भोजन की उपलब्धता बढ़ जायेगी। विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार भविष्य में जैसे–जैसे आय दर में वृद्धि होगी वैसे–वैसे जीवन स्तर में सुधार होगा , भोजन की मांग में अधिक विविधता होगी। परिणामस्वरूप भोजन में धान्य फसलों (अनाजों) की मात्रा कम तथा दालों, सब्जियों, फलों व् अन्य खाद्य पदार्थों की आवश्यकता बढेगी। इस प्रकार विविधीकरण द्वारा न केवल संतुलित एवं गुणवत्ता युक्त पोषण सुनिश्चित हो सकता है बल्कि विदेशों से किये जाने वाले कृषि उत्पादों के आयातों में भी कमी लायी जा सकती है।

प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण

फसल विविधीकरण को अपनाकर उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के अधिक दोहन को कम किया जा सकता है। प्राकृतिक संसाधन जैसे मिट्टी, पानी, वनस्पति और जलवायु का प्रयोग फसल विविधीकरण के माध्यम से इस तरह किया जा सकता है जिससे सम्पूर्ण विकास और पर्याप्त रोजगार के साथ–साथ पर्यावरण तंत्र भी सही रहे। फसल चक्र में दलहनी फसलों के समावेश से भूमि में नाइट्रोजन के स्थिरीकरण के कारण मृदा उर्वरता में वृद्धि के अलावा मिट्टी की संरचना और जल उपयोग क्षमता भी बढती है। धान– गेहूं फसल प्रणाली में धान के साथ अरहर लगाने पर काफी मात्रा में पानी की बचत तथा गेहूं की फसल में कम मात्रा में नाइट्रोजन की जरूरत पड़ती है।

सीमांत एवं छोटे किसानों की आय में बढोत्तरी

हमारे देश में लगभग 85 प्रतिशत किसान सीमांत एवं छोटे किसान की श्रेणी में आते हैं जिनके पास दो हेक्टेयर से कम भूमि है। फसल विविधीकरण के माध्यम से इनकी वर्तमान कृषि प्रणालियों के साथ अधिक मूल्य वाली फसलें, सब्जियां आदि उपजा कर प्रति इकाई उत्पादन एवं आय में बढोत्तरी लायी जा सकती है। सिंधु–गंगा के मैदानी इलाकों में संभावित विकल्प के रूप में मक्का–सरसों–मूंग एवं मक्का–गेहूं–मूंग फसल प्रणाली से उत्पादन की लागत में 15–25 प्रतिशत की कमी एवं 20–35 प्रतिशत कुल आय में बढ़ोतरी कर सकते हैं। इस प्रणाली से 65 से 70 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत भी कर सकते हैं।

खरपतवार, कीट एवं रोग में कमी

बरसीम, लोबिया, सरसों, गन्ना आदि फसलों को धान–गेहूं चक्र में समावेश करने पर गेहूं में होने वाले गेहूं के मामा अर्थात गुल्ली–डंडा नामक खरपतवार से काफी हद तक छुटकारा पाया जा सकता है। कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मोदीपुरम में किये गए शोध दर्शाते हैं कि तीन साल के अंतराल पर धान और गेहूं के स्थान पर लोबिया और बरसीम लगाने से 44–56% खरपतवारों में कमी पाई गयी। फसल विविधीकरण से कार्बन का संचय एवं मृदा की उर्वराशक्ति भी बनी रहती है। इससे फसल से संबंधित कीटों एवं रोगों के रोगजनक प्रभाव को भी कम किया जा सकता है।

पशुओं के लिए चारे की गुणवत्ता में सुधार एवं अधिक उत्पादन

फसल विविधीकरण के अंतर्गत चारा फसलें जैसे बरसीम, जई, मक्का, बोरो, एम पी चरी इत्यादि फसलों को भी खेतों में उगाया जाता है जिससे चारा का उत्पादन अधिक होता है एवं पशुओं को आसानी से चारा उपलब्ध हो जाता है। दलहनी चारा उगा कर पशुओं के लिए गुणवत्ता युक्त चारा उपलब्ध होने के साथ–साथ खेतों की मिटटी की उर्वरा क्षमता में भी सुधार लाया जा सकता है।

अनियमित मौसम के प्रभावों को कम करना

हमारे देश में अनियमित वर्षा के साथ–साथ कहीं बाढ़ तो कहीं सुखाड़ जैसी परिस्थितियाँ अक्सर बारिश के मौसम में देखने को मिलती हैं जिसका सीधा असर खेती पर पड़ता है। इन परिस्थितियों में एक या दो प्रमुख फसलों पर निर्भर रहना हमेशा जोखिम भरा

रहता है। बहुफसलीकरण या मिश्रित फसलों के माध्यम से फसल विविधीकरण करके इस समस्या को कम करके अनियमित मौसम के प्रभावों को कम किया जा सकता है।

पर्यावरण प्रदूषण में कमी

रासायनिक खादों के अंधाधुंध प्रयोग एवं प्रति वर्ष एक ही फसल प्रणाली (धान–गेहूं) लगाने के कारण बहुत सी पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। धान की खेती से मीथेन उत्सर्जन, अधिक नाइट्रोजनयुक्त खाद के प्रयोग से ग्रीन हाउस गैसों का बनना एवं नाइट्रेट–नाइट्रोजन के रिसाव से भूजल प्रदूषण जैसी कुछ मुख्य समस्याएं हैं। अतः फसल चक्र में दलहनी फसलों के समावेश से न सिर्फ उत्पादकता बढ़ती है बल्कि मृदा का स्वास्थ्य भी ठीक रहता है और नाइट्रेट– नाइट्रोजन के रिसाव को भी कम करने में मदद मिलती है।

प्रतिकूल परिस्थितियों में मूल्य के उतार–चढाव के जोखिम से बचाव

अक्सर प्रतिकूल परिस्थितियों में एक या दो फसलों पर निर्भरता के कारण किसानों को बहुत नुकसान हो जाता है। मांग आपूर्ति एवं आयत– निर्यात का समीकरण भी इससे बहुत प्रभावित होता है। अतः फसल विविधीकरण के द्वारा बेहतर कृषि उत्पादों के माध्यम से मूल्य के उतार– चढाव के जोखिम से बचा जा सकता है जिससे किसानों की आर्थिक स्थिति में भी सुधार हो सकता है।

निष्कर्ष

फसल विविधीकरण कृषि के लिए एक आवश्यक रणनीति बन सकती है, जो फसल की खराबी के जोखिम को कम कर कृषि में टिकाऊ उत्पादन, आय को बढ़ाने, विदेशी मुद्रा कमाने और जलवायु परिवर्तन पर रणनीति बनाने के लिए प्रमुख विकल्पों में से एक हो सकता है। कृषि विविधता किसानों को अवसर प्रदान करती है, जिसका सीधा असर पोषण, सामाजिक और आर्थिक विकास पर पड़ता है। यह कृषि उर्वरक, पानी व प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण और संरक्षित तरीके से उपयोग करते हुए पैदावार बढ़ाने का अवसर प्रदान करती है। फसल विविधीकरण निश्चित रूप से, देश को सामाजिक–आर्थिक उत्थान, रोजगार सृजन और पर्यावरण संरक्षण के अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद करेगी तथा भारतीय किसानों के लिए स्थायी आजीविका विकसित करने का अवसर प्रदान करेगी।

पुष्टाहार हेतु पोषण वाटिका

कुमारी शुभा, अनिर्बाण मुखर्जी, शिवानी, उज्ज्वल कुमार, संतोष कुमार, टी. के. कोले, अकरम अहमद एवं ए. के.चौधरी

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

हम अपने भोजन में कई तरह की सामग्रियों को शामिल करते हैं, जैसे सब्जी, फल, दूध, अनाज, मांस आदि। लेकिन सबसे ज्यादा उपयोग में ली जाने वाली चीज सब्जियां हैं। इसलिए हमारे जीवन में सब्जियों का महत्व सबसे ज्यादा है। सब्जियां ना सिर्फ हमारे स्वास्थ्य को बेहतर बनाती हैं। बल्कि रोगों से लड़ने की क्षमता भी प्रदान करते हैं। इसलिए सब्जियां हमारे स्वास्थ्य के लिए सबसे ज्यादा लाभदायक और कुछ सब्जियां तो ताकतवर होने के साथ–साथ कई तरह के रोगों को ठीक करने के गुण रखती हैं। सब्जियों में पर्याप्त मात्रा मे प्रोटीन, खनिज–लवण (लोहतत्व एवं ज़िंक) एवं विभिन्न प्रकार के विटामिन पायेजाते हैं,अतः इन पोषक तत्वों की कमियों को दूर करने के लिये प्रतिदिन अपने आहार मे सब्जियों को शामिल करना आवश्यक है (तालिका 1)। बिहार में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन लगभग 86 ग्राम सब्जी का सेवन करता है जो एफ0ए0ओ0 (FAO) द्वारा निर्धारित मात्रा अर्थात प्रति व्यक्ति प्रति दिन 200 ग्राम से काफी कम है। बिहार में बढ़ती कुपोषित जनसंख्या एवं कृषि पर कोविड 19 के दुष्प्रभाव से खाद्य कीमतों में वृद्धि के कारण स्थिति और भी दयनीय हो गई है। इन्हीं बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए पोषण वाटिका या न्यूट्री–गार्डन की संकल्पना की गयी है जो सब्जियों की खपत दर को सीमित करने वाले प्रमुख कारक जैसे बेमौसमी सब्जियों की अपर्याप्त आपूर्ति, उच्च बाजार मूल्य इत्यादि से राहत प्रदान कर सेहतमंद सब्जियों को प्राप्त करने का विकल्प है।

तालिका 1. विभिन्न सब्जियों मे पाये जाने वाले पोषकतत्व

पोषक तत्व	सब्जियों मे स्रोत
प्रोटीन	फ्रास बीन, मटर, बोरो एवं सेम
विटामिन ए	गाजर, पालक, धनिया पत्ता, मेथी, ब्रोक्कोलि एवं लाल साग
विटामिन सी	टमाटर, मिर्च, शिमला मिर्च, कलमी साग, फूल गोभी एवं पत्ता गोभी
विटामिन बी 1	मिर्च, मटर, पालक, भिंडी एवं पोई साग
विटामिन बी 2	मेथी, मटर, पालक, बैंगन एवं धनिया पत्ता
विटामिन बी 3	मटर, पालक, लौकी, बैंगन एवं बोरो
कैल्शियम	मिर्च, शिमला मिर्च, पालक, सेम, पोई साग
फासफोरस	मटर, सेम, लहसुन, लौकी, पोई साग
लोहतत्त्व	मटर, पालक, सेम, बोरो, कलमी साग एवं पोई साग
जिंक	सेम, मटर, बोरो, भिडी, धनिया पत्ता एवं पोई साग

सब्जी आधारित पोषण वाटिका ग्रामीण क्षेत्रों के लिएज्यादा महत्वपूर्ण है क्योंकि इन क्षेत्रों में लोगों के पास रोज़गार के सीमित अवसर हैं तथा बाजार तक पहुंच भी काफी कम होती है।

पोषण वाटिका (न्यूट्री–गार्डन) की स्थापना करते समय ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण बिंदुः

पोषण वाटिका का नक्शा और प्रत्येक मौसम के लिए उपयुक्त सब्जियों का चयन क्षेत्र में प्रचलित कृषि–जलवायु परिस्थितियों और परिवार के सदस्यों की पसंद और नापसंद पर निर्भर करता है। पोषण वा. टिका (न्यूट्री–गार्डन) का नक्शा तैयार करते समय निम्नलिखित बिंदुओं पर ध्यान देना चाहिए:

1. एक पोषण वाटिका में, उच्च उपज वाली सब्जियों

की बजाय लंबी अवधि और स्थिर उपज देने वाली किस्मों को वरीयता दी जानी चाहिए।

2. क्यारियों को भूमि स्तर से थोड़ा ऊपर उठाकर तैयार किया जाना चाहिए एवं इनकी चौड़ाई 3–4 फीट से अधिक नहीं होनी चाहिए ताकि आसानी से पौधे की देखभाल एवं निराई गुड़ाई हो सके।
3. खेत/रसोई के गीले कचरे को उपयोग करने के लिए पोषण वाटिका के एक कोने में एक या दो खाद के गडढ़े बनाये जाने चाहिए।
4. आसानी से निराई, गुड़ाई एवं तुड़ाई करने के लिए क्यारियों के बीच कम से कम 2 फीट दूरी रखना आवश्यक हैं।
5. सब्जियों को बीमारियों एवं कीटों से बचाने के लिए फसल चक्र अपनाना चाहिए जिसमें एक ही क्यारी में तीन विभिन्न सब्जियाँ प्रतिवर्ष लगाई जा सके।
6. प्रत्येक क्यारी में सब्जी लगाने से पहले रोपण का सही समय एवं सब्जी की उन्नत किस्मों की जानकारी होनी चाहिए।

स्थान चयन और आकार

भूमि की कमी होने के कारण पोषण वाटिका (न्यूट्री गार्डन) के लिए उचित स्थान का चयन करना काफी मुश्किल है। आमतौर परपोषण वाटिका घर के पिछवाड़े में, पानी के स्रोत के पास एक खुले क्षेत्र में स्थापित किया जाता है जहां पर्याप्त धूप मिलती है। पोषण वाटिका का आकार, भूमि की उपलब्धता, परिवार में व्यक्तियों की संख्या और इसकी देखभाल के लिए उपलब्ध खाली समय पर भी निर्भर करता है। पोषण वाटिका के लिए आयताकार बगीचे के आकार को प्राथमिकता दी जाती है। पांच सदस्यों वाले परिवार के लिए साल भर में सब्जियां उपलब्ध कराने के लिए लगभग 100 वर्ग मीटर भूमी पर्याप्त है।

कौन सी सब्जियाँ उगाएं ?

क) सभी मौसमी सब्जियाँ

टमाटर, प्याज और लहसुन की आवश्यकता पूरे वर्ष भर होती है और इन्हें एक से अधिक मौसमों में उगाया जा सकता है इसलिए इन फसलों को योजना में सबसे पहले शामिल किया जाना चाहिए।

ख) कद्दूवर्गीय सब्जियाँ

अधिक फैलाव होने के कारण कद्दूवर्गीय/खीरे को बहुत अधिक जगह की आवश्यकता होती है। इन सब्जियों को क्यारियों के किनारों उगाना चाहिए ताकि उनके आस–पास के पौधे भी भली भांति विकसित हो सकें।

ग) शीघ्र उपलब्धता वाली सब्जियाँ

कुछ सब्जियाँ ऐसी होती हैं जिन्हें नियमित रूप से काटा जाता है तथा जिन्हें फसल चक्र में शामिल करने की आवश्यकता नहीं होती है, जैसे कि मिर्च और सलाद के पत्ते इत्यादि निकटतम क्यारियों में उगाये जाने चाहिए। ये सब्जियाँ जल्दी तैयार हो जाती है।

घ) एक के साथ दूसरे पौधों का रोपण

विभिन्न फसलों में परागण की आवश्यकता भिन्न–भिन्न होती है। परागकण पौधों और खूब सारे फूलों को बगीचे में शामिल किया जाना चाहिए जो परागण को बेहतर बनाने में मदद करता है।अतः मुख्य फसल के साथ पौधों का भी रोपण करना चाहिए जो परागण में मदद करें। जैसे गेंदे का फूल

ड़) अधिक जल ग्रहण करने वाली सब्जियाँ

सलाद के पत्तों जैसे अधिक जल ग्रहण करने वाली सब्जियों को नियमित रूप से पानी देने की आवश्यकता होती है। इन पौधों को बगीचे के एक नम हिस्से में अथवा जहां आसानी से सिंचाई की आपूर्ति हो, उगाना चाहिए।

च) बारहमासी सब्जियाँ

बारहमासी सब्जियाँ जैसे सहजन, करी पत्ता और पपीता जैसे पौधों को बगीचे के एक तरफ लगाना चाहिए ताकि वे न तो शेष पौधों को छाया दें और न ही वे अंतर शस्य क्रियाओं में हस्तक्षेप करें।

सब्जी फसल चयन के लिए मानदंडः

1. परिवार के सदस्यों, विशेषकर महिलाओं और बच्चों द्वारा पसंद की जाने वाली सब्जियों का चयन करें।
2. सब्जियों की विविध श्रेणी का चयन करें, क्योंकि सभी सब्जियों के गुण अलग–अलग होते हैं।

3. ऐसी सब्जियाँ चयन करे जो स्थानीय जलवायु और मिट्टी के अनुकूल हों।
4. सामान्य कीटों और रोगों के प्रति सहनशील सब्जियों की किस्मों का चयन करें।
5. चयनित सब्जियों की गुणवत्ता रोपण सामग्री (बीज, कटाई, अंकुर और कंद) स्थानीय रूप से उपलब्ध होनी चाहिए और परिवार के सदस्यों द्वारा आसानी से उपलब्ध होनी चाहिए।
6. कृषि–जैव विविधता और सांस्कृतिक विरासत को बनाए रखने के लिए उन्नत किस्मों के साथ–साथ पारंपरिक किस्मों को भी शामिल करें।
7. नई पोषक फसल प्रजातियों या किस्मों को भी पोषण वाटिका में उगा कर परीक्षण करना चाहिए ताकी, उनके स्वाद पर सही प्रतिक्रिया मिल सके। इससे बागवानी के लिए उत्साह पैदा हो सकता है।

100 मी^{2} पोषण वाटिका मॉडल का प्रारुप

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर 100मी^{2}क्षेत्र में न्यूट्री–गार्डन प्रारुप की स्थापना वर्ष 2019–2021(चित्र 2) के दौरान किया गया तथा वर्तमान में भी इसका रख–रखाव किया जा रहा है।

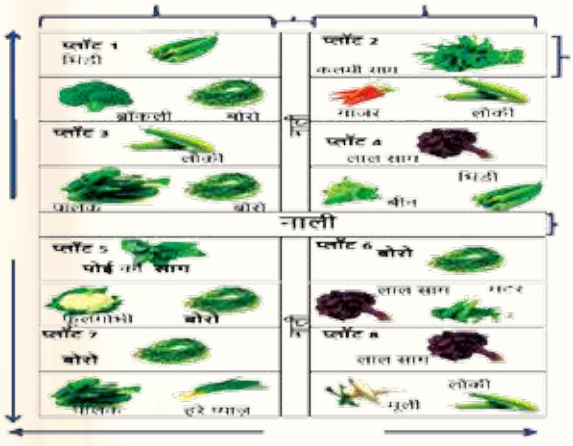

चित्र 2: 100 मी^{2} क्षेत्र में पोषण वाटिका प्रारुप

इस क्षेत्र की जलवायु उपोष्ण कटिबंधीय गर्म और आर्द्र है, जिसमें औसत वार्षिक वर्षा 1167 मिमी (70–75% जुलाई से सितंबर महीनों के दौरान प्राप्त होती है), जनवरी में न्यूनतम तापमान 7.4–10.^{0}C और मई में अधिकतम तापमान 35.1–39.6^0 C होता है। इस क्षेत्र की वार्षिक औसत आर्द्रता 67.2% थी, जो क्रमशः सितंबर और अप्रैल के दौरान उच्चतम (80.5%) और सबसे कम (50.0%) रही। इस प्रारुप में साल भर की सब्जी की खेती के लिए कुल 14 पारंपरिक और गैर–पारंपरिक सब्जियों का चयन किया गया था और छोटे आकार (3x4)मीव की क्यारियों बेड में लगाए गए। साल भर की सब्जियों के प्रतिरूप को रबी (मध्य अक्टूबर से मध्य मार्च), गर्मी (मध्य मार्च से मध्य जून) और खरीफ (मध्य जून से मध्य अक्टूबर) सहित प्रति वर्ष तीन फसल मौसमों में विभाजित किया गया है। प्रारुप में कुछ सब्जियां केवल एक मौसम में उगाई जाती हैं जैसे मूली, मटर, धनिया, ब्रोकली, फूलगोभी और पत्तागोभी, एवं कुछ सब्जियाँ दो मौसमों में उगाई गई जैसे भिंडी, करेला, तुरई, लौकी, नेनुआ और कुछ को साल भर उगाए जाते है (चित्र 3)। स्थानीय पारंपरिक सब्जियों को भी प्रारुप में जलवायु के प्रति अनुकूलता बढ़ाने के लिए शामिल किया गया है।

चित्र 3. पूर्वी भारत में साल भर में उगाई जाने वाली मुख्य सब्जियों का कैलेंडर

सब्जियां	सब्जी का मौसम	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितंबर	अक्टूबर	नवंबर	दिसंबर
टमाटर	अक्टूबर–मार्च												
बैंगन	जून–मार्च												
मिर्च	जून–मार्च												
फूलगोभी	अक्टूबर–मार्च												
पत्तागोभी	अक्टूबर–मार्च												
ब्रॉकली	अक्टूबर–मार्च												

सब्जियां	सब्जी का मौसम	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितंबर	अक्टूबर	नवंबर	दिसंबर
पालक	अक्टूबर–मार्च												
धनिया पत्ता	अक्टूबर–मार्च												
सरसों साग	अक्टूबर–मार्च												
मटर	अक्टूबर–मार्च												
भिंडी	मार्च–अक्टूबर												
बोरा	मार्च–अक्टूबर												
लौकी	मार्च– अक्टूबर												
तोरई	मार्च–अक्टूबर												
नेनुआ	मार्च–अक्टूबर												
परवल	जून–अक्टूबर												
लालसाग	जून–अक्टूबर												
कलमीसाग	जून–अक्टूबर												
पोइसाग	मार्च–अक्टूबर												
गाजर	अक्टूबर–मार्च												
मूली	अक्टूबर–मार्च												
सेम	अक्टूबर–जून												
कच्चा पपीता	जनवरी– दिसंबर												

फसल चक्र गाजर–लौकी–कलमी साग (**44.1** औ **11.1** किलोग्राम) में उच्चतम उपज क्षमता पाई गई, इसके बाद ब्रोकोली–बोरो–भिंडी (**43.9** औ **7.7** कि.ग्रा.) और पालक–बोरो–नेनुआ (**42.4** औ) **5.7** कि.ग्रा.)। हालांकि, सबसे कम उपज सेम–भिंडी–लाल साग (**32.7** औ **6** कि.ग्रा.) फसल चक्र में पाया गया। (तालिका **2**)

तालिका 2. 100मी² मॉडल (किलोग्राम में) में सालाना घरेलू उत्पादन पद्धति और उपज

	फसल चक्र	बरसात	सर्दी	गर्मी	कुल
1	भिंडी–ब्रोकोली– बोरो	14.5±1.8	14±2.7	15.4±3.2	43.9±7.7
2	कलमी साग –गाजर– लौकी	14±2.3	12.9±3.6	17.2±5.2	44.1±11.1
3	लौकी– पालक– बोरो	14±1.4	12.6±2.5	15.8±1.8	42.4±5.7
4	लाल साग –सेम– भिंडी	10±2.4	7±2.4	15.7±1.2	32.7±6
5	पोईकासाग –फूलगोभी– बोरो	8±2.3	15.2±3.4	14.8±2.1	38±7.8
6	बोरो –मटर– लाल साग	17±3.8	12.3±.1.9	12±1.8	41.3±7.5
7	बोरो–पालक–प्याज	14.2±1.2	10.3±2.3	13.1±3.1	37.5±6.6
8	लाल साग –मूली–लौकी	10±1.6	12±4.2	16.2±2.3	38.2±8.1

(अ) पोषाहार सुरक्षा को पूरा करने में पोषण वाटिका की प्रभावशीलता

पोषण–वार, उच्चतम ऊर्जा (23892 किलो कैलोरी), प्रोटीन (1849.9 ग्राम) और वसा (143.2 ग्राम) बोरो–मटर–लाल साग फसल चक्र में पाए गए। इसकी गणना राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद की खाद्य संरचना तालिका के आधार पर की गई थी। हालांकि, सबसे अधिक विटामिन ए (1876380 IU) और विटामिन सी (20888 मिलीग्राम) कलमी साग–गाजर–लौकी और पोई का साग –फूल गोभी– बोरो फसल पद्धति में पाया गया। फसल पद्धति बोरो–मटर–लाल साग में सबसे अधिक थायमिन (बी 1) (58.55 मिलीग्राम), राइबोफ्लेविन (बी 2) (68.52 मिलीग्राम) और नियासिन (बी 3) (653. 7 मिलीग्राम) सामग्री में दर्ज किया गया था। इसी तरह बोरो–मटर–लाल साग फसल पद्धति में कैल्शियम (63078 मिलीग्राम), लौह (34258 मिलीग्राम) औ रफॉस्फोरस (1180.7 मिलीग्राम) की उच्चतम मात्रा पाई

गई। इसलिए परिवार के आवश्यकता के अनुसार सही सब्जी की फसल पध्दति को चुना जा सकता हैं।

(ब) पोषण वाटिका की आर्थिक व्यवहार्यता

100^2 मीटर क्षेत्र में बनाई गई पोषण वाटिका से उत्पा. दित कुल सब्जियां 245.5 किग्रा/वर्ष थी। बीज और अन्य निवेश (जैव–कीटनाशक, रस्सी, बांस की छड़ें, तार) की लागत 1920/– रुपये थी (तालिका 3)। इसमें पोषण वाटिका के रख–रखाव के लिए श्रम लागत शामिल नहीं है क्योंकि इस प्रकार के पोषण वाटिका का रख–रखाव घर की महिलाओं या बुजुर्ग लोगों द्वारा किया जाता है। सब्जियों की औसत कीमत 20 रुपये लेते हुए $100मी^2$ प्राप्त कुल आय रुपये 4910/वर्ष रुपये प्रति होती है।

तालिका 3. पोषण वाटिका तैयार करने में लागत निवेश

क्र.सं.	निवेश (रु.)	लागत (रु.)
1	बीज (रु.)	430.00±60.00
2	जैव– कीटनाशक (रु.)	820.00±95.00
3	अन्य (रस्सी, तार, बांस की छड़ें)	670.00±50.00
	कुल लागत	1920.00±48.00

$100 मी^2$ मॉडल से लाभ लागत अनुपात 2.57:1 है। पोषण वाटिका प्रारुप न सिर्फ आय का एक अतिरिक्त स्रोत प्रदान करता है बल्कि पोषण सुरक्षा में सुधार के लिए भी एक प्रभावी तरीका है, क्योंकि परिवार के सदस्यों का श्रमपोषण वाटिका के उत्पादन को घरेलू आत्मनिर्भरता तक पहुंचाने में सक्षम होगा।

अधिक उत्पादन एवं लाभ हेतु करें पपीते की वैज्ञानिक खेती

महेश कुमार धाकड़, बिकाश दास एवं अरूण कुमार सिंह

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर – कृषि प्रणाली का पहाड़ी एवं पठारी अनुसंधान केंद्र, राँची (झारखंड)

पपीता पूर्वी भारत में महत्वपूर्ण फलों की फसलों में से एक है, जिसे किसान मुख्य रूप से घरों के बगीचों में उगाता है। पपीता कई औषधियों गुणों से भरपूर होने के कारण यह सेहत के लिए भी बहुत लाभदायक होता है। पपीता कम समय में उत्पादन देने वालो फलों की श्रेणी में आता है। इसकी इसी विशेषता के कारण यह फल युवाओ और कृषि उद्यमियों को अपनी और आकर्षित करता है। इसे लगाने के लिए क्षेत्रफल भी कम लगता। इस प्रकार प्रति क्षेत्रफल पौधों की संख्या अधिक होने के कारण पपीते की खेती से कम समय में अधिक मुनाफा लिया जा सकता है। इसकी पैदावार पूरे पूर्वी भारत में की जाती है। आइए जानते हैं पपीते की उन्नत खेती करने का वैज्ञानिक तरीका–

जलवायु और भूमि

पपीते की सबसे अच्छी फसल उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रो में होती है। लेकिन समशीतोष्ण क्षेत्रो में भी अच्छी पैदावार देता है। पपीता किसी भी प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है लेकिन इसकी सबसे अच्छी खेती जीवांश युक्त एवं उचित जल निकास वाली बलुई दोमट एवं दोमट मिट्टी में की जाती है। जमींन का समतल होना जरूरी है, ताकि पौधों में पानी की अत्याधिक रुकावट न हो। पौधों में पानी की रूकावट होने पर पपीते की खेती मे पानी भरे रहने से कॉलर रॉट नामक बीमारी लग जाती है जो पौधों को अत्याधिक नुक्सान पहुँचाती है।

प्रमुख किस्मे

पृथकलिंगी / एकलिंगाश्रयी किस्मेः इस प्रकार की पपीते की किस्मो में एकलिंगी नर या मादा पुष्प भिन्न–भिन्न पौधों पर पाए जाते। जैसे पूसा ड्वार्फ, पूसा नन्हा, रांची लोकल आदि। इन किस्मो के 3–4 पौधे प्रति गड्डे में लगाना चाहिए एवं फूल आने पर नर पौधे को हटा देना चाहिए और प्रति गड्डा एक मादा या उभयलिंगी पौधे को ही रखना चाहिए। इस प्रकार 80–90 प्रतिशत मादा पौधे मिलने की सम्भावना होती है।

उभयलिंगी किस्मेः इन किस्मो में नर एवं मादा एक ही पौधे पर होते है। जैसे पूसा डिलीशियस, रेड लेडी, अर्का प्रभात, एन. एस. सी. 902 आदि। इन किस्मो में प्रति गड्डा एक ही पौधा लगाया जाता है।

पौधरोपण एवं प्रबंधन

पपीते की खेती के लिए सबसे उपयुर्क्त समय जून– जुलाई का महीना माना जाता है, लेकिन जिस इलाके में सिंचाई की उचित व्यवस्था है, वहाँ फरवरी से अप्रैल में भी पपीते के पौधे लगाये जा सकते है। पपीते की खेती में पालीथीन बैग में पौध तैयार करते है। बीज 1 सेंटीमीटर गहरे बोते हैं इन पौधों को रोपाई हेतु जब 15–25 सेंटीमीटर ऊँचे हो जाये तब इनकी पौध की रोपाई करनी चाहिए। खेत को अच्छी तरह जोत कर समतल बनाना चाहिए तथा भूमि का हल्का ढाल उत्तम है। 2 मीटर × 2 मीटर की दूरी पर 2 फ़ीट × 2 फ़ीट × 2 फ़ीट लंबा, चौडा एवं गहरा गढ्ढा बनाना चाहिए। इन गढ्ढों में 20 किलो गोबर की खाद (ट्राइकोडर्मा उपचारित), 30 ग्राम फॉस्फेट घुलनशील बैक्टीरिया, 300–400 ग्राम नीम अथवा करंज खली, 250 ग्राम यूरिआ, 250 ग्राम सुपर फास्फेट एवं 250 ग्राम म्यूरेट आफ पोटाश को मिट्टी में मिलाकर पौधा लगाने के कम से कम 10 दिन पूर्व भर देना चाहिए। अम्लीय मिट्टी में 500 ग्राम कृषि चूने का इस्तेमाल अच्छा रहता है। 1.5 –2.0 फ़ीट ऊंचाई के बेड बनाकर उसके ऊपर पपीते के पौधे लगाने से पौधों की बढ़वार अच्छी होती है। बेड बनाकर खेती करने से

पौधे का तना पानी के जमाऊ से भी बच जाता है। खेत में पौधों की रोपाई दोपहर बाद 3 बजे सायं से करनी चाहिए। रोपाई के बाद पानी लगाना अतिआवश्यक है। पपीता एक शीघ्र बढने एवं फल देने वाला पौधा है जिसके करण इसे निरंतर पोषक तत्वों की आवश्यकता पड़ती है। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 250 ग्राम नत्रजन 150 ग्राम फास्फोरस तथा 250 ग्राम पोटाश प्रति पौधा के हिसाब से प्रति वर्ष देना चाहिए। यह मात्रा पौधे के चारों ओर 3 से 4 बार में 2–3 माह के अन्तराल पर देनी चाहिए। इसके अलावा जिंक एवं बोरोन सूक्ष्म पोषक तत्वों का 0.2 प्रतिशत घोल (2 ग्राम /लीटर) का छिड़काव पत्तियों पर फूल आने से लेकर फल बनने के दौरान 3–4 बार करना चाहिए करना चाहिए। पपीता के लिए सिचाई का उचित प्रबन्ध होना आवश्यक है। गर्मियों में 3 से 4 दिन के अन्तराल पर तथा सर्दियों में 6–7 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

रोग एवं कीट प्रबंधन

पपीते के पौधों में मोजैक, रिंगस्पॉट, जड़ एवं तना सडन, एन्थ्रेक्नोज एवं कली तथा पुष्प वृंत का सड़ना आदि रोग लगते है। इनके नियंत्रण में वोर्डोमिक्सचर 5:5:20 के अनुपात का पेड़ो पर सडन गलन को खरोचकर लेप करना चाहिए। अन्य रोग के लिए मैन्कोजेब 0.2 प्रतिशत से 0.25 प्रतिशत का पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए अथवा कॉपर आक्सीक्लोराइट 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिडकाव करना चाहिए। वायरस से बचाओ के लिए इसे फैलाने वाले सूक्ष्म कीटो का नियंत्रण करना चाहिए। पपीते के पौधों को कुछ कीड़े लगते है जैसे सफेद मक्खी, मीली बग, माहू, आदि है। नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 1 लीटर प्रति 3 लीटर पानी में या प्रोफेनोफॉस 0.5 मिली लीटर प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करने से सफेद मक्खी, मीली बग, माहू आदि का नियंत्रण होता है।

फसल कटाई

पौधे लगाने के ठीक 10 से 12 महीने के वक्त के बाद फल तोड़ने लायक हो जाते है। कुछ ही दिनों में फलों का रंग हरे रंग से बदलकर पीला रंग का होने लगता है तथा फलों पर नाखुन लगने से दूध की जगह पानी तथा तरल निकलता हो तो समझना चाहिए कि फल पक गया होगा। इसके बाद फलों को तोड़ लेना चाहिए। फलों के पकने पर चिडियों से बचाना अति आवश्यक है अतः फल पकने से पहले ही तोड़ना चाहिए। फलो को तोड़ते समय किसी प्रकार कि खरोच या दाग–धब्बे आदि न पड़ने पाए नहीं तो फल सड़कर ख़राब हो जाते है। पैदावार मिट्टी किस्म, जलवायु और उचित देखभाल पर निर्भर करती है। समुचित व्यवस्था पर प्रति पेड़ एक मौसम में औसत उपज में फल 35–50 किग्रा प्राप्त होते है तथा 15–20 टन प्रति हेक्टर उपज प्राप्त होती है।

पपीता किस्म एन. एस. सी. 902 किसान के खेत में प्रदर्शित

पपीता किस्म रेड लेडी किसान के खेत में प्रदर्शित

ऊचे बेड बनाकर प्लास्टिक मल्विंग एवं ड्रिप द्वारा पपीते की खेती

पठारी क्षेत्रों में शकरकंद की लाभदायक खेती

धर्मजीत खेरवार, दुष्यंत कुमार राघव, इन्द्रजीत, सन्नी कुमार एवं शशिकांत चौबे

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर – कृषि विज्ञान केंद्र, रामगढ़ (झारखंड)

शकरकंद कॉन्वॉल्वुलेसी परिवार का एक वर्षी पौधा है, जिसका वानस्पतिक नाम इपोमिया बटाटास है, परन्तु यह अनुकूल परिस्थिति में बहुवर्षी व्यवहार कर सकता है। यह फसल मुख्य रूप से अपने मीठे स्वाद एवं स्टार्च के लिए प्रसिद्ध है। इसका कन्द बीटा–केरोटीन एवं एंटीऑक्सीडेंट का स्रोत है। यह जड़ी–बूटी वाली सदाबहार बेल है, जिसके पत्ते हिस्सो में बंटे हुए या दिल के आकार के होते हैं। इसके कंद खाने योग्य, चिकनी एवं मुलायम छिलके वाले, पतले, लम्बे और गोलाकार होते है। इसके कंद के त्वचा का रंग अलग–अलग, जैसे लाल, गुलाबी एवं सफेद होता है और इसका गुद्दा जामुनी, पीला, संतरी एवं सफेद रंग का होता है। शकरकंद में कैलोरी और स्टार्च की मात्रा सामान्य होती है। भरपूर मात्रा में विटामिन बी पाया जाता है, जो शरीर में होमोसिस्टीन नामक अमिनो एसिड के स्तर को कम करने में सहायक होता है। यह विटामिन डी का बहुत अच्छा स्रोत है। शकरकंद में भरपूर मात्रा में आयरन होता है। डायबिटीज, कैंसर, अस्थमा, गठिया, हृदय रोग आदि बीमारी को होने से रोकता है। इतना ही नहीं, इसमें रोग प्रतिरोधक क्षमता है, जो वजन बढ़ाने और मस्तिष्क को स्वस्थ रखने में भी सहायक साबित होता है। इससे पाचन तंत्र सुधरता है। बालों व त्वचा के लिए भी शकरकंद फायदेमंद है। शकरकंद से कई प्रकार की सब्जियां बना सकते हैं। इसका हलवा भी बनता है। भारत में लगभग 2 लाख हैक्टेयर क्षेत्र पर इसकी खेती की जाती है। भारत में बिहार, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश और उड़ीसा आदि इसके प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। झारखंड में शकरकंद की खेती बड़े पैमाने पर की जाती है। रांची, रामगढ़, लोहरदगा, गुमला, लातेहार जिलों में मुख्य रूप से इसकी खेती होती है। आज शकरकंद की खेती कर झारखंड के किसान आत्मनिर्भर बन रहे हैं। झारखंड का शकरकंद आज पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, ओड़िशा सहित कई प्रदेशों में जाता है। रामगढ़ जिला के गोला, दुलमी, चितरपुर क्षेत्र में शकरकंद की खेती करके किसान अच्छी–खासी आमदनी कर रहे हैं और आत्मनिर्भर बन रहे हैं। गोला प्रखंड क्षेत्र के पूरबडीह, कोरांबे, लिपिया, सरला, बरियातू, बटुल, कुम्हरदगा, सोनडीमरा, नावाडीह में बड़े पैमाने पर इसकी खेती होती है। दुलमी और चितरपुर प्रखंड के इचातु, लोलो, बगरई, चटाक, होन्हें, कुल्ही, बयांग, मारंगमरचा, बोरोबिंग, बड़कीपोना, छोटकीपोना के अलावे सभी गांवों में शकरकंद की खेती होती है। कंद खुदाई के बाद प्रतिदिन इन क्षेत्रों से कम से कम 10 ट्रक शकरकंद विभिन्न राज्यों में भेजे जाते हैं। शुरू में किसानों को 25 से 30 रुपये प्रति किलो की दर से शकरकंद की बिक्री कर आमदनी होती है। बाद में इसकी कीमत 10 रुपये किलो तक गिर जाती है। किसानों की मानें, तो पूरे क्षेत्र में एक सीजन में लगभग 20 हजार टन शकरकंद की उपज हो जाती है। शकरकंद की फसल से इस क्षेत्र के किसान लाखों रुपये कमा रहे हैं। इनकी आर्थिक स्थित तो सुदृढ़ हो ही रही है, किसान कई लोगों को खेत में रोजगार दे रहा है, तो कई लोगों को उपज के बाद शकरकंद बेचकर उसमें मुनाफा कमाने का भी अवसर दे रहा है।

तालिका–1 शक्करकंद में पाये जाने वाले विभिन्न तत्व (प्रति 100 ग्राम) इस प्रकार हैं:

तत्व का नाम	उपलब्धता (प्रति 100 ग्राम)
नमी	68.5 ग्राम
प्रोटीन	1.2 ग्राम
वसा	0.3 ग्राम
रेशा	0.8 ग्राम
कैलोरी	120 किलोकैलोरी
फोस्फोरस	50 मिलीग्राम
सोडियम	9.0 मिलीग्राम
विटामिन 'ए'	10 आई.यू.
राइबोफ्लेविन	0.04 मिलीग्राम
खनिज तत्व	1.0 ग्राम
अन्य	
कार्बोहाइड्रेट	28.2 ग्राम
कैल्शियम	20 मिलीग्राम
लोहा	0.8 मिलीग्राम
पोटाशियम	393 मिलीग्राम
विटामिन 'बी'–1	0.08 मिलीग्राम
विटामिन 'बी'–3	0.7 मिलीग्राम
विटामिन 'सी'	24 मिलीग्राम

शक्करकंद के लिए जलवायु

शकरकंद की खेती के लिए 21 से 27 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त माना जाता है, एवं 750 से 1200 मिलीमीटर वार्षिक वर्षा क्षेत्रों में इसे आसानी से उगाया जा सकता है। इसकी खेती शीतोष्ण एवं समशीतोष्ण जलवायु वाले स्थानों पर सफलतापुर्वक की जाती है।

भूमि का चयन

इसकी खेती के लिए अच्छे जल निकासीयुक्त बलुई दोमट या चिकनी दोमट उपयुक्त रहती है। इसकी खेती हल्की रेतली और भारी चिकनी मिट्टी में ना करें, क्योंकि इसमें कंदों का विकास अच्छी तरह से नहीं होता हैं। इसकी अच्छी फसल के लिए मिट्टी का पी. एच. 5.8 से 6.7 उपयुक्त माना जाता है।

उन्नत किस्में

- **श्री भद्राः यह अधिक उत्पादन वाली एवं कम समय (90–105 दिन) वाली किस्म है।** यह मध्यम फैलाव एवं चौड़ी पत्ती, नई पत्तियां गहरी बैगनी रंग के, हरयाली भूरे लत्तर एवं इसके कंद गुलाबी रंग के, गुद्दा क्रीम रंग का होता है। इसके कंद में 33 प्रतिशत सूखा पदार्थ, 20 प्रतिशत स्टार्च, 2.9 प्रतिशत कूल शक्कर और 972 आई. यू./100 ग्राम कैरोटिन की मात्रा पायी जाती है।
- **गौरीः** यह मध्यम अवधि की किस्म है जो 110–120 दिन में तैयार हो जाती है। कंद का रंग बैंगनी लाल होता है, इसके गुद्दे का रंग पीला होता है। इसे खरीफ एवं रबी के मौसम में लगाया जाता है।
- **कलिंगाः** यह एक मध्यम अवधि (105–110 दिन) की किस्म है जिसमें अच्छे से पकने की गुणवता है। इसमें स्टार्च की अधिक मात्रा (28 प्रतिशत) पायी जाती है। इसका उपयोग भोजन के रूप में, चारा के रूप में एवं स्टार्च निष्कासन हेतु किया जा सकता है। इसके कंद का छिलका बैगनी लाल और गुद्दा क्रीम रंग का होता है।
- **भू सोनाः** इस किस्म में कुल शक्कर 2.0– 2.4 प्रतिशत, स्टार्च 20.0 प्रतिशत एवं सूखा पदार्थ 27.0– 29.0 प्रतिशत पाया जाता है। अन्य प्रचलित किस्मों (2.0–3.0 मिलीग्राम/100 ग्राम) की तुलना में अधिक बीटा– कैरोटीन (14.0 मिलीग्राम/100 ग्राम) पाया जाता है द्य प्रति हेक्टेयर कंद उत्पादन क्षमता 19.8 टन है। इसके कंद और गुद्दा नारंगी रंग के होते हैं।
- **भू कृष्णाः** यह खारापन के प्रति सहनशील किस्म है। इस किस्म में कुल शक्कर 1.9– 2.2 प्रतिशत, स्टार्च 19.5 प्रतिशत एवं सूखा पदार्थ 24.0– 25.5 प्रतिशत पाया जाता है। अन्य प्रचलित किस्मों

जिसमे की एंथोसायनिन नही के बराबर पाया जाता है इस किस्म में अत्यधिक एंथोसायनिन (90.0 मिलीग्राम/100 ग्राम) पाया जाता है। इस किस्म की कंद उत्पादन क्षमता 18.0 टन प्रति हेक्टेयर है। इसके कंद और गुद्दा बैगनी रंग के होते हैं।

खेत की तैयारी

मिट्टी को अच्छी तरह से भुरभुरा और हवादार बनाने के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करें और उसके बाद 2 से 3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करनी चाहिए। अच्छी पैदावार के लिए सड़ी गोबर की खाद 15 से 20 टन प्रति हेक्टेयर आखरी जुताई से पहले डालें ताकि वह मिट्टी में अच्छी तरह से मिल जाये।

बुवाई

शकर कंदों के कंदों को पौधशाला में बोकर उनसे बेलें तैयार कि जाती है फिर उन्हें काटकर खेत में रोपाई कि जाती है। एक हेक्टेयर की बुआई के लिए 1/20 हेक्टेयर में तैयार की गई बेलें पर्याप्त होती है। कंदों को तैयार पौधशाला में फरवरी–मार्च के महीने में 10–15 सेंटीमीटर की गहराई पर बो दिया जाता है एवं उसकी नियमित रूप से सिचाई, निराई–गुड़ाई की जाती है, इस प्रकार जून–जुलाई में बेलें रोपाई के लिए तैयार हो जाती है।

लत्तर की मात्रा: 83,000 कटिंग्स प्रति हेक्टेयर लगता है।

लगाने की विधि और दूरी

1. **टीला विधि:** लगभग 1–1.5 फीट की दुरी पर पंक्ति में 1.25– 1.5 फीट ऊंचा टीला बनाने चाहिए फिर उस पर 2–3 फीट लम्बाई वाले एक लत्तर को गोलाकार मोड़कर प्रति टीला 6–8 सेंटीमीटर गहराई पर बोनी चाहिए।
2. **मेढ़ एवं गडढ़ा विधि:** बेलों का निचला भाग थोड़ा सा काट देना चाहिए और शेष भाग को लगभग 20 से. मी. लंबी टुकड़ों में काट कर **मेढ़** पर 20 से.मी. की दुरी में और पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 सेंटीमीटर पर 5–10 सेंटीमीटर गहराई पर रोपाई करनी चाहिए।

रोपाई का समय

बेलों की रोपाई जून–जुलाई में किया जाता है।

खरपतवार नियंत्रण

शकरकंद में खरपतवार की अधिक समस्या नहीं होती है, प्रायः शुरुआती समय में जब लताएं पूरे खेत में नहीं फैलीं रहती हैं तब खरपतवार की समस्या होती है। बाद में जब शकरकंद की लताएं पूरे खेत में फैल जाती हैं तो खरपतवार का जमाव नहीं हो पता है। अगर खेत में कुछ खरपतवार उगे तो मिट्टी चढ़ाते समय निकाल देनी चाहिए।

सिंचाई

प्रायः बरसाती फसल में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। फिर भी अगर लंबे अन्तराल तक बारिश ना हो तो पौध के बचाव हेतु सिंचाई की आवश्यकता पड़ सकती है।

खाद और उर्वरक

शकरकंद की खेती के लिए 1 हेक्टेयर खेत में 150 से 200 क्विंटल गोबर की सड़ी खाद व 60 किलोग्राम नत्रजन (80 किलोग्राम यूरिया), 60 किलोग्राम फास्फोरस (130 किलोग्राम डी.ए.पी.) और 60 किलोग्राम पोटैशियम (103 किलोग्राम पोटाश) की जरूरत पड़ती है। रोपाई के समय आधी नत्रजन और संपूर्ण पोटाश तथा स्फूर डालें। शेष नत्रजन 30–35 दिनों पर मिट्टी चढ़ाने के समय डालें।

पौध संरक्षण

शकरकंद के कीट

1. **शकरकंद की घुन** – ग्रब तने में छेद करके कोमल ऊतकों को खाते हैं। वयस्क और ग्रब दोनों भंडारण में भी कंदों को नुकसान पहुंचाते हैं। बेलों का मोटा होना, विकृत होना और अक्सर ऊतक का टूटना, क्षतिग्रस्त लत्तों का बेरंग होना, टूटना एवं मुरझाना इसके लक्षण हैं। एक संक्रमित कंद अक्सर गुहाओं या सुरंगों से भरा होता है। ग्रसित कंद स्पंजी, भूरे से काले रंग के हो जाते हैं। ऊपर

से सड़ना शुरू होता है और एक अप्रिय गंध और कड़वा स्वाद विकसित होता है एवं मानव उपभोग के लिए अनुपयुक्त हो जाता है।

रोकथामः

- शकरकंद के दो फसलों के बीच धान के साथ फसल चक्र अपनाएं।
- रोपण सामग्री के रूप में कीट मुक्त लताओं का प्रयोग करें।
- फसल की कटाई परिपक्वता के तुरंत बाद करें।
- मिट्टी में दरार न हो या कम से कम हो।
- किट पाश को 5 मीटर की दूरी पर शाम 4 बजे सेट करें, अगले दिन सुबह 6 बजे वयस्क घुन को इकट्ठा करें और नष्ट करें।
- रोपण के 50 दिन बाद मिट्टी को ढीला करें एवं मिट्टी चढ़ायें।
- 10 दिनों के अंतराल पर 0.1 प्रतिशत मैलाथियान या कार्बेरिल का छिड़काव करें।

2. **पत्ती खाने वाली सुंडी**– ये कीट पत्तियों को बहुतायत से खाते हैं।

रोकथामः

- कोड़ाई के बाद गहरी जुताई करें।
- अंडों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें।
- नीम तेल 5 मी.ली. प्रति लीटर पानी या 2 मी.ली. क्लोरपाईरिफोस या क्विनालफोस का प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें।

3. **शकरकंदी की भुंडी**: यह पत्तों और बेल के बाहरी परत को अपना भोजन बनाकर नुकसान पहुचांते है।

   रोकथामः इसकी रोकथाम के लिए 0.5 मी.ली. रोगर दवा का प्रति लिटर पानी प्रयोग करें।

4. **फल का पतंगा**: यह खेत और स्टोर में हमला करने वाला मुख्य कीट है। यह फलों में सुरंग बनाकर गुद्दे को खाता है।

   रोकथामः इसकी रोकथाम के लिए बीमारी मुक्त बीजों का प्रयोग करें और पूरी तरह से सड़ा हुआ गोबर डालें। अगर इसका हमला दिखाई दें तो कार्बरील 2–3 ग्राम प्रति लीटर पानी प्रयोग करें।

5. **चेपा**: छोटे और बड़े दोनों कीट रस चूस कर पौधे को कमज़ोर कर देती है। इसके गंभीर हमले से पत्ते मुड़ जाते है और आकार बदल जाता है। यह शहद की बूंद जैसा पदार्थ छोड़ते है और प्रभावित भागों पर काली, सफेद फंगस पैदा हो जाती है।

   रोकथामः चेपे से बचाव के लिए इमिडाक्लोप्रिड एक ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

शकरकंद के रोग

1. **फल पर काले धब्बे**:इस बीमारी से फलों पर काले रंग के धब्बे दिखाई देते है। प्रभावित पौधे सूखना शुरू हो जाते है। प्रभावित फलों पर अंकुरण के समय आंखे भूरे या काले रंग की हो जाती है।

   रोकथामः इसकी रोकथाम के लिए बीमारी–मुक्त बीजों का प्रयोग करें। बिजाई से पहले बीजों का मरकरी के साथ उपचार करें। एक ही जगह पर बार–बार एक ही फसल ना लगाएं बल्कि फसली–चक्र अपनाएं। ज़मीन को दो साल के लिए खाली छोड़ने पर इस बीमारी के फैलने का खतरा कम हो जाता है।

2. **अगेती झुलसा रोग**: इस बीमारी से निचले पत्तों पर गोल धब्बे पड़ जाते हैं। यह मिटटी में फंगस के कारण फैलती है। यह ज्यादा नमी और कम तापमान में तेज़ी से फैलता है।

   रोकथामः इसकी रोकथाम के लिए एक फसल खेत में बार बार उगाने के बजाय फसल चक्र अपनाएं। अगर इसका हमला दिखाई दे तो मैन्कोजेब या कॉपर आक्सीक्लोराइड का 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर बिजाई से 45 दिन बाद 10 दिनों के अन्तराल पर 2–3 बार छिड़काव करें।

3. **धफड़ी रोग:** यह बीमारी खेत और स्टोर दोनों में हमला कर सकती है। यह कम नमी वाली स्थिति में तेज़ी से फैलती है। प्रभावित फलों पर हल्के भूरे से गहरे भूरे धब्बे दिखाई देते है।

रोकथाम: इसकी रोकथाम के लिए खेत में हमेशा अच्छी तरह से गला हुआ गोबर ही डालें। बिमारी मुक्त बीजों का ही प्रयोग करें। बीजों को ज्यादा गहराई में ना बोयें। एक फसल खेत में बार–बार लगाने के बजाय फसल अपनाएं। बिजाई से पहले बीजों का एमीसान 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से 5 मिनट उपचार करें।

कंद विकार: कंदों का फटना

कारण:

- मिट्टी में अत्यधिक नमी का होना।
- मिट्टी में नमी का कमी होना।
- सूखे मौसम के बाद बारिश और अत्यधिक सिंचाई
- नत्रजन वाले उर्वरक जैसे यूरिया के अत्यधिक प्रयोग।
- कंदों के खुदाई में देरी करना।

रोकथाम:

- फसल खुदाई से एक महीने पहले सिंचाई बंद कर दें।
- उर्वरक का अनुशंसित मात्रा में उपयोग करें।
- सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे बोरान 2 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर प्रयोग करें।
- खेत में लंबे समय तक सूखा न छोड़ें।
- पोटाशयुक्त उर्वरक का प्रयोग करें।

खुदाई

शकरकंद कि खुदाई उसकी रोपाई के समय पर निर्भर करती है वैसे जुलाई में रोपी गयीफसल अक्तूबर–नवम्बर में खुदाई के लिए तैयार हो जाती है। जब कंद पूर्ण रूप से विकसित हो जाए तभी खुदाई करनी चाहिए फसल पकने कि मुख्य पहचान पत्तियांपिली पड़कर सूखनेलगती है शकर कंद कि खुदाई फावड़े या कुदाली से करनी चाहिए द्य शक्करकंद के ऊपर जो छोटी जड़ें हों उन्हें तोड़ देना चाहिए साथ ही उन पर लगी मिट्टी को साफ कर देना चाहिए।

उपज

इसकी ऊपज सिंचित अवस्था में लगभग 20–25 टन और असिंचित अवस्था में 10–15 टन प्रति हेक्टेयर हो जाती है ।

भण्डारण

शकर कंद के भण्डारण के लिए निम्न लिखित बातों का ध्यान विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए :

- कंद भली भांति पके हुए और सूखे होने चाहिए।
- कंद कटे, चोट खाए और रगड़ खाए न हों।
- भंडार गृह नमी के समीप न हों।

भंडारण के लिए 15 डिग्री सेल्सियस तापमान और 85–90 प्रतिशत आर्द्रता वाला भंडार गृह होना चाहिए।

मिथिलांचल की विरासत मखाना की वैज्ञानिक खेती

इंदु शेखर सिंह, बी.आर.जाना, ए.के. ठाकुर, अनिल कुमार, अशोक कुमार, धीरज प्रकाश एवं आलोक कुमार

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर – मखाना अनुसंधान केंद्र, दरभंगा (बिहार)

मखाना उद्योग के संरक्षण में केंद्र और प्रांतीय सरकारों की भूमिका हो सकती है। न्यूनतम सर्मथन मूल्य, फसल बीमा, फसल भंडारण हेतु शीतगृह केन्द्र की स्थापना एवम मखाना लावा बनाने की मशीन का वितरण कस्टम हायरींग स्तर पर करवाकर सरकार मखाना किसानों को मखाना उत्पादन हेतु प्रोत्साहित कर सकती है। बिहार में मखाना का उत्पादन एवम विपणन को एक उद्योग का दर्जा देने हेतु, राज्य सरकार प्रतिबद्ध है। जैसा कि हाल ही में दरभंगा जिला को ''एक जिला एक उत्पाद'' के तहत मखाना की खेती एवं विपणन पर किए गये अच्छे कार्य के लिए माननीय प्रधानमंत्री, भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत भी किया गया है। मखाना को एक अलग से ''भूसंकेतिक'' पहचान एवं स्वयं का एच–एस कोड संख्या देने हेतु राज्य सरकार एवम भारत सरकार प्रतिबद्ध है। फसल अर्थशास्त्रका विस्तृत अध्ययन और इसके आहार और औषधि घटकों की वैज्ञानिक जांच की गई है। ये इसके उचित पोषण और औषधीय महत्व का आकलन करने में मदद करेंगे। सभी निचली पानी से भरी बंजर भूमि को पुनः संयुक्त ईरीयल–मछली की खेती के लिए उपयुक्त आवास में बदल दिया जाना चाहिए। नई और बेहतर किस्मों का उत्पादन करने के लिए उत्परिवर्तन और संकरण प्रयोग किए जाने चाहिए जो उच्च उपज और नई एडैफिक और जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल हो सकें, जो इसके तेजी से सिकुड़ते वितरण को रोकने में मददगार होगा।

परिचय

स्थानीय रूप से मखाना के रूप में जाना जानेवाला यूरेल फेरॉक्स सैलिसबरी, मिथिला (बिहार) भारत की मुख्य जलीय नकदी फसल है। इस क्षेत्र के हजारों प्राकृतिक और मानव निर्मित जलाशय संयुक्त मछली और मखाना की खेती के लिए आदर्श जलाशय हैं जो कि यहाँ के मछुआरों के लिए आजीविका का एक प्रमुख स्रोत है। ई.फेरक्स हिंदू कर्मकांडों का एक महत्वपूर्ण घटक है, इस तथ्य के बावजूद भी पुराने संस्कृत शास्त्रों में इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता है। क्लिस्टोगैमस और कैस्मोगैमस दोनों प्रकार के फूलों का पाया जाना असामान्य है। इसके बीज खाने योग्य और बहुत पौष्टिक होते हैं। इस की खेती पर होने वाला खर्च मामूली है क्योंकि फसल के बाद बचे हुए बीज अगली फसल के समय में अंकुरित हो जाते हैं। श्रमिको के कामों में विरल क्षेत्रों में रोपाई, फसल के दौरान तालाब के तल से बिखरे हुए बीजों का संग्रह और बिक्री के लिए उनकी तैयारी शामिल है।

खाद्य बीजों के कैलोरी मान गेहूं, चावल और अन्य कार्बोहाइड्रेट युक्त अनाज सहित अधिकांश मुख्य खाद्य पदार्थों के सामान ही हैं। इसके कम प्रोटीन प्रतिशत (10–12) होने के बावजूद, यह अधिकांश पौधों और पशु–आधारित आहारों से बेहतर है, जो की आवश्यक अमीनो एसिड इंडेक्स (89–93%) और आर्जिनिन + लाइसिन प्रोलाइ अनुपात (4.74–7.6) की उच्च मात्रा से प्रमाणित है। भारतीय चिकित्सा की पारंपरिक प्रणालियों के अनुसार E-मितवग में श्वसन, संचार, पाचन, वृक्क और प्रजनन प्रणाली से जुड़ी कई मानव बीमारियों के विरुद्ध औषधीय गुण होते हैं। छोटे स्टार्च अनाज आयाम (1–3 माइक्रोन) इसे पाचन विकारों के खिलाफ प्रभावी बनाते है।

फसल की शुरुआती कोमल पत्तियों को निम्फुला क्रिसोनालिस वॉकर के लीफ–रोलिंग लार्वा कीटों से सुरक्षा की आवश्यकता होती है और साथ ही साथ रोपोलोसिफम निम्फीलिनिअस के रूप में पहचाने जाने वाले एफिड्स जो परजीवी अनुपात में फसल को नुकसान पहुंचा सकते हैं। डोनासिया प्रजाति द्वारा जड़ों

को भी भारी नुकसान होता है। एक थ्रिप्स फ्रेंकलिनिएला इंटोनसाट्राइबॉमते फूलों को नुकसान पहुंचाता है, जबकि बैगस विसिनसहस्टचे, एक घुन, फली में छेद कर के फलों को नष्ट कर देता है। सिंकैत्रियम एक फाइकोमाइसिटोयस कवक, इसकी परिपक्व पत्तियों पर फोड़ो को पैदा कर देताहै। टाइरफैगस पुट्रेसिएंटिया श्रैंक, एक घुन, संग्रहीत बीजों को नुकसान पहुंचाता है। दो बीटल, मेनोचिलससेक्स मैकुलाटा फेब्रियस और स्केमनस एसपी की पहचान आर निम्फिया की तितलियों और व्यस्को पर हमला करने वाले शिकारियों के रूप में की गयी है। कई अन्य कीट संघों की पहचान अभी तक नहीं हुई है। कश्मीर के समशीतोष्ण झीलों में ई–फेरॉक्स विलुप्त हो गया है और यूरेशिया के समकालीन वनस्पतियों में दुर्लभ हो गया है। उत्तर बि. हार के बाढ़ प्रभावित उत्तर–पूर्वी जिलों के प्रमुख हिस्सों में जलाशयों के तलो पर रेत भर जाने के कारण इस फसल का उन्मूलन हो गया है। ई–फेरॉक्स के बीजों के विभिन्न आहार घटकों की विस्तृत जांच इसके उचित पोषण महत्व का आकलन करने के लिए अत्यधिक जरुरी है। भोजन और चारा संभावनाओं के लिए जलीय निकायों पर आसन्न भविष्य की निर्भरता को देखते हुए यह अधिक प्रासंगिक हो जाता है।

मिथिला (उत्तर बिहार), भारत का भूगोल ऐसा है कि यहाँ अंतर्देशीय जल संसाधन प्रचुर मात्रा में है जो कि अल्पकालिक तालाबो से लेकर बड़े बारहमासी तालाबों, झीलों, जलाशयों और नदियों तक है। ये जल निकाय विविध जलीय पादपों की आबादी की विविधता में समृद्ध होते हैं। प्राचीन परिवार निम्फियासी, के सदस्य जो इस तरह के पानी में प्रचुर मात्रा में होते हैं, उनके पोषक, औषधीय, विकासवादी, पारिस्थितिक, नृवंश विज्ञान, आर्थिक और संरक्षण संबंधी प्रासंगिकता को देखते हुए उनपर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

यूरीले फेरॉक्स सैलिसबरी (स्थानीय नाम मखाना) मिथिला की मुख्य जलीय नकदी फसल है। यह प्राकृतिक रूप से ट्रैपा और कुछ नेलुम्बो और निम्फिया एस.पी.पी. जैसी व्यावसायिक फसलों के साथ उगती है। यह पूरी तरह से एक विकसित उद्योग का समर्थन करता है जो कि उत्तर बिहार के मछुआरों की आजीविका के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। मखाने के कच्चा या भुना हुआ खाद्य बीजों का व्यापार और निर्यात किया जाता है। इस जलीय फसल में उच्च पोषण मूल्य होते हैं और उपयुक्त जलाशयों में आसानी से और कम लागत में इसकी खेती की जाती है। यह भारत और दुनिया के अन्य भागों में भोजन के वैकल्पिक स्रोत के रूप में काम कर सकता है।

आकृति विज्ञान

हालांकि कहीं कहीं इसे एक बारहमासी जलीय जड़ी–बूटी के रूप में वर्णित किया जाता है, पर उत्तरी बिहार में खेती के क्रम में देखा गया है की यह एक लंबी मौसमी वार्षिक फसल है। यह पौधा तैरते हुए पत्तों वाली एक बड़ी, कांटेदार एकौलेसेंट, जलीय जड़ी बूटी है जो युवावस्था में तंत्रिकायुक्त और नीचे जालीदार होती है। यह पौधा खड़े उथले पानी (0.3–1.5 मीटर गहराई) में बढ़ता है और इसमें एक राइजोमेटस तना होता है। मोटी मांसल जड़ों के माध्यम से प्रकंद तलछट में गहराई से निहित रहते हैं। विशाल, कांटेदार, अण्डाकार या गोला. कार परिपक्व पत्तियाँ ढल्नुमा (0.3–1.2 मीटर व्यास) होती हैं। पत्तियाँ ऊपर हरी और नीचे लाल या बैंगनी रंग की होती हैं।

फल जून और अगस्त के बीच परिपक्व होते हैं और फट जाते हैं और गोलाकार बीज तालाब के तल पर गिर जाते हैं। पानी से बीजों के संग्रह में सुविधा प्रदान करने के करण अधिकांश पौधे सितंबर–अक्टूबर के दौरान हटा दिए जाते हैं। आमतौर पर, सर्दियों की शुरुआत के साथ, बचे हुए पौधों की प्राकृतिक मृत्यु और क्षय हो जाती है। दिसंबर के बाद से, तालाब के बिस्तर पर छोड़े गए बीज, या जो बाद में प्रसारित होते हैं, उनके अधोभुमिक अंकुरण शुरू होते हैं। मोटी रेशेदार जड़ों में आमतौर पर तीन से चार गुच्छे होते हैं, जिनमें से प्रत्येक में लगभग 17 जड़ें होते हैं। क्लस्टर एक के बाद लगभग 1 सप्ताह के अंतराल पर निकलते है। पत्ते भी निकलने में एक निश्चित क्रम का पालन करते हैं; शुरुआती पत्ते व्यसक पत्तों से काफी अलग होते हैं। पत्तियों का पहला सेट झिल्लीदार होता है, 9 सेंटीमीटर से 4 सेंटीमीटर के आयाम के लहरदार से भाले के आकर का और पृष्ठीय और उदर दोनों पक्षों में गहरी गुलाबी रंग का होता है। डंठल समान रूप से कोमल होते हैं जबकि पत्तों पर कोई कांटे नहीं होती है। दूसरा सेट लगभग 15 दिनों के बाद दिखाई देता है। घुमावदार पत्तियां धीरे धीरे अधिक गोलाकार आकार (1.5–2.0 सेंटीमीटर लंबाई)में विकसित होती हैं, जो की नीचे बैंगनी और ऊपर हरा रंग की होती है। वे 6

सेंटीमीटर लंबे होते हैं और जब पूरी तरह से खुल जाते हैं तो 15 से 14.5 सेंटीमीटर के आयाम की होते हैं। उनकी नसें धीरे–धीरे अधिक प्रमुख हो जाती हैं और रीढ़ विकसित हो जाती हैं। पत्तियां भी पहले सेट की तुलना में सख्त और अधिक कांटेदार हो जाते हैं। परिपक्व पत्ते, जो झुर्रीदार, गोलाकार और एक मामूली गडढ़े के साथ, एक पखवाड़े बाद दिखाई देना शुरू कर देते हैं। ये स्थायी पत्तियां क्रमशः 30–120 सेंटीमीटर और 25–110 सेंटीमीटर लंबाई और चौड़ाई में पाई जाती हैं। शिराएं उदर की तरफ अत्यधिक फूली हुई होती हैं और तेज कां. टेदार होती हैं जो पत्रनाल पर भी होती हैं। ई–फेरॉक्स में पत्तेदार कालक्रम को इसके अस्तित्व के लिए एक पारिस्थितिक अनुकूलन माना जाता है क्योंकि जड़ों के शुरुआती समूह मध्यम सतह की मामूली गड़बड़ी के बाद भी पकड़ खो सकते हैं। ई–फेरॉक्स 2.42 मीटर तक के व्यास के साथ विशाल पत्ते रखने के लिए प्रसिद्ध है। ये प्रतिद्वंद्वी यहां तक कि विक्टोरिया अमेज़ोनिका (पॉपिग) के पत्ते की सतह के आयाम में बोए गए हैं। फूल अप्रैल के दूसरे सप्ताह में शुरू होता है जब औसत हवा का तापमान 30 डिग्री सेल्सियस होता है और फोटोपेरियोड 12.60 घंटे होता है। अधिकांश फूल मई के पहले सप्ताह में दिखाई देते हैं जब हवा का तापमान 33 डिग्री सेल्सियस होता है और फोटोपेरियोड 13.15 घंटे होता है, सौर के साथ 243 कैलोरी सेंटीमीटर–2 दिन–1 सौर उर्जा उप. लब्ध रहती है। फूल एकान्त, जलमग्न और एपिगिनस होते हैं, जिसमें अंडाशय के स्तर से ऊपर टोरस पर चार लगातार कांटेदार सीपल्स डाले होते हैं, साथ में कई सेरिएत पंखुड़ियां होती हैं।

अधिकांश फूल क्लिस्टोगैमस होते हैं, लेकिन चैस्मोगैमस फूल भी पैदा हो सकते हैं। कैस्मोगामोउस फुल 2–3 दिनों के लिए पानी की सतह पर खुलते हैं, फिर पानी के नीचे तब तक डूबते रहते हैं जब तक कि फल पक न जाए और फिर पानी की सतह पर फिर से दिखाई देते है। क्लिस्टोगैमस फूल भी समान व्यवहार करते हैं, सिवाय इसके कि वे अपने बाह्यदल और पंखुड़ी नहीं खोलते हैं। क्लिस्टोगैमस फूलों का निषेचन पानी की सतह पर फूलों की कलियों के प्रकट होने से पहले होता है। भ्रूण का विकास क्लिस्टोगैमस फूलों में कस्मोगैमस की तुलना में अधिक उन्नत होता है। हालांकि, दोनों प्रकारों में बीज व्यवस्था समान रूप से संपूर्ण है। अवर बहुंडापी अंडाशय गूदेदार बेरी की तरह के फल में विकसित होता है जो घने कांटेदार, नारंगी के आकार का होता है, और इसमें 30–40 मटर के आकार के कठोर का लेकोट और एक म्यूसीजिनस एरिल वाले बीज होता है, गूदेदार एरिल के कारण बीज कुछ दिनों तक फलों के फटने से पहले तक तैरता रहता है। जो बाद में पानी की तल में बैठ जाता हैद्य फलों का फटना या तो कोष्ठक रूप से या सेप्टिसीडली होता है। आमतौर पर मई के मध्य में फल लगना शुरू हो जाता है और अगस्त–सितंबर तक जब तक पोंधो को तालाब से हटाया नही जाता होता रहता है। प्रत्येक पौधा औसतन 8 फल पैदा करता है जिसमे औसतन 30–40 बीज होते है। ई–फेरॉक्स के विकास क्रम को अक्टूबर–दिसंबर, जनवरी–मार्च, अप्रैल–जून और जुलाई–सितंबर से क्रमशः सीडिंग, अंकुर, भव्य विकास और कटाई चरणों के रूप में पहचाना जा सकता है, जिसमें जलवायु परिस्थितियों में भिन्नता के आधार पर कुछ अतिव्यापी होते हैं।

वितरण

इस प्रजाति का वितरण अब दक्षिण–पूर्व और पूर्वी एशिया के उष्ण कटिबंधीय और उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों तक सीमित है। जंगली रूप से यह दक्षिण में भारत और उत्तर में मंचूरिया में पाया जाता है। चीन में इसकी खेती है नान और ताइवान द्वीपों में 3–4 सहस्राब्दियों तक की गयी। इसके वितरण में ताइवान (फॉर्मोसा) के द्वीप, और जापान में क्यूसु शिकोकू और होंसु (ओकाडा) शामिल हैं। जापान की उत्तरी सीमा प्रशांत तट पर लगभग 38 डिग्री 30′N और जापान के समुद्री तट पर 37 डिग्री 55′N से मेल खाती है। हालाँकि अब इसे कर्मकांड के अनुसार शुभमाना जाता है, लेकिन इसका कोई उल्लेख वे दों (हिंदुओं की सबसे पुरानी धार्मिक पुस्तक, प्राचीन ज्ञान और दर्शन का भंडार, अवधि 2000–500 ईसा पूर्व) में नही मिलता है । मखाना शब्द दो संस्कृत शब्दों से बना है। – "मख" (अर्थ "यज्ञ", बलिदान, प्राचीन हिंदू अनुष्ठान आज भी प्रचलित धार्मिक सेवाओं के रूप में, मुख्य रूप से सांसारिक और साथ ही आध्यात्मिक प्राप्ति की पूर्ति के लिए किया जाता है) और "अन्ना" (अर्थात् अनाज) मखाना के संदर्भ केवल उत्तर–वैदिक संस्कृत (हिंदू) ग्रंथों में दिखाई देते हैं। यहां तक कि(वृहत्रयी पांचवीं और छठी शताब्दी की स्वदेशी आयुर्वेदिक प्रणाली के तीन शास्त्रीय ग्रंथ, अर्थात चरक, सुश्रुत और वगभट्ट संहिता, जिसमें जलीय सहित सैकड़ों औषधीय पौधों का वर्णन है)

में मखाना का कोई उल्लेख नहीं है। सोलहवीं शताब्दी के आयुर्वेदिक क्लासिक भवप्रकाश (रोगों के उपचार की पारंपरिक प्रणाली पर एक और प्राचीन ग्रंथ) मखाना के औषधीय गुणों के संदर्भ में संभवतः पहला संस्कृत का पाठ है । यह संभवतः भारत में मखाना की गैर–स्वदेशी उत्पत्ति का संकेत देता है।

पोलैंड के प्लीस्टोसिन के साथ–साथ स्कॉटलैंड के ओलिगोसीनसेजीवा श्म प्रजातियों की रिपोर्ट इस विश्वास की पुष्टि करती है कि ई.फेरॉक्स एक समशीतोष्ण पौधा है जिसे पक्षी फैलाव के माध्यम से दक्षिण–पूर्व एशिया में पेश किया गया है। भारत में भी,मखाना एक प्राचीन प्राकृतिक फसल के रूप में कश्मीर के समशीतोष्ण झीलों में उगता है। यह भारत के उष्णकटिबंधीय जलवायु के अनुकूल है उत्तर–पश्चिम भारत के विभिन्न हिस्सों (असम, मेघालय पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा और उड़ीसा) और मध्य और उत्तरी भारत के बिखरे हुए इलाकों में प्राकृतिक, जंगली रूपों में जैसे, गोरखपुर और अलवर में पाया जाता है। मिथिला (उत्तर बिहार)मखाने के वर्तमान अस्तित्व का प्रमुख क्षेत्र है जहाँ इसकी बड़े पैमाने पर दरभंगा, मधुबनी, समस्तीपुर और सहरसा जिलों में और आंशिक रूप से मुजफ्फरपुर, चंपारण और पूर्णिया जिलों में खेती की जाती है। यह नेपाल, बांग्लादेश, क्रे और उत्तरी अमेरिका के कुछ क्षेत्रों में भी उपजाया जाता है। इसके अलावा, यह मंचूरिया की झीलों में एक देशी पौधे के रूप में विकसित होने की सूचना मिली है।

मखाना की खेती

मखाना की खेती पर होने वाला खर्च बहुत मामूली होता है क्योंकि फसल के बाद बचे हुए बीज अगले सीजन के लिए फसल के रूप में अंकुरित हो जाते हैं; केवल एक ही खर्च अतिवृद्धि को पतला करने, विरल क्षेत्रों में रोपाई, कीटनाशकों और कटाई के दौरान तालाब के तल से बिखरे हुए बीजों के संग्रह में होता है। स्थानीय मछुआरे जो मछली पालते हैं, वे भीम खाने की खेती करते हैं और उनकी आजीविका संयुक्त खेती पर काफी हद तक निर्भर है। कुल उत्पादन औसत लगभग 1250–1500 किलो ग्राम? हेक्टेयर है जिसमें से सूखे खाद्य मखाना बीज लगभग 400–500 किलोग्राम/हेक्टेयर /वर्ष पर लगभग एक तिहाई होते हैंद्य भोजन के रूप में बिक्री के लिए तैयारी में बीज के कोट को फोड़ने के लिए गर्म रेत में बीजों को भूनना और खाने योग्य भुना हुआ, फूला हुआ, स्पंजी बीज निकलना शामिल है। यह उत्पादन, जो अन्य फसलों की खेती के लिए बर्बाद, जलयुक्त क्षेत्रों, में पाया जाता है,खनिजों और अन्य घटकों का एक अच्छा आहार पूरक देता है जोकि अगस्त–अक्टूबर के दौरान उपलब्ध होता है। जुलाई के दौरान दरभंगा के एक तालाब से इ–फेरोक्स का अधिकतम बायोमास 1701g\m^2 (ताजा वजन) प्राप्त किया। बायोमास उत्पादन पर तापमान का गहरा प्रभाव पड़ता है। जनवरी और जुलाई के बीच हर महीने ताजा वजन लगभग दोगुना हो जाता है। इन महीनों के दौरान ताजा और सूखे वजन का अनुपात 8:1 था।

मिथिला के वो तालाब भी मछली की खेती के लिए आदर्श जलाशय हैं, जिन्में मखाना की फसल होती है। मखाना के पौधे की फैली हुई पत्तियां पानी की सतह को ज्यादातर समय छायांकित रखती हैं और इससे पानी में ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है। पानी का निर्वाह–सांस लेने वाली मछली, *एग्लाबियो रोहिता है।*

मिल्टन (रोहू), *कैटला कैटला हैमिल्टन* (कटला) और सिरिन मृगला हैमिल्टन (मृगल), इस प्रकार प्रतिकूल रूप से प्रभावित होती हैं। इस सन्दर्भ में *हेतेरोप्नयूस्तेस फो. स्सिलिस* बलोच (सिंघी) और क्लारिअस बत्रचुस बलोच (मागुर) संयुक्त मखाना–मछली की खेती के लिए अच्छे विकल्प हैं। इन मछलियों के मिश्रित संस्कृति प्रयोगों ने *एनाबास टेस्टुडीनस* ब्लोच (कवाई) के साथ मिल. कर 7 महीनों में लगभग 1200 किलोग्राम/हेक्टेयर का सकल उत्पादन दिया, जिसमें केवल बहुत ही मध्यमपूर कआहार दिया गया था। दरभंगा के मखाना दलदलों से 200 किलोग्राम/ हेक्टेयर वर्ष का मछली उत्पादन दर्ज किया गया। इस प्रकार वायु–श्वास मछली के साथ एकीकृत जलीय कृषि के तहत सघन भोजन कार्यक्रमों से मछली की पैदावार में उल्लेखनीय वृद्धि किया जा सकता है।

तलछट, पानी और पौधों की विशेषताएं

ई–फेरॉक्स के पारिस्थिति का अध्ययन से पता चला है कि पौधे के हिस्सों की वृद्धि और अपघटन और खड़े पानी की गहराई का मिट्टी और पानी के गुणों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। फेरोक्स, एक जड़ तैरते मै क्रोफाइट के रूप में, निम्न परिस्थितियों अच्छी तरह से अनुकूलित है। तालाब की मिट्टी की पोषक स्थिति आसपास की कृषि योग्य मिट्टी की तुलना में बहुत अधिक होती है। बड़ी और फैली हुई वाली पत्तियों के करण बनी ऑक्सीजन की कमी वाली स्थितियां सूक्ष्म और वृहत पोषक तत्वों दोनों की उच्च उपलब्धता के लिए जिम्मेदार हैं। चूँकि बीज को छोड़कर बायोमास का कोई भी हिस्सा विकास और क्षय के चक्र से नहीं हटाया जाता है तो इस प्रणाली से वर्षों तक फसल की निरंतर उपज बनाए रखने के लिए एक गतिशील स्वदेशी उर्वरतापूर्ण स्थिति स्थापित हो जाती है। पिछली फसलों के पौधों के अवशेषों का अपघटन और खनिजकरण बाद की फसलों की भव्यवृद्धि प्रदान करता है और आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति करता है; कोई भी उर्वरक कभी बाहर से नहीं लगाया जाता है।

ए–फेरोक्स के बायोमास और विभिन्न मिट्टी और पानी के बीच सरल और सघन संबंधों की जांच की। पौधे तलछट और पानी दोनों के लगभग तटस्थ पीएच और लगभग 10 के तलछट C\N अनुपात में बढ़ताहै। हालांकि पानी के घटक के साथ पौधों की वृद्धि और बायोमास से अधिक निकटता से संबंधित होता हैं। उपज के लिए एक उच्च सह संबंध गुणांक बनाम अमोनिया इंगित करता है कि, धान नाइट्रेट की तुलना में नाइट्रोजन का उठाव मुख्य रूप से इस स्रोत से होता है। तापमान, पीएच और बाइकार्बोनेट आयन सांद्रता भी बायोमास उत्पादन में निकटता से संबंधित हैं।

पौधे की वृद्धि की भव्य अवधि (मार्च–जून) के दौरान Ca^{2+}, Mg^{2+}, NH_4^+ और k^+ एक बढ़ती हुई प्रवृत्ति दिखाते हैं, जबकि Na^+ क्षयचरण के दौरान बढ़ता है। मिट्टी में Na+ की इसी कमी के साथ फल और बीज का विकास जुदा हुआ होता है। इस प्रकार ई–फेरॉक्स एक सोडियम–प्रेमी फसल है और लो–सोडियम मिट्टी में भी उच्च सोडियम सामग्री जमा कर सकती है; शायद इस व्यवहार के कारण यह उच्च लवणयुक्त कैल्शियम युक्त सोडियम पाए जाने वाले मिट्टी के तालाबों में नहीं उगता है। मिट्टी में Fe, Mn, Zn और Cu की उच्च सामग्री होती है, जो पौधों के अवशेषों के निरंतर जलमग्न और खनिजकरण के कारण घटती स्थिति के कारण होती है। मिट्टी के घोल का Sodium Adsorption Ratio (SAR) पानी के अनुपात से तीन से चार गुना होता है। गर्मी के दौरान मिट्टी और पानी दोनों के लिए गिब्स मुक्त विनिमय ऊर्जा का उच्च नकारात्मक मूल्य होता है और यह कार्बनिक पदार्थों के अपघटन की पूर्णता के कारण पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता और सहजता को इंगित करता है।

पोषण का महत्व

मखाना बीज में खाद्य सामग्री पेरिस्पर्म (परिभ्रुन्पोश) में संग्रहीत होती है। बीज के खाद्य भागों में 12.8% नमी, 9.7% प्रोटीन, 0.1% वसा, 0.5% खनिज पदार्थ, 76. 9% कार्बोहाइड्रेट, 1.4 मिलीग्राम /100 ग्राम लोहा और कैरोटीन के होते हैं। कैलोरीफिक विश्लेषणों में कच्चे बीजों के लिए 362 किलोकैलोरी/100 ग्राम का मान और फूले हुए विपणन योग्य बीजों के लिए 328 किलो. कैलोरी/100 ग्राम पाया गया। इस प्रकार लावा बनाने के दौरान कैलोरी सामग्री में कमी होती है। कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, एस्कॉर्बिकएसिड और फिनोल की सामग्री के हिसाब से मखाना को बादाम, अखरोट, काजू और नारियल जैसे सूखे मेवों से बेहतर पाया गया।

मखाना में अधिकांश अनाज के सापेक्ष इसकी कम प्रतिशत अमीनो एसिड सूचकांक (ईएएआई)(10–12%) के बावजूद, कई पौधों और पशु–आधारित आहारों की तुलना में इसे पोषक रूप से बेहतर पाया गया है। कच्चे और लावा मखाने में आवश्यक अमीनोएसिड सूचकांक (ईएएआई)के हिस्से क्रमशः93% और 89% पाए गए। ये चावल (83%), गेहूं (65%), बंगाल अनाज (81.55%), सोयाबीन (85.6%), अमरनथ के मूल्य से अधिक हैं। (57.5%), मानव दूध (81.55%), गाय का दूध (88.8%), मछली (89.2%) और मटन (87.24%) से अधिक होता है। मखाना के बीज के आटे का उपयोग अरारोट के विकल्प के रूप में किया जाता है।

औषधीय गुण

ऐसा लगता है कि ई–फेरॉक्स ने भारत में आधुनिक दवा उद्योग का ध्यान आकर्षित नहीं किया है। इसके प्रतिष्ठित औषधीय गुण ने लुम्बोन्यूसी फेरागार्टन के साथ तुलनीय हैं। पुराने भारतीय और चीनी पद्धतियों में कई मानव बीमारियो श्वसन, संचार, पाचन, उत्सर्जन और प्रजनन प्रणाली के लिए इसके शक्तिशाली औषधीय गुणों के संकेत है। इसे पुराने साहित्य के अनुसार पौधे के सभी भागों में टॉनिक, कसैले और गैर–अवरोधक गुण हा. ते हैं; पॉल्यूरिया, शुक्राणु शोथ और गोनोरिया के उपचार के लिए अनुशंसित हैं। बीजों का उपयोग ज्यादातर पेट सम्बन्धी रोगों के लिए किया जाता है, आर्टिकुलर दर्द, पेशाब और वीर्यहानि के लिए आगे का उपचार में किया जाता है। इसकी कम वसा सामग्री के कारण, यह बीमारों के लिए एक आदर्श भोजन के रूप में कार्य करता है।

भारतीय चिकित्सा की पारंपरिक आयुर्वेदिक प्रणाली में मखाना को त्रिदोस (शरीर के तीन प्रमुख दोषों के आधार पर रोगों के निदान का मौलिक आयुर्वेदिक सिद्धांत), विशेष रूप से वात (आमवाती विकार) और पित्त (पित्त विकार) में लाभकारी माना जाता है। एक expectorant और इमेटिक के रूप में और एक हृदय उत्तेजक के रूप में कार्य करता है। हालांकि, अधिक मात्रा में कब्ज और पेट फूलने की स्थिति बन जाता है। यह महिलाओं को प्रसवोत्तर कमजोरियों को दूर करने में मदद करता है। बीजों और फूलों दोनों में कामोत्तेजक गुण होते हैं। पत्तियों में कोलीनक्लोराइड और डीओक्सीनुफेरिडीन हाइड्रोक्लोराइड (गोलेनिवेस्का–फुरमैन) जैसे एंटीमि. टोटिक यौगिक होते हैं। बीजों में उच्च मात्रा में विटा. मिन होते हैं और जिसे, बेरी–बेरी विटामिन बी की कमी के कारण होने वाली बीमारी के खिलाफ उपयोग किया जाता है।

कीटों का हमला और नियंत्राण

पौधे पर कई कीटों द्वारा हमला किया जाता है, जिनमें प्रमुख हैं एफिड्स, केसवॉर्म और रूटबोरर जो फसल को भारी नुकसान पहुंचा सकते हैं। सबसे पहले इस फसल पर हमला करने के लिए एफिड्स होते हैं। रोपालोसिफमनिम्फीलिनन का जनवरी–मार्च के दौरान झिल्लीदार पत्तियां पर पाया जाना आम हैं। भारी संक्रमण के क ।रण पत्तीओं का पिला पड़ना और पत्तीक्षय है। वयस्क और लार्वा दोनों ही पत्ती की उपरी सतह से कोशिका का रस चूसते है । फसल की अवधि का लगभग 25–30: *R-nymphaeae* द्वारा कब्जा कर लिया जाता है। पूर्वी हवाएं और बादल लगे हुए मौसम इनकी आबादी को बढ़ाते है, हालांकि, बढ़ते तापमान से एफिड आबादी में गिरावट आती है।

इस खतरे को नियंत्रित करने के आधुनिक तरीकों में Imidacloprid (0.5 ml/L)जैसे कीटनाशक का स्प्रे शामिल हैं। एफिड से क्षति 80–90% तक हो सकती है। *Menochilussex maculate* फेब्रिकियस और *Scymnus sp* को हाल ही में मखाना एफिड पर शिकारियों के रूप में पहचाना गया है। ये दोनों भृंग लगभग 20 दिनों के संक्रमण के बाद *R-numohaeae* की लार्वों पर हमला करते हैं। एक दिन में *Scymnus sp-* का एक xzc 60–70 एफिड्स को मारता है। ई–फेरॉक्स के पत्तों पर बीटल की आबादी को बढ़ाना और वैकल्पिक मेजबानों जैसे कि निम्फोइड्स हाइड्रोफिला (लॉर।) ओ–कुंट्ज़, *ईकोर्निया क्रैसिप्स* (मार्ट,) सोलम्स, *पिस्टिया स्ट्रेटियोटेल।*, *लैम्ना मिनरल।*, और *आईपोमिया एकीटीका* उन्मूलन एफिड इन्फेस्टेशन की तीव्रता को कम कर सकता है।

मार्च–मई के दौरान अपरिपक्व मखाने के पत्तों का संक्रमण एक सामान्य घटना है। लार्वाकीट, शुरुआती पत्तियों के ब्लेड खाने के अलावा, पत्ती के एक हिस्से को 'लीफरोलरकेसवर्म') के रूप में काटता है और रोल कर अपना आश्रय बना लेता है। हालांकि, बड़े ब्लेड वाली परिपक्व पत्तियों पर लार्वा के मामले नहीं देखे जाते हैं; यह केवल परिपक्व पत्तियों के शुरुआती से टहैंजो कीट की चपेट में होते हैं। इस कीट की पहचान लेपिडोप्टेरा के निम्फुला क्रिसोनालिस वॉकर के रूप में की गई और जलीय जड़ी–बूटी, निम्फोइड्स हाइड्रोफिला, इसके एक वैकल्पिक मेजबानों में से है । यह पौधा तालाब के किनारे उगता है और इसकी पतली पत्तियां जिसमें ई. फेरॉक्स की तरह सख्त बनावट नहीं होती है, कीट को वैकल्पिक आश्रय प्रदान करने के लिए उपयुक्त हैं।

मार्च–अप्रैल के दौरान डोनासिया प्रजाति का भूरा प्यूपा प्रकंद की परिपक्व रेशेदार जड़ों से मजबूती से जुड़े पाए जाते हैं। ये प्यूपा फसल को लगभग पूरी तरह से खत्म करने में सक्षम होते हैं। डूबे हुए जड़ों और तनों पर स्थित डोनासिया लार्वा छेदों को कुतरते हैं; अपने विशेष रूप से संशोधित मुंह के हिस्सों का उपयोग कर के तनों और जड़ों को कुतरते है और उनका रस निकालें लेते है। लार्वा प्यूपा में बदल जाता है जो जड़ों से जुड़े कठिन कोकून में संलग्न हो जाते हैं। वे लंबे, उप–बेलनाकार, छोटे, झुके हुए वक्षीय पैरों वाले सफेद जीव होते हैं। पेट में स्पिनस प्रक्रियाएं होती है जो पौधे के ऊतकों को छिद्रित करने और श्वसन के लिए अपने दुम के छोर को वायुस्थानों में डालने के लिए कीट को सक्षम करती है। इसके वयस्क ई.फेरॉक्स के फूल पर अक्सर आते है और निम्फाइड्स पर परागणकों के रूप में इनका एक लंबा इतिहास है।

फ्रैंकलीएलाइंटोन साट्राइबॉम के वयस्कों और लार्वो को अप्रैल के बाद से फूलों के हिस्सों को नुकसान पहुंचाते हुए देखा गया था। थ्रिप्स को आश्रय प्रदान करने वाली पंखुड़ियां विकृत और फीकी पड़ जाती हैं, जिससे अंत में फली का आकार कम हो जाता है। बैगसविसिनस हस्टचे, एक घुन फलों में छेद पैदा कर के फलों को नुकसान पहुंचाते हुए पाया गया। गैलेरुसेला बिरमानिका जैकब के ग्रब और वयस्क परिपक्व पत्तियों, पेटीओल्स और फलों के हिस्सों पर देर से मार्च से जून की शुरुआत तक उन्हें खाते रहते है। मई के दौरान ग्रब अधिक विनाशकारी पाए गये।

संरक्षण

देर से ही सही, जलीय पौधों के संसाधनों के संरक्षण सहित निम्फाइड्स के संरक्षण ने दुनियाभर के वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित किया है। जापान में ई–फेरॉक्स की आबादी के बारे में काफी चिंता व्यक्त की जा रही है जहां बढ़ती यूट्रोफिकेशन और सुधार पानी की कमी और कभी–कभी पूरी तरह से गायब हो गई है। भारतीय जलीय पारिस्थितिक तंत्र में पौधों के संसाधनों के संरक्षण की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

हिमालयी वनस्पतियों के बड़े पैमाने पर अना. च्छादन के कारण मिथिला (छवतजी ठपींत) में बार–बार बाढ़ आ रही है। इन पर्वत श्रृंखलाओं से निकलने वाली नदियों में बड़ी मात्रा में रेत और मो. टे गाद होते हैं, बार–बार अपना मार्ग बदलते हैं और इस क्षेत्र में बार–बार बाढ़ का कारण बनते हैं, जिससे अधिकांश भाग भर जाते हैं। उत्तरी बिहार के पूर्वी जिलों के कुछ क्षेत्र, जो बिहार का शोक कोशी और गंगा की

सहायक नदियों में अप्रत्याशित रूप से आये बाढ़ की तबाही के कारण यूरीएल, नेलुम्बो एनबाइम्फिया और दुसरे जलीय पोधों का का उन्मूलन हो चुका है। पिछले कुछ समय से कीटनाशकों का अत्यधिक प्रयोग जलीय खाद्य श्रृंखला में घूस कर उनकी स्थानीय मछली के समुदाय को बुरी तरह प्रभावित किया है। उत्तर बिहार में बड़े उद्योगों की कमी ने फसल को इसके अस्तित्व के लिए एक अतिरिक्त खतरा बना दिया है लेकिन आने वाले वर्षों में यह समस्या समाप्त हो जायेगी। औद्योगिक प्रदूषकों के प्रभाव और प्रजातियों की सुपोषण के खिलाफ सहनशीलता अभी तक अध्ययन नहीं हुई है। ईकोर्निया क्रैसिप्स और साल्विनिया मोलेस्टा मिशेल जैसे विदेशी खरपतवारों की प्रसार ने मखाने की वृद्धि और खेती के लिए एक गंभीर समस्या है।

पाम ऑयल की खेती में पलवार का महत्त्व

अनीता पेडपेटी एवं एन. वी. गणेश

भा.कृ.अनु.प.– भारतीय तेल ताड़ अनुसंधान संस्थान, पेदावेगी,
पश्चिम गोदावरी, आंध्र प्रदेश

ताड़ के पौधे में पलवार करने से मिट्टी की सतह से पानी की कमी को कम करके मिट्टी की नमी को संरक्षित करने में मदद मिलती है, मिट्टी के पोषक तत्वों की स्थिति में वृद्धि होती है, कटाव के नुकसान में नियंत्रण रहता है, खरपतवार की वृद्धि कम होती है और कीटनाशकों, उर्वरकों और भारी धातुओं के अवशिष्ट प्रभाव दूर होते हैं। इससे मध्यम मिट्टी का तापमान ठंडी रातों में मिट्टी को गर्म और गर्म दिनों में ठंडा रखता है। सबसे संतोषजनक पलवार सामग्री खाली फलों के गुच्छे होते हैं। वैकल्पिक रूप से, चूरा, ताड़ का खोल, मूंगफली की भूसी या अन्य रेशेदार सामग्री का उपयोग भी किया जा सकता है। छँटे हुए पत्तों को छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर पलवार सामग्री के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है, इस अभ्यास से मिट्टी की जैविक सामग्री में वृद्धि होती है और साथ ही यह मिट्टी की नाइट्रोजन सामग्री को बचाता है, मिट्टी की संरचना में सुधार करता है और कटाव को कम करता है।

नमी के संरक्षण के लिए माध्यमिक नर्सरी चरण में ऑइल पॉम शेल्स, ऑइल पॉम फ्रूट फाइबर, डिकैन्टर स्लज, पोम स्लज, कटा हुआ ऑयल पॉम लीफ मटीरियल, चावल की भूसी, सॉ डस्ट, नारियल का गूदा, मूंगफली की भूसी, सूखी घास आदि के साथ मल्चिंग की जा सकती है। बैगों में खरपतवार की वृद्धि और मिट्टी के संघनन को रोकने के लिए गीली घास की मोटाई कम से कम एक इंच होनी चाहिए। पानी की कमी वाले क्षेत्रों में यह एक अनिवार्य अभ्यास होना चाहिए क्योंकि यह बहुत सारा पानी बचाता है। यह पौध की वृद्धि में उल्लेखनीय रूप से सुधार करता है और नर्सरी में गीले पौधे बेहतर ढंग से विकसित होते हैं।

पुराने ताड़ के सूखे और ताजे पत्ते खाली फलों के गुच्छों (ईएफबी) के साथ पलवार एक सस्ता उपाय है, क्योंकि कोई परिवहन लागत नहीं लगती, और अपरिपक्व अवधि के दौरान मामूली बेहतर वनस्पति विकास होता है। तेल ताड़ के बागान में खाली गुच्छों, नर पुष्पक्रम, नारियल की भूसी, गन्ने के कचरे को मल्चिंग सामग्री के रूप में भी इस्तेमाल किया जा सकता है। प्रत्येक एक टन ताजे फलों के गुच्छे लगभग 220 किलोग्राम खाली फलों के गुच्छे होने की संभावनाएं होती है। फलों के गुच्छे पोटैशियम से भरपूर होते हैं। प्रसंस्करण मिलों में तेल निष्कर्षण के दौरान फलों को अलग करने के बाद ईएफबी के अनुचित प्रबंधन से पर्यावरणीय समस्याएं पैदा

होंगी। इसलिए, ईएफबी के प्रबंधन के लिए पर्यावरण के अनुकूल दृष्टिकोण की आवश्यकता है। EFB का व्यापक रूप से वृक्षारोपण में पलवार सामग्री के रूप में उपयोग किया जाता है, यह मिट्टी को पोषक तत्व और नमी प्रदान करता है। ईएफबी अनुप्रयोग मिट्टी की संरचना में भी सुधार कर सकता है, जिससे बेहतर वातन, जल धारण क्षमता में वृद्धि और मिट्टी के पीएच में वृद्धि हो सकती है। इसलिए, मिट्टी के गुणों में सुधार के लिए मल्चिंग के रूप में ईएफबी के उपयोग की अत्यधिक अनुशंसा की जाती है। यह दृष्टिकोण ईएफबी के लिए डंपिंग क्षेत्र को कम करने में मदद करता है। पर्यावरण प्रदूषण को कम करने के अलावा, ईएफबी का उपयोग अन्य जैविक सामग्री–आधारित उत्पाद जैसे तेल पाम नर्सरी के लिए रोपण माध्यम, नए रोपण क्षेत्र में पलवार और यहां तक कि जैविक उर्वरकों के रूप में भी किया जा सकता है।

इसके अलावा, पाम ऑयल प्लांटेशन में मल्चिंग मिट्टी की धुलाई को रोकता है एवं कटाव और पोषक तत्वों की हानि को कम करता है और इतना ही नहीं यह मिट्टी के तापमान को नियंत्रित भी करता है। मल्चिंग की तकनीक आमतौर पर मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों को बढ़ाने, मिट्टी की रक्षा करने और गहन खेतों और जैविक खेती दोनों में खेती की तकनीक के रूप में उपयोग की जाती है।

झारखण्ड में मशरुम की खेती की संभावनायें एवं उन्नत उत्पादन तकनीक

अजित कुमार झा, वीरेंद्र कुमार यादव, प्रेरणा नाथ, विकाश कुमार एवं अरुण कुमार सिंह

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर – कृषि प्रणाली का पहाड़ी एवं पठारी अनुसंधान केंद्र, राँची (झारखंड)

परिचय

मशरूम एक पौष्टिक आहार है। इसमें एमीनो एसिड, खनिज, लवण, विटामिन जैसे पौष्टिक तत्व होते हैं। मशरूम हृदय और मधुमेह के मरीजों के लिए एक दवा की तरह काम करता है। मशरूम में फॉलिक एसिड और लावणिक तत्व पाए जाते हैं,जो खून में रेड सेल्स बनाते हैं। मशरुम रोगों के प्रति सहनशीलता बढ़ाता है यह प्रोटीन का अच्छा स्रोत है। पहले मशरूम का सेवन विश्व के चुनिन्दा देशों तक सीमित था, पर अब आम आदमी की रसोई में भी इसने अपनी जगह बना ली है। भारत में उगने वाले मशरूम की दो सर्वाधिक प्रसिद्ध प्रजातियां सफेद बटन मशरूम और ऑयस्टर मशरूम है। हमारे देश में होने वाले सफेद बटन मशरूम का ज्यादातर उत्पादन मौसमी है। इसकी खेती परम्परागत तरीके से की जाती है।

मशरूम का उत्पादन ग्रामीण युवाओं के लिए एक अच्छा व्यवसाय साबित हो रहा है। मशरूम सेहत का रखवाला है, इसलिए मांग बढ़ रही है, पर आपूर्ति उतनी नहीं हो रही है। वर्तमान में भारत में प्रतिवर्ष 2,42,087 मीट्रिक टन मशरूम का उत्पादन हो रहा है। इनमें से, झारखण्ड राज्य में सालाना लगभग 7,050 मीट्रिक टन मशरूम का उत्पादन किया जा रहा है (एन एच बी, 2020–21)।

झारखण्ड में सस्ते एवं आसानी से उपलब्ध सब्सट्रेट के चलते मशरुम की खेती की काफी संभावनायें है। मशरुम की खेती से किसानों का आर्थिक स्तर सुधारा जा सकता है। किसानों की आमदनी दुगुना करने में इसकी खेती सहायक सिद्ध हो रही है। मशरुम से गाँवों में कुपोषण दूर किया जा सकता है।

मशरुम की खेती हेतु जमीन की आवश्यकता नही होती है, अतः भूमिहीन किसान भी इसकी खेती आसानी से कर सकते हैं। मशरुम की खेती बेरोजगार युवक युवतियां लघुस्तरीय उद्योग के रूप में अपना सकते हैं तथा इस से अच्छी आमदनी प्राप्त कर सकते हैं। मशरूम की खेती एक सकारात्मक वरदान हो सकती है। मशरूम की खेती में किसानों की आय को पूरक करने और टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देने में मदद करने की क्षमता है। मशरूम कचरे को संभावित मूल्यवान संसाधनों में परिवर्तित करते हैं।

मशरुम में विद्यमान पोषक गुणों एवं इसके उत्पादन में कृषि अवशेषों की उपयोगिता के कारण इसका उत्पादन विगत 10 वर्षों में कई गुना बढ़ गया है।

तालिका संख्या 1 : मशरुम के पौष्टिक गुण

मशरुम	पौष्टिक पदार्थ						
	प्रोटीन %	वसा %	कार्बोहाइड्रेड %	ऊर्जा %	खनिज %	रेशा %	पानी %
बटन मशरुम	28.1	8.9	59.4	353	9.4	8.3	90.4
पैडी स्ट्रा मशरुम	29.5	5.7	60.0	374	9.8	10.4	88.0
दूधिया मशरुम	17.7	4.1	64.3	360	7.4	3.4	86.0
ढींगरी मशरुम	30.4	2.2	57.6	345	9.8	8.7	90.8

(संदर्भः भारत में मशरुम उत्पादन। तकनीकी बुलेटिन– कृषि विज्ञानं केंद्र, राष्ट्रीय बागवानी अनुसंधान एवं विकाश प्रतिष्ठान, नई दिल्ली, 2018)

झारखंड में खेती योग्य मशरुम के प्रभेद

1. ढींगरी (ऑयस्टर) मशरुम

भारत में यह मशरुम उत्पादन की दृष्टि से दूसरे स्थान पर है जबकि झारखण्ड में सबसे अधिक **ढींगरी** मशरुम की खेती की जाती है। यह मशरुम उगाने में सरल एवं वर्ष के दो महीने (मई –जून) छोड़कर बाकी दस महीने झारखंड में आसानी से उगाया जा सकता है। इसके खेती हेतु 20 से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है जो इन महीनों में उपलब्ध रहता है। इस मशरुम की जैविक दक्षता 60 से 90% तक होती है।

चित्र : ऑयस्टर मशरुम

भारत में ढींगरी मशरूम की कई प्रजातियां पाई जाती है जो कि अलग–अलग तापमान पर उगाने के लिए उपयुक्त हैं जिसका विवरण नीचे दिया गया है:

क्र. सं.	ढींगरी मशरूम की प्रजातियां	अनुकूलतम तापमान
1	प्लयूरोटस इरेन्जी (*P- eryngii*)	15–18^{0}C
2	प्लयूरोटस ऑस्ट्रेटस (*P- ostreatus*)	18–24^{0}C
3	प्लयूरोटस सिट्रिनोपिलेटस (*P- citrinopileatus*)	22–27^{0}C
4	प्लयूरोटस सजोर काजू (*P- sajorcaju*)	24–28^{0}C
5	प्लयूरोटस जामोर (*P- djamor*)	26–32^{0}C

2 बटन मशरुम

चित्र : बटन मशरुम

हमारे भारत में बटन मशरुम का उत्पादन अन्य मशरूमों की अपेक्षा अधिक होता है लेकिन झारखण्ड में ऑयस्टर के बाद उत्पादन में दूसरे स्थान पर है। बटन मशरुम की खेती कम्पोस्ट पर नियंत्रित वातावरण में या प्राकृतिक समय में अक्टूबर से फरवरी तक की जा सकती है। बटन मशरुम में फलन हेतु 15 से 18 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान की आवश्यकता होती है।

3. दुग्ध छत्ता (दूधिया) मशरुम

यह मशरुम गेहूं की भूसी या धान की कुट्टी पर ढिंगरी मशरुम की तरह पॉलिथीन की थैलियों में या रैक्स पर आसानी से उगाया जा सकता है लेकिन इसमें मृदा आवरण की आवश्यकता होती है। इसके लिए 25 से 38 डिग्री सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है जो झारखण्ड में अप्रैल से जून के महीनों में उपलब्ध रहता है। इस मशरुम का रंग दूधिया सफेद एवं स्टॉक लम्बी तथा रेशा युक्त होती है। इस मशरुम की विशेषता यह है कि अच्छी गुणवत्ता में अधिक समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

चित्र : दूधिया मशरुम

4. पैडी स्ट्रा मशरुम

यह मशरुम 25 से 35 डिग्री सेल्सियस तापमान पर आसानी से उगाया जा सकता है। वर्तमान में इसकी सर्वाधिक खेती ओडिसा में होती है। इसका स्वाद खाने में उत्तम होता है। इस मशरुम की तुड़ाई अण्डाकार अवस्था में छतरी खुलने से पहले की जानी चाहिए।

चित्र : पैडी स्ट्रा मशरुम

5. ब्लैक इयर (ऑरिक्युलरिया)

इस मशरुम को कनचपड़ा मशरुम भी कहा जाता है यह लकड़ी के बुरादे या गेहूँ के भूसे पर आसानी से उगाया जाता है। इसके लिए तापमान 22 –28 डिग्री सेल्सियस तथा 90% से ज्यादा नमी की जरुरत पड़ती है।

ऑयस्टर (ढींगरी) मशरुम का उत्पादन तक्नीक

चूँकि झारखण्ड में ढींगरी मशरूम की खेती अधिक की जाती है अतः इसकी खेती की चर्चा विस्तार से किया जा रहा है । ढींगरी मशरूम की खेती मध्य जून से अगले वर्ष मध्य अप्रैल के बीच 20–30 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान एवं 80–85 प्रतिशत सापेक्षिक आर्द्रता पर की जाती है। ढींगरी मशरूम के उत्पादन को तीन प्रमुख चरणों में बांटा जा सकता है।

1. ढींगरी मशरूम का बीज (स्पॉन) तैयार करना
2. ढींगरी मशरूम उगाने की विधि
3. ढींगरी मशरूम का विपणन एवं प्रसंस्करण

1 ढींगरी मशरूम का बीज (स्पॉन) तैयार करना–:

इसे प्रयोगशाला में जीवाणु मुक्त वातावरण में तैयार किया जाता है। इसमें मशरूम की प्रजातियों की शुद्धता एवं गुणवत्ता को ध्यान में रखा जाता है। मशरूम स्पॉन तैयार करने में विभिन्न उपकरणों इत्यादि खरीदने के लिए पूँजी की आवश्यकता होती है। अतः किसान भाइयों को सलाह दी जाती है कि मशरूम बीज किसी प्रमाणित प्रयोगशाला से खरीद सकते हैं।

अच्छे बीज (स्पॉन) की विशेषताएं–:

- गेहूं पर बनाया हुआ बीज अच्छा माना जाता है।
- बीज के थैले में कवक के जाले का फैलाव रेशम के धागे की तरह होनी चाहिए, रूई की तरह नहीं।
- बीज के थैले में किसी तरह का काला, पीला, हरा, गुलाबी, धब्बा नहीं होना चाहिए।
- बीज से बदबू नहीं आनी चाहिए।
- ताजा बनाया हुआ बीज प्रयोग में लाना चाहिए।

चित्र : तैयार मशरूम का बीज (स्पॉन)

2. ढींगरी मशरूम उगाने की विधि

ढींगरी मशरूम की खेती कमरे अथवा छप्पर के अंदर आसानी से की जा सकती है। पोषाधार के लिए सेल्युलोज युक्त पदार्थ जैसे धान, गेहूँ, जौ, बाज़रा, मक्का आदि किसी एक का भूसा, गन्ने की खोई, सेम. वर्गीय फसलों की सूखी डंठले आदि उपयोग में लाया जा सकता है। अनाजों के भूसे को सर्वश्रेठ माध्यम माना जाता है। धान की कुट्टी (पुआल के 2–3 सेंटीमीटर कटे टुकड़े) को स्वच्छ पानी में लगभग 12 घंटो तक डुबोकर रखा जाता है। इस कार्य के लिए किसी बर्तन एवं नाद उपयोग में लाया जा सकता है।

पाश्चुरीकरण (निर्जीवीकरण) दो विधियों से किया जा सक्ता है :

i. गर्म पानी उपचार विधि

इस विधि से पाश्चुरीकरण (निर्जीवीकरण) के लिए कुट्टी को उबलते हुए पानी में डालकर 45 –60 मिनट तक गरम करें। पुनः कुट्टी से अतरिक्त पानी निकालकर साफ़ फर्श पर तार की जाली या पॉलीथीन

बिछाकर कुट्टी को फैला दें एवं 65 % नमी रहने पर बीजाई करें।

ii. **रसायनिक विधि**

अगर पानी उबालने में कोई कठिनाई हो तो भूसे या कुट्टी को फफूंदनाशी बॉविस्टीन या फॉर्मलीन की सहायता से भी उपचारित कर रोगाणु मुक्त किया जा सकता है। इसके लिए 10 ग्राम बॉविस्टीन और 50 से 100 मिली फॉर्मलीन को 100 लीटर पानी में डालकर भूसे या कुट्टी को रात भर 12 घंटों के लिए डुबोयें। इस प्रकार उपचारित भूसे या कुट्टी में मशरूम फैलने में 25 से 30 दिन का समय लगता है और बीज की मात्रा भी अधिक लगती है।

बीजाई करना–:

उपर्युक्त बताई गई किसी एक विधि के माध्यम (भूसा या कुट्टी) उपचारित कर 4–5% (40 से 50 ग्राम बीज प्रति किलो गीला भूसा) की दर से मशरूम का बीज गीले भूसे में 45x60 से.मी. आकार की पॉली प्रोपेलीन थैलियों में क्रमशः चार परतो में भरते हैं। यदि तापमान कम हो तो बीज की मात्रा 15 से 25% तक बढ़ा दें। पहले सतह 10 सेंमी. मोटाई तक भरते हैं। पहले सतह पर मशरूम बीज को बाहर की ओर अधिक मात्रा में फैलाते हैं तथा इसके बाद पुनः दूसरी सतह 10 सें मी. तक भरते हैं एवं बीज को फिर सतह पर फैलाते हैं इस क्रिया को चार बार करने के पश्चात थैलियों को दबा कर मुंह बांध दें।

पुनः मुंह बंधे थैलों को 7 से 10 सेंमी. की दूरी पर एक–एक सेंमी. मोटे आकार का छिद्र करें। आवश्यकतानुसार छोटी या बड़ी थैलियों का प्रयोग किया जा सकता है। इन थैलियों को एक अंधेरे कमरे में (स्पॉनिंग कक्ष) रैक पर रख दिया जाता है। कमरे का तापमान लगभग 20–25°C के आस पास तथा आर्द्रता 80–85% बनाए रखें। लगभग 15–20 दिनों के भीतर पूरा बैग सफेद कवक जाल से आच्छादित हो जाता है तथा कुट्टी के टुकड़े आपस में चिपक जाते हैं। कवक जाल पूर्ण रूप से फैल जाने पर पॉलिथीन को हटा देना चाहिए। नमी बनाए रखने के लिए दो तीन बार स्प्रेयर से पानी का छिड़काव करना चाहिए ताकि आर्द्रता 80 से 90 प्रतिशत बनी रहे।

पॉलिथीन हटाने के बाद मशरूम निकलने के लिए हल्की रोशनी एवं ताजी हवा की व्यवस्था करनी चाहिए तथा जरूरत पड़ने पर 3–4 घंटे ट्यूब लाइट जलाना चाहिए। पॉलिथीन हटाए बिना भी इस मशरूम का उत्पादन किया जा सकता है। पॉलिथीन हटने के लगभग 6–7 दिनों बाद थैलियों से सीपी नुमा मशरूम निकलने लगते हैं। पुरी तरह तैयार होने पर उनके किनारे भीतर की ओर मुड़ने या फटने लगते हैं। इस अवस्था में उन डंठलो को ऐंठ या मरोड़ कर तोड़ लें।

पहले तुड़ाई के बाद भी पानी का छिड़काव करते रहना चाहिए ताकि 8 से 10 दिनों के अंतराल पर मशरूम की दूसरी एवं तीसरी फसल ली जा सके। इस तरह लग. भग दो महीनों में तीन बार मशरूम की फलन ले सकते

चित्र : बीजाई करना

हैं। सामान्यतः एक किग्रा सूखे भूसे या कुट्टी से लगभग 0.8–1.0 किलो ग्राम ताजा मशरूम मिल सकता है। इस प्रकार इस पर लगभग 40–45 रू. प्रति किलोग्राम खर्च आता है तथा इसे 100–120 रुपए प्रति किलोग्राम की दर से बेचा जा सकता है।

ढींगरी मशरूम उत्पादन की खेती से आमदनी (100.0 किलो सूखे धानकुट्टी)

सामग्री	मात्रा	दर (रुपया)	कुल खर्च (रुपया)
धान का कुट्टी	100 किलो	10.0/ किलो	1000.00
मशरूम का बीज (स्पॉन)	15 किलो	120 / किलो	1800.00
पॉली प्रोपेलीन बैग	1.5 किलो	250/ किलो	375.00
फॉर्मलीन, बॉविस्टीन एवं अन्य	––	500.00	500.00
कुल खर्च	–	–	3675.00
कुल आमदनी	80.0 किलो	100 / किलो	8000.0
शुद्ध आमदनी			4325.00

इस प्रकार प्रति 1.0 किलो सूखे धान कुट्टी से बने बैग से शुद्ध आमदनी रुपया 43.25 प्रति बैग प्राप्त किया जा सकता है।

2. मशरूम का परिरक्षण एवं विपणन–:

शुष्कण–:

शुष्कण द्वारा जल का निष्कासन किया जाता है। सुखाने की कृत्रिम विधि को निर्जलीकरण कहते हैं। ग्रीष्म ऋतु में धूप में सुखाना अपेक्षाकृत कम खर्चीला होता है। धूप में मशरूम एक साफ सफेद कपड़े या प्लास्टिक की चादर पर फैलाकर रख दिया जाता है तथा इसे तब तक सुखाया जाता है जब तक मशरूम सूखकर कुरकुरे ना हो जाएं। इन सूखी मशरूम को उपयोग में लाने से पहले 10–15 मिनटों तक गुनगुने पानी में भिंगो लिया जाता है। खुंभ को यांत्रिक विधि (बिजली के शुष्कन यंत्र) से 60–70°C पर सुखाया जाता है। मशरूम को सौर ड्रायर का उपयोग करके सुखाया जा सकता है और 4–6 महीनों के लिए संग्रहीत किया जा सकता है।

रसायन में भिगोकर परिरक्षण

मशरूम को खराब होने से बचाने के लिए साधारण नमक (2.5–3.0%), एस्कॉर्बिक एसिड (0.1%) एवं सोडियम मेटाबाईसल्फेट (0.1%) के घोल में रखा जाता है। मशरूम पुर्णतया शाकाहारी भोजन है। इसमें उच्च को. टि के प्रोटीन, रेशे, आवश्यक विटामिन तथा खनिज लवण पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। अन्य फलों एवं सब्जियों की भांति मशरूम से भी तरह–तरह के स्वादिष्ट व्यंजन बनाए जा सकते हैं। मशरूम से बनाए जाने वाले व्यंजन में मुख्य रूप से मशरूम का अचार, मशरूम सूप, मशरूम बिस्कुट, मशरूम केक, मशरूम पकौड़ा, मशरूम चटनी इत्यादि प्रमुख हैं।

फल और सब्ज़ियों का निर्जलीकरण: ग्रामीण आजीविका का उत्तम अवसर

प्रेरणा नाथ[1], एस. जे. काले[2] एवं अरुण कुमार सिंह[1]

[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर – कृषि प्रणाली का पहाड़ी एवं पठारी अनुसंधान केंद्र, राँची (झारखंड)
[2]भारतीय प्राकृतिक राल एवं गोंद संस्थान, रांची (झारखंड)

परिचय

आज जहाँ नई–नई समस्याएँ हमें चुनौती दे रही है उसमें से एक बड़ी समस्या का नाम है कोविड–19 है, जिसने सारी अर्थव्यवस्था को तहस–नहस कर दिया है। इस संकट की घड़ी में संपूर्ण विश्व कोरोना वैश्विक महामारी से गुज़र रह है जिसके कारण किसान भाई एवं बहनें और अन्य ग्रामीण महिलाओं को बहुत नुकसान हो रहा है। लगभग सभी ग्रामीण महिलाएँ घर पर है और उनकी आमदनी न के बराबर है, ऐसी स्थिति में वह घरेलू एवं लघु स्तर पर फल और सब्ज़ियों का प्रसंस्करण करके अपनी आमदनी को बढ़ा सकती है अथवा अपने और अपने परिवार का पालन पोषण कर सकती हैं।

फल और सब्ज़ियाँ हमारे दैनिक जीवन के आवश्यक अंग हैं। ताज़े फलों को रक्षात्मक आहार माना गया है। भारत में हर प्रकार के फलों का उत्पादन होता है क्यों कि हमारे देश में अलग–अलग क्षेत्रों की जलवायु इनके अनुकूल है। फल हमारे शरीर में विटामिन तथा खनिज तत्वों की आवश्यकता को पूरा करते हैं, परंतु इनको तोड़ने के बाद इन मे श्वसन तथा वष्पोत्सर्जन क्रिया होती रहती है जिसके कारण ये तुड़ाई के बाद ज़्यादा समय तक ताजी अवस्था में नहीं रह सकते तथा शीघ्र ही समुचित व्यवस्था न होने के कारण सड़ने–गलने लगते हैं और नष्ट हो जाते हैं। इन्हें नष्ट होने से बचाने के लिए तुड़ाई के बाद इनकी देख रेख आवश्यक है। साथ ही यह भी ज़रूरी है कि जिस मौसम में जब पैदावार बहुत अधिक हो तो किसानों को उन्हें मजबूरन सस्ता न बेचना पड़े। हमारे देश में पैदा होने वाले लगभग 303 मिलियन मैट्रिक टन फलों और सब्जियों का लगभग 6–18 प्रतिशत भाग कटाई और तुड़ाई के बाद उपभोक्ता तक पहुँचते–पहुँचते नष्ट हो जाता है जिसका प्रभाव किसानों और उपभोक्ताओं पर पड़ता है और केवल 5–6 प्रतिशत भाग ही परिरक्षित किया जाता है।

ताज़े फलों और सब्ज़ियों को विभिन्न तकनीकों द्वारा सुरक्षित रखा जा सकता है जैसे निर्जलीकरण, डिब्बाबंदी, शीतकक्षों में भण्डारण, जूस निकलना आदि। विभिन्न सरल एवं सस्ते तरीके अपनाकर मौसम विशेष में फलों को सुरक्षित रख सकते है, जिससे उनके अनेक पौष्टिक तत्वों तथा औषधीय गुणों को भी टिकाऊ बनाया जा सकता है। छोटे स्तर पर फलों और सब्ज़ियों को परिरक्षित कर के कई नए उत्पाद बनाये जा सकते हैं, जिससे उनके पौष्टिक तत्व कम नष्ट होंगे, किसानों की भी आमदनी भी बढ़ेगी तथा उपभोक्ता को भी लाभ होगा।

बिना मौसम के फलों के विभिन्न पदार्थों का आनंद उठाया जा सकता है। इनका मूल्यवर्धन करके बागवानी व लघु स्तर पर फल उत्पाद उद्योग को भी प्रोत्साहन मिलेगा। कुटीर एवं लघु स्तर पर फलों को परिरक्षित करके कमजोर वर्ग कि महिलाओं तथा किसानों की आय बढ़ेगी व रोजगार के अवसर भी प्राप्त होंगे। सरल उपायों से फलों के परिरक्षण से न केवल बिक्री से बचे हुए फलों का उपयोग हो सकेगा अपितु बागवानी को भी प्रोत्साहन मिलेगा।

फल और सब्ज़ियों का निर्जलीकरण

खाद्य संरक्षण विधियों में से एक पुरानी विधि है निर्जलीकरण अर्थात खाद्य पदार्थ को धूप आदि में सुखाकर संरक्षित करना। इससे पानी की गतिविधि कम हो जाने से बैक्टीरिया आदि का विकास बंद हो जाता है। मौसम में जब फल–सब्ज़ी सस्ती दर पर मिलते हैं तो उन्हें सुखाकर बेमौसम में भी उप्लबध करवाया जा सकता है। आजकल आधुनिक मशीनों से खाद्य पदार्थों को सुखाकर मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार किये जाते हैं, जिनकी बाजार में बहुत मांग है। जैसा कि हम जानते हैं

कि फल–सब्ज़ी मौसम के हिसाब से उगाए जाते हैं और यह किसी खास मौसम में बहुत कम समय के लिए ही उप्लबध होते हैं, इसलिए किसी विशेष अवधि के फलों का किसी और मौसम में आंनद लेने के लिए उनका प्रसंस्करण करना अति आवश्यक है। जैसे फलों से कई उत्पाद (जैम, जेली, स्क्वैश इत्यादि) बनाकर उन्हें लम्बे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है, उसी तरह फलों में मौजूद पानी को सुखाकर (निर्जलीकरण) भी उन्हें देर तक सुरक्षित रखा जा सकता है। जरुरत पड़ने पर इन सूखे फलों को सीधे या पानी में डुबोकर फिर से ताज़ा कर के खाया जा सकता है। यह बहुत ही कम लागत वाली तकनीक है, जिस्से फलों को सुरक्षित करके बहुत लम्बे समय तक इस्तेमाल किया जा सकता है। इस तरह करने से फसल का मूल्यवर्धन भी होता है और इस तरह फलों को सुखाकर बहुत लाभ कमाया जा सकता है। खजूर, सेब, खुबानी, बेर आदि फलों को सुखाकर बहुत ही स्वादिष्ट और पोषण से भरपूर उत्पाद तैयार किये जाते है, जो बाज़ार में बहुत ही लोक प्रिय हैं।

निर्जलीकरण के मुख्य लाभ

- उत्पाद का वजन लगभग ¼–1/9 तक घट जाता है जिससे ढुलाई का खर्चा बहुत कम हो जाता है।
- उत्पाद का आकार घटने के कारण भण्डारण के लिए कम जगह की आवश्यकता होती है।
- निर्जलीकरण का मुख्य कैलोरी पर कम प्रभाव पड़ता है तथा फल और सब्ज़ियों को संरक्षक मिलता है। इसके खनिज तत्वों पर भी प्रभाव नही पड़ता।
- पर्याप्त भण्डारण के अन्तर्गत शुष्क फल और सब्ज़ियों की काल अवधि असीमित होती है।
- परिवहन, हैंडलिंग तथा भण्डारण लागत भी कम हो जाती है।
- खरीदी गयी समस्त सामग्री को उपभोगता द्वारा पूर्ण रूप से इस्तेमाल किया जाता है इस प्रकार अपशिष्ट निपटारे एवं प्रदूषण की कोई समस्या नही होती।
- पोषक तत्वों की एकाग्रता सूखे फल और सब्ज़ियों में बहुत अधिक होती है।
- सूखे खाद्य पदार्थ आहार को विविधता प्रदान करते हैं और उपभोगताओं के लिए तैयार सुविधाजनक भोजन प्रदान करते हैं।
- अन्य संरक्षणों की विधि की तुलना में, फल और सब्ज़ियों का निर्जलीकरण एक सस्ता और सरल विक्लप है।

कुछ सूखे हुए फल–सब्ज़ी एवम मशरुम के चित्र नीचे दिए गए हैं:

ओएस्टर मशरूम से बानी सूखी हुई मशरूम बड़ी

सूखी हुई ओएस्टर मशरूम

1) टमाटर के छिलके, 2) सूखने के लिए तैयार टमाटर के छिलके, 3) सूखे हुए टमाटर के छिलके, 4) टमाटर के छिलके का पाउडर

1) जामुन, 2) जामुन के बीज, 3) जामुन के बीज का पाउडर

फलों को सूखाने की विधि

पके एवं धब्बे रहित फल लें। साफ़ पानी से धोलें। किसी प्रकार के गले हुए और खराब हिस्से को हटा दें। छोटे–छोटे टुकड़ों में काट लें। पोटैशियम मेटाबा. इसफाइट/ गंधक से तालिका–1 के अनुसार उपचारित करें। उपचारित फलों को साफ़ ऐलुमिनियम/ स्टील की ट्रे में फैला कर ड्रायर में 50–60°C पर सुखा लें। सुखाने के बाद तैयार उत्पाद को साफ़ बर्तन या प्लास्टिक के लिफाफे में डालकर सील कर दें। भंडारण के लिए साफ़, ठंडी एवं शुष्क जगह का ही चुनाव करें।

सावधानियाँ

साफ़ एवं धब्बा रहित फलों का ही प्रयोग करें। फल का किसी भी प्रकार का गला सड़ा हिस्सा निकालकर अलग कर दें, इससे तैयार उत्पाद खराब हो सकता है। सुखाने से पहले कुछ ख़ास फलों को उपचारित करना आवश्यक है। इसके लिए किसी बंद कमरे या बक्से में गंधक को जलाकर उसका धुआं देना चाहिए, या पोटाशियम मेटाबाईसल्फाइट के घोल में निर्धारित समय तक रखना चाहिए। इस तरह फलों का रंग खराब नहीं होता है और भंडारण के दौरान कीड़ों का प्रभाव भी कम होता है। धुप में सुखाते समय इन पर बारीक मलमल का कपड़ा डाल देना चाहिए, जिस्से इन्हें धूल, मक्खियों तथा कीड़ों से बचाया जा सके। इन्हें समय–समय पर पलटते रहें ताकि कोई भी भाग बिना सूखे न रह जाए। समय–समय पर तापमान निर्धारित करते रहें, अन्यथा कई बार तापमान अधिक बढ़ जाने से उत्पाद जल भी सकता है। भण्डारण के लिए ठंडी एवं नमी रहित जगह का ही चुनाव करें।

तालिका 1 कुछ ख़ास फलों को सुखाने से सम्बंधित जानकारी

फल	फलों की तैयारी	गंधक से उपचारित करने का समय (मिनट)	सुखाने का तापमान (सेंटीग्रेट)	सुखाने का समय (घंटे)
सेब	छीलकर, बीच का हिस्सा निकाल दें। 5 मिलीमीटर मोटे टुकड़े काटें।	15–30	60–65	6–10
खुबानी	दो टुकड़ों में काटें और गुठली अलग कर दें।	20–25	55–65	10–12
केला	छील कर 10 मिलीमीटर मोटे टुकड़ों में काट लें।	15–30	55–65	18–20
अंगूर	5 सेकंड के लिए 0.2% का स्टिक सोडा के घोल में उबालकर धोलें।	20–25	65–80	20–30
आम	छीलकर 10 मिलीमीटर मोटे टुकड़ों में काटें।	120	55–60	10–12
पपीता	छीलकर 5 मिलीमीटर मोटे टुकड़ों में काटें।	120	55–60	10–12
आड़ू	आधा काटें, छीलें तथा गुठली निकाल दें।	20–25	60–65	15–20
नाशपाती	आधा काटें, छीलें तथा बीज वाला भाग निकाल दें।	15–20	60–65	15–24
अनानास	छील कर 5 मिलीमीटर मोटे टुकड़ों में काटें।	120	55–60	10–15

तालिका 2 फल और सब्ज़ियों के निर्जलीकरण के लिए उपयोग में आने वाले यन्त्र

क्र.स.	यन्त्र	प्रयोजन
1.	ट्रे ड्रायर (ट्रे शुष्कारित्र)	फल और सब्ज़ियों को निर्धारित तापमान पर सुखाने के लिए
2.	कॉन्सेन्ट्रर (इलेक्ट्रिक कैटल)	सूखने से पहले फल और सब्ज़ियों की ब्लॉंचिंग करने के लिए

ट्रे ड्रायर और डबल जैकेटेड केतली

लघु वाटिका की अनोखी दुनिया : टेरारियम

**कीर्ति सौरभ, आरती कुमारी, अनिल कुमार सिंह,
आशुतोष उपाध्याय, शिवानी एवं अतिश कुमार**

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

मानव समाज के विकास के साथ, हमारे पास एक नया शब्द, शहरीकरण है। भारत में 2011 जनगणना के आंकड़ों से पहली बार शहरों की तरफ झुकाव बढ़ा दिखा। 2001–11 के बीच, देश की शहरी आबादी में बढ़ोतरी ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में अधिक रही। नेशनल कमीशन ऑन पॉपुलेशन (NCP) का अनुमान है कि 2036 तक 38.6 फीसदी भारतीय, शहरी इलाकों में रहेंगे यानी तब 60 करोड़ लोगों का बसेरा इनमें हो जाएगा। संयुक्त राष्ट्र (UN) ने भी कहा है कि 2018 से 2050 के बीच भारत में शहरी आबादी 46.1 करोड़ से बढ़कर 87.7 करोड़ यानी दोगुनी हो जाएगी। मौजूदा ट्रेंड और भविष्य के अनुमानों से इसका संकेत मिल रहा है कि भारत लगातार शहरीकरण की तरफ बढ़ रहा है। बढ़ते शहरीकरण के कारण उसके आसपास की जलवायु, जल संसाधनों और जैव विविधता को अपरिवर्तनीय क्षति हो रही है। चारों तरफ से बढ़ता कांक्रीट का जंगल और घरों के घटते आकार ने बागवानी मुश्किल कर दी है, लेकिन अब छोटे से ग्लास के अंदर भी बागवानी का सपना पूरा किया जा सकता है।

शहर के कम जगहो वाले घरों में टेरारियम्स का उत्साह बढ़ता जा रहा है। टेरारियम एक लैटिन शब्द है जो टेरा (पृथ्वी) + एरियम (एक स्थान या पात्र) से बना है अथार्त टेरारियम का मतलब है ''कांच के पात्रों में पौधे उगाना''। आज की युवा पीढ़ी इन्हें न सिर्फ बाजार से खरीद रही है बल्कि पंसद के हिसाब से खुद भी बनाकर डिजाइन कर रही है। टेरारियम एक ग्लास के जार में आसानी से लगने वाले पौधों और सजावट के सामान के साथ तैयार किया जाता है। टेरारियम न सिर्फ घरों में हरियाली देता है बल्कि सुंदरता भी बढ़ाता है। खादयुक्त मिट्टी सहित सजावट के लिए छोटे–बड़े रंगीन पत्थर, सीप आदि लगाई जाती है। इस बजट में ग्लास गार्डन्स को तैयार करने में ज्यादा समय भी नहीं लगता है।

प्रकृति से लगाव रखने और घर में कम जगह की परेशानी झेल रहे लोगों के लिए टेरारियम सबसे उपयुक्त उपाय है। ये छोटे आकार का गार्डन घर, ऑफिस कहीं भी आसानी से फिट हो सकते हैं। बस इस चीज का ध्यान रखना होगा कि इन्हें प्राकृतिक प्रकाश मिलती रहनी चाहिए। राउंड फिश बाउल, फ्लैट डिश, वाइन ग्लास, बोतल, पुराने अचार के जार, बड़े मेसन जार या फिर परफ्यूम की छोटी बॉटल, हर जगह इन मिनिएचर गार्डन्स को तैयार किया जा सकता है। बंद टेरारियम में पौधे को माह में एक बार पानी की जरूरत होती है। फर्न, पेट्यूनिया और तरबूज के पौधे बंद जारों में अच्छी तरह से बढ़ते हैं।

टेरारियम के **4** प्रमुख तत्व हैं:

1. जल निकासी– जड़ों को सड़ने से बचाने के लिए जल का निकास अत्यंत आवश्यक है।
2. चारकोल परत– यह पानी और मिट्टी को साफ करती है और विषाक्त पदार्थों को हटा देती है।
3. मिट्टी– स्पष्ट रूप से सबसे महत्वपूर्ण में से एक है क्योंकि पौधों को बढ़ने के लिए एक माध्यम की आवश्यकता होती है। इसे स्वच्छ, खनिज पदार्थों में उच्च और किसी भी रासायनिक उपचार से मुक्त होना चाहिए।
4. पौधे, पारिस्थितिकी तंत्र में चक्र विकसित करने के लिए आवश्यक है।

टेरारियम से जुड़ी मूल बातें

परिभाषा
एक ऐसा पारिस्थितिकी तंत्र (इकोसिस्टम) जो आत्मनिर्भर है। इसमें ज्यादातर पौधे और कभी-कभी जीव जंतुओं को भी रखा जा सकता है।

आवश्यकताएं
कंटेनर/पात्र कांच या पारदर्शी होना चाहिए जो प्रकाश को गुजरने दे। कंटेनर का आकार आप किस प्रकार के पौधों को टेरारियम में लगाने के लिए चुनते हैं उसपर निर्भर करेगा।

टेरारियम के प्रकार
बंद टेरारियम : यह उन पौधों के लिए है जिन्हें बहुत अधिक पानी और नमी की आवश्यकता होती है। इन्हें समशीतोष्ण या उष्णकटिबंधीय पारिस्थितिक तंत्र के रूप में जाना जाता है।

ओपन टेरारियम : यह उन पौधों के लिए है जिन्हें कम पानी और नमी की आवश्यकता होती है। इन्हें मरुस्थलीय पारितंत्र के रूप में जाना जाता है।

जीव-जंतु
लाइट बल्ब टेरारियम के लिए कोई जानवर अच्छा नहीं है।हालांकि, कुछ जानवर बड़े टेरारियम में रह सकते हैं।

प्रक्रिया
1. **जलनिकास:** आपके टेरारियम को फिल्टर करने के लिए जल निकासी की आवश्यकता होती है,यह जड़ों को नुकसान से बचाने में मदद करता है।
2. **चारकोल:** विषाक्त पदार्थों और गंधों को हटाकर आपकी मिट्टी को ताजा रखने के लिए लकड़ी का कोयला महत्वपूर्ण है।
3. **मिट्टी:** मिट्टी खाक और कार्बनिक पदार्थों में उच्च होनी चाहिए। रासायनिक खाद के प्रयोग से बचें।
4. **पौधे** का प्रकार, और आकार निर्धारित करेगा कि आप किन पौधों का उपयोग करेंगे

सफलता की कुंजी
प्रकाश: आपके टेरारियम के लिए प्रकाश ही एकमात्र आवश्यक घटक है।इसे विसरित प्रकाश (डिफ्यूज़ लाइट) में रखना चाहिए।
तापमान: बंद टेरारियम में गर्मी बनी रहती है, हालांकि बहुत गर्मी अधिक आपके टेरारियम को मार सकता है। सीधी धूप में न रखें।
पौधों को विभिन्न प्रकार के वातावरण की आवश्यकता होती है। सुनिश्चित करें कि आपके पास सही प्रकार के पौधे हैं जो पनपेंगे।
पानी: खुले टेरारियम में पानी इतना ही डालें की वह मिट्टी को थोड़ा नम करे। बहुत अधिक पानी बंद टेरारियम में मोल्ड का कारण बन सकता है।
वायु: वायु का परिसंचरण मोल्ड और फफूंदी की वृद्धि को रोक सकता है।
साफ-सफाई: आपके कंटेनर की सफाई काचक को बढ़ने से रोकेगी। सतह से अतिरिक्त नमी, धूल या शैवाल को हटा दें।

टेरारियम का इतिहास

पहला टेरारियम वर्ष 1829 में चिकित्सक डॉ. नथानिएल बागशॉ वार्ड द्वारा विकसित किया गया था। वार्ड को कीट व्यवहार को देखने में रुचि थी। डॉ. नैथानियल वार्ड ने एक दिन बंद कांच की बोतल में थोड़े से नमीयुक्त मिटटी के साथ एक स्फिंक्समोथक्रायसलिस को विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन करने के लिए बंद कर दिया। कुछ ही दिनों के पश्चात् उसमे एक फ़र्न का पौधा उग गया। उसने देखा कि वाष्पित नमी दिन के दौरान बोतल की दीवारों पर संघनित हो जाती है, और शाम को वापस मिट्टी में चली जाती है, जिससे लगातार नमी बनी रहती है ।

डॉ. वार्ड की धारणा थी कि इस बंद वातावरण में ये पौधे शीघ्र ही मर जायेंगे। लेकिन उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब पौधे बिना किसी विशेष देख–रेख के, निरंतर चार वर्षों तक भली प्रकार वृद्धि करते रहे।

इससे उन्हें अन्य पौधों को भी कांच के बन्द बर्तन में उगाने की धुन लग गई। उन्होंने पाया कि उष्णकटिबन्धीय पौधे (ट्रापिकल फोलिएज) विशेष रूप से फर्न, इस प्रकार से उगाने के लिये सर्वथा उपयक्त हैं। जिस कांच के बॉक्स का इस्तेमाल वह तितलियों को पालने और पौधों को उगाने के लिए किया करते थे, उसे वार्डीअन केस के नाम से जाना जाता था। उस समय ब्रिटिश उपनिवेशों में पौधों को पेश करने के लिए व्यापक रूप से इसका उपयोग किया जाता था।

टेरारियम का सिद्धान्त

टेरारियम एक ऐसा पारिस्थितिकी तंत्र (इकोसिस्टम) है जहाँ जीवित /जैविक तत्वों का समुदाय जैसे पौधे, कवक, कीड़े और जानवर, अजीवित /अजैविक (हवा, पानी और खनिज मिट्टी जैसी चीजें) घटकों के साथ मिलकर परस्पर सहयोग से एक क्षेत्र के अंदर जीवन निर्वहन करते हैं।

बंद टेरारियम का सिद्धान्त है की यह पौधे के विकास के लिए एक अनूठा वातावरण बनाते हैं, क्योंकि पारदर्शी होने की वजह से गर्मी और प्रकाश दोनों ही इसके दीवारों से अंदर प्रवेश करती हैं। टेरारियम में प्रवेश करने वाली गर्मी के साथ संयुक्त सीलबंद कंटेनर एक छोटे पैमाने पर जल चक्र के निर्माण की अनुमति देता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि टेरारियम के अंदर ऊंचे तापमान में मिट्टी और पौधों दोनों से नमी वाष्पित हो जाती है। यह जल वाष्प फिर कंटेनर की दीवारों पर संघनित हो जाता है, और अंततः पौधों और नीचे की मिट्टी में वापस गिर जाता है। यह पानी की निरंतर आपूर्ति के कारण पौधों को उगाने के लिए एक आदर्श वातावरण बनाने में योगदान देता है, जिससे पौधों को अधिक शुष्क होने से रोका जा सकता है। इसके अलावा, टेरारियम के पारदर्शी पात्र से गुजरने वाला प्रकाश पौधों को प्रकाश संश्लेषण के लिए अनुमति देता है, जो पौधे के विकास का एक बहुत ही महत्वपूर्ण पहलू है।

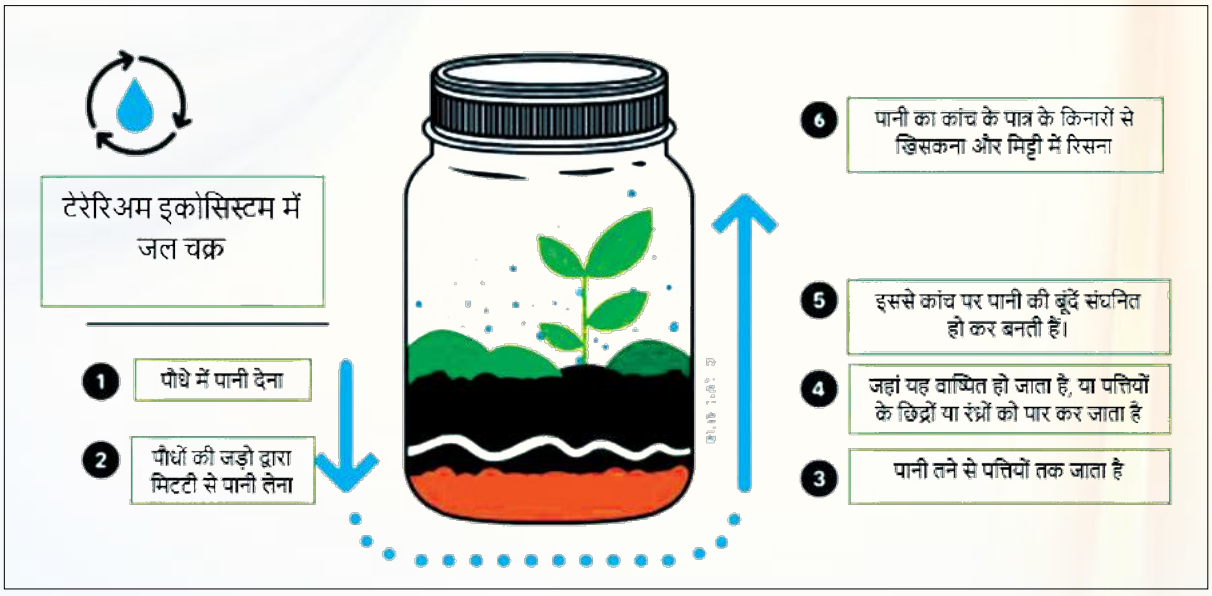

टेरारियम में जल चक्र

जिस तरह हमारी धरती में मिट्टी की अलग अलग परतें होती है जिसे **मृदा परिच्छेदिका** (सॉइल प्रोफाइल) कहते है, उसी तरह टेरारियम में भी अलग अलग परतें बनाई जाती है। ये परतें पौधों के विकास के लिए माध्यम प्रदान करती है, सतह पर जमे हुए पानी के लिए फ़िल्टर सिस्टम का काम करती है, साथ ही साथ टेरारियम के अंदर गैसों के संतुलन को बनाए रखती है। अतः पृथ्वी पर उपस्थित मिटटी की परतों की ही तरह टेरारियम में बिछाई गयी ये परतें भी विभिन्न महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित करती है।

टेरारियम में बनाई गयी परत

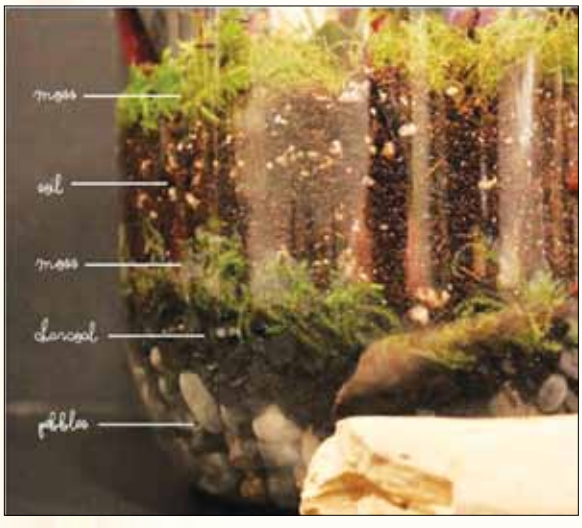

मृदा परिच्छेदिका

एक स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र को सुनिश्चित करने के लिए कई गैसें हैं जो आवश्यक हैं, जैसे की CO_2 और O_2। लेकिन एक अन्य बहुत महत्वपूर्ण घटक भी है, N_2—नाइट्रोजन, जिसका टेरारियम की हवा में होना महत्वपूर्ण है। लेकिन बहुत अधिक नाइट्रोजन टेरारियम के अंदर मौजूद जीवित घटकों पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है। समाधान के रूप में, हम लाइकेन का उपयोग कर सकते हैं जो अनुपयोगी नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करने में सक्षम होते हैं।

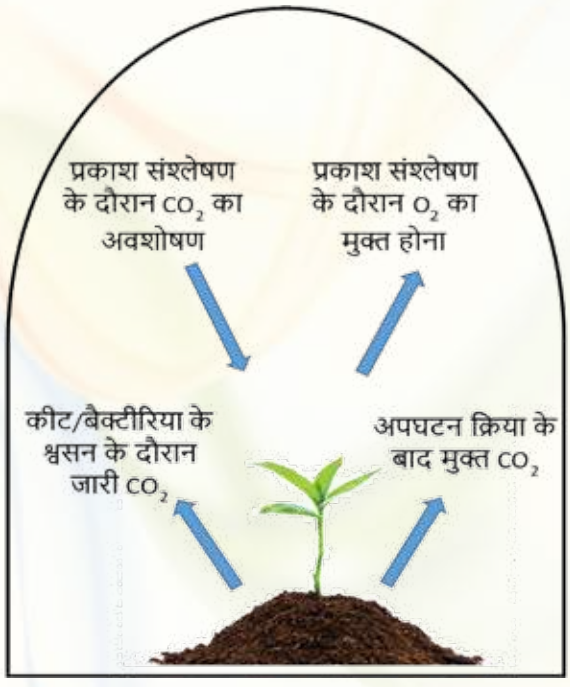

टेरारियम में गैसीय विनिमय (एक्सचेंज)

टेरारियम बनाने का चरणबद्ध तरीका

सामग्री

- ढक्कन के साथ या बिना ग्लास कंटेनर
- बजरी—समुद्री कांच या समुद्र तट के पत्थर
- सक्रिय लकड़ी का कोयला
- टेरारियम के पौधे
- बाँझ पॉटिंग मिक्स मिट्टी, मॉस और अन्य सजावटी तत्व

विधि

साफ़ कंटेनर का चुनाव करें: कंटेनर को अच्छी तरह गर्म साबुन के पानी से धो लें तथा पूरी तरह सूखने दें।

निचली परत में कंकर की परत डालें: कंटेनर के तल में कुछ बागवानी बजरी या एक्वैरियम कंकड़ 2–3 सेंमी. की मोटाई में डालें। जल निकासी परत के लिए कुचले हुए मिट्टी के बर्तनों, रॉक चिप्स, या कांच के पत्थरों का भी उपयोग कर सकते हैं।टेरारियम में मिट्टी

को गीला होने से रोकने के लिए यह जल निकासी परत आवश्यक है, जिससे मोल्ड, बैक्टीरिया और जड़ सड़न की समस्या हो सकती है।

चारकोल की परत बिछाएं: पत्थर की परत के ऊपर थोड़ा सा चारकोल का पाऊडर / टुकड़ा (1/2–इंच – 1/4–इंच)डालें जिससे कि आर्द्र अवस्था में पौधों से सड़े हुये भागों से निकलने वाली गैसों को निष्क्रिय किया जा सके। इसका उद्देश्य जल निकासी और किसी भी गंध को नियंत्रित करने में मदद करता है।

स्फाग्नम मॉस की परत बिछाएं: कुछ सूखे **स्फाग्नम** या शीट मॉस लें और इसे कुछ सेकंड के लिए पानी में भिगो दें। काई को निचोड़ें ताकि वह थोड़ा नम हो, लेकिन गीला न हो। मिट्टी को जल निकासी परत में जाने से रोकने के लिए काई को चारकोल की परत के ऊपर रखें।काई की परत पतली रखें। आपको केवल चारकोल परत को पूरी तरह से ढकने के लिए पर्याप्त आवश्यकता है।

पॉटिंग मिक्स मिट्टी की परत बिछाएं: काई की परत को कुछ पॉटिंग मिट्टी के साथ कवर करें जो आपके द्वारा उगाए जाने वाले पौधों के लिए उपयुक्त है (उदाहरण के लिए, रसीला मिश्रण यदि आप एक रेगिस्तानी टेरारियम बना रहे हैं, या उष्णकटिबंधीय पौधों के लिए एक सामान्य पॉटिंग मिट्टी)।

पौधों को मिट्टी में रोपें: टेरारियम पौधों का चयन करते समय,सुनिश्चित करें कि वे आपके जार में फिट होने के लिए पर्याप्त छोटे हैंया नहीं। उन पौधों का चयन करें, जो नमी से ग्रस्त नहीं हैं,क्योंकि एक टेरारियम की सीमित प्रकृति स्वाभाविक रूप से आर्द्र वातावरण बनाती है। इस कारण से,कैक्टस और रसीले पौधे आमतौर पर एक आसान देखभाल संलग्न टेरारियम के लिए सबसे अच्छा विकल्प नहीं हैं, वे पौधे पूरी तरह से खुले कंटेनरों के लिए सबसे अच्छा काम करते हैं,जिसमें बहुत सारी रेत का मिश्रण होते हैं।

टेरारियम पौधों पर विचार करते समय,उन पौधों की तलाश करें जो मध्यम से कम प्रकाश में अच्छा ग्रो करते हैं। कुछ पौधे जो टेरारियम में शामिल किये जा सकते हैं इस प्रकार हैं:

- क्रोटन
- पोथोस
- ड्रेसिना
- छोटे फर्न्स
- लकी बम्बू
- नर्व प्लांट
- प्रेयर प्लांट
- क्लब मोस
- क्रीपिंग फिग

टेरारियम में सजावट करें: टेरारियम को एक मज़ेदार थीम के आधार पर विभिन्न रूप से सजाया जा सकता हैं। जैसे मिनी जंगल, समुद्र तट, रेगिस्तान, लघु उद्यान एवं झरना। सजावट की कई चीज़ें, जैसे कि छाल और डंडे, बाहर पाए जा सकते हैं, लेकिन टेरारियम में डालने से पहले सुनिश्चित करें कि वे सूखे और कीड़े से मुक्त हों। रंग के लिए कुछ सजावटी काई या एक्वैरियम के पत्थरों का उपयोग किया जा सकता है। सावधानीपूर्वक सजाने के साथ, आप अपने टेरारियम को प्रकृति के एक छोटे से टुकड़े की तरह बना सकते हैं।

पौधों पर पानी का स्प्रे करें: यदि आपने पहले से ही बढ़ते माध्यम (मिटटी या मॉस) को गीला कर दिया है, तो आपको बहुत अधिक पानी डालने की आवश्यकता नहीं होगी। पत्ते और मिट्टी की ऊपरी परत को छिड़कने के लिए प्लांट मिस्टर का प्रयोग करें।

टेरारियम को पर्याप्त रोशनी एवं गर्मी वाले जगह पर रखें: टेरारियम अल्ट्रा लो–मेंटेनेंस हैं, लेकिन ऐसा रहने के लिए उन्हें एक आदर्श स्थान पर रखा जाना चाहिए।अपने पौधों की ज़रूरतों पर शोध करें और टेरारियम को ऐसे स्थान पर रखें जहाँ उन्हें उस तरह की रोशनी और तापमान की स्थिति मिल सके, जिसकी उन्हें आवश्यकता होती है।

टेरारियम में सावधानियां

सीधे धूप में एक बंद या लंबे किनारे वाले टेरारियम को रखने से बचें, क्योंकि कांच गर्मी में फंस जाएगा और सूरज की रोशनी को भी बढ़ा देगा।इससे आपके पौधे आसानी से गर्म हो सकते हैं या खराब हो सकते हैं।

1. **जब भी मिट्टी सूख जाए अपने पौधों को पानी दें।** यदि आपका टेरारियम खुला है, तो आपको इसे लगातार, हल्का पानी देना होगा। हर

कुछ दिनों में मिट्टी का परीक्षण करने के लिए अपनी उंगली का प्रयोग करें। यदि यह सतह के नीचे सूखा लगता है, तो अपने पौधों को धुंध दें या मिट्टी को नम बनाने के लिए पर्याप्त पानी डालें, लेकिन गीला नहीं।

क. ध्यान रखें कि अपने पौधों को अधिक पानी न दें। टेरारियम में खड़ा पानी जल्दी सड़ सकता है।

ख. यदि आपका टेरारियम पूरी तरह से बंद है, तो उसे हर 4–6 महीने में केवल पानी की आवश्यकता हो सकती है।

2. **किसी भी अस्वस्थ पत्ते को हटा दें।** यदि आप खरपतवार, फफूंदी या बीमार पौधे देखते हैं, तो प्रभावित पत्ते या मिट्टी को तुरंत हटा दें। साथ ही, पौधे के मुरझाए हुए हिस्सों जैसे पुराने फूल या मृत पत्तियों को हटा दें।

क. आप बड़े पौधों को नियमित रूप से काट–छाँट करके उन्हें आवयश्कता से ज्यादा बढ़ने से रोक सकते हैं।

3. **बंद टेरारियम को पानी देने के बाद हवा दें।** यदि आपका टेरारियम वायुरोधी है, तो जब भी आप पौधों को पानी दें तो इसे हवा दें।कवर को वापस लगाने से पहले पत्ते के पूरी तरह से सूखने तक प्रतीक्षा करें।

क. अपने टेरारियम को बाहर निकालना भी एक अच्छा विचार है यदि आप देखते हैं कि दीवारों पर बहुत अधिक संघनन है या मिट्टी में ढालना शुरू हो रहा है।

टेरारियम के फायदे

उष्ण कटिबंधीय पौधों को गर्म तथा आर्द्र जलवायु की आवश्यकता पड़ती है। उन शहरों में जहां गर्मी अधिक पडती है घरों को हरियाली से अलंकृत करने के लिये यह सबसे आसान, नया तथा सस्ता उपाय है। ये अत्यन्त ही आकर्षक तथा मन मोह लेने वाले लगते हैं। इतना ही नहीं इस प्रकार के छोटे–छोटे टेरारियम बनाकर उपहारस्वरूप भेंट में भी दिये जा सकते हैं या बाजार में बेच कर आर्थिक लाभ भी कमाया जा सकता है।

बकरियों में परजीवियों से होने वाले रोग एवं उनका प्रबंधन

राकेश कुमार, रजनी कुमारी, पी.सी. चंद्रन, शंकर दयाल,
प्रदीप कुमार राय, ज्योति कुमार, अमिताभ डे एवं कमल शर्मा

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

बकरियों को ''गरीब आदमी की गाय'' के रूप में जाना जाता है क्योंकि इसे कम खर्च में पाला जा सकता है। बकरियों प्रतिकूल जलवायु और खराब प्रबंधन परिस्थितियाँ के तहत भी बहुत अच्छा उत्पादन करती है। बकरियों की खास विशेषता यह है कि जिन पत्तियों और घांसों को दूसरे पशु नहीं खाते है, ये उनपर भी आसानी से खाकर जिंदा रह सकती है। बकरी से हम अच्छी गुणवत्ता का दूध, मांस, त्वचा, पश्मीना और मोहेर आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। बकरी का मांस जो कि चेवोन के नाम से जाना जाता है, दुनिया भर में सबसे पसंदीदा और व्यापक रूप से खाया जाने वाला मांस की श्रेणी में आता है क्योंकि इसमें कोई सामाजिक वर्जना नहीं होता है। अन्य पशुओं की तरह बकरियाँ भी विभिन्न तरह के बीमारियों से ग्रसित होते रहती है। बकरियाँ मुख्यतः खुरपका एवं मुँहपका रोग, पी.पी.आर, बकरी प्लेग, गलाघोटू रोग एवं विभिन्न प्रकार के परजीवी रोग से ग्रसित होती है। इस लेख में मुख्य बाह्य परजीवी (जूँ, किलनी इत्यादि) अन्तः परजीवी (फीता कृमि, गोल कृमि, इत्यादि) एवं प्रोटाज़ोआ से होने वाले रोग के लक्षण, निदान एवं इसके उपचार बारे में वर्णित किया गया है।

❖ फीता कृमि द्वारा होने वाले रोग एवं उपचारः–

- बकरियों में मुख्यतः मोनेजिया नामक फीताकृमि पाया जाता है, जो कि बड़े आकार का होता है और मेमनों को अधिक संक्रमित करता है।
- इसका मुख्य लक्षण बकरियों में दस्त होना तथा उनकी दुग्ध एवं मांस उत्पादन क्षमता कम होना है। अगर समुचित उपचार नहीं मिले तो बकरियों को मरने की संभावना भी बढ़ जाती है।
- ये कृमि बकरियों के मल में पके चावल के दाने जैसा प्रतीत होता है।
- इन फीताकृमियों से बचाव हेतु सर्वोत्तम उपाय यह है कि चारागाह को अच्छी तरह से जुताई करके फिर से चारा उगाना चाहिये।
- जिन चारागाह में पशु को चराया गया है, वहाँ फीताकृमि का संक्रमण ज्यादा होने कि संभावना होती है अतः कुछ माह के लिये वहाँ चराई बंद कर देना अत्यंत लाभदायक सिद्ध होता है।
- अगर पशु इस कृमि से ग्रसित हो गया है, तो इसको उपचार के लिए डीवॉर्मिंग (बेंजामिड़ोले) **5–8** मिली. ग्राम/किलोग्राम शरीर के वजन के अनुसार देना चाहिए।
- पशु में सुधार नहीं होने पर तुरंत स्थानीय वेटरनरी डॉक्टर से परामर्श लें।

❖ पर्णकृमि से होने वाले रोग एवं उपचारः–

- पर्णकृमि से फेसिओला एवं एम्फीस्टोम के द्वारा पशुओं में मुख्यतः बीमारी फैलती है।
- यह रोग घोंघों के माध्यम से फैलता है और फेसिओला का संक्रमण ज्यादातर गर्मियों के उत्तरार्द्ध में या बारिश के बाद बकरियों में ज्यादा मिलता है।
- फेसिओला मुख्यतः यकृत को हानि पहुँचाता हैं तथा ये खून भी चूसता है, जिससे पशु बहुत ज्यादा कमजोर हो जाता है।
- इस रोग के प्रमुख लक्षणों में जबड़ो के नीचे सूजन आना एवं बकरियों की त्वचा खुरदरी हो जाना है।

- अन्य पशुओं की तुलना में बकरियाँ फेसिओला के संक्रमण के प्रति ज्यादा संवेदनशील होती है, जिसके कारण बकरियों में मृत्यु की संभावना भी बढ़ जाती है।
- इस बीमारी से ग्रसित पशु के निदान हेतु मल की प्रयोगशाला में जाँच होनी चाहिए या जहाँ सुविधा उपलब्ध हो वहाँ खून एवं दूध की जांच करके बीमारी को आसानी से पता लगाया जाना चाहिए।
- चूँकि ये बीमारी घोंघें से फैलता है इसलिए घोंघों का नियंत्रण आवश्यक रूप से करना चाहिए एवं पशुओं के चारों ओर बाड़ लगाकर संक्रमित क्षेत्र को चरने या पानी पीने से रोकना चाहिए।
- फेसिओला से ग्रसित पशु को ड्रग ऑफ चॉइस के रूप में ट्रैकाइलबेण्डाजोल (0.2 मी.ली/किलोग्राम शरीर का वजन के अनुसार) सबसे सर्वोत्तम माना जाता है।
- एम्फीस्टोम परजीवी से होने वाले रोग को बीसी रोग कहा जाता है एवं इस बीमारी के प्रमुख लक्षण भूख न लगना, रक्त की कमी, जबड़ो के नीचे सूजन एवं दस्त लगना है।
- यह परजीवी भी घोंघों के माध्यम से फैलता है अतः बारिश के समय कृमिनाषक दवा बकरियों को अवश्य पिलाना चाहिए।
- एम्फीस्टोम से ग्रसित पशु को ड्रग ऑफ चॉइस के रूप में ऑक्सीक्लोजानाइड (15 मि. ग्रा. /किलोग्राम) को सबसे सर्वोत्तम माना जाता है।
- रोग से ग्रसित पशु में सुधार नहीं होने पर तुरंत स्थानीय वेटरनरी डॉक्टर से परामर्श लें।

❖ **गोल कृमि से होने वाले रोग एवं उपचारः–**

- बकरियों में गोल कृमि से रोग मुख्यतः हीमोन्कस एवं ईसोफेगोस्टोमम नामक परजीवियों से फैलता है।
- ये परजीवी मुख्यतः वर्षा ऋतु में पशुओं को ज्यादा संक्रमित करता है।
- ये परजीवियां बकरियों के पेट से रक्त चूसकर उन्हें रक्ताल्पता का शिकार बना देता है इससे कभी–कभी पशुओं की मृत्यु भी हो जाती है।
- जो बकरियाँ मुख्यतः चारे पर ही निर्भर होती हैं, उनमें में यह परजीवी रोग अधिक मिलता है।
- इस रोग से ग्रसित पशु का मुख्य लक्षण रक्ताल्पता, जबड़ो के नीचे सूजन, एवं शरीर के वजन में सही से वृद्वि नही होना है।
- रोगों के निदान हेतु पशु के मल की जाँच करवानी चाहिए एवं उपचार हेतु पशु चिकित्सक की परामर्श लेनी चाहिए।
- बकरियों के मेंमनों में यह रोग अधिक होता है, अतः उन्हें बकरियों से अलग चराना चाहिए।
- बकरियों में गोल कृमि के कारण आंतों में गाठ पड़ जाती हैं जिससे कि लगातार दस्त की समस्या होती है तथा मल गहरे हरे रंग का हो जाता है।
- इस रोग से पशु कमजोर होने लगता है तथा समय पर इलाज न होने पर पशु की मृत्यु भी हो सकती है।
- बचाव के लिए पशु गृह को साफ–सुथरा तथा जहां तक हो सके सूखा रखने का प्रयास करें।
- बकरियों के मल को समय–समय पर हटाते रहें ताकि लारवा एकत्रित न हो पाये।

❖ **प्रोटोजोआ से होने वाले रोग एवं उपचारः–**

- छः माह की उम्र तक मेमनों में कोक्सीडियोसिस होने की संभावना अधिक होती है।
- मेमनों में यह रोग मुख्यतः संक्रमित भोजन एवं पानी के सेवन से होता है, और सबसे ज्यादा प्रकोप सामान्यतः मानसून के आगमन के साथ होता है।
- इस रोग का लक्षण पानी जैसा दस्त या खूनी दस्त, पेट दर्द तथा कमज़ोरी है, अगर सही समय पर न उपचार न करें तो मेमनों की मृत्यु भी हो सकती है।
- संक्रमित पशु को अन्य पशुओ से पृथक करके उसका उपचार करवाना चाहिए।

- पशु गृह में क्षमता से अधिक पशु नहीं रखने चाहिए।
- पशु गृह में बिछावन समय–समय पर बदलते रहें तथा पशुओं के खाने व पीने के पात्र साफ रखने चाहिऐ।
- कुछ महीनों के अंतराल पर कृमिनाषक दवा बकरियों को अवश्य पिलाना चाहिए।

❖ **बाह्य परजीवी से होने वाले रोग एवं उपचारः–**

- आंतरिक परजीवी के अलावा बाह्य परजीवी से भी बकरी को हानि पहुँचती है।
- बकरी में विशेषकर त्वचा एवं थनों में जूँ एवं किलनी लग जाती हैं।
- ये किलनी न केवल बकरियों के शरीर से रक्त चूसती है बल्कि कई बीमारियां भी फैलाती है।
- किलनियों से बचाव के लिए आस–पास की संक्रमित घास जला देने से किलनियों की अवयस्क अवस्थायें नष्ट हो जाती है।
- बकरी में खुजली भी बाह्य परजीवियों के कारण ही होती है।
- बकरियों में खुजली के कारण बालों का झड़ना, त्वचा मोटी तथा तांबे के रंग की हो जाना प्रमुख लक्षण है।
- बकरी को खुजली से बचाने के लिए प्रत्येक तीन महीने पर कीटनाशक दवा के घोल से नहलाना चाहिए।
- दवा के घोल से नहलायें एवं पूरे शरीर पर अच्छे से फैला दें, विशेषकर जहां खुजली की समस्या है।
- नहलाने के एक घंटे बाद रेंड़ी का तेल लगा दें।
- बकरी के रहने के स्थान पर भी दवा का छिड़काव करें।
- नहलाने के दिन का चुनाव करते समय धूप वाले दिन को चुनें।

बैकयार्ड मुर्गी पालनः आजीविका का उत्तम स्रोत

[1]रीना कमल, [2]पी.सी. चंद्रण, [2]अमिताभ डे, [1]विकाश दास,
[1]महेश धाकड़, [2]कमल शर्मा, [2]रजनी कुमारी एवं [1]अरुण कुमार सिंह

[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर– कृषि प्रणाली का पहाड़ी एवं पठारी अनुसंधान केन्द्र, राँची (झारखंड)
[2]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

भारत में रहने वाली ग्रामीण आबादी कुल आबादी का 72.2 प्रतिशत है, जिसमे मुख्य रूप से गरीब, सीमांत किसान और भूमिहीन श्रमिक रहते हैं। बैकयार्ड पोल्ट्री उत्पादन भारत के ग्रामीण परिवारों का एक वृद्धावस्था पेशा है। यह भूमिहीन और गरीब किसानों के लिए सहायक आय का सबसे शक्तिशाली स्रोत है। यह कम प्रारंभिक निवेश लेकिन उच्च आर्थिक रिटर्न वाला एक उद्यम है और इसे आसानी से महिलाओं, बच्चों और घरों के वृद्ध व्यक्तियों द्वारा प्रबंधित किया जा सकता है। अब, भारत के ग्रामीण क्षेत्रों के लिए प्रोटीन और ऊर्जा की प्रति व्यक्ति आवश्यकता को पूरा करने के लिए पोल्ट्री मांस और अंडे सबसे अच्छे और सस्ते स्रोत माने जातें हैं।

हालांकि भारत ने दशकों में कुक्कुट उत्पादन में जबरदस्त वृद्धि दिखाई है, लेकिन ग्रामीण कुक्कुट पालन अभी भी पिछड़ रहा है और हमेशा उपेक्षित पाया जाता है। चूंकि यह छोटे पैमाने पर किसानों को कम लागत के साथ आय को सब्सिडी देने के लिए सबसे अच्छा विकल्प है, इसलिए इस कृषि प्रणाली को बढ़ावा देने के लिए ज्यादा अंडे देने वाले चूजों के पालन, संतुलित भोजन, रोग नियंत्रण और कुशल विपणन प्रणाली के क्षेत्र में शोध की आवश्यकता है। आजकल, बैकयार्ड कुक्कुट पालन आसानी से उत्तम नस्ल के साथ (वन. राजा, ग्रामप्रिया, सोनाली, कड़कनाथ आदि) शुरू कर सकते हैं।

बैकयार्ड कुक्कुट उत्पादन प्रणाली एक कम लागत व्यवसाय है और इसमें केवल रात को मुर्गियों को घर में रखा जाता है, मुर्गियां खुले में घुम–घूम कर खाने की खोज करते है (स्केवेंजिंग सिस्टम), चूजों की प्राकृतिक हैचिंग होती है, मुर्गियों के अंडे एवं मांस उत्पादकता कम होती है, थोड़ा पूरक आहार, स्थानीय विपणन और कोई स्वास्थ्य देखभाल अभ्यास नहीं अपनाये जातें है। पोल्ट्री का विकास अंडा और चिकन मांस उत्पादन बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत में, पशुधन क्षेत्र में वृद्धि निश्चित रूप से गरीबी में कमी में योगदान कर सकती है, क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोग अपने दैनिक जीवनयापन के लिए पशुधन पर निर्भर हैं। यह भी देखा गया है कि विकासशील देशों में पशु प्रोटीन स्रोत की मांग तेजी से बढ़ रही है।

स्थानीय कुक्कुट नस्लों का पालन बैकयार्ड प्रणाली में ग्रामीण लोगों के लिए आजीविका का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। अधिक समूह (10 से ज्यादा) की तुलना में छोटे समूह जिसमे 2–3 मुर्गियाँ हो अधिक कुशल उत्पादक पाया गया है। मुर्गी पालन करने वाले किसानों की मुख्य रुचि अंडों का उत्पादन नहीं है क्योंकि रिटर्न अंडे की बिक्री से बहुत कम है। चूँकि इन देशी मुर्गियों में मातृ/ब्रूडीनेस क्षमता होती है यह अपने चूजे स्वयं अंडो से निकालती है जिसका फायदा बिना किसी लागत के किसान चूजा उत्पादन कर के उन्हें पक्षियों के रूप में बेच देते हैं।

बैकयार्ड मुर्गी पालन के फायदे

- ग्रामीण मुर्गीपालन प्रणाली के कई फायदे हैं जो निम्नानुसार हैं:
- ग्रामीण लघु और सीमांत किसानों को रोजगार देता है।
- ग्रामीण समुदायों को अतिरिक्त आय प्रदान करता है।
- बैकयार्ड में मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने में सहायक (15 मुर्गियां 1–1.2 किलोग्राम खाद / दिन का उत्पादन करती हैं)।

- ग्रामीण पोल्ट्री फार्मिंग के उत्पाद गहन प्रणाली पोल्ट्री फार्मिंग वालों की तुलना में उच्च कीमत प्राप्त करते हैं। स्थानीय बाजार में भूरे रंग के देशी अंडे की दर सफेद अंडे से लगभग दोगुनी है ।
- फ्री रेंज सिस्टम में बैकयार्ड पोल्ट्री फार्मिंग के माध्यम से लगभग नहीं या बहुत कम निवेश के साथ अंडा और मांस प्रदान करता है।
- फ्री रेंज सिस्टम मुर्गी पालन में पाले जाने वाले पक्षी के अंडे और मांस में गहन प्रणाली मुर्गी पालन की तुलना में कम कोलेस्ट्रॉल की मात्रा पाई जाती हैं।
- गर्भवती महिलाओं, दूध पिलाने वाली माताओं और बच्चों जैसे अतिसंवेदनशील समूहों में प्रोटीन कुपोषण को कम करता है।

बैकयार्ड कुक्कुट पक्षियों का प्रबंधन

पोषण: बैकयार्ड कुक्कुट पालन में, फीड लागत को न्यूनतम माना जाता है। देशी मुर्गियां घोंघे, दीमक, बचे हुए अनाज, फसल अवशेष और घरेलू कचरे से आवश्यक प्रोटीन, ऊर्जा, खनिज और विटामिन आदि एकत्र करते हैं। टूटी हुई मूंगफली के दाने और गेहूं के दाने जैसी सामग्री भी चूजों को दी जा सकती है। परंतु बेहतर प्रदर्शन के लिए चूजों को अतिरिक्त संतुलित दाना / 30–60 ग्राम /दिन/ चूजा दिया जा सकता है। विकास की प्रारंभिक अवधि के दौरान संतुलित चिक फीड प्रदान करके ब्रूडर के तहत 4 सप्ताह की उम्र के दौरान चूजों को संतुलित आहार की आवश्यकता होती है और यदि आवश्यक हो तो पूरक कैल्शियम स्रोतों जैसे चूने के पत्थर के पाउडर, डाइसीलियम फॉस्फेट (डीसीपी), स्टोन ग्रिट, 4 से 5 ग्राम/पक्षी/लीटर) या शेल ग्रिट प्रदान किया जाना चाहिए।

संतुलित राशन के लिए सामग्री

फ़ीड सामग्री	0–8 सप्ताह	9–20 सप्ताह	20 सप्ताह से अधिक
मक्का	52	45	46
सोयाबीन	18	–	15
मूंगफली का तेल	13	13	08
चावल की पॉलिश	–		
उबले चावल की पॉलिश	15	–	22
मछली चूर्ण	–	06	–
चूना पत्थर			7
डाएकैलशिम फॉस्फेट	2	01	02
नमक (ग्राम)	200	–	300
विटामिन ए, बी, डी, के (ग्राम)	15	15	15
विटामिन बी कॉम्प्लेक्स	20	20	20
विटामिन बी 12	15	–	–
ट्रेस खनिज (ग्राम)	50	50	50
कॉक्सीडीओस्टेट	+	–	–

फर्श की जगह: चूजे को पर्याप्त दाना और फर्श की जगह दी जानी चाहिए। भीड़भाड़ के कारण तनाव और मृत्यु दर को कम करने के लिए 8 वर्ग इंच जगह की आवश्यकता होती है। 4–5 सप्ताह के दौरान, भीड़भाड़ से बचने के लिए प्रति चूजे के लिए 1 वर्ग फुट फर्श की जगह प्रदान की जानी चाहिए।

फर्श पर स्थान की आवश्यकता

आयु (सप्ताह)	फर्श की जगह (वर्ग फीट)	फीन्डग स्पेस (सेमी)	पानी की जगह (सेमी)
0–4	0.5	2.5	1.5
4–8	1.0	5.0	2.0
8–12	2.0	6.5	2.5

वेंटिलेशन: चूजों को ताजी हवा की आपूर्ति अत्यधिक आवश्यक है। ब्रूडिंग के दौरान ऑक्सीजन की कमी हो सकती है और कार्बन डाइऑक्साइड, अमोनिया आदि का निर्माण भी हो सकता इसलिए एयरटाइट पर्दे से बचा जाना चाहिए। घर और पर्यावरण के बीच गैस विनिमय की सुविधा के लिए छत और साइड पर्दे के बीच 3.5 इंच का अंतर रखना चाहिए। बदलते मौसम की स्थिति में, खिड़कियों, दरवाजों और पंखे को ब्रूडिंग के दौरान इष्टतम वेंटिलेशन बनाए रखने के लिए प्रभावी ढंग से उपयोग करने की आवश्यकता होती है।

चोंच ट्रिमिंग: चोंच की ट्रिमिंग एक महत्वपूर्ण प्रबंधन अभ्यास है। यह नरभक्षण और फ़ीड की बर्बादी को रोकने के लिए किया जाता है। बीक ट्रिमिंग एक संवेदनशील ऑपरेशन है और यह प्रशिक्षित लोगों द्वारा किया जाना चाहिए। चोंच ट्रिमिंग 3 सप्ताह में की जाती है और ऊपरी चोंच के एक तिहाई भाग को छांट कर के हटा दिया जाता है।

लिटर प्रबंधन: झुंड में रोग को नियंत्रित करने में लिटर प्रबंधन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जब पक्षियों को लकड़ी के कुणी के बिछावन पर रखा जाता है, तो उसे सूखा रखने के लिए उचित ध्यान देना चाहिए, यानि पानी के बर्तन के नीचे प्लास्टिक या बर्तन को उठा कर हल्का ऊँचा कर दें ताकि पानी गिरने से बिछावन गीला न हो। लकड़ी के कुणी के बिछावन को नियमित अंतराल पर हिलाया जाना चाहिए। बिछावन में नमी का होना पर्यावरण के तापमान, आर्द्रता, वेंटिलेशन, मल नमी, पानी की व्यवस्था की गुणवत्ता पर निर्भर करता है।

स्वास्थ्य: ग्रामीण चूजों को शुरुआती 4–5 सप्ताह की उम्र के दौरान ब्रूडिंग देखभाल की आवश्यकता होती है। 5 सप्ताह के बाद, उन्हें पिछवाड़े में अपने पोषण को पूर्ण करने हेतु बाहर खुले में छोड़ा जाता है। अतिरिक्त नर चूजों को अलग से रखा जा सकता है और मांस के उद्देश्य के लिए बाजार में बेचा जा सकता है। रात में रहने के लिए मुर्गियों के घर में अच्छा वेंटिलेशन और शिकारियों से सुरक्षा होनी चाहिए और भरपूर साफ पानी उपलब्ध होना चाहिए। मुर्गियों को मेरेक्स एवं रानीखेत रोगों के खिलाफ टीका लगाया जाना चाहिए। 3–4 महीने के अंतराल पर कृमिनाशक दवा से पीरियोडिक डीवार्मिंग होनी चाहिए।

बैकयार्ड कुक्कुट पालन प्रणाली में स्थानीय नस्लों का महत्व

बैकयार्ड में पाली जाने वाली हमारे स्थानीय देशी नस्ल व्यावसायिक मुर्गियों के कम्पटीशन के कारण धीरे–धीरे विलुप्त होते जा रहे है अगर इसका संरक्षण अभी नहीं किया गया तो यह स्थानीय देशी नस्ल सम्पूर्ण रूप से ख़तम हो जाएगा। स्थानीय देशी नस्लों के संरक्षण के साथ–साथ मांस और अंडे जैसे लक्षणों में सुधार से बाजार में देशी मुर्गियों की मांग एवं प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ेगी। स्थानीय मुर्गी नस्लों का सामाजिक–धार्मिक उपयोग, बेहतर अनुकूलन क्षमता, कम लागत उत्पादन प्रणाली में प्रदर्शन करने की क्षमता और उत्पादन प्रणाली जो जैविक उत्पादन के समान है, वाणिज्यिक पोल्ट्री उत्पादन पर बैकयार्ड प्रणाली के प्रतिस्पर्धात्मक लाभ होंगे। बैकयार्ड में पोल्ट्री रखने से बहुत अधिक लाभ मिलता है क्योंकि निवेश बहुत कम होता है।

स्वदेशी पोल्ट्री आनुवंशिक संसाधनों की स्थानीय नस्लों को निम्न कारणों से औद्योगिक पोल्ट्री उत्पादन के 50 साल बाद भी उच्च सम्मान में रखा जाता है: –

- स्थानीय मुर्गी की नस्लें उनके आवास में बेहतर अनुकूलन क्षमता प्रदर्शित करती हैं और पोषण और उप–इष्टतम प्रबंधन में जीवित रहने, उत्पादन और प्रजनन करने की क्षमता रखती हैं।
- आवश्यक लागत बहुत कम हैं, क्योंकि वे अपनी फ़ीड आवश्यकताओं को बाहर घूम–घूम कर पूरा करते हैं और थोड़ी पशु चिकित्सा देखभाल के साथ इन्हे आसानी से पला जा सकता है ।
- वे शिकारियों से खुद को बचाने की क्षमता रखते हैं।
- देशी मुर्गियों में मातृ/ब्रूडीनेस क्षमता होती है यह अपने चूजे स्वयं अंडो से निकलती है
- लोगों को और किसी नस्ल के मुर्गियों की तुलना में देशी मुर्गी के अंडे और मांस के लिए वरीयता दी जाती है, फलस्वरूप स्थानीय नस्लों के अंडे और मांस अच्छे मूल्य पर बेचे जाते हैं।
- मुर्गा लड़ाई जातीय जनजातियों के लिए एक लोकप्रिय खेल है और स्थानीय नस्लों लड़ाई में विदेशी नस्लों से बेहतर हैं।
- सामाजिक–धार्मिक उपयोग के लिए रंगीन पक्षी का उपयोग भी किया जाता है।

बैकयार्ड कुक्कुट पालन हेतु प्रमुख बिंदू

- **प्रशिक्षण:** पोल्ट्री किसानों को कृषि विज्ञान केंद्र से संपर्क करना चाहिए ताकि वे पिछवाड़े मुर्गी पालन पर बुनियादी प्रशिक्षण प्राप्त कर सकें। यह चूजों के पालन, भोजन, आवास और रोग प्रबंधन के लिए बहुत उपयोगी है।
- **प्रदर्शनी:** किसान मेलों, पशु शिविरों, पशुधन चैम्पियनशिप और अन्य पोल्ट्री प्रदर्शनियों में स्थानीय मुर्गी नस्लों की नियमित प्रदर्शनी के माध्यम से अच्छी गुणवत्ता वाले पक्षियों के चयन में मदद मिलती है।
- **स्थानीय कुक्कुट नस्लों का प्रजनन:** चूंकि अधिकांश छोटे धारक मुर्गी पालन करने वाले किसान गरीब हैं, इसलिए सरकार को बैकयार्ड के मुर्गे को अच्छी गुणवत्ता के चूजे उपलब्ध कराकर मुर्गी पालन प्रणाली को बेहतर बनाने के लिए सहायता का विस्तार करना चाहिए और पक्षियों के गुणन के लिए सुझाव देना चाहिए। एक समय सीमा के भीतर कौशल को ग्रामीण स्तर पर किसानों को हस्तांतरित करना चाहिए। हालांकि, स्थानीय जगह में ब्रूडनेस बनाए रखने की कोशिश की जानी चाहिए क्योंकि यह सिस्टम को ऑटो जेनरेट करता है। इन मुर्गियों का उपयोग घरेलू स्तर पर चूजों के उत्पादन के लिए किया जाता है।
- **रिकॉर्ड रखाव:** अंडे के उत्पादन में सुधार करने के लिए अंडे के उत्पादन को व्यक्तिगत मुर्गियों के प्रदर्शन को रिकॉर्ड करने की आवश्यकता है। यह जानकारी प्राप्त करने के लिए कोई समस्या नहीं है क्योंकि प्रत्येक मुर्गी नियमित रूप से एक अलग घोंसले में अपना अंडा देती है। यह प्रत्येक मुर्गी के लिए क्षमता और हैचिंग प्रदर्शन के बारे में जानकारी प्रदान करेगा। उच्च अंडे के उत्पादन और हैचेबिलिटी के साथ उन मुर्गियों को अगली पीढ़ी के प्रजनन के लिए चुना जाना चाहिए।

टीकाकरण अनुसूची: नीचे दिए गए टीकाकरण अनुसूची का पालन करें:

ब्रायलर मुर्गी का टीकाकरण तालिका		
टीका	**समय (उम्र)**	**मात्रा एवं तरीका**
मेरेक्स (एच. वी. टी. स्ट्रेन)	जन्म के पहले दिन (हेचरी के अंदर)	0.2 मि. ली. गर्दन के चमड़े में
रानीखेत (लसोता/एफ स्ट्रेन)	5–7 दिन	1–2 बून्द आंख में या पीने के पानी में
इन्फेक्शस बर्सल डिजीज /आइ बी डी (एम बी इंटरमीडिएट स्ट्रेन)	12–14 दिन	1–2 बून्द आंख में या पीने के पानी में

लेयर मुर्गी का टीकाकरण तालिका		
टीका	**समय (उम्र)**	**मात्रा एवं तरीका**
मेरेक्स (एच. वी. टी. स्ट्रेन)	जन्म के पहले दिन (हेचरी के अंदर)	0.2 मि. ली. गर्दन के चमड़े में
रानीखेत (एफ स्ट्रेन)	5–7 दिन	1–2 बून्द आंख में/ नाक में/ मुँह में (पीने के पानी में)
इन्फेक्शस बर्सल डिजीज /आइ बी डी (एम. बी इंटरमीडिएट स्ट्रेन)	14–15 दिन	1–2 बून्द आंख में/ नाक में/ पीने के पानी में
रानीखेत (लसोता स्ट्रेन)	27–29 दिन	1–2 बून्द पीने के पानी में
फाउल पॉक्स (बी.एम् स्ट्रेन)	4–5 सप्ताह	0.2 मि. ली. मांस में
रानीखेत (आर बी स्ट्रेस्ट्रेन)	8–10 सप्ताह	0.5 मि. ली. मांस में या चमड़े में

टीका	समय (उम्र)	मात्रा एवं तरीका
गम्बोरो (लाइव)	8 सप्ताह	1–2 बून्द मुँह में या पीने के पानी में
इन्फेक्शस ब्रोंकाइटिस	13–15 सप्ताह	1–2 बून्द मुँह में या पीने के पानी में
फाउल पॉक्स बी. एम्. स्ट्रेन)	14–15 सप्ताह	0.2 मि. ली. मांस में
एग ड्राप सिंड्रोम 76 (किल्ड) एडजुवेंट	18–20 सप्ताह	0.5 मि. ली. चमड़े में
रानीखेत डिजीज (आर बी स्ट्रेस्ट्रेन)	16–18 सप्ताह	0.5 मि. ली. मांस में या चमड़े में

विस्तार सेवाएं: स्वास्थ्य देखभाल, लागत आपूर्ति, बाजार लिंकेज और अन्य पहलुओं के लिए सेवाएं गांव स्तर पर आसानी से उपलब्ध होनी चाहिए। लोगों को स्वास्थ्य देखभाल और नस्ल विकास कार्यक्रम में भाग लेना चाहिए।

किसानों के स्तर पर बैकयार्ड कुक्कुट पालन उत्पादन बढ़ाने के लिए, विशेष रूप से ग्रामीण समुदायों के लिए एक व्यवस्थित प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, तकनीकी सहायता के साथ–साथ विस्तार और प्रेरक कार्य गांवों में भी किए जाने चाहिए ताकि किसानों को मुर्गीपालन उत्पादन की अधिक बैकयार्ड प्रणाली को अपनाने के लिए किसानों को प्रेरित किया जा सके, चूंकि यह समाज के गरीब वर्गों की स्थायी आजीविका का साधन है और इससे खाद्य उत्पादन, खाद्य सुरक्षा और ग्रामीण लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने में मदद मिलेगी। तकनीकी ज्ञान की कमी, उपयुक्त जर्मप्लाज्म की कमी, चारा के प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता में कमी और अपर्याप्त पशु चिकित्सा सहायता पारंपरिक बैकयार्ड कुक्कुट उत्पादन प्रणाली के लिए खतरनाक बाधाएं हैं।

पशु वीर्य लिंग निर्धारण : एक आधुनिक तकनीक

रजनी कुमारी, शंकर दयाल, पी. सी. चंद्रन, प्रदीप कुमार राय, ज्योति कुमार, राकेश कुमार एवं अमिताभ डे

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

सारांश

पशुपालन व्यवसाय को लाभदायक बनाने में सहायक प्रजनन तकनीकीयो की महत्वपूर्ण भूमिका है! इनके मुख्य उदहारण हैं– कृत्रिम गर्भाधान, सुपर ओव्यूलेशन, गैर सर्जिकल भ्रूण संग्रह, क्लोनिंग, वीर्य लिंग निर्धारण इत्यादि! हाल के वर्षो में वीर्य लिंग निर्धारण (स्पर्म सेक्सिंग) डेरी उद्योग में एक क्रांतिकारी तकनीकी के रूप में उभरी है। इस तकनीकी द्वारा वांछित लिंग के पशुभ्रूण की प्राप्ति की संभावना बढाई जा सकती है। हालांकि ये तकनीकी पशु प्रजनन छेत्र में एक क्रांतिकारी कदम है, परन्तु वर्त्तमान परिदृश्य में इस तकनीकी की सफल उपयोगिता के लिए अधिक शोध की आवश्यकता है।

लिंग निर्धारित वीर्य (सेक्सड सीमेन)

ऐसा वीर्य किसी एक प्रकार अर्थात एक्स अथवा वाई शुक्राणुओ में समृद्ध होता है। अतः ऐसे वीर्य के उपयोग द्वारा पशु पालन उद्योग में वांछित परिणाम पाए जा सकते है। जब एक्स वीर्य मादा जनन कोशिका अंडाण ु को निषेचित करता है, तब मादाभ्रूण उत्पन्न होता है, एवं जब वाई वीर्य अंडाणु को निषेचित करता है, तब नर भ्रूण उत्पन्न होता है। उदाहरणतः – दुधारू पशुओं जैसे गाय, भैंसों में मादा पशुओं की मांग नर पशुओं की अपेक्षा अधिक होती है, ऐसे में एक्स समृद्ध वीर्य के उपयोग द्वारा दूधारू मादा पशुओं की संख्या बढाई जा सकती है! इसी प्रकार बकरियों में नर बकरों के मांस उत्पादन की मांग पूर्ती हेतु वाई शुक्राणु समृद्ध वीर्य का उपयोग किया जा सकता है!

वीर्य लिंग निर्धारण (स्पर्म/सीमेन सेक्सग) पद्धति

स्पर्म सेक्सिंग करने के कई तरीके है, जिनमे मुख्य–एल्ब्यूमिन ग्रेडिएंट, पेर्कोल डेंसिटी ग्रेडिएंट, फ्री फ्लो एलेक्ट्रोफोरेसिस, एच– वाई एंटीजन की पहचान एवं फ्लो सायटोमेटरी है। इन सभी तरीको में फ्लो सायटोमेटरी तरीका सर्वश्रेष्ठ है।

फ्लो सायटोमेटरी पद्धति

स्पर्म सेक्सिंग करने की सफलतम पद्यति फ्लो सायटोमेटरी है, जिसका आविष्कार अमेरिकी वैज्ञानिकों द्वारा 1980 में किया गया। यह तकनीकी एक्स एवं वाई वीर्य में विद्यमान भिन्न डीएनए की मात्रा पर आधारित है। गाय भैंस के वीर्य में विद्यमान डीएनए की मात्रा 3.6 से 4 प्रतिशत की मात्रा तक भिन्न होती है.

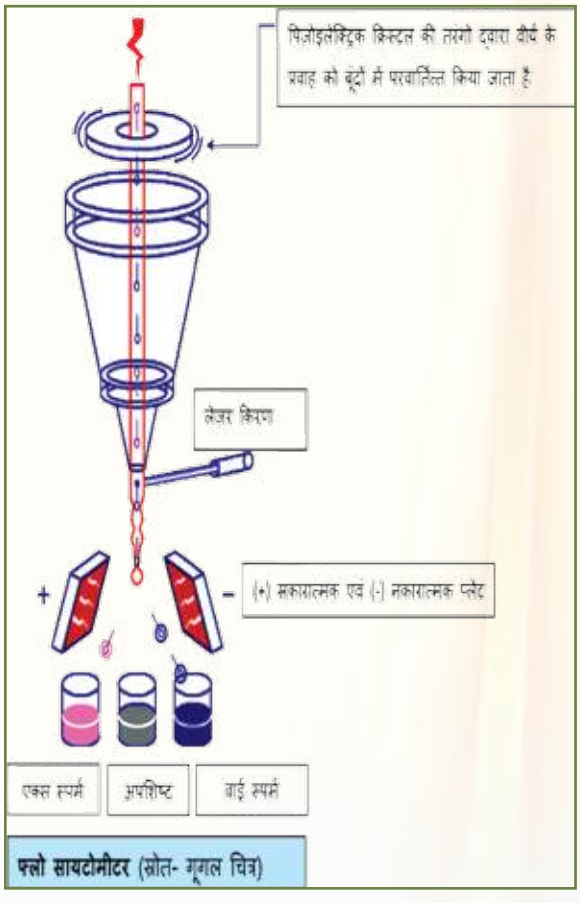

फ्लो सायटोमीटर (स्रोत- गूगल चित्र)

इस प्रक्रिया में शुक्राणु (स्पर्म) कोशिकाओ को एक डीएनए विशिष्ट फ्लोरोसेंट डाई(Hoechst– 33342) से रंगा जाता है। इन रंगी हुई कोशिकाओ को फ्लो सायटोमीटर मशीन से लेज़र किरणों के प्रभाव में प्रवाहित किया जाता है। एक्स स्पर्म में वाई स्पर्म की तुलना में डीएनए की मात्रा अधिक होती है, परिणाम स्वरुप, अधिक डाई से समाहित होती है। ये स्पर्म कोशिकाए लेज़र किरणों के प्रभाव में प्रतिदीप्त होती है। चूँकि एक्स स्पर्म में वाई स्पर्म की तुलना में अधिक डाई समाहित होती है, ये अधिक प्रतिदीप्त होती है. इस प्रतिदीप्ति को डिटेक्टर यन्त्र द्वारा मापा जाता है, एवं कंप्यूटर पर विश्लेषण किया जाता है। इन शुक्राणु कोशिकाओ को विद्युत चार्ज प्रदान कर, (+) सकारात्मक एवं (–) नकारात्मक प्लेटो के मध्य से गुज़ारा जाता है। अधिक डीएनए की मात्रा होने से एक्स स्पर्म में अधिक नकारात्मक चार्ज होता है, एवं ये कोशिकाए सकारात्मक प्लेट की ओर आकर्षित हो जाती है, इसी प्रकार वाई स्पर्म कोशिकाओ में तुलनात्मक रूप से नकारात्मक चार्ज कम होता है, अतः सकारात्मक प्लेट की ओर कम आकर्षित होती है। कुछ कोशिकाएं किसी भी प्लेट की ओर आकर्षित नहीं हो पाती एवं अपशिष्ट कोशिकाओ के रूप में संगृहीत होती है।

इस पद्यति द्वारा 35000 से 15 मिलियन कोशिकाओं को प्रति घंटे 85–90 प्रतिशत शुद्धता से छांटा जा सकता है। इस तकनीकी का उपयोग सर्वप्रथम खरगोश में जॉनसन वैज्ञानिक द्वारा 1981 में वीर्य के लिंग जांच के लिए किया गया। तत्पश्चात इस तकनीकी का उपयोग पशुओं की अन्य प्रजातियों के वीर्य पर भी किया गया। गार्नर वैज्ञानिक के अनुसार इस तकनीकी द्वारा वीर्य के लिंग जांच 85% – 92% तक सही होती है। इस तकनीकी का व्यवसायीकरण भी कई कंपनियों द्वारा किया गया है।

सेक्सड सीमेन के उपयोग से जुड़े लाभ एवं समस्यायें

भारतीय परिदृश्य में दुधारू पशुओं में मादा लिंग के पशु अधिक वांछनीय है. अतः इस तकनीकी द्वारा मादा लिंग के पशुओं की संख्या में वृद्धि एवं नर लिंग के पशुओं की संख्या में कमी लाई जा सकती है. अधिक मादा पशुओं की संख्या के परिणामस्वरूप दुग्ध उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। अनवांछित नर पशुओं की कमी से ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन में भी कमी होगी, जिससे ग्लोबल वा मग समस्याओ से भी जूझा जा सकता है। कई शोधों में यह भी पाया गया है, कि सेक्सड सीमेन के उपयोग से कठिन प्रसव के मामलो में भी कमी आती है। अतः, सेक्सड सीमेन डेरी किसानो के लिए किसी वरदान से कम नहीं है। परन्तु डेरी किसानो के इस वरदान के साथ कुछ चिंताये भी जुडी है। वर्त्तमान में सेक्सड सीमेन का उपयोग केवल बछिया पर उपयोग के लिए ही अनुसंशित है। गायों में सेक्सड सीमेन द्वारा होने वाले गर्भधारण की दर अलैंगिक सीमेन द्वारा होने वाले गर्भधारण की दर की तुलना में 70:–75: कम होती है, जो एक चिंता का विषय है। सेक्सड सीमेन का उपयोग किसानो के लिए महंगा भी है। प्रत्येक सेक्सड सीमेन के डोज़ (स्ट्रॉ) की कीमत लगभग 1200 रु. होती है, जो अलैंगिक सीमेन के डोज़ (स्ट्रॉ) की कीमत की तुलना में बहुत अधिक है।

"सेक्सड सीमेन उत्पादन" – भारत की स्थिति

वर्त्तमान में भारत में कोई भी एजेंसी नहीं है, जो बड़े पैमाने पर सेक्सड सीमेन का उत्पादन करती है. अधिकाँश राज्य इसके लिए संयुक्त राज्य अमेरिका एवं कनाडा देशो से आयात पर निर्भर है। "एबीएस इंडिया इंक" अकेले हर साल सेक्स्ड सीमेन के 10 लाख स्ट्रॉ का आयात करता है। "पंजाब प्रोग्रेसिव डेयरी फार्मर्स एसोसिएशन" लगभग 20,000 खुराक की खरीद के साथ भारत में सबसे बड़ा उपभोक्ता है। हालांकि कई भारतीय राज्य इन आयात किये हुए सेक्सड सीमेन के स्ट्रॉ का उपयोग कर रहे है, परन्तु ज़मीनी स्तर पर ये (विदेशी) सेक्सड सीमेन के स्ट्रॉ स्वदेशी पशुओं के लिए कम अनुकूल होते है। यदि स्वदेशी पशुओं एवं स्वदेशी तकनीकी द्वारा स्वदेश में ही सेक्सड सीमेन का उत्पादन किया जाए, तो यह न केवल किफायती होगा, बल्कि स्वदेशी पशुओं के लिए अनुकूल भी होगा. इस दिशा में 2009 में पश्चिम बंगा गो–संपद विकास संस्था, पश्चिम बंगाल सरकार, भारत संगठन, ने फ्लो साइटोमीटर का उपयोग करके प्रति दिन 40–50 सेक्स्ड सीमेन स्ट्रॉ की उत्पादन क्षमता के साथ वीर्य लिंग निर्धारण का कार्य शुरू किया। इस वीर्य के उपयोग द्वारा गायों में गर्भधारण की दर 20.7 प्रतिशत और बछिया में 35.3 प्रतिशत पाई गई। भारत सरकार ने इस दिशा में वैज्ञानिक शोध हेतु कई योजनाये भी लागू की है। "राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान

संस्थान'', करनाल को भी किसानों को सेक्सड सीमेन के स्ट्रॉ उपलब्ध कराकर देश में देसी और क्रॉसब्रेड गायों को बढ़ाने के उद्देश्य से मवेशियों के वीर्य लिंग निर्धारण हेतु 55 करोड़ रुपये के बजट के साथ वित्त पोषित किया गया है। पशुपालन विभाग ने सेक्सड सीमेन के उत्पादन के लिए 10 सुविधाएं स्थापित करने की योजना बनाई है, जिसमें ''केंद्रीय हिमिकृत वीर्य उत्पादन और प्रशिक्षण संस्थान'' भी शामिल है।

निष्कर्ष

वीर्य लिंग निर्धारण एक अद्भूत एवं क्रांतिकारी सहायक प्रजनन तकनीकी है। इस तकनीकी के उपयोग द्वारा उत्पादित सेक्सड सीमेन का प्रयोग डेरी किसानों के लिए वरदान का रूप है। भारतीय परिदृश्य में इस तकनीकी के सफल कार्यान्वयन हेतु इस दिशा में अधिक शोध की आवश्यकता है, जिससे स्वदेशी नस्ल का किफायती सेक्सड सीमेन उत्पादन किया जा सके।

आर्सेनिक ग्रसित क्षेत्रों में पशु प्रबंधन

[1]मनोज कुमार त्रिपाठी, [1]पंकज कुमार, [2]अंजली', [1]अमिताभ डे एवं [1]कमल शर्मा

[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

[2]भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर, बरेली

सारांश: आर्सेनिक पृथ्वी की पपड़ी का एक प्राकृतिक घटक है और पूरे पर्यावरण अर्थात् हवा, पानी और जमीन में व्यापक रूप से वितरित रहता है। अनुमेय सीमा से अधिक आर्सेनिक के सेवन से मनुष्य एवं पशु दोनों नकारात्मक रूप से प्रभावित होते है। मुख्य रूप से पीने के पानी और भोजन के माध्यम से अकार्बनिक आर्सेनिक के लंबे समय तक संपर्क से आर्सेनिक विषाक्तता हो सकती है। मनुष्यों में त्वचा के घाव और त्वचा कैंसर सबसे विशिष्ट नकारात्मक प्रभाव हैं। पशु, मनुष्य की तुलना में आर्सेनिक के प्रति कम संवेदनशील होते है परन्तु अधिक मात्रा में तीव्र (एक्यूट) आर्सेनिक विषाक्तता से तीव्र रक्तसंचार पतन की वजह से मृत्यु भी हो सकती है। दीर्घकालिक वातावरणीय आर्सेनिक के प्रदूषण से आम तौर पर जानवरों में बाहरी लक्षण प्रकट नहीं होते है, परन्तु उनके उत्पादकता पर कुप्रभाव पड़ सकता है। जानवरों और मनुष्यों को पानी आहार और वातावरण में अनुमेय सीमा से कम आर्सेनिक की उपलब्धता ही इसका सबसे अच्छा उपाय है। अधिक मात्रा में आर्सेनिक का तीव्र सेवन (एक्यूट केस) पर लक्षण के अनुसार इलाज करते है। उच्च गुणवत्ता के प्रोटीन का का भरपूर मात्रा में सेवन करने से आर्सेनिक का विषाक्त प्रभाव कम हो जाता है। एंटीऑक्सिडेंट्स एवं फोलिक एसिड (फोलेट) का इस्तेमाल भी आर्सेनिक विषाक्तता को कम करने में कारगर होता है।

प्रस्तावना: आर्सेनिक एक अत्यंत विषैला जैव संचयी तत्त्व है जोकि पूरे विश्व में न केवल मनुष्यों को अपितु पशुओं को भी प्रभावित करता है। मनुष्यों में आर्सेनिक कैंसर के प्रमुख कारणों में से एक है। बिहार के 38 जिलों में से 18 जिले ऐसे है जिनके कई क्षेत्रो के भूजल में आर्सेनिक की मात्रा विश्व स्वास्थ्य संगठन की अधिकतम अनुमेय सीमा (10 माइक्रोग्राम प्रति लीटर पानी) से अधिक पायी गयी है जिसकी वजह से बिहार के एक करोड़ से अधिक लोग आर्सेनिक प्रदूषित जल से प्रभावित है। बक्सर, भोजपुर, पटना, सारण, वैशाली, समस्तीपुर, बेगूसराय, खगरिया, मुंगेर और भागलपुर आदि जिले जोकि गंगा घाटी के किनारे है उनमे आर्सेनिक की समस्या अधिक है। आर्सेनिक की मात्रा भूतल में पानी की गहराई पर निर्भर करती है। ऐसा पाया गया है कि150 फीट से नीचे के पानी में इसकी मात्र धीरे–धीरे कम होने लगती है। पशुओं में आर्सेनिक जल, मृदा, पादप/ चारा से पहुंचता है, जहाँ से पशु उत्पाद (जैसे मीट, अंडा, दूध इत्यादि) से होता हुआ पुनः मनुष्यों में पहुंचता है और इस तरह पूरे खाद्य श्रृंखला को प्रदूषित करता है। मनुष्यों की तुलना में पशुओं में इसका प्रभाव कम होता है और यहाँ तक की सूअरों में तथा मुर्गियों में इसे शारीरिक वृद्धि के लिए आहार में भी मिलाकर देते है। मुर्गीयों में प्रतिकिलो आहार में 0.012 से 0.050 मिग्रा आर्सेनिक दे सकते है। योरोपियन यूनियन ने समस्त पशुओं के लिए अधिकतम मात्रा 2 मिग्रा/ किलोआहार (12% आर्द्रता के साथ) तय किया है। परन्तु पशुओं में भी दीर्घकालिक आर्सेनिक सेवन से स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएं हो सकती है। इसके अलावा उनके उत्पादों जैसे मीट दूध या अंडो में भी इसकी मात्रा अधिक हो सकती है जोकि पुनः मनुष्यों में आर्सेनिक विषाक्तता का कारण बन जाता है। आर्सेनिक, अकार्बनिक तथा कार्बनिक दोनों रूपों में पाया जाता है। अकार्बनिक रूप (जैसे, आर्सेनिक ट्रायऑक्साइड, सोडियम आर्सेनाइट, आर्सेनिक ट्राइक्लोराइड, लेड आर्सेनेट और कैल्शियम आर्सेनेट) पीने के पानी में पाया जाता है। इसका कार्बनिक (मिथाइलारसोनिक एसिड, डाइमिथाइलर्सिनिक एसिड, आर्सेनिलिक एसिड) रूप जीवित जीवों में उपापचय के बाद बनते है तथा फलों एवं सब्जिओं में पाया जाता है। भारत के गंगा क्षेत्र के भूजल में आर्सेनिक संदूषण का प्रमुख कारण भूवैज्ञानिक (जैसे ऊपरी हिमालय के आर्सेनिक युक्त पत्थरो के तीव्र

अपक्षय) होने के साथ साथ, मानव जनित गतिविधियां जैसे खनन, स्मेल्टिग, औद्योगिक प्रक्रियाएं, कृषि क्षेत्रो में आर्सेनिक युक्त कीटनाशकों एवं उर्वरकों का उपयोग भी है।

पशुओं में इसका प्रभाव– आर्सेनिक की विषाक्तता खुराक की मात्रा और लेने की अवधी पर निर्भर करती है। आर्सेनिक दूषित क्षेत्र में पीने के पानी में आर्सेनिक की अधिक मात्रा मानव और पशु दोनों में आर्सेनिक विषाक्तता का एक संभावित कारक हो सकती है। लम्बे समय तक आर्सेनिक दूषित क्षेत्र में पशुओं और मानव दोनों में त्वचा सम्बन्धी रोग हो जाता है। मनुष्यों की तरह पशुओं में भी आर्सेनिक कैंसर कारक है। हालांकि, पशु मनुष्य की तुलना में आर्सेनिक के प्रति कम संवेदनशील होते है तथा सबक्रोनिक या क्रोनिक (दीर्घकालिक) वातावरणीय आर्सेनिक के प्रदूषण से आम तौर पर जानवरों में बाहरी लक्षण प्रकट नहीं होते है लेकिन ऐसे आर्सेनिक प्रदूषित क्षेत्रो के जानवरों के रक्त, बाल, खुर और मूत्र में आर्सेनिक (या मेटाबोलाइट्स) की उच्च सांद्रता होती है। यह माना जाता है कि रक्त, मूत्र, बाल या दूध में आर्सेनिक की सांद्रता का उपयोग जानवरों में आर्सेनिक के जोखिम को बताने में बायोमार्कर के रूप में कर सकते है क्योकि लम्बे समय में इन ऊतकों में आर्सेनिक जमा हो जाता है।

अधिक मात्रा में आर्सेनिक का तीव्र सेवन (एक्यूट केस) होने पर तीक्ष्ण उल्टी, दस्त, मांसपेशियों में ऐठन तथा रक्तवाहिनिओं में घाव हो जाता है तथा तीव्र रक्तसंचार पतन की वजह से मृत्यु भी हो सकती है। जबकि इसके दीर्घकालिक (क्रोनिक) सेवन से लिवर, किडनी क्षतिग्रस्थ हो जाते है तथा त्वचा में हाईपर–किरेटोसिस हो जाता है। गायों में तीक्ष्ण दस्त के अलावा, आंतो में सूजन तथा रक्तस्राव होना, भूख कम लगना, कमजोरी होना, साँस लेने में दिक्कत होना, रक्त अपघटन होना जिससे खून की कमी या एनीमिया का हो जाना, पीलिया का होना या कभी कभी आकस्मिक मृत्यु हो जाना है। कई सप्ताह तक 250 पीपीएम से ज्यादा देने पर गायों में कूल्हे या अंगों के अन्य जोड़ों में तंतुमयता की वजह से कठोरता तथा असमान अथवा विषम वृद्धि हो जाती है। आर्सेनिक की विषाक्ता होने पर मवेशी लड़खड़ाकर चलता है। एक प्रयोग में बकरिओं को 75 से 100 मिग्रा प्रति किग्रा शरीर भार के हिसाब से आर्सेनिक को सोडियम आर्सेनाइट के रूप में 6 सप्ताह तक खिलाया गया तो पाया गया की बकरियां सुस्त हो गयी, खड़े होने में दिक्कत के अलावा मूत्र का रंग लाल हो गया, ह्रदय गति एवं स्वांस दर में वृद्धि हो गयी तथा शरीर का वजन कम हो गया।

बचाव एवं ईलाज– अभी तक इसका कोई सटीक इलाज नहीं है। पशुओं और मनुष्यों को पानी आहार और वातावरण में अनुमेय सीमा से कम आर्सेनिक की उपलब्धता ही इसका सबसे अच्छा उपाय है। आर्सेनिक को अलग करने के लिए झिल्ली तकनीकि जैसे आरो , नैनो फिल्ट्रेशन या एलेक्ट्रोडायलीसिस का उपयोग कर सकते है पर ये काफी ख़र्चीला उपाय है। गहरे नलकूप का इस्तेमाल, वर्षा जल संचयन, ऊपरी तह का पानी जैसे संरक्षित तालाब, तालाब रेत फिल्टर, संयुक्त फिल्टर, घरेलू फिल्टर इत्यादि का उपयोग, आर्सेनिक के स्तर को कम कर सकते है। साफ बर्तन में पानी को काफी देर तक रख देने के बाद अवसादन की वजह से काफी आर्सेनिक नीचे बर्तन में बैठ जाता है तथा ऊपर के पानी में आर्सेनिक की मात्रा कम होने से इसका उपयोग कर सकते है। पारदर्शी बोतल में पानी धूप में रखने से आर्सेनिक (III) ऑक्सीकरण द्वारा आर्सेनिक (V) में बदल जाता है जो कम विषाक्त होता है। इसके अलावा ब्लीचिंग पाउडर, क्लोरीन, पोटैशियम परमैगनेट (लालदवा) के द्वारा अवक्षेपण या अधिशोषण कर आर्सेनिक कम कर सकते है। एल्युमीनियम फिटकरी, फेरिक क्लोराइड या फेरिक सल्फेट का भी आर्सेनिक को कम करने में इस्तेमाल हो सकता है। भोजन में सबसे ज्यादा आर्सेनिक चावल से आता है। चावल को आक्सीय तरीके से उगाए जाने पर उसमे आर्सेनिक की मात्रा अनाक्सीय तरीके से उगाने की तुलना में कम हो जाती है। इसी तरह धान की फसल को परंपरागत बाढ़ विधि से सिचाई की तुलना में स्प्रिंकलर विधि से करने पर चावल में आर्सेनिक की मात्रा कम हो जाती है। चावल या अन्य अनाज को पर्याप्त पानी में बहुत अच्छे से धुलने पर भी आर्सेनिक की मात्रा कम हो जाती है क्योकि आर्सेनिक पानी में गतिमान होता है। हाल ही में कुछ ऐसे चावल की प्रजातियां विकसित की गयी है जो कम आर्सेनिक का एकत्रण करती है। इसके अलावा ऐसे जीवाणुओं की खोज हुई है जो की आर्सेनिक का उपयोग करते है और आर्सेनिक से भरपूर जगहों पर पाए जाते है भविष्य में ऐसे जीवाणुओं का भी उपयोग पानी से आर्सेनिक को दूर करने में किया जा सकता है। प्रोटीन, कोलीन, या मेथियोनीन का कम सेवन मूत्र के माध्यम

से आर्सेनिक के चयापचय और उत्सर्जन को कम कर सकता है अतः उच्च गुणवत्ता के प्रोटीन का भरपूर मात्रा में सेवन करने से आर्सेनिक का विषाक्त प्रभाव कम हो जाता है। आर्सेनिक की वजह से रिएक्टिव ऑक्सीजन स्पीशीज या फ्री रेडिकल अधिक बनते है जिससे कोशिकाओं को काफी क्षति होती है अतः एंटीऑक्सिडेंट्स का सेवन काफी लाभदायक होता है। फोलिक एसिड (फोलेट) का इस्तेमाल भी आर्सेनिक विषाक्तता को कम करने में कारगर होता है। अधिक मात्रा में आर्सेनिक का तीव्र सेवन (एक्यूट केस) पर लक्षण के अनुसार इलाज करते है जैसे रक्त की नशों में इलेक्ट्रोलाइट एवं द्रव चढ़ाते है। डिमेरकेप्रोल जिसे ब्रिटिश एंटी लेविसाइट (या बीएएल) के रूप में भी जाना जाता है), पहले आर्सेनिक के लिए सबसे अधिक उपयोग की दवा थी, वर्तमान में उसकी जगह 2–3–डिमरकैप्टो–1–प्रोपेनसल्फोनेट (डीएमपीएस) या मेसो 2, 3–डिमर–कैप्टोसुक्निक एसिड (डीएमएसए) है। ये बीएएल की तुलना में अधिक पानी में घुलनशील होते हैं, और इन्हें कम विषाक्तता के साथ मौखिक रूप से प्रशासित किया जा सकता है। खून में सोडियम थायोसल्फेट को 40 मिलीग्राम / किग्रा भार से 8 घंटे चढाने से शरीर से आर्सेनिक को हटाने में उपयोगी है। विटामिन ई जैसे एंटीऑक्सीडेंट को इसके विषाक्त प्रभावों को कम करने के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है।

निष्कर्ष:

आर्सेनिक ग्रसित क्षेत्रों में पशुओं के लिए 150 फीट से ज्यादा गहरे जल स्तर के पानी का उपयोग करना चाहिए। पशुओं को उच्च गुणवत्ता का प्रोटीन युक्त आहार और साथ में फोलेट भी दें।

आकर्षक रंगीन मछलियों की एक झलक

तारकेश्वर कुमार, कमल शर्मा, सुरेन्द्र कुमार अहिरवाल, जसप्रीत सिंह, विवेकानंद भारती एवं पंकज कुमार

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

परिचय

रंगीन मछलियों को स्वदेशी और विदेशी दो भाग में वर्गीकृत किया गया है। बड़ी संख्या में देशी प्रजातियों की उपलब्धता ने देश में रंगीन मछली उद्योग के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। विश्व भर में 2000 से भी अधिक रंगीन मछलियों की प्रजातियों का आयात–निर्यात किया जाता है। भारत में लगभग 100 देशी रंगीन मछलियों की प्रजातियाँ पायी जाती है, जिनको व्यवसायिक दृष्टिकोण से विश्व स्तर पर महत्व दिया गया है। भारत में रंगीन मछलियों की करीब 300 से अधिक देशी एवं विदेशी प्रजातियॉ पाई जाती है, जिसका संवर्धन एक्वेरियम (मछली घर) में किया जाता है।

भारत से निर्यात की जाने वाली प्रमुख मछलियाँ उत्तर–पूर्व और दक्षिणी राज्यों की नदियों से एकत्रित किया जाता है जो देश से सभी प्रकार की रंगीन मछलियों के कुल निर्यात में लगभग 85 प्रतिशत योगदान करती हैं। मत्स्य प्रजातियों की समृद्ध जैव विविधता, जलवायु परिस्थितियों एवं सस्ते श्रम की उपलब्धता के कारण भारत में रंगीन मछली उत्पादन में काफी संभवनाएँ हैं।

एक्वैरियम में रंगीन मछली पालन के लाभ

- यह युवा और बूढ़े लोगों को खुशी देता है।
- यह दिमाग को आराम देता है तथा जीवनकाल बढ़ाता है।
- यह रक्तचाप को सामान्य स्तर पर रखने में मदद करने के साथ–साथ हृदय संबंधी बीमारियों से भी बचाता है।
- बच्चे नए ज्ञान और कौशल प्राप्त कर सकते हैं, एक एक्वेरियम में मछलियों की संख्या की गणना करके उन्हें गणितीय ज्ञान प्राप्त होता है और मछलियों के व्यवहार, रंग और पंख के आकार को देखकर उन्हें वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त होता है।
- बच्चे प्रकृति के बारे में अधिक जान पाते हैं और अपने समय का सदुपयोग करते हैं।
- बच्चों में प्रकृति के प्रति लगाव की भावना विकसित हो सकती है।
- यह स्वरोजगार के अवसर पैदा करता है।
- अन्य पालतू जानवरों की तुलना में रंगीन मछली रखना आसान है क्योंकि वे शोर नहीं करते हैं और दैनिक रूप से टैंक की सफाई की भी आवश्यता नहीं होती है (जैसे कुत्ते का भोकना, कुत्ते और शेड की दैनिक सफाई जरूरी)।
- माना जाता है कि अरोवाना जैसी रंगीन मछलियाँ सौभाग्य, धन और समृद्धि लाती है।

महत्वपूर्ण रंगीन मछलियों का विवरण एवं पहचान

1. गोल्ड फिश

यह कई प्रकार के रंगों में पाई जाती है। इसका नैसर्गिक भाग हल्का लाल, पृष्ठीय भाग हल्का भूरा, पार्श्व भाग सुनहरा और आधारीय भाग हल्के पीले रंग का होता है। यह मूल रुप से सभी प्रकार के आहार का सेवन करती है तथा जीवित आहार को ज्यादा पसंद करती है। अन्य रंगीन मछलियों की अपेक्षा इस मछली की कई किस्में पाई जाती हैं, जो बहुत सहनशील तथा पालतू होती है।

यह कई रंग की पाई जाती है। ये अधिकांश एलविनो, नारंगी तथा सुनहरे लाल रंग की होती हैं तथा कई प्रकार के धब्बेदार गोल्ड फिश भी पाई जाती हैं। अगर एक्वेरियम में आहार की कमी होती है, तो ये पौधे के जड़ में लगे शैवाल को निकालकर खाती हैं। यह 20 सेंटीमीटर तक लंबी हो सकती है। जब ये 6 सेंटीमीटर तक बढ़ जाती हैं तो परिपक्व हो जाती हैं तथा इनका प्रजनन कराया जा सकता है। जब प्रजनन का मौसम आता है तो नर मछली के ऑपर कूलार (गल्फर) भाग पर उजला सूक्षम वर्ण (टूवरकिल्स) बन जाते हैं तथा पूर्ण रुप से परिपक्व मादा का पेट पूर्णतः अण्डे से भरकर फूल जाता है। यह चिपकने वाले अण्डे देती है तथा इनके अण्डे पौधे या अन्य आधार पर चिपक जाती हैं। गोल्ड फिश के प्रजनन के लिए पानी का तापमान 24 से 28 डिग्री सेल्सियस अच्छा माना जाता है।

2. सियामेंस फाइटिंग फिश

ये बहुत ही सुंदर एवं प्रसिद्ध मछली हैं। इनमें नर मछलियों का पंख लंबा होता है, और यह पुच्छीय पंख के शुरूआती बिंदु तक पहुचती है। जबकि मादा का पंख छोटा तथा हल्के रंग का होता है। ये दूसरे प्रजाति के समुदाय की मछलियों के साथ–साथ अपनेप्रजाति के समुदायों में भी नहीं रहती है। अकेले रहना ही इनकी

प्रवृति है। ये 5 सेंटीमीटर तक बढ़ सकती है तथा ये वायु श्वासी होती हैं और ये पानी की सतह से वायु लेने के लिए आते–जाते रहती हैं। ये मछलियाँ भी कई रंग के बाजारों में उपलब्ध हैं। जैसे हरे, लाल, नीले और पीलेपन के साथ गुलाबी आदि। कभी–कभी ये दो तीन रंगों के साथ भी होती हैं (चित्तकबरा)। जब इनका आकार 2 से 3 सेंटीमीटर हो जाता है तो ये परिपक्व हो जाती हैं। इनके प्रजनन के लिए पर्याप्त तापमान 24 से 28 डिग्री सेल्सियस होता है।

3. एंजल फिश

यह मछली रंगीन मछलियों के मत्स्यालय में राजा के रुप में जानी जाती है। इसका स्वरुप काफी आकर्षक एवं सुंदर होता है। इसका आकार 10 से 15 सेंटीमीटर का होता है तथा ये पौधे लगे टौंको में भी आसानी से रहती हैं। वैसे तो ये मांसाहारी होती हैं, लेकिन तैयार आहार भी आसानी से खा लेती हैं। ये ज्यादा से ज्यादा 15 सेंटीमीटर तक बढ़ सकती है। इसके शरीर पर काली धारियों के साथ इनका रंग आमतौर पर काला, भूरा और

एल्वीनों भी होता है। इस मछली के बहुत सारे किस्में हैं। उनमें मुख्यतः काली वीलवेल, मार्बेल और एल्वीनो एंजेल हैं। ये बहुत ही संवेदनशील होती हैं और अगर एक्वेरियम के सामने कोई सामान दिखाने से डर जाती हैं। ये चिपकने वाले अण्डे देती हैं, जो जलीय वनस्पतियों की पत्तियों से चिपक जाते हैं। नर नवजात शिशु मछली की देख–भाल करते हैं। जब ये 10–12 सेंटीमीटर की हो जाती है तो परिपक्व तथा प्रजनन के लिए उपयुक्त होती हैं। इनके प्रजनन के लिए उपयुक्त पानी का तापमान 24 से 25 डिग्री सेल्सियस माना जाता है।

4. नियॉन ट्रेटा

यह बहुत ही अच्छी दिखने वाली नीले व लाल रंग की मछली है जिसे लोग बड़ी ही सरलता के साथ पहचान लेते हैं। इसके शरीर का ऊपरी भाग नीला तथा निचला भाग लाल रंग का होता है इस मछली के शरीर पर दोनों ओर चमकदार पट्टीयाँ होती हैं। जब प्रकाश की किरणें इस पर पड़ती हैं तो ये जलती हुई नियॉन प्रकाश की भाँति प्रतिबिंबित होती है। इसलिए इसे नियॉन ट्रेटा या ग्लो लाइट मछली कहते हैं। मादा अपेक्षाकृत मोटी होती है और गुदीय पंख थोड़ा झुका होता है। यह बहुत

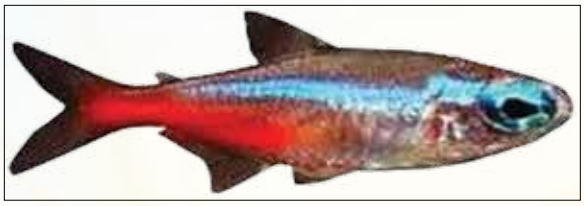

ही आकर्षक रंगीन मछली है और एक्वेरियम के लिए अतिउपयुक्त होती है। जब ये 3 सेंटीमीटर लंबी हो जाती है तो परिपक्व तथा प्रजनन के लिए उपयुक्त होती है। इसके प्रजनन के लिए 20 से 24 डिग्री सेल्सियस पानी तापमान उपयुक्त माना जाता है।

5. डिस्कस फिश

डिस्कस मछली एक्वेरियम के राजा के रूप में जाना जाता है। इस मछली की देख–भाल बहुत सावधानीपूर्वक किया जाता है। यह शांत स्वभाव की मांसाहारी मछली है, जो कि ट्युबी फैक्स कृमि खाना

पसंद करती है। यह अमेजन नदी धाटी के मूल निवासी है। इसकी कई प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जैसे कोबाल्ट डिस्कस, ब्लू डिस्कस, ब्लू–सिर डिस्कस, लाल थंडर, मार्लबोरो लाल, आदि। यह लगभग 15 सेंटीमीटर तक बढ़ता है और इसके पालन हेतु आर्दश तापमन 27–30 डिग्री सेल्सियस उपयुक्त माना जाता है।

6. जेब्रा फिश

यह बहुत ही सहनशील तथा सुंदर मछली है और इसका शरीर रुपहले भूरे रंग का होता है। इसके शरीर पर सिर से पूंछ तक गहरे नीले रंग की स्पष्ट धारियॉ होती हैं। यह प्रायः तेजी से एक्वेरियम के सतही भाग पर तैरती है। यह अधिक से अधिक 6 सेंटीमीटर तक बढ़ सकती है। जब ये 4–5 सेंटीमीटर की होती हैं तो परिपक्व हो जाती हैं तथा प्रजनन के लिए भी उपयुक्त होती हैं। इसके प्रजनन के लिए पानी का तापमान 20–24 डिग्री सेल्सियस उपयुक्त होता है तथा इसके प्रजनन के समय कंकड़ युक्त एक्वेरियम के तली के साथ पानी की

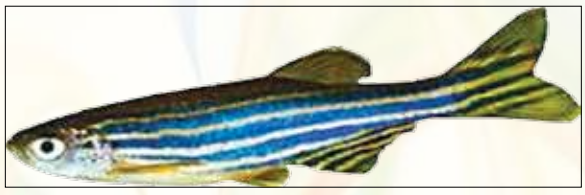

गहराई कम से कम 10 सेंटीमीटर होनी चाहिए। इनके अण्डे बिना चिपकने वाले होते हैं तथा अण्ड जनन के बाद ये अण्डे एक्वेरियम में रखे कंकड़ों के बीच बैठ जाते हैं। अण्ड जनन के बाद नर व मादा को एक्वेरियम से बाहर निकाल लेना चाहिए।

7. इण्डियन ग्लास फिश

यह बहुत शांत स्वभाव की मछली हैं जो सामूहिक एक्वेरियम के लिए उपयुक्त होती है। ये ज्यादा से ज्यादा 7 सेंटीमीटर तक बढ़ सकती है। इसके सिर के आगे का भाग विशेष रुप से निकला हुआ होता है तथा शरीर हीरे के आकार का होता है। ये हल्के हरे पन के साथ शरीर के पार्श्व में दबा हुआ पारभाषी होता है। इसमें

नर के पंख का किनारा हल्का गाढ़ा रंग का होता है। ये चिपचिपे अण्डे देती है जो जलीय वनस्पतियों की पत्तियों में चिपक जाते हैं। जब ये 5–6 सेंटीमीटर तक बढ़ जाती है तो ये परिपक्व हो जाती है तथा प्रजनन के लिए तैयार हो जाती है। इसके प्रजनन के लिए पानी का तापमान 20–25 डिग्री सेल्सियस उपयुक्त माना जाता है।

8. ब्लैक विंडोट्रेटा

इसका आकार अन्य अण्ड प्रजनक मछलियों की अपेक्षा थोड़ा छोटा होता है तथा क्लोम के पीछे दो उर्ध्वाधर धारियों के साथ इनके शरीर का रंग सिल्वरी ग्रे होता है। इसका पृष्ठीय पंख काला, नीचे का पंख तथा अंश पंख का किनारा रंगीन होता है। नर की अपेक्षा मादा थोड़ी मोटी और बड़ी होती है। प्रजनन के बाद अण्डा जलीय वनस्पतियों से चिपक जाता है। प्रजनन के बाद नर व मादा को एक्वेरियम से अलग कर देना चाहिए। ये

6–8 सेंटीमीटर में परिपक्व हो जाती हैं तथा प्रजनन के लिए पानी का तापमान 20–28 डिग्री सेल्सियस उपयुक्त माना जाता है ।

9. सर्पोट्रेट ट्रेटा

इसका शरीर नारंगी रंग का होता है तथा इनके पंख रंगहीन होते हैं। ये 4–5 सेंटीमीटर लंबे हो सकते हैं और बहुत ही आकर्षक होती हैं। ये बहुत ही चंचल होती हैं तथा नर का रंग चमकदार और भड़कीला होता है। मादा नर की अपेक्षा थोड़ी मोटी होती है। इनके अण्डे भूरे रंग के होते हैं। प्रजनन के बाद जब अण्डों से बच्चे बाहर

निकल जाते है प्रजनकों को बाहर निकाल दिया जाता है। जिस एक्वेरियम में ये मछलियाँ होती हैं तो उसे कम प्रकाश वाले भागों में रखा जाता है। इसके एक्वेरियम माइरियोफाइलम जैसे पौधों को रखना अच्छा होता है। ये 3–4 सेंटीमीटर में परिपक्व हो जाती हैं तथा प्रजनन के लिए तैयार हो जाती हैं। प्रजनन के लिए पानी का तापमान 24–27 डिग्री सेल्सियस अच्छा होता है।

10. रोजी बार्ब

ये बहुत ही अनुकूलनशील तथा लोगों में बहुत ही लोकप्रिय एक्वेरियम मछली हैं इनकी लंबाई अधिक से अधिक 9 सेंटीमीटर तक बढ़ सकती है। इसके शरीर पर एक विशेष प्रकार की गुलाबी रंग का किनारा होता है, जिससे ये बहुत अधिक आकर्षक दिखते हैं। नर का

उदरीय भाग काला रंग का होता है तथा पृष्ठीय, गुदीय और श्रेणी पंख के नोक गहरे रंग के होते हैं। ये एक वर्ष में कई बार प्रजनन कर सकते हैं। जब इन मछलियों का आकार 7–8 सेंटीमीटर हो जाता है तो ये परिपक्व हो जाते है तथा इनका प्रजनन कराया जा सकता है। प्रजनन के लिए पानी का तापमान 21–23 डिग्री सेल्सियस अच्छा होता है।

11. टाइगर बार्ब

ये मछलियाँ गुलाबी–लाल रंग की होती हैं तथा इसके शरीर पर काली धारियाँ होती हैं, जो इसे और भी मनमोहक बना देती हैं। इनमें नर मछलियों के थुथन बहुत ही गहरे लाल रंग का होता है। ये 5–6 सेंटीमीटर

तक बढ़ते हैं। जब ये 4 सेंटीमीटर की हो जाती हैं तो परिपक्व हो जाती है तथा प्रजनन के लिए तैयार हो जाती है। जब ये 3–4 सेंटीमीटर की हो जाते हैं तो एक–दूसरे का पीछा करते हैं तथा एक–दूसरे के पंख को चाटते हैं। इनके प्रजनन के लिए पानी का तापमान 23–26 डिग्री सेल्सियस अच्छा होता है।

12. हॉकी–स्टीक

यह दिखने में बहुत ही सुंदर होती है और जल्दी मरती नहीं तथा पानी की ऊपरी सतह पर तैरती है। शरीर पार्श्व में दबा हुआ तथा पीठ पर भूरापन होता है। इसके शरीर पर गलफड़ों से लंबवत काली धारी पूँछ के आधार तक जाकर नीचे की ओर पूँच्छीय पंख के नीचले वाले भाग के अंतिम छोर तक जाती है। इस प्रकार इनके शरीर पर धारी मुड़ कर हॉकी–स्टीक के समान दिखाई देती है। इसलिए इसे हाकी–स्टीक मछली कहते हैं। मादा का शरीर गोलाकार उदर के साथ अपेक्षाकृत स्थूल है। इसके अण्डे चिपकने वाले होते हैं तथा अण्ड प्रजनन के बाद जलीय वनस्पतियों के पत्ते में चिपक जाती है। जब इसकी लंबाई 6–8 सेंटीमीटर हो जाती है तो ये परिपक्व हो जाती है तथा प्रजनन के लिए तैयार हो जाती है। इसके प्रजनन के लिए पानी का तापमान 24–26 डिग्री सेल्सियस अच्छा माना जाता है। इसके अण्डे 25–28 डिग्री सेल्सियस पर लगभग 24 घण्टे में स्फूटित हो जाती है।

13. थ्री स्पॉट गौरामी

थ्री स्पॉट गौरामी (ट्रइकोपोडस ट्रइकोप्टरस) एक कठोर प्रजाति की मछली है जिसे ओपलीन, ब्लू और गोल्ड गौरामी के नाम से भी जाना जाता है, यह दक्षिणपूर्वी एशिया की मूल निवासी मत्स्य प्रजाति है। थ्री–स्पॉटगौरामी के शरीर पर असल में दो काले धब्बे होते हैं, लेकिन उनकी आँखों को एक और धब्बा मानकर इनको थ्री–स्पॉट गौरामी कहते हैं। इसके शरीर पर दो

लंबे स्पर्शिक के साथ ये नीले–भूरे रंग की होती है तथा नर मछली में पृष्ठीय पंख बड़ा और नुकीला होता है। प्रजनन के लिए तैयार होने पर, नर अपने बुलबुले का घोंसला बनाता है और फिर मादा के आगे–पीछे तैरकर, अपने पंख फड़फड़ाते हुए एवं अपनी पूँछ को ऊपर उठाकर लुभाना शुरू कर देता है। एक मादा 500–1200 अंडे तक दे सकती है। इसके अण्डे 24–29 डिग्री सेल्सियस पर लगभग 24 घण्टे में स्फूटित हो जाती है।

14. पर्ल गौरामी

यह देखने में सबसे आकर्षक के साथ एक कठोर प्रजाति है जिसे घर में रखना भी आसान है। लाल–भूरे रंग की होती है। इनके पूरे शरीर पर मोती के तरह धब्बे होते हैं जो इनको बहुत ही आकर्षक बना देती है। यह सर्वहारी मछली है। जो सभी प्रकार के भोजल को ग्रहन करती है। यह लगभग 12 सेंटीमीटर बढ़ती है लेकिन यह एक्वेरियम में लगभग 7–10 सेंटीमीटर तक ही बढ़ती है।

प्रजनन के लिए तैयार होने पर, नर अपने बुलबुले का घोंसला बनाता है और फिर मादा के आगे–पीछे तैरकर, अपने पंख फड़फड़ाते हुए एवं अपनी पूँछ को ऊपर उठाकर लुभाना शुरू कर देता है। एक मादा 200–1000 अंडे दे सकती है। इसके अण्डे 25–28 डिग्री सेल्सियस पर लगभग 24 घण्टे में स्फूटित हो जाती है।

15. किसिंग गौरामी

पीलेपन के साथ–साथ हल्के गुलाबी रंग की होती है तथा इनका मुँह थोड़ा आगे की ओर निकला होता है। यह बहुत ही रसीले किस्म की मछली होती है और अपने समूह के मछली सदस्य के साथ जब–तब चुंबन की अवस्था प्रदर्शित करती है। यह अक्सर अपने समूह की मछली के साथ छेड़–छाड़ करने की प्रवृत्ति रखती है और एक्वेरियम में एक–दूसरे का पीछा करती है तथा लड़ते झगड़ते रहती है। ये जलीय–वनस्पति की पत्तियों के निचले सतह पर बुलबुलेदार घोंसला बनाती हैं। जिसमें प्रजनन के बाद नर द्वारा अण्डा रखा जाता है।

नर द्वारा अण्डों की रखवाली स्वतंत्र रुप से बच्चे बनने तक किया जाता है जब ये मछलियाँ 12–24 सेंटीमीटर की होती हैं तो ये परिपक्व हो जाती है तथा प्रजनन के लिए तैयार हो जाती हैं। इसके प्रजनन के लिए पानी का तापमान 24–26 डिग्री सेल्सियस उपयुक्त माना जाता है।

तालिका –व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण रंगीन मछलियाँ

अंड प्रजनक (एग बियरर्स) विदेशी प्रजातियाँ		
क्र.सं.	**वैज्ञानिक नाम**	**साधारण नाम**
1.	कैरेसियस ऑरयेटस	गोल्ड फिश
2.	साइप्रिनस कार्पियो वर कोई	कोई कार्प
3.	बालेंटियोचिलस मेलानोप्टेरस	बाला शार्क/सिल्वर शार्क
4.	लैबियो बाइकोलर	रेड–टेल्ड ब्लैक शार्क
5.	रासबोरा हेटरोमॉर्फी	रासबोरा, हार्लेक्विन फिश

क्र.सं.	वैज्ञानिक नाम	साधारण नाम
6.	पैराचीरोडॉन एक्सेलरोडी	कार्डिनल टेट्रा
7.	पैराचीरोडॉन इनेसी	नियॉन टेट्रा
8.	कोलिसा ललिया	ड्वॉर्फ गौरामी
9.	ट्रइकोगैस्टर ट्रइकोप्टेरस	थ्री स्पॉट गौरामी
10.	हेलोस्टोमा टेम्मिन्की	किसिंग गौरामी
11.	बेट्टा स्प्लेंडेंस	स्यामिस फाइटिंग फिश
12.	टेरोफाइलम स्केलारे	एंजेल फिश
13.	सिम्फिसोडॉन डिस्कस	डिस्कस/पोम्पडौर फिश
14.	एस्ट्रोनोटस ओसेलेटस	ऑस्कर
15.	सिक्लसोमा मीकि	फायरमाउथ चिक्लिड
16.	स्क्लेरोपेज फॉर्मोसस	एशियाई एरोवाना
सजीव प्रजनक (लाइव बियरर्स)		
1.	पेसिलिया रेटिकुलाटा	गप्पी
2.	पेसिलिया वेलिफेरा	सेलफिन मौली
3.	पेसिलिया स्फेनॉप्स	मार्बल मौली
4.	जिफोफोरस हेलेरि	सोर्ड टेल
5.	जिफोफोरस मेकूलेटस	प्लेटी
अंड प्रजनक (एग बियरर्स) स्वदेशी प्रजाति		
1.	पुंटियस डेनिसोनी	डेनिसन बार्ब
2.	पुंटियस कोंचोनियस	रोसी बार्ब
3.	कोलिसा चुने	हनी गोरामी
4.	ब्राचीडेनियो रेरियो	जेबरा फिश
5.	चंदा नामा	ग्लास फिश
6.	बोटिया लोहाचाटा	रेटिक्युलेटेड लोच
7.	नोटोप्टेरस नोटोप्टेरस	ब्लैक नाइफ फिश
8.	लेबियो कालबासु	आल ब्लैक शार्क
9.	लेबियो नंदिना	पेंसिल गोल्ड लैबियो
10.	ओरीचथिस कोसुअटिस	हाईफिन बार्ब
11.	ट्रइकोगेस्टर फासियाटा	बैंडेड कोलिसा

व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण रंगीन मछलियाँ

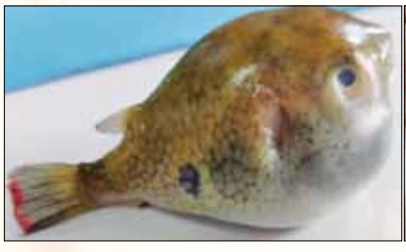

ड्वॉर्फ बफरफिश

ड्वॉर्फ गौरामी

कबई

बैंडेडकोलिसा

शार्क प्रजाति

बोटिया लोहाचोटा

निष्कर्ष

भारत में रंगीन मछलियों के व्यापार के अवसरों को उत्पादकों, संग्राहकों और व्यापारियों ने अंतराष्ट्रीय और राष्ट्रीयरूप से मान्यता दी है। रंगीन मछली पालन में व्यावसायिक अवसरों को उत्पादन, विपणन और रंगीन मछलियों प्राकृतिक (वाइल्ड) संग्रह से प्राप्त किया जा सकता है। भारत रंगीन मछली जैव विविधता के वैश्विक आकर्षण के केंद्र में से एक है, लेकिन इसका रंगीन मछली व्यापार ज्यादातर प्राकृतिक (वाइल्ड) संग्रह पर आधारित है। इन प्रजातियों के संरक्षण एवं मजबूत तरीके से आर्थिक लाभ प्राप्त करने के लिए इसके विकास पर उचित ध्यान देने की आवश्यकता है। अच्छे मूल्य वाली देशी रंगीन मछली एवं एक्वेरियम पौधों की प्रजातियों पर उद्यमिता विकसित करने की पर्याप्त गुंजाइश है।

मत्स्य बीजों का परिवहन प्रबंधन

**विवेकानंद भारती, कमल शर्मा, तारकेश्वर कुमार, जसप्रीत सिंह,
सुरेंद्र कुमार अहिरवाल एवं देवनारायण**

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

सारांश

मत्स्य पालन के सफल कार्यान्वयन के लिए गुणवत्तापूर्ण मत्स्य बीजों की आपूर्ति आवश्यक है, जहाँ बीज उत्पादन केंद्रों से भंडारण के लिए चयनित तालाबों तक ले जाने के लिए बीजों का परिवहन एक आम बात है। यह परिवहन मत्स्य बीजों को समुचित व्यवस्था के साथ कंटेनरों में किया जाता है। परिवहन के दौरान घुलित ऑक्सीजन की कमी, मुक्त कार्बन डाइऑक्साइड की अधिकता, अमोनिया का प्रभाव, अचानक तापमान में परिवर्तन, सीमित स्थान में अतिसक्रियता और तनाव, तथा रख–रखाव के साथ–साथ परिवहन में शारीरिक चोट के कारण मत्स्य बीजों की काफी मृत्यु हो जाती है। लेकिन, परिवहन की जाने वाली मछलियों की विभिन्न शारीरिक स्थितियों (जैसे मत्स्य बीजों का अनुकूलन, परिवहन से पहले आहार आपूर्ति में रोक) पर परिवेश पानी की स्थितियों (जैसे परिवेशी ऑक्सीजन, पीएच, अमोनिया) का नियंत्रण द्वारा बीजों की परिवहन मृत्यु दर को कम किया जा सकता है ।

परिचय

मछली स्वस्थ मानव आहार का एक महत्वपूर्ण घटक है, जो विश्व स्तर पर लगभग 20% पशु प्रोटीन प्रदान करता है। मत्स्य पालन को दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ती खाद्य उत्पादन प्रणाली के लिए जाना जाता है, जिसमें सालाना 7% की दर से वृद्धि हो रही है। विश्व उत्पादन व्यापार भी मछली उत्पादों से प्रभावित होता है, क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय उत्पादन व्यापार का 37% से अधिक (वजन के अनुसार) मत्स्य उत्पाद द्वारा साझा किया जाता है।

भारत में, मत्स्य पालन को प्रमुख आय और रोजगार सृजक के रूप में मान्यता दी गई है। अतः भारतीय मत्स्य पालन देश के सामाजिक–आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करता है। देश के मात्स्यिकी संसाधनों में समुद्री (2.02 मिलियन वर्ग किलोमीटर के अनन्य आर्थिक क्षेत्र (ई. ई. जेड.), 0.53 वर्ग मिलियन किलोमीटर के महाद्वीपीय शेल्फ क्षेत्र और 8118 किलोमीटर की तट रेखा) और अंतर्देशीय (173287 किलोमीटर नदियाँ और नहरें, 1097787 हेक्टेयर दलदल और अन्य आर्द्रभूमि, 202213 हेक्टेयर बाढ़ के मैदान की झीलें, 72000 हेक्टेयर पहाड़ी झीलें, 356500 हेक्टेयर मैंग्रूव, 285000 हेक्टेयर मुहाना, 190500 हेक्टेयर लैगूंस, 3153366 हेक्टेयर जलाशय, 2254000 हेक्टेयर मीठे पानी के तालाब और 1 235000 हेक्टेयर खारे पानी के तालाब) जल संसाधन शामिल हैं। राष्ट्रीय मात्स्यिकी विकास बोर्ड 2016 के अनुसार, 3344.2 मिलियन रुपये के लिए 1.05 मिलियन टन मछली और इनके उत्पादों का निर्यात हुआ, जो देश के कुल निर्यात का 10% और कृषि निर्यात का 20% है, इस प्रकार का व्यापार मत्स्य पालन को कृषि सबसे बड़ा उप–क्षेत्र बनाता है। भारतीय मात्स्यिकी वैश्विक मछली उत्पादन का लगभग 6.3% हिस्सा है, यह क्षेत्र सकल घरेलू उत्पाद में 1.1% और कृषि सकल घरेलू उत्पाद में 5.15% योगदान देता है। वर्तमान में 14.73 मिलियन मीट्रिक टन के कुल मछली उत्पादन में लगभग 76% योगदान मत्स्य पालन से है। भारतीय मत्स्य पालन में मीठे पानी के कार्प और खारे पानी के झींगा प्रमुख हैं। अभी तक भारतीय मत्स्य पालन कार्पों की कुछ प्रमुख प्रजातियों और झींगे पर ही निर्भर है।

मत्स्य पालन के सफल कार्यान्वयन के लिए गुणवत्तापूर्ण मत्स्य बीज की आपूर्ति आवश्यक है। इसलिए मत्स्य पालन की संभावना के अनुसार हर राज्यों में ब्रूड बैंक और हैचरी की स्थापना पर ध्यान देने की जरूरत है। पूरे भारत में सार्वजनिक और निजी क्षेत्र में

बड़े पैमाने पर हैचरी की स्थापना से मछली उत्पादन में वृद्धि होने की संभावना है। परंपरागत रूप से कार्प बीज प्राकृतिक जल निकायों से एकत्र किए जाते थे जिसकी कम गुणवत्ता के अलावा संग्रह के मैदान से तालाब तक परिवहन की लागत भी अधिक होती थी। बीज–संग्रह का मौसम बहुत कम होता है और पर्यावरणीय परिस्थितियों में बदलाव के साथ वार्षिक बीज–संग्रह की मात्रा में काफी उतार–चढ़ाव होता है। इसके अलावा, मानवीय गतिविधियों के कारण नदी के वातावरण के बिगड़ने से बीज–संग्रह की मात्रा और गुणवत्ता दोनों में तेजी से गिरावट आई है। अतः 1985–1986 में नियंत्रित परिस्थितियों में मत्स्य बीज उत्पादन की विकसित प्रजनन तकनीक से मत्स्य बीज पैदा की प्रक्रिया तेज हुई और पूरे देश में 2000 हैचरी स्थापित किया गया। वर्तमान समय में, इन हैचरी की मदद से भारत में मत्स्य बीज (फ्राई) का उत्पादन 6,321 मिलियन से बढ़कर 40,000 मिलियन तक पहुँच गया है।

चित्र–1. परिवहन के बाद मत्स्य बीजों की मृत्यु

मत्स्य पालन के लिए उपयुक्त प्रजातियों के बीज का परिवहन एक आम बात है। यह परिवहन मत्स्य बीजों को कंटेनरों में बीज संग्रह केंद्रों से नर्सरी या भंडारण के लिए चयनित तालाबों तक ले जाने के लिए किया जाता है। परिवहन के दौरान मत्स्य बीजों की काफी मृत्यु हो जाती है (चित्र–1)। इसलिए, परिवहन के दौरान मत्स्य बीजों की मृत्यु दर को कम करने के लिए मछली के जीवन–चक्र के विभिन्न चरणों (हैचलिंग, फ्राई, फिंगरलिंग, किशोर और वयस्क) का बुनियादी ज्ञान आवश्यक है। मत्स्य बीज परिवहन में मृत्यु दर को कम करने के लिए, परिवहन के तहत मछली के आंतरिक शारीरिक तंत्र में बदलाव और मछली ले जाने वाले माध्यम के पर्यावरणीय मापदंडों की जानकारी होनी चाहिए। परिवहन की जाने वाली मछलियों की विभिन्न शारीरिक स्थितियों (जैसे कंडीशनिंग फिश फ्राई, परिवहन से पहले आहार आपूर्ति की रोक) पर परिवेश की स्थितियों (जैसे परिवेशी ऑक्सीजन, पीएच, अमोनिया) का नियंत्रण परिवहन मृत्यु दर को कम करने में सहायक होता है।

मत्स्य बीज के पैकिंग और परिवहन के तरीके

मत्स्य बीज के लिए दो प्रकार के परिवहन प्रणाली होते हैं: (क) खुली प्रणाली–जिसमें कृत्रिम वातन/ऑक्सीजन/जल परिसंचरण होते हैं और (ख) बंद प्रणाली–जिसमें सीलबंद ऑक्सीजन होते हैं।

(क) खुली प्रणाली

भारत के बंगाल में सबसे पहले मत्स्य बीज का परिवहन मिट्टी के पारंपरिक बर्तन "हांडी" में हुआ। मिट्टी की हांडी को अब एल्यूमीनियम के बर्तनों से बदल दिया गया है (चित्र–2) जो अटूट हैं, लेकिन मिट्टी की हांडी का यह फायदा है कि वे वाष्पीकरणीय शीतलन के माध्यम से पानी के तापमान को ठंडा रखते हैं। बंगाल में उपयोग किए जाने वाले मिट्टी के बर्तन 2 प्रकार के व्यास वाले होते हैं, छोटे 20 सेमी व्यास (23 लीटर क्षमता) और बड़े 23 सेमी व्यास (32 लीटर क्षमता) के होते हैं। मिट्टी के बर्तनों में उसी स्रोत का पानी भरा जाता है जहाँ से फ्राई निकाला जाता है। 23 लीटर के बर्तन में लगभग 50,000 कार्प स्पॉन और 32 लीटर में 75,000 कार्प स्पॉन का परिवहन किया जा सकता है, जिसमें लगभग 60 ग्राम बारीक चूर्णित लाल मिट्टी को पानी की सतह पर छिड़का जाता है। लाल मिट्टी के कारण निलंबित कार्बनिक पदार्थ जमा हो जाते हैं और नीचे के तलछट को समय–समय पर किसी–न–किसी कपड़े की रस्सी से पोंछकर हटा दिया जाता है। पानी को भी जरूरत के आधार पर आंशिक रूप से नवीनीकृत किया जाता है। इस प्रकार, लाल मिट्टी मिलाने और पानी बदलने से फ्राई को 30 घंटे तक ले जाया जा सकता है।

चूर्णित मिट्टी के अलावा अन्य शोषक पदार्थ जैसे सक्रिय चारकोल का उपयोग माध्यम से कार्बन डाइऑक्साइड, अमोनिया और अन्य पदार्थों को अवशोषित करने के लिए भी किया जा सकता है।

मत्स्य बीज परिवहन के लिए मोटर वाहनों पर लगे बड़े कंटेनरों का भी उपयोग किया जाता है (चित्र–3 और 4)। टैंक में पानी की सतह पर पानी के स्प्रे का उत्पादन करने वाला एक अर्ध–रोटेटरी पंप जोड़ा जाता है। 5% से कम मृत्यु दर के साथ 500 किलोमीटर तक की दूरी के लिए ऐसी मोटर वैन में फिश फ्राई का परिवहन किया जा सकता है। इसमें लंबी यात्राओं के दौरान निरंतर सतर्कता और पानी का लगातार नवीनीकरण होनी चाहिए।

चित्र–2. एल्यूमीनियम के बर्तन में मत्स्य बीज का परिवहन

चित्र–3. मोटर वाहन में मत्स्य बीज परिवहन की व्यवस्था

चित्र–4. परिवहन के लिए मोटर वाहन में मत्स्य बीज

(ख) बंद प्रणाली

इस बंद प्रणाली में संपीड़ित हवा या शुद्ध ऑक्सीजन से पानी की सतह के ऊपर के क्षेत्र को भरकर वायुरोधी सीलबंद किया जाता है। विभिन्न आयामों के पॉलिथीन बैग (74 सेंमी स 46 सेंमी या 65 से 45 सेंमी – मोटाई 0.0625 मिलीमीटर) व्यापक रूप से फिश फ्राई और फिंगरलिंग परिवहन में उपयोग किए जाते हैं। इस विधि में बैग को पहले टिन या 18 – 20 लीटर क्षमता के किसी कठोर बॉक्स में डाल दिया जाता है और बैग में उसकी क्षमता (6–7 लीटर) तक पानी से भर दिया जाता है और उसमें आवश्यक संख्या में बीज डाल दिए जाते हैं और बैग को सिलेंडर से उच्च दबाव में ऑक्सीजन के साथ फुलाया जाता है। बैग का ऊपरी 10 – 15 सेंमी मोड़कर एक स्ट्रिंग से वायुरोधी तरिके से बाँध दिया जाता है (चित्र–5)। दूरी के आधार पर 20,000 – 40,000 (हैचलिंग्स), 300 – 600 फ्राई (30 – 40 मिलीमीटर) और 40 – 70 फिंगरलिंग प्रति बैग कार्प बीज को इस तरह से पैककर परिवहन किया जाता है, जिसमें मृत्यु दर शून्य से 5% तक होती है। कार्प बीज परिवहन घनत्व के लिए दिशानिर्देश तालिका–1 में दर्शाया गया है।

चित्र–5. ऑक्सीजन के साथ पॉलिथीन बैग में मत्स्य बीज

तालिका–1 कार्प बीज परिवहन घनत्व के लिए दिशानिर्देश

बीज का आकार (ग्राम)	प्रति बैग बीज की संख्या	परिवहन अंतराल (घंटा)
1–5	2000	12
5–10	1000	24
10–30	20–30	8
30–60	10–20	8
60–100	8–10	8
>100	खुली प्रणाली	12–24

परिवहन के लिए मत्स्य बीज की मात्रा का अनुमान

बंद और ऑक्सीजन से भरे कंटेनरों में ले जाने के लिए मछली के बीज की संख्या, बीज के प्रकार और आकार, परिवहन के तरीके, परिवहन की अवधि और पर्यावरण के तापमान आदि के अनुसार भिन्न हो सकती है। कंटेनरों में परिवहन के लिए मछली के बीजों की संख्या निम्न सूत्र का उपयोग करके गणना की जा सकती है:

$$N = \frac{(DO - 2) \times V}{C \times h}$$

जहाँ,

DO= परिवेशी जल में घुलित ऑक्सीजन (मिलीग्राम/लीटर)

V= पानी का आयतन (लीटर)

C = प्रति मछली द्वारा ऑक्सीजन की खपत की दर (मिलीग्राम/घंटा)

h = परिवहन की अवधि (घंटा)

बीज मत्स्य परिवहन माध्यम और सावधानियाँ

स्रोत–तालाब का पानी ही बीज मत्स्य परिवहन के लिए उपयोग किया जाना चाहिए। यदि स्रोत–तालाब का पानी गंदा और मैला है, तो पानी को अलग टैंक या कुंड में इकट्ठा कर गाद को पहले 10–24 घंटों के लिए व्यवस्थित होने के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए। गंदे पानी में मछली के बीज या जीवित मछलियों को पैक करने से गिल बंद हो जाते हैं क्योंकि उनके गिल रैकर में तलछट जमा हो जाती है, जिससे श्वसन संबंधी समस्याएँ और फिर मृत्यु हो सकती है। यदि स्रोत जल गंदा है, तो स्रोत जल में लगभग 10–30% नल का पानी मिलाया जा सकता है। नल के पानी या भूजल का उपयोग करते समय, 5–10 घंटे हिलाकर या 24 घंटे के लिए स्थिर कर क्लोरीन को वाष्पित किया जाना चाहिए और विशेष रूप से भूजल में ऑक्सीजन बढ़ाने के लिए पानी को अच्छी तरह से वाष्पित किया जाना चाहिए। मछली के बीज को नए पानी में पैक करने से पहले अनुकूलित किया जाना चाहिए।

परिवहन के दौरान मत्स्य बीज में मृत्यु के कारण

परिवहन में मछलियों के बीज की मृत्यु के लिए उत्तरदायी कारक नीचे दिए गए हैं:

1. **घुलित ऑक्सीजनः**– मछली के श्वसन के कारण परिवेशी जल में घुलित ऑक्सीजन की कमी हो जाती है और सूक्ष्म जीवों द्वारा मछली के उत्सर्जित कार्बनिक पदार्थ के विघटन के कारण भी ऑक्सीकरण (बीओडी) की कमी हो जाती है।

2. **मुक्त कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) का संचयः**– मछली के बीज वाहक के माध्यम में कार्बन डाइऑक्साइड के संचय के कारण परिवहन के दौरान मछली के बीजों में मृत्यु की संभावना बढ़ जाती है। कार्बन डाइऑक्साइड मछली के लिए घातक है क्योंकि वे मछली के रक्त की ऑक्सीजन ले जाने की क्षमता को कम करते हैं और सक्रिय चयापचय दर को भी कम करते हैं। मछली में कार्बन डाइऑक्साइड की घातक सीमा परिवहन के दौरान पानी में घुलित ऑक्सीजन (डी. ओ.) के स्तर पर निर्भर करती है। 40 मिलीमीटर से अधिक आकार के फ्राई कार्बन डाइऑक्साइड के 15 पीपीएम और 1 पीपीएम से कम डीओ पर मर सकते हैं। मछलियों में श्वसन के दौरान जारी कार्बन डाइऑक्साइड पानी में घुल जाता है जो पानी की अम्लीय स्थिति को बढ़ाकर मछली के लिए हानिकारक स्थिति पैदा कर देता है। CO_2 का 2.5–5 पीपीएम सांद्रता मत्स्य बीज के लिए विषैला होता है।

3. **अमोनिया का प्रभावः**– मछलियों द्वारा बड़ी मात्रा में अमोनिया उत्सर्जित किया जाता है। यदि अमोनिया की मात्रा 20 पीपीएम तक पहुँच जाती है, तो मछलियों की मृत्यु ऑक्सीजन से भरे पैकेटों में हो जाती है। जैसे–जैसे पानी में अमोनिया बढ़ता है, रक्त में ऑक्सीजन की मात्रा घटती जाती है और CO_2 की मात्रा बढ़ती जाती है। अमोनिया मछलियों के रक्त की O_2–CO_2 विनिमय क्षमता में हस्तक्षेप करता है। पानी के तापमान में वृद्धि और घुलित ऑक्सीजन की कमी से मछली की सहनशीलता अमोनिया के प्रति कम हो जाती है।

4. **तापमान का प्रभावः**– मछली द्वारा उपयोग की जाने वाली ऑक्सीजन पर तापमान का एक अलग प्रभाव पड़ता है। घातक तापमान सीमा तक बढ़े हुए तापमान के साथ चयापचय दर लगातार बढ़ता है।

5. **सीमित स्थान में अतिसक्रियता और तनावः**– सीमित स्थान में अतिसक्रियता के कारण मछली के ऊतकों में लैक्टिक एसिड जमा हो जाता है और बहुत ही ज्यादा मात्रा में ऑक्सीजन जरुरत होने लगती है। परिवहन की गई मछलियों को तालाबों में अपना प्राकृतिक जीवन प्रदान करने के बाद भी इस ऑक्सीजन की जरुरत कम करने में लंबा समय लगता है, जो परिवहन के बाद भी मछली के बीज की मृत्यु का कारण है।

6. **रख–रखाव तथा परिवहन के दौरान शारीरिक चोट**– मछली के रख–रखाव और परिवहन के दौरान तनाव होता है और तनाव के परिणामस्वरूप प्रतिरक्षा–दमन, शारीरिक चोट, या यहाँ तक कि मृत्यु भी हो सकती है। शारीरिक चोटों से मछली में भोजन ग्रहण करने की क्षमता कम हो सकती है, संक्रमण की संवेदनशीलता बढ़ सकती है और मृत्यु दर में वृद्धि हो सकती है।

परिवहन के दौरान मत्स्य बीज में मृत्यु कम करने के उपाय

परिवहन–पूर्व मछली के रख–रखाव द्वारा उत्पन्न तनाव और चोट का प्रभाव स्वयं अधिक होता है, कभी–कभी तत्काल मृत्यु का कारण बनता है, लेकिन इसके बाद कंटेनर में परिवहन के दौरान मछली के बीजों में अतिरिक्त तनाव पैदा हो जाता है। परिवहन तनाव की गंभीरता परिवहन की अवधि और परिवहन के माध्यम/कंटेनरों की भौतिक–रासायनिक विशेषताओं पर निर्भर करती है। परिवहन के दौरान मत्स्य बीज में मृत्यु कम करने के कुछ निम्नलिखित उपाय हैंः–

1. **परिवहन पानी का फिल्ट्रेशनः**– परिवहन पानी को एक प्लवक जाल के माध्यम से फ़िल्टर किया जाना चाहिए ताकि इसे फाइटोप्लांकटन और जूप्लांकटन से मुक्त किया जा सके जो पानी में मौजूद हैं और स्वयं कुछ ऑक्सीजन का उपभोग करते हैं।

2. **रख–रखाव में नंगे हाथों का निषेदः**– किसी भी प्रकार के रख–रखाव में फ्राई और फिंगरलिंग को नंगे हाथों का नहीं इस्तेमाल किया जाना चाहिए, जो मछली के शरीर पर बलगम की स्थिरता को बिगाड़ते हैं। बलगम और शल्क के नुकसान से आयनिक संतुलन बनाए रखने में मछली को कठिनाइयाँ होती हैं और मछलियों के संक्रमित होने की भी संभावना होती है।

3. **परिवहन पूर्व मछली में वातानुकूलनः**– लंबे परिवहन के लिए मछली के बीज को वातानुकूलित करना पड़ता है। वातानुकूलन के लिए, मछली के बीजों को परिवहन वाहक में स्थानांतरित करने से पहले आमतौर पर एक कपड़े 'हापा' या छोटे तालाब या टैंक में कुछ समय के लिए भूखा रखा जाता है। वातानुकूलन के दौरान, मछली सीमित स्थिति के लिए अभ्यस्त हो जाती है, और उत्तेजना को कम करके ऊर्जा के खर्च को नियंत्रित करने में सक्षम हो जाती है। वातानुकूलन मछली को बढ़े हुए रक्त लैक्टेट स्तर से ठीक होने में मदद करती है और उच्च चयापचय दर के कारण रक्त पीएच में कमी को संभालने में मदद करता है। इसके अलावा, मछली को मामूली चोट, बलगम की कमी और आयन–ऑस्मोटिक संतुलन को नियंत्रित होने का मौका मिलता है। वातानुकूलन के दौरान आँत से मल की निकासी होती है, जो परिवहन माध्यम को मल से दूषित होने से रोकती है। यदि मछली को तालाब से सीधे कंटेनर में लाया जाता है तो यह बहुत सक्रिय होती है और कंटेनर के किनारों से टकराकर घायल हो जाती है।

वातानुकूलन के लिए पानी की गहराई 30 से 35 सेंमी होना चाहिए। वातानुकूलन की अवधि स्पॉन (हैचलिंग), फ्राई और फिंगरलिंग के आकार और स्वास्थ्य पर निर्भर करती है। सामान्य तौर पर, मछली की सभी प्रजातियों के लिए 6 – 24 घंटे की वातानुकूलन अवधि पर्याप्त होती है। लंबी वातानुकूलन अवधि विशेष रूप से उन मामलों में दी जानी चाहिए जहाँ पकड़ने और बाद में रख–रखाव के कारण मछली में तनाव अधिक है। वातानुकूलन पानी का तापमान अधिक नहीं होना चाहिए और यह प्रजातियों के लिए इष्टतम थर्मल रेंज के निचले हिस्से में होना चाहिए (चित्र–6)।

चित्र–6. मत्स्य बीजों के लिए वातानुकूलन की व्यवस्था

4. **पर्याप्त ऑक्सीजन की आपूर्ति:–** मछली के परिवहन में, ऑक्सीजन की कमी को या तो उपयोग की गई ऑक्सीजन की भरपाई करके या मछली के बीज की संख्या को विनियमित करके किया जा सकता है। परिवहन में मछली का ऑक्सीजन उपयोग मछली की स्थिति जैसे मछली की सामान्य, सक्रिय और उत्तेजित स्थिति, तापमान, आकार और प्रजातियों जैसे कई कारकों पर निर्भर है। मछली परिवहन के लिए कम से मध्यम तापमान पसंद किया जाता है क्योंकि तापमान में कमी के साथ पानी में ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ जाती है और मछली कम सक्रिय रहती है।

5. **कम तापमान:–** पानी का तापमान एक महत्वपूर्ण कारक है क्योंकि यह घुलित ऑक्सीजन एकाग्रता को निर्धारित करता है। तापमान जितना कम होता है, ऑक्सीजन संतृप्ति उतनी ही अधिक होती है और मछली द्वारा ऑक्सीजन की खपत कम होती है। पानी का तापमान स्टॉकिंग घनत्व भी तय करता है। तापमान में प्रत्येक 10 ओए की कमी के लिए गर्म पानी की प्रजातियों जैसे कार्प्स आदि के लिए घनत्व को 25% तक बढ़ाया जा सकता है। पानी कम तापमान पर घोल में अधिक ऑक्सीजन धारण कर सकता है। अतः मछली को उच्च तापमान पर अधिक ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। इसलिए, किसी दिए गए आयतन का एक टैंक उच्च तापमान की तुलना में कम तापमान पर अधिक मछली का परिवहन कर सकता है। यही कारण है कि परिवहन में पानी का तापमान हमेशा उस स्तर के अनुसार कम रखा जाता है जिसे मछली सहन कर सकती है।

6. **एकसमान आकार के बीज का चयन:–** परिवहन के लिए एक समान आकार की मछली का चयन से भी मछली के बीज की मृत्यु दर कम हो जाती है।

7. **मछली के परिवहन में शामक (Sedative) का उपयोग:–** आधुनिक जीवित–मछली परिवहन तकनीक में शामक का उपयोग एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। एनेस्थेटिक्स मछली की चयापचय गतिविधि को कम करता है, जो लंबे समय तक पानी की एक निश्चित मात्रा में अधिक मछली के परिवहन की सुविधा प्रदान करता है। केवल तरल और ठोस एनेस्थेटिक्स, विशेष रूप से वे, जो पानी में आसानी से घुलनशील होते हैं, मछली परिवहन में उपयोगी होते हैं। एनेस्थीसिया के लिए, ट्राइकेन मीथेन सल्फोनेट (MS–222) का सबसे अधिक उपयोग किया जाता है। यूगेनॉल (C_{10} H_{12} O_2) लौंग के तेल का प्रमुख घटक (वजन के अनुसार 70 से 90 प्रतिशत) है, और यह मछली की संवेदना नियंत्रित करने के लिए प्रभावी माना जाता है। कार्बोनिक एसिड भी एक अच्छा एनेस्थेटिक माना जाता है। कार्बोनिक एसिड न केवल सस्ता है बल्कि सुरक्षित और उपयोग में आसान भी है। फ्राई वाले 8 लीटर पानी के बैग के लिए, 7% का सोडियम बाइकार्बोनेट घोल 8 मिली और 4% सल्फ्यूरिक एसिड का 8 मिली मिलाया जाता है ताकि कार्बोनिक एसिड की 500 पीपीएम सांद्रता उत्पन्न हो सके। कार्बोनिक एसिड मिलाने के बाद इस एनेस्थेटाइज्ड बैग को तुरंत ऑक्सीजन से भर देना चाहिए।

8. **मछली के परिवहन में रासायन का उपयोग:–** मीठे पानी की मछली पकड़ने के कारण शरीर से काफी मात्रा में नमक निकल जाने की संभावना है। परिवेशी माध्यम में NaCl की थोड़ी मात्रा जोड़ने से मछली में आयनिक संतुलन कायम हो जाती है।

9. **माध्यम में अवशोषक:–** माध्यम से जहरीले अमोनिया को खत्म करने और मछली के बीज को मृत्यु दर से बचाने के लिए परिवहन के दौरान अवशोषक को माध्यम में मिलाया जाता है। ये अवशोषक परमुटिट, सिंथेटिक एमर्लाइट रेजिन, पल्सवराइज्ड अर्थ और क्लिनोप्टिलोलाइट हैं। क्लिनोप्टिलोलाइट एक प्राकृतिक जिओलाइट है, जो पानी से अमोनिया को हटाने में प्रभावी पाया गया है।

10. **बफर का उपयोगः**– पीएच में तेजी से बदलाव मछली में तनाव पैदा करता है, इसलिए मछली परिवहन के दौरान पानी के पीएच को स्थिर करने के लिए बफर का उपयोग किया जा सकता है। कार्बनिक बफर ट्राइहाइड्रॉक्सिल–एथिल–एमिनो–मीथेन ताजे पानी में काफी प्रभावी माना जाता है। सोडियम फास्फेट 2 ग्राम/लीटर की दर से पानी में मिलाया जा सकता है, जो बफर के रूप में कार्य करता है और परिवहन के दौरान मछली के बीज के लिए माध्यम का अनुकूल पीएच लाने में मदद करता है।

11. **तालाबों में मत्स्य बीजों के भंडारण के दौरान देखभालः**– गंतव्य स्थान पर पहुँचने पर, परिवहन के पानी और तालाब के पानी के तापमान को संतुलित करने के लिए बंद बैगों को गंतव्य पानी की सतह पर रखना चाहिए (चित्र–7)। तालाब में छोड़ने से पहले बीजों की स्थिति, तैरने (चित्र–8), आराम करने के व्यवहार और मृत बीजों की जाँच करनी चाहिए।

चित्र–7. परिवहन के बाद पानी की सतह पर बंद बैग

चित्र–8. गंतव्य स्थान पर तैरता मत्स्य बीज

निष्कर्ष

दोनों ही प्रकार के परिवहन (खुली प्रणाली और बंद प्रणाली) में प्रयुक्त पानी की वांछित भौतिक और रासायनिक गुणवत्ता का विशेष ध्यान देना चाहिए। परिवहन–पूर्व मछली के रख–रखाव में सावधानियाँ बरतनी चाहिए, जिससे कि बीजों में तनाव उत्पन्न होने की समस्या को कम किया जा सके। कभी–कभी रख–रखाव और परिवहन में बीजों में चोट लग जाती है और तत्काल मृत्यु का कारण बन जाता है। परिवहन में पानी का तापमान हमेशा कम रखने के लिए हमेशा सुबह और शाम में मत्स्य बीजों का परिवहन करना चाहिए। रख–रखाव में नंगे हाथों पर रोक, परिवहन पूर्व मछली में वातानुकूलन, पर्याप्त ऑक्सीजन की आपूर्ति, एकसमान आकार के बीज का चयन, मछली के परिवहन में रासायन और शामक का उपयोग, माध्यम में अवशोषक, बफर का उपयोग और तालाबों में मत्स्य बीजों के भंडारण के दौरान अनुकूलन द्वारा परिवहन के दौरान मत्स्य बीजों में होने वाली मृत्यु को कम किया जा सकता है।

जलीय खाद्य श्रृंखला एवं मानव जीवन पर सूक्ष्म (माइक्रो) प्लास्टिक का प्रभाव

जसप्रीत सिंह, इंदु, तारकेश्वर कुमार, सुरेंद्र कुमार अहीरवाल, विवेकानंद भारती, पंकज कुमार, सौरभ कुमार, गोविन्द मकराना, देवनारायण एवं कमल शर्मा

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

सारांश

आज के दौर में बदलती हुई मनुष्य की जीवन शैली और उसके अत्यधिक प्लास्टिक पे निर्भरता ही प्लास्टिक प्रदूषण को बढ़ावा दे रही है। प्लास्टिक अपने कार्यात्मक गुणों जैसे हल्के, अधिक टिकाऊपन एवं कम उत्पादन लागत के चलते, आधुनिक समाज का एक सर्वव्यापी उत्पाद बन गया है, और इसी के चलते आज यह सम्पूर्ण वातावरण में फ़ैल रहा है। पिछले गत वर्षो में प्लास्टिक का वार्षिक उत्पादन लगभग 185 गुना बड कर 2020 में 367 मिलियन टन हो गया है भारत में प्लास्टिक के खराब अपशिष्ट प्रबंधन के कारण, अनुमानित 40 प्रतिशत प्लास्टिक कचरा बिना संग्रह के रह जाता है, और यही बिना संग्रहित प्लास्टिक विभिन्न जलीय एवं थलीय स्रोतों में जमा हो रहा है। यही प्लास्टिक जमा रह कर यांत्रिक, फोटोकैमिकल जैसी प्रक्रियाओं से खंडित होकर माइक्रोप्लास्टिक्स (<5 मिलीमीटर) या नैनोप्लास्टिक्स (<1 माइक्रोन) में परिवर्तित होते हैं। यह माइक्रोप्लास्टिक जलीय जीवो के स्वास्थ्य के साथ साथ मनुष्य जीवन की खाद्य श्रखंला को भी प्रभावित कर रहा है। विभिन्न शोध से पता चला है की मानव रक्त, मल, प्लेसेंटा, मिटटी, पीने के पानी और भोजन में माइक्रोप्लास्टिक के अंश प्राप्त हुए है जो बहुत ही बड़ा चिंता का विषय बना हुआ है। माइक्रोप्लास्टिक का मानव स्वास्थ्य, जलीय जीवों के साथ साथ वैश्विक अर्थव्यवस्था पर काफी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

परिचय

विश्व की बढ़ती हुई आबादी और मानव जीवन शैली में बदलाव के चलते, आज मनुष्य बहुत अधिक मात्रा में प्लास्टिक का उपयोग कर रहा है और उससे बहुत अधिक प्लास्टिक कचरा उत्पन्न हो रहा है। प्लास्टिक पेट्रोलियम से प्राप्त कार्बनिक पॉलिमर हैं जिसमें पॉलीइथाइलीन, पॉलीप्रोपाइलीन, पॉलीविनाइलक्लोराइड, और पॉलिएस्टर शामिल और अपने कार्यात्मक गुणों जैसे हल्के, अधिक टिकाऊपन एवं कम उत्पादन लागत के चलते आज यह आधुनिक समाज का एक सर्वव्यापी उत्पाद बन गया है, और इसी के चलते यह सम्पूर्ण वातावरण में फ़ैल रहा है। पिछले गत वर्षो 1950 से 2020 में प्लास्टिक का वार्षिक उत्पादन लगभग 185 गुना बड कर 367 मिलियन टन हो गया है और इसका वैश्विक बाजार मूल्य लगभग 440 बिलियन डॉलर 2021 में था जो 2029 में बढ़ कर 645 बिलियन डॉलर होने का अनुमान है। वैश्विक बाजार में पॉलीइथाइलीन, पॉलीप्रोपाइलीन का उत्पादन क्रमशः पहले और दूसरे स्थान पर हैं, इसके बाद पीईटी का वैश्विक उत्पादन में लगभग 18 प्रतिशत हिस्सा है, जिससे यह तीसरा सबसे अधिक निर्मित प्लास्टिक है। भारत लगभग 1.2 अरब से अधिक आबादी के साथ प्लास्टिक का दुनिया का प्रमुख उपभोक्ता है। भारत में खराब अपशिष्ट प्रबंधन के कारण, वार्षिक 9.4 मिलियन टन प्लास्टिक कचरे का अनुमानित 40 प्रतिशत बिना संग्रह के रहता है और यही बिना संग्रहित प्लास्टिक विभिन्न जलीय एवं थलीय स्रोतों में जमा होता रहता है। विभिन्न अध्ययनो से पता चला है की सालाना लगभग 8 मिलियन टन प्लास्टिक समुद्र में प्रवेश करता है और समुद्री प्रदूषक में लगभग 80 प्रतिशत हिस्सा प्लास्टिक का रहता है। प्लास्टिक के निरंतर बढ़ते उपभोग एवं ख़राब प्रबधन के चलते यह आज सम्पूर्ण थलीय एवं जलीय पारिस्थितिक तंत्र में फ़ैल गया है, ओर इसके लगातार बढ़ते कुप्रभाव की वजह से यह एक चिंता का विषय बन गया है।

ये बिना एकत्र प्लास्टिक थलीय जलीय/समुद्री वातावरण में प्रवेश कर वहां सैकड़ों और हजारों वर्षों तक पड़े रहते है और यांत्रिक और फोटोकैमिकल प्रक्रियाओं

से खंडित होकर माइक्रोप्लास्टिक्स (<5 मिलीमीटर) या नैनोप्लास्टिक्स (<1 माइक्रोन) में परिवर्तित होते है। ये माइक्रोप्लास्टिक साधारण प्लास्टिक की तुलना में ज्यादा खतरनाक है क्योंकि इन मइक्रोप्लास्टिक के अधिक सतही आयतन एवं ज्यादा फैलाव के कारण यह अन्य विषाक्त रसायनो, भारी धातुओं एवं जलजनित दूषित पदार्थो को जमा कर उनकी विषाक्ता को और अधिक बढ़ा देते है। समुन्द्र में प्लास्टिक के मलबों पर कीटनाशक, रासायनिक डाई और कार्बनिक प्रदूषको की सांद्रता समुंद्री तल पे पाई जाने वाली सांद्रता से 100 गुना अधिक मिली है। जलीय जीवों द्वारा अधिशोषित प्रदूषकों के साथ माइक्रोप्लास्टिक के अंतर्ग्रहण से जलीय तंत्र के खाद्यजाल संदूषित हो गया है।

हाल ही में प्रकाशित विभिन्न अध्ययनों से पता चला है कि प्लास्टिक कचरे का माइक्रोप्लास्टिक (एमपी) में विघटन, जलीय जीवो के स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है, और इसकी विषाक्ता खाद्य श्रृंखला के माध्यम से मनुष्य जीवन में फ़ैल रही है। विभिन्न शोध से पता चला है कि हवा जिसमें हम साँस लेते है, मिट्टी जिसमे फसल उगाई जाती, हमारे द्वारा खाये जाने वाले भोजन पीने के पानी में, एवरेस्ट की चोटी पर, समुन्द्र की गहराई, मानव रक्त, मल और प्लेसेंटा में माइक्रोप्लास्टीक के टुकड़े मिले है, जो एक बहुत ही बड़ा चिंता का विषय है। माइक्रोप्लास्टिक का मानव स्वास्थ्य, जलीय जीवों के साथ साथ वैश्विक अर्थव्यवस्था पर काफी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

प्लास्टिक का वर्गीकरण एवं क्षरण

प्लास्टिक को उसके आकार के आधार पर मैक्रो प्लास्टिक (≥ 25 मिलीमीटर), मेसोप्लास्टिक (<25 मिलीमीटर–5 मिलीमीटर), माइक्रोप्लास्टिक (<5 मिलीमीटर–1 मिलीमीटर), मिनी–माइक्रोप्लास्टिक (<1 मिलीमीटर –1 माइक्रोमीटर) और नैनो प्लास्टिक (<5 माइक्रोमीटर) में वर्गीकृत किया गया हैं। साधारणतः माइक्रोप्लास्टिक सिंथेटिक या सेमिसिंथेटिक पॉलीमर प्लास्टिक के कण होते हैं जिनका औसत आकार 5 मिलीमीटर से कम होता है। माइक्रोप्लास्टिक को प्राथमिक एवं द्वितीय माइक्रोप्लास्टिक में वर्गीकृत किया जा सकता है, ऐसे प्लास्टिक जिन्हे माइक्रो आकार में ही तैयार किया जाता है जैसे माइक्रोबीड्स, पैलेट, फाइबर टूथपेस्ट, फेस वाश, फेस स्क्रब, बॉडी स्क्रब, क्लींजर, क्रीम व अन्य व्यक्तिगत देखभाल उत्पादों को प्राथमिक माइक्रोप्लास्टिक में वर्गीकृत किया तथा द्वितीय माइक्रोप्लास्टिक्स बड़े प्लास्टिक मलबे के विखंडन, अपक्षय और/या अपघटन से बनते है। प्राथमिक माइक्रोप्लास्टिक सतही अपवाह, धाराओं, नदियों और अपशिष्ट जल उपचार संयंत्रों से निर्वहन के माध्यम से सीधे जलीय वातावरण में प्रवेश करते हैं, जबकि द्वितीय माइक्रोप्लास्टिक भौतिक (पवन, लहर और वर्तमान), रासायनिक (यूवी विकिरण), और जैविक (माइक्रोबियल) के विघटन से बनते हैं।

आजकल प्लास्टिक सभी प्रसाधन, वस्त्र, भूमि अनुप्रयोग, घरेलू और उद्योग से अपशिष्ट के माध्यम से सीधे वातावरण में छोड़े जा रहे है और जहॉ पर इनका प्राकृतिक और कृत्रिम क्षरण प्रक्रियाओं जैसे कि फोटो डिग्रेडेशन, बायोडिग्रेडेशन, मैकेनो–केमिकल, फोटो–ऑक्सीडेटिव डिग्रेडेशन, थर्मल और कैटेलिटिक एक्शन से क्षरण होकर माइक्रोप्लास्टिक उत्पन्न होते हैं। प्लास्टिक के अपक्षय से उसका सतही क्षेत्रफल बढ़ जाता है,जिससे उसका रासायनिक व्यवहार बदल जाता है जो यह अन्य जहरीले प्रदूषकों की सोखने की प्रतिक्रिया को भी बड़ा देता है। यही बदलाव जलीय पर्यावरण के भीतर मौजूद खतरनाक प्रदूषकों के साथ उनका प्रदूषण बढ़ा देता है।

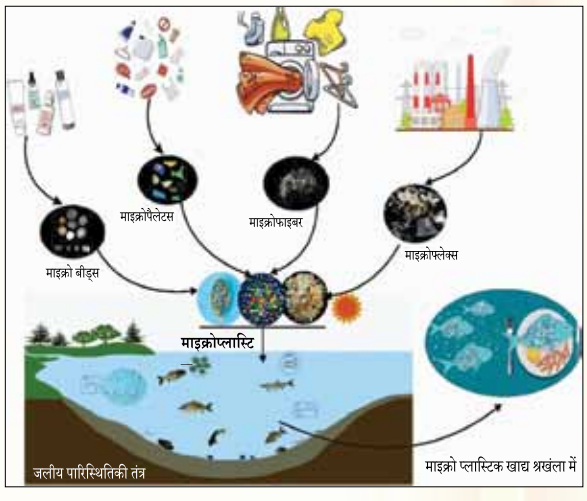

चित्र स. 1 माइक्रोप्लास्टिक के प्रकार एवं उसका जलीय पारिस्थितिकी तंत्र से खाद्य श्रृंखला में प्रवेश

जलीय पारिस्थितिकी तंत्र में माइक्रोप्लास्टिक प्रवेश के स्रोत

जलीय पर्यावरण में प्लास्टिक की उपस्थिति के स्रोत को उसके प्रवेश बिंदु के आधार पर या भूमि या जल–आधारित स्रोत के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। हालांकि, माइक्रोप्लास्टिक का फैलाव और जलीय पर्यावरण में प्रवाह उसकी परिवर्तनशीलता, प्रभुत्व भौगोलिक स्थिति, स्थलाकृति, मौसम, हाइड्रोडायनामिक प्रभाव और मानवजनित गतिविधियों के क्षेत्रों से निकटता और कनेक्टिविटी पर निर्भर करते हैं। मुख्यतः माइक्रोप्लास्टिक का जलीय पर्यावरण में प्रवेश मानवजनित गतिविधियों के कारण होता है जो मुख्य रूप से स्थलीय स्रोत से पहुंचती है। कुछ प्राथमिक माइक्रोप्लास्टिक सीधे जलीय पर्यावरण में प्रवेश कर जाते है तथा कुछ भूमि–आधारित कूड़े से या बाद में विखंडन से प्रवेश करते है। यह पाया गया है की जलीय वातावरण में नदियाँ और छोटी धाराएँ ही मइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण के प्रमुख मार्ग है। चित्र 2 जलीय पारिस्थितिक तंत्र में माइक्रोप्लास्टिक के विभिन्न स्रोतों, मार्गों और दशा को दर्शाता है। माइक्रोप्लास्टिक के प्रमुख स्रोतों में भूमि कूड़े, घरेलू एवं औद्योगिक अपवाह, मछली पकड़ने के जाल–यंत्र, सीवेज उपचार संयंत्र, बंदरगाह, शिपिंग उद्योग, पर्यटन, मनोरंजन और अन्य मानवजनित गतिविधियों को शामिल किया गया है।

विभिन्न अध्ययनों में तीर्थ केंद्रों पर मानवजनित गतिविधियों के कारण माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण में वृद्धि की जानकारी मिली है। भारत में तीर्थस्थल भी माइक्रोप्लास्टिक फैलाव में भूमिका रखते है जैसे तीर्थयात्री और पर्यटक जो एकल उपयोग वाले प्लास्टिक अक्सर नदी या जल स्रोतों के किनारे फेंक देते, इसके अलावा स्नान एवं कपडे धोते समय भी माइक्रोप्लास्टिक फाइबर भी पानी में मिल जाते है। नदियों और झीलों जैसे अंतर्देशीय मीठे पानी के वातावरण के मामले में, मछली पकड़ने और कूड़े जैसी पारंपरिक मानवजनित गतिविधियों के अलावा, अन्य कारक जैसे कि कचरा डंप से निकटता, और कच्चे या उपचारित सीवेज के प्रवाह ने भी पानी में माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण में योगदान दिया है।

माइक्रोप्लास्टिक्स के दुष्परिणाम

माइक्रोप्लास्टिक मीठे पानी और समुद्री वातावरण के साथ साथ हमारे पूरे पर्यावरण के लिए अत्यधिक विषैला साबित हो रहा है, और इससे बहुत सी गंभीर समस्याएं उत्पन्न हो रही है। माइक्रोप्लास्टिक की विषाक्तता पर्यावरणीय संरचना, जैव आवर्धन और जलीय तथा स्थलीय जीवों में जैवसंचय में परिवर्तन पैदा कर रही है जो पारिस्थितिकी तंत्र के कार्यों के लिए खतरा है। भारत में, माइक्रोप्लास्टिक के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव से लोगो में विभिन्न स्वास्थ्य समस्याए उत्पन्न हो रही है।

आजकल माइक्रोप्लास्टिक का खाद्य शृंखला पर बहुत सा अध्यन्न किया जा रहा है और अधिकांशतः खाद्य शृंखला में माइक्रोप्लास्टिक दर्ज किया गया है। मीठे और समुद्री पानी में माइक्रोप्लास्टिक खाद्य श्रखंला से होते हुए आखिर में मछलियों तक पहुंच रहा जो आखिरकार मानव खाद्य श्रखंला में प्रवेश कर मानव स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डाल रहा है। माइक्रोप्लास्टिक जलीय जीवो के अलावा जुगाली करने वाले जानवरो के रूमेन में भी पाया गया और जिससे स्वास्थ्य पर आवर्तक स्वर, अपच, खाने की क्षमता में कमी, वजन में कमी, प्रजनन और अन्य प्रतिकूल प्रभाव देखने को मिले। पॉलीविनाइलक्लोराइड प्लास्टिक का सबसे हानिकारक रूप है जिसमें बिस्फेनॉल ए, लेड, मरकरी, डाइऑक्सिन, फाथेलेट्स और कैडमियम जैसे विषाक्त, यौवन, तंत्रिका संबंधी कार्यों, प्रतिरक्षा, हृदय स्वास्थ्य, स्तन कैंसर, प्रोस्टेट कैंसर और चयापचय संबंधी जैसे विकार उत्पन्न कर सकता है। यहां तक कि स्तनपान कराने वाली माताएं भी अपने बच्चों को प्लास्टिक के बिस्फेनॉल ए से दूषित कर रही हैं।

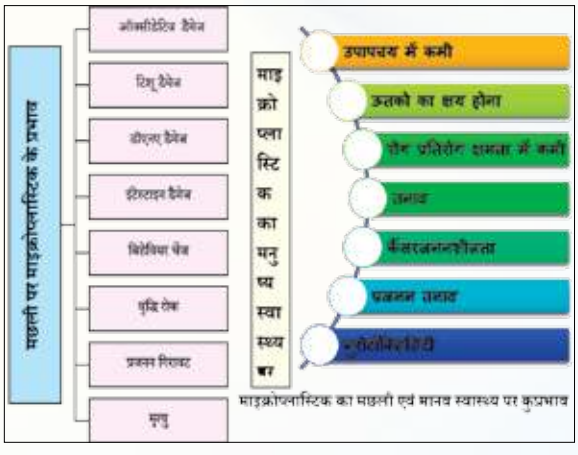

माइक्रोप्लास्टिक का मछली एवं मानव स्वास्थ्य पर कुप्रभाव

जानलेवा नैरोबी मक्खी : जानकारी ही बचाव है

सुदीपा कुमारी झा[1] एवं मो. मोनोबुल्लाह[2]

[1]भा.कृ.अनु.प. अटारी, पटना
[2]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

सारांश

नैरोबी मक्खी एक मित्र कीट है। ये न तो काटती है और न ही डंक मारती है परंतु इसके शरीर के किसी अंग पर बैठने से खुजलाहट, जलन तथा घाव हो जाता है। कभी–कभी तो आँखो की रोशनी भी चली जाती है। ऐसा पेडेरिन नामक पदार्थ के स्राव से होता है। जब भी नैरोबी मक्खी शरीर पर बैठे तो बिना स्पर्श किये उड़ा देना चाहिए और आंख को छूने से बचना चाहिए।

भारत में कीटों का काटना बहुत ही आम बात है लेकिन कुछ समय से नैरोबी मक्खी चर्चा का विषय बनी हुई है। जून के महीने में जब सिक्किम मणिपाल इंस्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, मझीतारी के 100 से अधिक छात्र नैरोबी मक्खी के चपेट में आ गए तब से लगातार इसका आतंक बना है। सिक्किम के बाद इसका प्रकोप बंगाल में पाया गया। इसके संक्रमण के खतरे से बिहार के सीमांचल क्षेत्र के लोग सहम गए थे। उसके बाद बिहार सरकार ने गंभीरता को देखते हुए बिहार में रेड अलर्ट की घोषणा कर दी। वास्तव में, नैरोबी मक्खी, मक्खी नहीं है। यह एक भृंग (बीटल) है। यह कोलियोप्टेरा गण (ओडर) के स्टेफिलिनिडे कुतुम्ब (फैमली) से संबंधित है। स्टेफिलिनिडे परिवार के सदस्य को रोव बीटल भी कहा जाता है। स्टेफिलिनिडे की पहचान मुख्य रूप से उसके छोटे एलीट्रा (आगे का पंख) द्वारा होता है जो आम तौर पर उनके पेट के आधे से अधिक खंडों को उजागर करते हैं। वंश (जीनस) पेडेरस की दो प्रजातियों (पी. एक्जिमियस तथा पी. सबियस) को नैरोबी मक्खी को कहा जाता है। नैरोबी एक पूर्वी अफ्रीकी देश केन्या की राजधानी है। यह कीट पूर्वी अफ्रीका में मूल रूप से पाया जाता है और वहां इसका भयंकर प्रकोप देखा गया। इसलिए इसे नैरोबी मक्खी या केन्या मक्खी के नाम से पुकारा जाता है। लेकिन यह केवल केन्या तक ही सीमित नहीं है, यह पूरे विश्व में उष्णकटिबंधीय और समशीतोष्ण क्षेत्र में भी पाया जाता है।

कीट का परिचयः

भृंग लगभग एक से.मी. लंबा होता है। कीट का सिर, पेट का पिछला भाग और एलीट्रा काले रंग का होता है तथा गर्दन और पेट का शेष भाग नारंगी रंग का होता है। यह नमी वाले स्थान जैसे धान का खेत में पाया जाता है तथा कई मील दूर आवासों के उज्ज्वल प्रकाश स्रोत की ओर रात मे भृंग आकर्षित होता है।

कभी – कभी खासकर भारी बारिश या बाढ़ के बाद गर्म रातों में भृंग बड़ी संख्या में उड़ता हैं। वयस्क कीट दिन के उजाले में भी सक्रिय रहता है। हालांकि ये उड़ सकता हैं, लेकिन दौड़ना पसंद करता है और बेहद फुर्तीले होता है। जब वे दौड़ता है या परेशान होता है तो पेट को घुमाने की एक विशिष्ट आदत होती है। मादा कीट नमी वाले स्थान में एक–एक करके अंडे देती है। जो आमतौर पर 3–19 दिनों में सुंडी और वयस्कों में विकसित हो जाता है। जीवन चक्र चार चरणों (अंडा, सुंडी, कोषस्थ ध् कोकून, वयस्क) से गुजरता है। वर्षा ऋतु के अंत में कीट की संख्या तेजी से बढ़ती है और फिर शुष्क मौसम की शुरुआत के साथ इसकी संख्या तेजी से घटती है।

कीट द्वार होने वाले नुक्सानः

सुंडी और वयस्क दोनों ही फसलों के कीटों के शिकारी होते हैं और मानव के लिए मित्र कीट लेकिन कभी–कभी मानव को शारीरिक रूप से नुकसान भी पहुंचाते है। सामान्यतः सिंचित भूमि में काम करने वाले किसानो इसके चपेट में आते है। लेकिन कभी कभी भृंग विभिन्न कारणों से आवासीय क्षेत्रों की ओर पलायन करते हैं, जैसे घर के अंदर से आने वाली रोशनी, कटी हुई फसल के साथ, कीटनाशकों का उपयोग से फसल में कीटों की कमी हो जाती है, परिणामस्वरूप उपलब्ध शिकार (फसल के कीट) की मात्रा कम हो जाती है और भोजन की तलाश में भृंग आवसीय क्षेत्र में आ जाता है। भारी बारिश के बाद कीड़ों की संख्या में वृद्धि होती है साथ ही इसका प्रकोप बढ़ जाता है। नैरोबिक मक्खियाँ न तो काटती हैं और न ही डंक मारती है लेकिन शरीर पर बैठने पर यह एक अम्लीय पदार्थ पेडेरिन का स्राव करती है। पेडेरिन का निर्माण कीड़ों के शरीर के अंदर पाए जाने वाले सहजीवी बैक्टीरिया द्वारा होता है। इस पदार्थ के कारण असामान्य जलन, जिल्द की सूजन या त्वचा पर घाव हो जाता है। सूजन की गंभीरता प्रत्येक व्यक्ति, पेडरिन की खुराक और संपर्क की अवधि पर निर्भर करती है। कम गंभीर मामलों में त्वचा में हल्की लालिमा होती है। मध्यम रूप से गंभीर मामलों में खुजली लगभग 24 घंटों के बाद शुरू होती है और लगभग 48 घंटों में छाले विकसित हो जाते हैं जो आमतौर पर सूख जाते हैं और निशान नहीं छोड़ते। यदि विष अधिक व्यापक रूप से शरीर में फैल गया हो तब अधिक गंभीर मामले हो सकते हैं तथा बुखार, तंत्रिका में दर्द, जोड़ों में दर्द या उल्टी हो सकती है। यदि विष व्यक्ति की आंखों के संपर्क में आता है, तो यह नेत्रश्लेष्मला (आँख आना) और अस्थायी अंधापन का कारण बन सकता। कुछ लोगों में घाव इतना गहरा हो जाता है कि डॉक्टर को सर्जरी करने की जरुरत होती है।

निवारक के उपायः

- मक्खियों को बिना स्पर्श किये उड़ा देना चाहिए
- शरीर के जिस हिस्से में ये मक्खियाँ बैठती हैं, उसे साबुन और पानी से अच्छी तरह धोना चाहिए
- सोते समय मच्छरदानी का उपयोग करना चाहिए
- ऐसा कपड़ा पहनें जिससे पूरा शरीर ढका रहे
- चश्मा पहनें और आंख को छूने से बचें
- रात में रोशनी से बचें
- नैरोबी मक्खी के प्रजनन स्थलों पर इमिडाक्लोप्रिड, फिप्रोनिल, डेल्टामेथ्रिन जैसे कीटनाशक का छिडकाव कर सकते हैं
- प्रकाश स्रोत के माध्यम से भृंग का बड़े पैमाने पर संग्रह कर के कीटनाशक की सहायता से मार सकते हैं
- गंभीर चकत्ते होने पर डॉक्टर से सलाह लें।

रेबीज : एक जानलेवा पशु से मनुष्य में होने वाला रोग

[1]पंकज कुमार, [1]मनोज कुमार त्रिपाठी, [2]मृत्युंजय कुमार
एवं [3]रश्मि रेखा कुमारी

[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना
[2]पशु चिकित्सा विज्ञान और पशुपालन महाविद्यालय, पश्चिम त्रिपुरा
[3]बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना(बिहार)

सारांश

भारत में रेबीज एक प्रमुख समस्या है जो प्रायः कुत्ते के काटने से होती है। यह बीमारी मनुष्यों के अलावा पशुओं में भी होती है। बीमारी होने के बाद जीवित रहना संभव नहीं है, परन्तु इस बीमारी को होने से रोका जा सकता है। कुत्ता काटने के बाद यथाशीघ्र घाव के जगह को साबुन से दस मिनट तक धुले, कोई एंटीसेप्टिकघोल जैसे डीटाल या सेवलॉन लगाएं तथा 0. 3, 7, 14, 28 तथा हो सके तो 90 दिन पर दिन पर टीका जरुर लगवाएं। साथ में टिटनेस का शुई लाभकारी होगा।

रेबीज एक विषाणु जनित रोग है। इतिहासकारों के अनुसार, रेबीज शब्द की उत्पत्ति या तो संस्कृत के "राभास" (मतलब हिंसा करने के लिए) से हुई है या लैटिन शब्द "रबेरे" (मतलब क्रोध करने के लिए)। जो अधिकांशतः (95%) संक्रमित कुत्तों के काटने या पहले से कटे जगह को चाटने से उसके लार के माध्यम से मनुष्य सहित अन्य पशुओं में फैलता है। यदपि यह बीमारी दुसरे जानवरों जैसे बन्दर, लोमड़ी, बिल्ली, नेवला, चमगादड़ या दूसरे संक्रमित पशुओं से भी मनुष्यों में फ़ैल सकता है, लेकिन इनका प्रतिशत नगण्य है। रेबीज का संक्रमण विषाणु युक्त एरोसोल या के साँस के माध्यम से या संक्रमित अंगों के प्रत्यारोपण से संभव है, लेकिन संभावना अत्यंत दुर्लभ है। रेबीज होने के बाद मृत्यु निश्चित है परन्तु सही से उपचार एवं समय से टीके लगवाकर रेबीज होने से बचा जा सकता है। कुत्ते की मध्यस्थता वाले रेबीज के कारण विश्व स्तर पर मानव मौतों की संख्या सालाना 59000 होने का अनुमान है। भारत में यह रोग गोवा, अंडमान और निकोबार और लक्षद्वीप समूह के अलावासभी राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में फैला हुआ है। राष्ट्रीय रेबीज नियंत्रण कार्यक्रम के अनुसार, भारत में 2012 से 2020 तक रेबीज से 6644 चिकित्सकीय रूप से संदिग्ध मानव रेबीज के मामले से मौतें हुई हैं। एकीकृत रोग निगरानी परियोजना के तहत रिपोर्ट किए गए जानवरों के काटने की संख्या 2012 में 42 लाख से बढ़कर 2020 में 72 लाख हो गई है। सबसे ज्यादा संख्या गुजरात, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों से बतया गया है। इसे देखते हुए भारत सरकार ने 11वीं पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय रेबीज नियंत्रण कार्यक्रम प्रारंभ हुआ जो 2018 तक चला। इसकी सफलता देख, 2030 तक कुत्ते की मध्यस्थता वाले रेबीज के उन्मूलन के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना (एनएपीआरई) प्रारंभ किया गया।

इस वायरस (लाइसावायरस) का इन्क्यूबेशन पीरियड 10 दिन से लेकर 2 साल तक (सामान्यतया 30 दिन से 90 दिन तक) होता है इसका मतलब वायरस उस मनुष्य या पशु के शरीर में इतने लम्बे दिन रहने के बाद ही लक्षण दिखाता है। वायरस के शरीर में प्रवेश करने से लेकर लक्षण दिखने का समय मनुष्य या पशु जिसको संक्रमित जानवर ने काटा है उसकी उम्र, प्रतिरोधक क्षमता, उसके शरीर में प्रवेश करने की जगह (काटने की जगह) तथा वायरस की मात्रा पर भी निर्भर करता है जैसे यदि घाव मस्तिस्क के करीब है तो रेबीज के होने की संभावना जल्दी हो जाती है। शरीर में प्रवेश करने के बाद काफी समय तक वायरस काटने की जगह पर रहता है, वहां पर अपनी संख्या बढाता है तथा फिर तंत्रिका तंत्र के माध्यम से मस्तिस्क में प्रवेश कर जाता है। इसके बाद लक्षण दिखना शुरू होता है। मस्तिस्क से वायरस लार की ग्रन्थिओ में जाता है। रेबीज का वायरस कुत्ते में लक्षण दिखने के 15 दिन पहले से ही (तथा अन्य पशुओं में 3 दिन से लेकर 1 महीने पहले तक) उसके लार में उपस्थित रह सकता है इसलिए देखने में स्वस्थ कुत्ते के काटने से भी रेबीज हो सकता है।

पशु में लक्षण :

कुत्तो में रेबीज होने पर उनमें असामान्य व्यवहार, आवाज में बदलाव, बुखार, उलटी, बहुत ज्यादा लार, अँधेरे में छुपना, असामान्य हलचलें, बेचैनी का बनना हो सकता है। इसके आलावा निचले जबडे में लकवा मिर्गी या अन्य जगह पर भी लकवा हो सकता है, परन्तु पशुओं में पानी से डर लगने वाला लक्षण नहीं होता है। बुखार, आँख की पुतली का फैलाव और फोटोफोबिया कभी–कभी मौजूद होते हैं।

गायों में रेबीज होने पर मुँह से पीले रंग का झाग निकलना, काफी मात्रा में लार का निकलना, दूध का कम हो जाना, शरीर के पिछले हिस्से में असामान्य गति होना होता है। संक्रमित पशु के दूध में भी वायरस निकल सकता है तथा कच्चा दूध पीने से यदि मुँह में या भोजन नली में कही थोडा भी कटा है तब संक्रमण हो जाता है। किन्तु दूध को उबालने से वायरस मर जाता है तथा पेट में अम्लीय दशा होने के कारण भी वायरस मर जाता है।

मनुष्य में लक्षण :

मनुष्यों में इस बीमारी में काटने के जगह पर दर्द, मष्तिस्क के झिल्ली में सुजन, बुखार, असामान्य बर्ताव, पानी से डर, इत्यादि हो सकता है। रेबीज ब्रेन स्टेम फंक्शन को प्रभावित करता है, जिससे हाइड्रोफोबिया (पानी का डर), एरोफोबिया (हवा का डर) और/या होता है। फोटोफोबिया (प्रकाश का डर), और अंत में श्वसन पक्षाघात के परिणामस्वरूप मृत्यु।

चित्र 1– पशु में टीकाकरण का तरीका

बचाव एवं इलाज: विश्व स्वास्थ्य संगठन के निर्देशानुसार के अनुसार यदि कोई रेबीज से ग्रसित या संदेह वाला कुत्ता या जंगली जानवर किसी व्यक्ति या पशु को काट लेता है या पहले से थोड़ा भी कटे जगह पर चाट लेता है तो **तुरंत ही घाव वाली जगह को कम से कम दस मिनट तक चलते पानी से साबुन से लगातार धोएं,** क्योकि वायरस बहुत देर तक भी कटे जगह पर रहता है इसलिए यदि किसी कारण वस तुरंत घाव नहीं धुल पाये हो तो बाद में ही सही घाव को उपरोक्त तरीके से जरुर धोएं। घाव पर तेल, मिटटी या मिर्ची जैसी अन्य चीजों का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए, घाव को अच्छे तरीके से धुलने और पोंछने के बाद, घाव पर एंटीसेप्टिक सलूशन जैसे डीटाल, सेवलान, या टीन्क्चर आयोडीन लगाये। जहाँ तक हो सके घाव को सिलना नहीं चाहिए, यदि बहुत आवश्यक हो तो ढीला टांका लगवाएं। टिटनेस का इंजेक्शन तथा रेबीज के इम्मुनोग्लोबुलिन भी लगवाना जरुरी है। इसके साथ में रेबीज के टीके (कुल पांच) भी समय समय पर जरुर लगवाये। टीका लगवाने का समय शून्य दिन पर (जिस दिन से टीका लगवाना शुरू किये), तीसरे दिन, सातवें दिन, 14वें दिन 28वें दिन पर टीका लगवाएं तथा जिसकी प्रतिरोधक क्षमता कम लग रही हो या ज्यादा उम्र हो तो 90 दिन पर एक और टीका लगवाएं (**चित्र 1**)। यदि कुत्ता पालतू है और देखने में स्वस्थ है तथा उसे पिछले दो वर्ष में कम से कम दो टीका या वैक्सीन लगा है, तो उसके काटने से रेबीज होने की संभावना बहुत कम होती है फिर भी रेबीज का टीका लगवाना शुरू कर देना चाहिए, परन्तु यदि दस दिन बाद भी कुत्ता स्वस्थ रहता है तो इसके बाद के टीके लगवाना बंद भी कर सकते है। गर्भावस्था या दूध देने की अवस्था में भी रेबीज का टीका लगवाना अवश्यक है। टीके का बच्चे पर या दूध पर कोई कुप्रभाव नहीं पाया गया है। जिन लोगो की संक्रमित पशुओं या संक्रमित वस्तुओं के संपर्क में होने की संभावना ज्यादा होती है, जैसे पशु चिकित्सक या कुत्तों को पकड़ने वाले लोग उन लोगो को पहले से ही शुन्य, 7 और 28 दिन पर टीका लगवाना चाहिए फिर एक साल बाद और फिर हर तीन साल पर बूस्टर डोज लगवाना चाहिए।

लंपी वायरस : पशुओं की जानलेवा बीमारी

अनिल कुमार सिंह एवं रजनी कुमारी
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

लंपी स्किन डिजीज- मवेशियों के लिए उभरता संकट

लंपी स्किन डिजीज गौवंशीय पशुओ में होने वाला एक संक्रामक रोग है, जिसे ढेलेदार त्वचा रोग भी कहा जाता है। कैप्रि पॉक्स नाम का वायरस इस रोग का कारक एजेंट है। यह रोग बहुत तेजी से एक पशु से दूसरे पशु में फैलता है। वर्त्तमान परिदृश्य में, यह बीमारी भारत सहित विभिन्न देशो के अनेक प्रान्तों में फैल चुकी है, एवं वर्ल्ड आर्गनाइजेशन फॉर एनिमल हेल्थ यानी WOAH की सूची में सम्मिलित है।

लंपी स्किन डिजीज का फैलाव

लंपी एक संक्रामक बीमारी है। UN फूड एंड एग्रीकल्चरल ऑर्गेनाइजेशन यानी FAO के अनुसार, लंपी बीमारी मच्छर, मक्खियों, जूं और पिस्सू जैसे जीवों के जरिए फैलने वाली एक चेचक जैसी बीमारी है। विशेषज्ञों के मुताबिक, ये बीमारी जानवरों की आवाजाही से भी फैलती है। एक पशु से दूसरे पशु में लंपी वायरस फैलने की दर 45% है, लेकिन मौत की दर 5 से 10% है। वर्ल्ड आर्गनाइजेशन फॉर एनिमल हेल्थ यानी WOAH के अनुसार इस बीमारी में मृत्युदर 5% तक है।

लंपी बीमारी के प्रमुख लक्षण

तेज बुखार और शरीर पर गांठें होना इस बीमारी के सबसे बड़े लक्षण हैं। बीमार पशुओं में बांझपन भी हो सकता है और इससे उनकी दूध उत्पादन क्षमता भी घट जाती है।

संक्रमित मवेशी में लक्षणों का घटना चक्र क्रम इस प्रकार होता है– इंफेक्शन होने के बाद लक्षण दिखने में 4–7 दिन का समय लगता है, जिसे इन्क्यूबेशन पीरियड कहते हैं। शुरुआत में गायों या भैसों की नाक बहने लगती है, आंखों से पानी बहता है और मुंह से लार गिरने लगती है। इसके बाद तेज बुखार हो जाता है, जो करीब एक हफ्ते तक बना रह सकता है। फिर जानवर के शरीर पर 10–50 मिमी गोलाई वाली गांठें निकल आती हैं। साथ ही उसके शरीर में सूजन भी आ जाती है। जानवर खाना बंद कर देता है, क्योंकि उसे चबाने और निगलने में परेशानी होने लगती है। इससे दूध का उत्पादन घट जाता है। कई बार लंपी पीड़ित गायों की एक या दोनों आंखों में गहरे घाव हो जाते हैं, जिससे उनके अंधे होने का खतरा रहता है। कई बार चेचक के घाव पूरे पाचन, श्वसन और शरीर के लगभग सभी आंतरिक अंगों में हो जाते हैं। ये लक्षण 5 हफ्ते तक बने रहते हैं। इलाज न होने पर मौत भी हो सकती है।

लंपी रोग का उपचार एवं बचाव

इसके लिए कोई खास एंटीवायरल दवा उपलब्ध नहीं है। इसे फैलने से रोकने का एक मात्र उपाय संक्रमित गाय–भैंस को कम से कम 28 दिन के लिए आइसोलेट करना है। इस दौरान उनके लक्षणों का इलाज होते रहना चाहिए। सबसे ज्यादा ध्यान शरीर पर होने वाली गांठों का रखना चाहिए, क्योंकि इससे दूसरे इंफेक्शन और निमोनिया हो सकता है। संक्रमित जानवरों की भूख बनाए रखने के लिए एंटी–इंफ्लेमेटरी दर्दनिवारक जैसे पैरासिटामॉल का इस्तेमाल किया जाता है। कैप्रिपोक्स जीनस के अन्य वायरस के वैक्सीन जैसे शीप–पॉक्स एवं गोट– पॉक्स वैक्सीन भी लंपी रोग के लिए प्रतिरक्षा प्रदान करती है। हाल के दिनों में भारत में राष्ट्रीय अश्व अनुसंधान केंद्र, हिसार एवं भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, बरेली के सहयोग से लंपी प्रोवैक नामक स्वदेशी टीका विकसित किया गया है। इस टीके द्वारा लंपी रोग की रोकथाम में मदद मिलेगी।

लंपी रोग से जुड़े आर्थिक प्रभाव

लंपी रोग से पशुओ में दूध उत्पादन की कमी, वज़न का गिरना , गर्भपात , बांझपन एवं मृत्यु इत्यादि के लक्षणों के कारण पशुपालको को बहुत नुक्सान उठाना पड़ता है, एवं इससे अर्थव्यवस्था, स्थानीय आजीविका एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर बहुत बुरा असर पड़ता है।

निष्कर्ष

लंपी स्किन डिजीज गोवंशीय पशुओ की एक विषाणु जनित रोग है, जिसका बचाव पशुओ की आवाजाही पर नियंत्रण, टीकाकरण , संक्रमित पशुओ क उपचार एवं बेहतर प्रबंधन द्वारा किया जा सकता है।

खरीफ फसलों का खरपतवार प्रबंधन

**इन्द्रजीत, दुष्यंत कुमार राघव, धर्मजीत खेरवार,
सन्नी कुमार, सन्नी आशिष बालमुचू एवं शशिकान्त चौबे**

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर – कृषि विज्ञान केंद्र, रामगढ़ (झारखंड)

खरपतवार शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम जेथ्रोटुल के द्वारा किया गया। खरपतवार फसलों के साथ उगने वाले वह अवांछित पौधे हैं, जो पौधों को उपलब्ध होने वाले पोषक तत्व, जल, प्रकाश, स्थान आदि के अधिकांश भाग को उनसे ही छीन लेते हैं, जिसके कारण फसल की वृद्धि पर बहुत ही प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जिसके कारण पैदावार भी अपेक्षाकृत घट जाती है और फसलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। खरपतवारों से रबी फसलों की अपेक्षा खरीफ फसलों पर अधिक प्रभाव पडता है। साथ ही ये मनुष्यों एवं जानवरों के स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं उत्पन्न करते हैं। इसके अलावा वायु प्रदूषण एवं जल प्रदूषण के साथ–साथ पौधों के परागण क्रिया को प्रभावित करते हैं। विशेष रूप से खरीफ में उगाए जाने वाले फसलों में धान मक्का, ज्वार, बाजरा, मूंगफली, सोयाबीन, तिल और अरहर, उर्द एवं मूंग आदि फसलों को अधिक नुकसान पहुंचाते हैं।

प्रमुख खरपतवार वर्षा ऋतु में पर्याप्त नमी एवं उच्च तापक्रम होना खरपतवारों के उगने तथा वृद्धि के लिए अनुकूल होता है, जिससे कारण इस ऋतु में उगाई जाने वाली फसलों में अनेकों प्रकार के खरपतवार उगते हैं। खरपतवारों के सफल नियंत्रण हेतु उनकी किस्मों को ध्यान में रखना आवश्यक है खरीफ फसलों में मुख्य रूप से उगने वाले खरपतवारों का विवरण इस प्रकार है:

खरीफ फसलों में उगने वाले प्रमुख खरपतवार:

चौड़ी पत्ती वाले : कनकवा (कामेलिना बेन्यालेसिस), पत्थरचटा (ट्रायेन्थेमा पोरचुलाकैस्ट्रम) महकुआ (एजीरेटम कॅनीज्याइडिस) रसभरी (फाइसैलिस मिनिमा) कालादाना (टाइपोमिया हेडेरेशिया), सफेदमुर्ग (सिलोशिया अर्जेन्शिया) हजारदाना (फाइलेन्स निरूरी) मकोय (सेलेनम नाइग्रम), बड़ी दुद्धी (यूफोरबिया हिरटा) जंगली जूट (कोरकोरस एकुटैगुलस)।

सकर पत्ती वाले: सवा (इकाइनोक्लोआ कोलोनम) दूबघास (साइनोडान डैक्टीलान) कोदो / मणुआ (इल्यूसिन इंडिका) बनरा (सिटेरिया ग्लैडका), मकड़ा (बैक्टीलोक्टेनियम इजिप्शिकम) डिजिटेरिया (डिजिटैरिया सैगुनालिस)।

मोथा परिवार: मोथा (साइपेरस रोटन्डस / सा इरिया)।

खरपतवार नियंत्रण का समय: खरीफ मौसम में खरपतवारों की प्रारंभिक वृद्धि फसल की तुलना में अधिक होती है जिसको अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए नियंत्रित रखना आवश्यक हो जाता है फसल की पूरी अवधि के लिए खरपतवार मुक्त रखा जाना कठिन होता है। और ऐसा करना, न ही आर्थिक दृष्टि से लाभकारी होता है। अतः फसल की वह प्रारंभिक अवस्था (क्रांतिक) जिसमें खरपतवार नियंत्रण कर उनसे होने वाली हानि को अधिकतम सीमा तक कम किया जा सकता है, के दौरान खरपतवारों को नियंत्रित करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण की विधियों: खरपतवार नियंत्रण करने के लिए मुख्यतः दो पहलुओं पर विचार करना आवश्यक होता है।

1. खरपतवारों के बीजों का खेत में पहुँचना एवं उनका प्रसार रोकना।
2. खरपतवारों की संख्या / वृद्धि को आर्थिक हानि के न्यूनतम स्तर से नीचे रखना।

निम्नलिखित उपायों द्वारा सफलतापूर्वक खरपतवार नियंत्रण किया जा सकता है।

शुद्ध एवं साफ बीजों का प्रयोग: फसलों की बुवाई खरपतवार रहित प्रमाणित बीजों से करें। फसल

के बीजों की बुवाई से पूर्व अच्छी प्रकार साफ किया जाये जिससे कि अन्य खरपतवारों के बीज आकार में छोटे होने कारण अलग हो सकें। जैसे धान में साँवा का बीज।

ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई: रबी फसलों की कटाई के बाद मई माह में एक गहरी जुताई करे जिससे की खरपतवारों के बीज एवं उनके भूमिगत भाग ऊपर आ जाते है तथा तेज धूप में उनकी अकुरण क्षमता नष्ट हो जाती है। साथ ही कीटो एवं बीमारियों के रोगाणु भी नष्ट हो जाते हैं।

फसल बुवाई से पूर्व खरपतवारों को नष्ट करना: प्रायः खरीफ ऋतु में प्रथम वर्षा होने के पश्चात् अधिकांश खरपतवार उग आते है जब इनमें दो–तीन पत्ती निकल आये, उन्हें सुविधानुसार रासायनिक (ग्लाइफोसेट अथवा पैराक्वाट 0.5 प्रतिशत घोल) अथवा यांत्रिक विधि (जुताई) द्वारा नष्ट किया जा सकता है। इससे मुख्य फसल में खरपतवारों की संख्या को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

किस्मों का चुनाव एवं बुवाई की विधि: खरपतवारों का रोकथाम के साधनों की कमी हो तो ऐसी प्रजातियों का चुनाव करना चाहिए जिनकी प्रारम्भिक बढ़वार तेजी से हो और वह खरपतवारों से प्रतिस्पर्धा कर उनकी वृद्धि को रोकने में सक्षम हो। जहाँ तक सम्भव हो बुवाई पंक्तियों में की जानी चाहिए जिससे की खरपतवारों को आसानी से नियंत्रित किया जा सके। छिटकवां विधि से बुवाई करने पर खरपतवारों की समस्या अधिक होती है एवं उनका नियंत्रण भी अपेक्षाकृत असुविधाजनक हो जाता है।

फसल चक्र: एक ही फसल चक्र की अधिक समय तक एक ही खेत में अपनाते रहने पर विशेष खरपतवारों की संख्या में काफी वृद्धि हो जाती है तथा उसके प्रभावी नियंत्रण में भी कठिनाई होती है। उदाहरणत धान–गेहूँ फसल चक्र में जंगली धान (साँवा) व मडूसी। अतः आवश्यक है कि फसल चक्र में दूसरी फसलों का समावेश करना चाहिए जिससे खरपतवारों की समस्या काफी कम होने के साथ–साथ उनका नियंत्रण भी आसान हो जाता है।

यांत्रिक विधि: निराई गुडाई खरपतवार नियंत्रण की सरल प्रभावी एवं प्रचलित विधि है विभिन्न फसलों में उचित समय पर यह क्रिया दो निराई–गुडाई से खरपतवारों को प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है।

रासायनिक नियंत्रण: कृषि मजदूरों की उप. लब्धता कम होने एवं मृदा दशा अनुकूल ना होने की अवस्था में रसायनों द्वारा प्रभावी ढंग से खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सकता है इसके द्वारा रासायनिक नियंत्रण के साथ–साथ उत्पादन लागत में भी कमी आती है लेकिन शाकनासियों का प्रयोग करने से पूर्व इनकी समुचित जानकारी का होना अति आवश्यक हैं अन्यथा लाभ की अपेक्षा हानि होने की संभावना अधिक रहती है।

तालिका : खरीफ फसलों में खरपतवार नियंत्रण हेतु प्रयोग होने वाले रसायन

फसल	खरपतवारनाशी का नाम	व्यापारिक नाम	प्रयोग दर (सक्रिय तत्व ग्राम / हे)	उत्पाद दर (ग्राम या मिली ग्रा./हे.)	प्रयोग का समय
धान	ब्लुटाक्लोर	मर्चेंटी	1000–1500	2000–3000	4–5 दिन बुआई / रोपाई के बाद
	पेन्डीमिथालिन	स्टॉम्प–30 ई.सी.	1000	3300	3–5 दिन बुआई / रोपाई के बाद
	प्रेटिलाक्लोर	रीफिट	750	1500	3–7 दिन बुआई / रोपाई के बाद
	विस्पायरीचक सोडियम	नोम्नी गोल्ड	25	250	25–30 दिन बुआई / रोपाई के बाद
	प्रेटिलाक्लोर+ सेफनर	सोफीट	750	1500	3–7 दिन बुआई / रोपाई के बाद
	क्लोरीमुरॉन+ मेट्सलफ्यूरीन	ऐलमीक्स4	4	20	15–20 दिन बुआई / रोपाई के बाद

फसल	खरपतवारनाशी का नाम	व्यापारिक नाम	प्रयोग दर (सक्रिय तत्व ग्राम / हे)	उत्पाद दर (ग्राम या मिली ग्रा./हे.)	प्रयोग का समय
	ऑक्सीडायजिल	रॉफट, टॉप स्टार	90	1500	0–3 दिन बुआई / रोपाई के बाद
	ऑक्सीफूरोफेन	गोल	150–250	600–1000	0–6 दिन बुआई / रोपाई के बाद
मक्का	एट्राजीन	एट्रा ट्राफ	750–1000	1500–2000	0–3 दिन बुआई के बाद
	पेन्डीमिथालिन	स्टॉम्प	1000–1500	3000–4500	0–3 दिन बुआई के बाद
	एलाक्लोर	लासो	2000–2500	4000–5000	0–3 दिन बुआई के बाद
गन्ना	एट्राजीन	एट्राट्राफ	2000	4000	0–3 दिन बुआई के बाद
	पेन्डीमिथालिन	स्टॉम्प	1000–1500	3000–4500	0–3 दिन बुआई के बाद
	ग्लायफोसेट	राउंडअप	1000	2500	अंकुरण के बाद
	मेट्रीबुजीन	सैंकॉर	1000–1500	1500–2250	अंकुरश के पहले/ अंकुरश के बाद (जल्दी)
	2,4– डी.इ.इ.	वीडमार	1000	3000	अंकुरण के बाद
ज्वार	एट्राजीन	एट्रा ट्राफ	500–700	1000–1500	0–3 दिन बुआई के बाद
	2,4– डी.इ.इ.	वीडमार	750	2000	30–45 दिन बुआई के बाद
	पेन्डीमिथालिन	स्टॉम्प	750–1000	2500–3000	0–3 दिन बुआई के बाद
खरीफ दलहन (मूंग, उडद़, बरहर	पेन्डीमिथालिन	स्टॉम्प	750–1000	2500–3000	0–3 दिन बुआई के बाद
	फ्लूक्लोरालीन	बसालिन	750–1000	1500–2000	बुआई के पूर्व मिट्टी म्विन मिलाना
	एलाक्लोर	लासो	2000–2500	4000–5000	0–3 दिन बुआई के बाद
	मेटोलाक्लोर	डूअल	1000–1500	2000–3000	0–3 दिन बुआई के बाद
	ऑक्सीडायजोन	रौनस्टार	250	1000	0–3 दिन बुआई के बाद
	ऑक्सीफ़्लूरोफेन	गोल	100–125	400–500	0–3 दिन बुआई के बाद
	इमिजेथायपर	परस्यूट	40–60	400–600	30 दिन बुआई के बाद
सोयाबीन	पेन्डीमिथालिन	स्टॉम्प	750–1000	2500–3000	0–3 दिन बुआई के बाद
	फेनोक्साप्रोप	वीप सुपर	80–100	800–1000	20–25 दिन बुआई के बाद
	एलाक्लोर	लासो	2000–2500	4000–5000	0–3 दिन बुआई के बाद
	क्लोरीमुरॉन	क्लोरबीन	8–12	40–60	15–20 दिन बुआई के बाद
	मेट्रीबुजीन	सैंकॉर	350–500	500–750	0–3 दिन बुआई के बाद
	फ्लूक्लोरालीन	वासालिन	1000	2000	बुआई के पूर्व मिट्टी में मिलाना
	इमिजेथायपर	परस्यूट	80–100	800–1000	30 दिन बुआई के बाद
मूंगफली	फ्लूक्लोरालीन	वासालिन	1000	2000	बुआई के पूर्व मिट्टी में मिलाना
	इमिजेथायपर	परस्यूट	80–100	800–1000	30 दिन बुआई के बाद
	पेन्डीमिथालिन	स्टॉम्प	750–1000	2500–3000	0–3 दिन बुआई के बाद

फसल	खरपतवारनाशी का नाम	व्यापारिक नाम	प्रयोग दर (सक्रिय तत्व ग्राम / हे)	उत्पाद दर (ग्राम या मिली ग्रा./हे.)	प्रयोग का समय
	क्वाजीलोफोक इथाइल	टरगा सुपर	40–50	800–1000	15–20 दिन बुआई के बाद
सूर्यमुखी	पेन्डीमिथालिन	स्टॉम्प	750–1000	2500–3000	4–5 दिन बुआई/ रो.पाई के बाद
	फ्लूक्लोरालीन	वासालिन	1000	2000	बुआई के पूर्व मिट्टी में मिलाना
	एलाक्लोर	लासो	2000–2500	4000–5000	0–3 दिन बुआई के बाद
	ऑक्सीडायजोन	रॉनस्टार	500–1000	2000–4000	0–3 दिन बुआई के बाद
	ऑक्सीफ़्लूरोफेन	गोल	250	1000	0–3 दिन बुआई के बाद
जूट	पेन्डीमिथालिन	स्टॉम्प	750–1000	2500–3000	0–3 दिन बुआई के बाद
टमाटर/ बैगन/ मिर्च	पेन्डीमिथालिन	स्टॉम्प	1000	3000	0–3 दिन बुआई के बाद
	मेट्रीबुजीन	सैंकॉर	525	750	अंकुरण से पहले
प्याज/ अदरक	पेन्डीमिथालिन	स्टॉम्प	1000	3000	अंकुरण से पहले

खरपतवार नाशक दवा खरीदने से पूर्व सावधानियाँ:

1. किस खरपतवार को नियंत्रित करना है जो दवा खरीद रहे हैं वह दवा क्या मिश्रित खरपतवार संख्या के लिए उपयोग हो सकता है कि नहीं।
2. यह दवाई किस–किस खरपतवार संख्या को मार सकती है।
3. क्या आप यह दवा विश्वसनीय लाइसेंसधारी दुकान से खरीद रहे हैं?
4. क्या आपने खुली दवा तो नहीं खरीदी ?
5. एक स्थान से दुसरे स्थान पर ले जाते समय खरपतवार नाशक दवा का डिब्बा कसकर बंद होना चाहिए।
6. खरपतवारनाशक दवाईयों का बीज खाने के सामान पशुओं के चारे से दूर रखना चाहिए।

छिड़काव के समय सावधानियाँ:

1. डिब्बा खोलने से पहले लेबल व सावधानिया पूरा पढ़ लें।
2. लेबल लगे हुए ही डिब्बे की दवाई प्रयोग करें, रंग, खुशबु इत्यादि से दवा को न पहचानें।
3. बन्द स्प्रे पम्प की पाइप या नोजल को मुँह से न फुके।
4. फसल की बुवाई से पूर्व प्रयोग किए जाने वाले रसायनों को खेत तैयार करते समय अंतिम जुताई के पहले भूमि में मिलाया जाता है फिर हल्की जुताई कर पाटा लगा दिया जाता है कुछ ऐसे रसायन है फ्लूक्लोरेलिन आदि।
5. बुवाई के बाद एवं अंकुरण से पहले प्रयोग किए जाने वाले रसायनों जैसे पेंडीमेथालिन एलाक्लोर ब्यूटाक्लोर आदि का प्रयोग फसल की बुवाई के तुरंत पश्चात अंकुरण से पहले किया जाता है। धान की फसल में यह समय रोपाई के 3 से 4 दिन बाद का होता है।
6. अंकुरण के बाद प्रयोग किए जाने वाले रसायनों जैसे 2,4–डी आदि का प्रयोग खरपतवारों के अंकुरण के पश्चात फसल की बुवाई के 20 से 25 दिन बाद उनके ऊपर छिड़काव किया जाता है।
7. फसल में केवल वही रसायन प्रयोग किया जाना चाहिए जिसकी सिफारिश की गई है।
8. सिफारिश केवल शुद्ध रूप से उगाई जाने वाली फसल के लिए है अतः अंतर फसली या मिश्रित फसलों में रसायन का प्रयोग वैज्ञानिक के परामर्श से ही करें।

9. रसायन के साथ मिले निर्देश पत्र पर अकित जानकारी को अच्छी तरह देख लेने के बाद प्रयोग करें।
10. प्रयोग में लाने वाले स्प्रे मशीन को पहले अच्छी तरह पानी से धोएं जिससे कि उसमें अन्य कोई रसायन का अवशेष ना रहे।
11. शाकनाशी (रसायन) के छिड़काव हेतु फ्लैट सेल का प्रयोग ही करें। प्रायः किसान साधारण नोजल का प्रयोग करते हैं जिससे रसायन की प्रभाविकता कम होने के साथ–साथ इनकी पूरी मात्रा भी प्रयोग नहीं हो पाती है।
12. पानी की उचित मात्रा रसायन का घोल बनाने के लिए संस्तुति के आधार पर ही करें।
13. स्प्रे मशीन में घोल बनाते समय पहले आधा पानी डालें फिर रसायन और बाद में जितनी पानी चाहिए मिला लें। याद रहे पानी व रसायन का घोल छानकर ही प्रयोग किए जाएं।
14. यदि पाउडर वाले रसायन का प्रयोग किया जा रहा है तो छिड़काव के समय रसायन घोल को थोड़ी–थोड़ी देर के बाद हिलाते रहना चाहिए।
15. छिड़काव करते समय व्यक्ति को पूरे कपड़े दस्ताने व चश्मा आदि पहनना चाहिए साथ ही छिड़काव के समय धूम्रपान अथवा खाने व चबाने वाली वस्तुओं का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
16. तेज धूप और हवा के समय छिड़काव नहीं करना चाहिए।
17. शाकनाशी प्रयोग के पहले के समय नोजल को इधर–उधर ना करें और एक साथ छिड़काव करते रहे।
18. रसायन जहरीले होने के कारण इन्हें खुले स्थानों व बच्चों की पहुँच से बाहर रखें। साथ ही प्रायः यह देखा जाता है कि किसान भाई प्रयोग के बाद खाली डिब्बे का प्रयोग करने लगते हैं जो शरीर के लिए अत्यधिक घातक है अतः उनका प्रयोग कर जमीन में दबा दें।
19 अच्छी फसल उगाने के लिए काफी मात्रा में गोबर की खाद व रसायनिक खाद का प्रयोग करें ताकि फसल पर दवाई का नकारात्मक प्रभाव को कम किया जा सके।

जलवायु परिवर्तन – विषाणुजनित रोगों के लिए वरदान या अभिशाप

अभिषेक कुमार दूबे, संतोष कुमार, मनीषा टम्टा, शुभा कुमारी, राकेश कुमार एवं एन. भक्ता

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

सारांश

जलवायु परिवर्तन विषाणुजनित रोगों को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप मे प्रभावित करता है। जलवायु परिवर्तन के कारण के कारण विभिन्न परिस्थितियाँ उत्पन्न होती है जैसे ग्रीनहाउस गैसों में वृद्धि, तापमान में परिवर्तन, वर्षा, सापेक्षिक आर्द्रता, हवा की गति और दिशा में परिवर्तन, खेती प्रणालियों में परिवर्तन, खरपतवार मे बृद्धि इत्यादि हैं। इन विभिन्न स्थितिओ के कारण विषाणु विज्ञान के विभिन्न घटकों प्रभावित होते हैं जो कि भविष्य मे खाद्य सुरक्षा पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालेगा।

जलवायु परिवर्तन के कारण पौधों में विषाणुओं द्वारा होने वाले रोगों पर गहरा प्रभाव पड़ा है। यह विषाणुजनित रोगों को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप मे प्रभावित करता है। ग्रीनहाउस गैसों में वृद्धि, तापमान प्रोफ़ाइल में परिवर्तन, वर्षा, सापेक्षिक आर्द्रता, हवा की गति और दिशा में परिवर्तन रोगों को प्रत्यक्ष रूप मे प्रभावित करते हैं। जबकि अप्रत्यक्ष प्रभाव, खेती के क्षेत्रों में परिवर्तन, खेती प्रणालियों में परिवर्तन, खरपतवार में वृद्धि इत्यादि के कारण उत्पन होता है।

तापमान और वायुमंडलीय [कार्बन डाइऑक्साइड] में वृद्धि का होस्ट–पैथोसिस्टम पर पर्याप्त प्रभाव से भविष्य की खाद्य सुरक्षा पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ेगा। जलवायु परिवर्तन से जुड़ी मौसम मे परिवर्तन पौधों और वैक्टर (रोग वाहक) में परिवर्तन के माध्यम से पौधों के विषाणुओं पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव डालती हैं। यह पादप विषाणुओं और उनके वाहकों के वितरण और उत्तरजीविता, विषाणु रोगजनन को भी प्रभावित करता है। कार्बन डाइऑक्साइड की अधिक मात्रा, पौधे की वृद्धि, उसके क्रिया विज्ञान और जैव रसायन को सकारात्मक रूप से प्रभावित करता है जो विषाणु–वाहक–पौधा के संबंध को प्रभावित करता है। बदलती जलवायु परिस्थितियों ने पेपिनो मोज़ेक वायरस, टोमैटो ब्राउन रगोज फ्रूट वायरस, टोमैटो क्लोरोसिस वायरस, टोमैटो टोरराडो वायरस और टोमैटो येलो लीफ कर्ल वायरस के उद्भव में योगदान दिया है। ये विषाणुजनीत रोग बड़े भौगोलिक क्षेत्रों में फैल गए हैं और दुनिया भर में टमाटर के उत्पादन को गंभीर रूप से प्रभावित किए हैं। कार्बन डाइऑक्साइड तथा ओज़ोन की अधिक मात्रा, पादप हार्मोन–निर्भर संकेत प्रणाली (जैस्मोनिक और सैलिसिलिक एसिड) जो पौधों की बीमारियों और कीटों की प्रतिक्रियाओं को विनियमित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, उन्हें प्रभावित करता है।

एक अध्ययन मे पाया गया कि माहू की संख्या कार्बन डाइऑक्साइड स्तर (700 पीपीएम) में थोड़ी वृद्धि पर कम हुई लेकिन उच्च स्तर (1000 पीपीएम) पर बढ़ी। एक दूसरे अध्ययन मे पाया गया कि रोपालोसिफम मेडिस (माहू) के जीव विज्ञान पर उच्च कार्बन डाइऑक्साइड और तापमान के प्रभाव से जौ में होने वाले विषाणु जनित रोगों मे वृद्धि हो सकती है। मध्यम वर्षा के साथ उच्च तापमान आमतौर पर बेमासिया टबासी (सफेद मक्खी) आबादी के पक्ष में होता है जो बदले में विषाणु रोग संचरण को बढ़ा सकता है। बदलते जलवायु के कारण टोमेटो सपोटेड विल्ट वायरस प्रसारित करने वाले थ्रिप्स की आबादी को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करता है और इस प्रकार विषाणु रोग को प्रभावित करता है। औसत मृदा तापमान में वृद्धि मृदा जनित विषाणु रोगों के संचरण को भी प्रभावित करती है। बढ़े हुए तापमान के कारण मृदा जनित विषाणुओं का विस्तारित भौगोलिक क्षेत्र हो सकता है जो पहले कम अनुकूल ठंडे स्थितियों के कारण प्रतिबंधित थे। तेज हवा और दिशा भी कीट जनित विषाणुओं के प्रसार को प्रभावित करती है। यह प्रारंभिक विषाणु स्रोत से दूर नए संक्रमण की शुरुआत करता है।

जलवायु परिवर्तन के कारण हवा के वेग में अनुमानित वृद्धि संभवतः कीट और विषाणु वाहक के फैलाव को बढ़ाएगी। हालांकि, लंबे समय तक उच्च हवा का वेग कीट जनित विषाणुओं के प्रसार को रोकता है। पौधों के भीतर विषाणुओं के संख्या मे वृद्धि के लिए उच्च तापमान ऑप्टिमा वाले वायरस और जो गर्म क्षेत्रों के लिए अनुकूलित होते हैं, उनके औसत तापमान में वृद्धि के साथ अपनी भौगोलिक सीमाओं का विस्तार करने की संभावना है। हालांकि, ऐसी स्थितियों में संरक्षित खेती शामिल नहीं है जहां तापमान नियंत्रित वातावरण में फसलें उगाई जाती हैं।

पादप विषाणु विज्ञान को जलवायु परिवर्तन, अप्रत्यक्ष रूप मे भी प्रभावित करती है। जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप बड़े पैमाने पर खेती प्रणाली में परिवर्तन होने की संभावना है जिसमें फसल विविधीकरण, कृषि गहनता, रासायनिक नियंत्रण उपायों का अधिक उपयोग, संरक्षित फसल का उपयोग और शुष्क क्षेत्रों में र्सिचाई आधारित खेती शामिल है ताकि पूरे साल फसल ली जा सके। कृषि प्रणालियों में इस तरह के बदलाव अक्सर बार–बार होने वाली और हानिकारक विषाणु महामारियों के पक्ष में होते हैं। वर्षा जल उपयोग दक्षता बढ़ाने के लिए विभिन्न कृषि पद्धतियों का स्तेमाल किया जाता है, जिससे मिट्टी से नमी ह्रास को काम किया जाता है तथा फसल को वर्षा जल की उपलब्धता में वृद्धि होती है। कभी–कभी इस तरह की कृषि पद्धतियाँ विषाणु वाहक को आकर्षित करती हैं। जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप, पूर्व में ठंडे उच्च अक्षांश वाले स्थान धीरे–धीरे गर्म हो जाते हैं और पर्याप्त वर्षा की उपलब्धता से खेती के क्षेत्रों, वार्षिक फसल अवधि और विविध फसलों को उगाने की क्षमता में वृद्धि होने की संभावना है। ऐसी स्थितियां विषाणु स्रोत के स्तर को बढ़ाकर और विषाणु वाहक के माध्यम से वायरस के प्रसार से गंभीर विषाणु रोगों के विकास मे मदद कर सकती है। हालांकि, उपोष्णकटिबंधीय, अर्ध–शुष्क और शुष्क मध्य अक्षांश में, कम वर्षा और जलवायु परिवर्तन के कारण सूखे की अवधि में वृद्धि से फसल की विविधता और उनके फसल क्षेत्र में कमी आने की संभावना है। सामान्य तौर पर, इस तरह के परिदृश्य कई पौधों के विषाणु और उनके वाहक के लिए कम क्षेत्र के आकार और बढ़ती अवधि के कारण कम अनुकूल होते हैं, और रोपण के बीच अलगाव बढ़ जाता है जो अंततः विषाणु वाहक के वितरण, वि. विधता और गतिविधिओं को प्रभावित कर विषाणु से होने वाले रोगों को प्रभावित करते है। नई किस्मों को नए क्षेत्रों में अपनाने, बीज दूषित या अन्य रोपण सामग्री के व्यापार से बीज जनित विषाणुओं प्रसार नए क्षेत्रों मे होता है।

तालिकाः जलवायु परिवर्तन मापदंडों के विषाणु रोगजनकों की महामारियों के जैविक मानकों पर संभावित प्रभाव स्तर (जोन्स और बारबेटी, (2012))

जलवायु परिवर्तन मानक	रोगवाहक और पौधों के लिए जैविक मानक	रोगज़नक़ के लिए जैविक मानक
(1) प्रत्यक्ष • अधिकतम औसत तापमान (गर्मी सहित) • न्यूनतम औसत तापमान (ठंड सहित) • औसत वर्षा और परिवर्तित वर्षा स्वरूप • अत्यधिक वर्षा से संबंधित घटनाएं (मानसून वर्षा ओलावृष्टि सहित, बाढ़ और सूखा) • आपेक्षिक आर्द्रता (पत्ती सूक्ष्म जलवायु)	• रोगवाहक वितरण में परिवर्तन • रोगवाहक बहुतायत में परिवर्तन • रोगवाहक गतिविधि में परिवर्तन • रोगवाहक उत्तरजीविता के तरीके • रोगवाहक की तापमान चरम सीमाओं से बचने की क्षमता • रोगवाहक की वर्षा से संबंधित घटनाएं से बचने की क्षमता • रोगवाहक की तेज हवाएं से बचने की क्षमता • रोगवाहक पर बढ़े हुए ग्रीनहाउस गैसों का प्रभाव	• चरम मौसम में पौधों के भीतर जीवित रहने की क्षमता • पौधों और रोगवाहक के भीतर संख्या बृद्धि की क्षमता • घाव के माध्यम से प्रवेश और फैलाव की क्षमता • बीज, पराग या द्वारा नए क्षेत्रों मे प्रचार

जलवायु परिवर्तन मानक	रोगवाहक और पौधों के लिए जैविक मानक	रोगज़नक़ के लिए जैविक मानक
• हवा की गति और दिशा • ग्रीनहाउस गैस सांद्रता • सामान्य जलवायु अस्थिरता **(2) अप्रत्यक्ष** • खेती हेतु पौध विविधता मे बदलाव • कृषि में क्षेत्रीय परिवर्तन • वैकल्पिक खेती या खरपतवार में बदलाव • खेती प्रणालियों में परिवर्तन	• वैकल्पिक खेती या खरपतवार में रोगवाहक संक्रमण • रोगवाहक को आकर्षित करने वाले पौधों के क्रिया विज्ञान में परिवर्तन • रोगवाहक संचरण दक्षता को प्रभावित करने वाले पौधों के क्रिया विज्ञान में परिवर्तन • रोगवाहक को आकर्षित करने वाले पौधों के आकृति विज्ञान में परिवर्तन • रोगज़नक़ संक्रमण को आकर्षित करने वाले पौधों के आकृति विज्ञान में परिवर्तन • पौधों और रोगवाहक के फेनोलॉजी में परिवर्तन • एक रोगवाहक की उपस्थिति में दूसरे रोगवाहक की गतिविधि में परिवर्तन • पौधों के तापमान संवेदनशीलता में परिवर्तन के कारण उनके रोगवाहक या रोगज़नक़ के प्रति प्रतिरोध मे परिवर्तन • रोगवाहक नियंत्रण के रासायनिक उपाय की प्रभावशीलता में परिवर्तन • रोगवाहक नियंत्रण के कल्चरल और जैविक नियंत्रण उपाय की प्रभावशीलता में परिवर्तन	• वैकल्पिक खेती का या खरपतवार में बने रहने और संख्या बृद्धि करने की क्षमता • रोगवाहक के अंदर संख्या बृद्धि करने की और फैलाने की क्षमता • नए पौधों में संक्रमण करने की क्षमता

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन के कारण बहुत से विषाणु रोग के फैलाव और आक्रामकता मे बृद्धि के संकेत हैं हालांकि अनुकूल परिस्थिति न होने के कारण, कुछ विषाणु रोग के फैलाव और आक्रामकता मे कमी भी आ सकती है। विभिन्न पहलुओं को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि जलवायु परिवर्तन से पौधों के रोग प्रणाली में बदलाव की संभावना है, इसलिए व्यापक प्रबंधन शुरू करने के लिए विषाणु विज्ञान के विभिन्न घटकों और जलवायु परिवर्तन के बीच के संबंध तो व्यापक तौर पर समझने की आवश्यकता है।

पौधों मे रोग प्रबंधन के गैर रासायनिक तरीके

अभिषेक कुमार दूबे, संतोष कुमार, मनीषा टम्टा, कुमारी शुभा एवं राकेश कुमार

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

पादप रोग के कारण फसल के उत्पादन पर काफी असर पड़ता है जिसके कारण बढ़ती जनसंख्या के लिए खाद्यान आपूर्ति एक चुनौती हो सकती है। बदलती कृषि प्रणाली मे रसायनों का उपयोग खासकर रोग प्रबंधन के लिए बढ़ गया है। कृषि क्षेत्र में रसायन के ज्यादा इस्तेमाल से पर्यावरण पर भी बुरा असर पड़ता है। अतः रोग प्रबंधन के गैर रासायनिक तरीकों पर बल देना आवश्यक है। रोग प्रबंधन के विभिन्न गैर रासायनिक तरीकों में व्यवहारिक (कल्चरल), भौतिक, जैविक और नियामक (रेगुलेटेरी) प्रबंधन महत्वपूर्ण हैं।

पादप रोग, पौधे की सामान्य अवस्था तथा उसके विकास को बाधित करता है। पौधों की बीमारियों की व्यापकता मौसम के अनुसार बदलती रहती है, जो फसलों और उगाई जाने वाली किस्मों, रोगज़नकों की उपस्थिति और पर्यावरणीय परिस्थितियों पर निर्भर करती है। बीमारियों से फसल की उपज में कमी के परिणामस्वरूप भुखमरी हो सकती है, विशेष रूप से उन देशों में जहां रोग–नियंत्रण के पर्याप्त संसाधन मौजूद नहीं हैं तथा वार्षिक हानि बहुत अधिक होती हैं। बढ़ती हुई मानव आबादी की खाद्य मांगों को पूरा करने के लिए कृषि पद्धतियों में बदलाव लाया जा रहा है और बड़े क्षेत्रों में संकीर्ण आनुवंशिक आधार वाली नई फसल किस्मों का उपयोग किया जा रहा है जो कि बीमारी के प्रकोप का एक कारण भी है। वर्तमान मे खाद्यान सुनिश्चित करने हेतु रोग प्रबंधन के लिए रासायनिक तरीकों पर निर्भरता बढ़ गई है जो कि पर्यावरण के लिए सही संकेत नहीं है। हालांकि गैर रासायनिक तरीकों के इस्तेमाल को बढ़ावा देकर रसायन द्वारा पर्यावरण पर होने वाले दुष्प्रभाव से बचा जा सकता है। रोग प्रबंधन के विभिन्न गैर रासायनिक तरीकों में व्यावहारिक, भौतिक, और जैविक प्रबंधन महत्वपूर्ण हैं।

1. **व्यवहारिक (कल्चरल) प्रबंधनः** इसका संबंध उन गतिविधियों से है जिसमे फसल उगाने के विभिन्न चरणों मे फेरकर रोगों का प्रबंधन किया जाता है। व्यवहारिक प्रबंधन को दो भागों मे बाँटा जा सकता है
   - क. रोपण पूर्व व्यवहारिक प्रबंधन
   - ख. रोपण के पश्चात व्यवहारिक प्रबंधन
   - ग. **रोपण पूर्व प्रबंधनः** इसमे फसल लगाने के पहले के क्रियाकलापों पर बल दिया जाता है

गर्मी की गहरी जुताईः संरक्षित कृषि के तहत मिट्टी की जुताई कम से कम की जाती है जो रोगजनक के इनोकुलम निर्माण मे सहायक होता है, इसलिए लग. भग तीन साल की खेती के बाद, गर्मी के दिनों मे गहरी जुताई करनी चाहिए। इसके उच्च तापमान के कारण रोगज़नक़ की संख्या मे कमी आती है तथा उनका प्रसार काम हो जाता है।

फसल चक्रः

प्रत्येक वर्ष एक ही खेत में एक ही तरह के फसल लेने से रोगज़नकों की संख्या में वृद्धि होती है। अतः मृदा जनित रोगों के प्रबंधन के लिए असंबंधित फसलों के साथ फसल चक्रण बहुत प्रभावी तरीका है।

उठे हुए स्थान पर रोपणः

खराब जल निकासी वाली मिट्टी में यह तरीका बहुत प्रभावी है। वे रोग जो जल जमाव कि स्थिति मे ज्यादा आक्रामक हो जाते हैं उनके प्रबंधन मे यह तरीका अर्थात उठे हुए स्थान पर रोपण करना काफी लाभदायक होता है।

जल जमाव की स्थिति उत्पन्न करना:

मृदाजनित रोगज़नक़ पर इसका हानिकारक प्रभाव, ऑक्सीजन (O_2) की कमी, कार्बन डायोक्साइड (CO_2) में वृद्धि या अवायवीय परिस्थितियों में विषाक्त पदार्थों का उत्पादन से संबंधित हो सकता है। बाढ़ के परिणामस्वरूप, मिट्टी में CO_2 की मात्रा अधिक होती है, CO_2 कोनिडिया के अंकुरण को उत्तेजित करता है लेकिन क्लैमाइडोस्पोर बनने की प्रक्रिया को रोकता है इस स्थिति मे कार्बनिक पदार्थ समाप्त हो जाने से कवक मर जाते हैं। एफ. ऑक्सीस्पोरम के कारण होने वाले केले के पनामा विल्ट रोग का प्रबंधन का यह एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

सूखे पौधों के अवशेषों को जलाकर :

हार्डिसन (1976) ने इस तकनीक को थर्मोसैनिटेशन के रूप में परिभाषित किया और आग और ज्वलन द्वारा रोगों के प्रबंधन के कई उदाहरणों का वर्णन किया। आग और ज्वाला के उपयोग के पीछे मूल सिद्धांत, रोगजनकों के उन संरचना को नष्ट करने से है जो लंबे समय तक खेत में सूखे पौधों के अवशेषों पर पड़े रहते हैं और जब फसल लगती है तब बीमारी उत्पन्न करते हैं। पूरे विश्व में चावल के पराली और पुआल को जलाना आम बात है। हालांकि फसल अवशेषों को जलाने से गंभीर पर्यावरणीय प्रभाव पड़ता है। हाल ही में भारत के पश्चिमी क्षेत्र में पराली जलाने से दिल्ली क्षेत्र की वायु गुणवत्ता गंभीर रूप से प्रभावित हुई थी। इसलिए रोग प्रबंधन के इस तरीके से बचना चाहिए। साथ ही संरक्षित कृषि के सिद्धांत इस उपाय को प्रोत्साहित नहीं करते हैं।

अवशेषों व खरपतवारों की सफाई:

इसका मुख्य उद्देश्य खेत में रोगजनक के इनोकुलम की शुरूआत को रोकना या पहले से मौजूद इनोकुलम को खत्म करना है। जब खेत मे फसल नहीं होती उस दौरान खेत के आसपास के खरपतवार रोगज़नक़ के लिए वैकल्पिक परपोषी की भूमिका निभा सकते हैं और जब मुख्य फसलें खेत में आती हैं तो वे रोग होने के लिए इनोकुलम के स्रोत के रूप में कार्य करते हैं। खेत में मौजूद पिछले फसल के पौधे भी इनोकुलम के स्रोत के रूप में कार्य करते हैं। अतः पिछले वर्ष के फसल अवशेषों, खरपतवारों इत्यादि को हटा देना चाहिए।

बुवाई का समय:

बुआई का समय भी बीमारी से बचाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गेहूं की देर से बुवाई करने से गेहूं में मोज़ेक विषाणु के संक्रमण की संभावना कम होती है। कपास की शुरुआती वसंत रोपण जड़ सड़न से बचने में प्रभावी रूप से मदद करती है।

अंतर –फसल:

यह एक फसल को दूसरी फसल की पंक्तियों के बीच उगाने की प्रक्रिया है। इस विधि से वायु द्वारा फैलने वाले रोगजनकों या उनके वाहक के प्रसार के लिए भौतिक अवरोध उत्पन्न होता है।

अन्य– बुवाई की गहराई, फसल का घनत्व, बुवाई की दिशा भी रोग की आक्रामकता को प्रभावित करती है।

ख. रोपण के पश्चात व्यवहारिक प्रबंधन

रोपण के बाद किए जाने वाले व्यवहारिक प्रबंधन में निम्नलिखित विधियाँ शामिल हैं।

सिंचाई और जल प्रबंधन:

कुछ रोगजनकों को मिट्टी में उच्च नमी की आवश्यकता होती है जबकि कुछ शुष्क परिस्थितियों के अनुकूल होते हैं। खेत में जलजमाव की स्थिति के परिणामस्वरूप गंभीर मिट्टी जनित रोगज़नक़ संक्रमण होता है। यह मिट्टी की नमी और तापमान को बदल देता है और इसके परिणामस्वरूप मिट्टी या पत्ते में जैविक और अजैविक प्रक्रियाओं पर उनके प्रभाव के माध्यम से बीमारियों को प्रभावित करता है। कुछ रोगजनकों के प्रसार और रोग के आक्रामकता पर सिंचाई का भी बड़ा प्रभाव हो सकता है।

रोगग्रस्त पौधों को हटाना:

रोगग्रस्त पौधे को हटाने से विनाशकारी रोग का प्रसार कम हो जाता है। वाइरस रोग ऐसे उदाहरण हैं जहां यह विधि बहुत ही लाभदायक होती है।

उर्वरक का उचित उपयोग:

फसल पोषण, मिट्टी पोषक तत्व की स्थिति और उर्वरक का इस्तेमाल, रोगजनकों द्वारा रोग

उतपन्न करने के लिए पौधों की संवेदनशीलता को प्रभावित कर सकती है। सामान्य तौर पर, उच्च नाइट्रोजन का उपयोग पर्ण रोग को बढ़ावा देता है। दूसरी ओर पोटाश अन्य तत्वों के साथ संतुलन में होने पर रोग के आक्रामकता को कम करता है।

ट्रैप (या कैच) फसलें:

ट्रैप (या कैच) फसलें अतिसंवेदनशील पौधे हैं। रोगजनक फसल को संक्रमित करते हैं जिसे रोगजनकों के जीवन चक्र के पूरा होने से पहले नष्ट कर देना चाहिए। डिकॉए फसलें अन्य रोगजनकों के लंबे समय तक रहने वाले संरचनाओं या बीजाणुओं के अंकुरण को प्रोत्साहित करती हैं, लेकिन रोगज़नक़ इन फसलों के साथ एक संगत संबंध स्थापित करने में असमर्थ होते हैं और अंततः मर जाते हैं।

2. भौतिक तरीके:

पादप रोगों के प्रबंधन में भौतिक तरीके पर्यावरण को कोई नुकसान नहीं पहुंचाते हैं। इस विधि में बीज या मिट्टी से होने वाले संक्रमण को खत्म करने के लिए गर्म पानी या गर्म हवा या भाप जैसे भौतिक चीजों को शामिल किया जाता है। विशेष तौर पर आंतरिक रूप से बीजों द्वारा उत्पन्न बीमारियों जैसे गेहूं की ढीली कंड में यह काफी लाभदायक होता है। बीज या रोपण सामग्री में मौजूद प्राथमिक इनोकुलम को कम करने या समाप्त करने के लिए निम्नलिखित भौतिक विधियों का उपयोग किया जाता है:

बीज का गर्म जल उपचार:

गर्म पानी के उपचार का व्यापक रूप से बीज जनित रोगजनकों के नियंत्रण के लिए उपयोग किया जाता है। ढीले कंड के नियंत्रण के लिए गेहूं के बीज को 52 डिग्री सेल्सियस पर 10 मिनट के लिए या बाजरा के डाउनी मिल्ड्यू के लिए 55 डिग्री सेल्सियस पर 10 मिनट के लिए, गन्ने के लाल सड़न के लिए 54 डिग्री सेल्सियस पर 8 घंटे उपचार करने से रोग प्रबंधन किया जा सकता है।

बीज का गर्म वायु उपचार:

यह विधि कम हानिकारक और संचालित करने में आसान है लेकिन गर्म पानी के उपचार की तुलना में कम प्रभावी है। सिंह (1973) ने 8 घंटे के लिए 54^0C पर गर्म वायु उपचार द्वारा गन्ने की कुछ किस्मों में लाल सड़न पर पूर्ण नियंत्रण का दावा किया। इसी प्रकार, गन्ने के ग्रासी शूट रोग को 8 घंटे के लिए 54 डिग्री सेल्सियस पर गर्म हवा से नियंत्रित किया जा सकता है (सिंह, 1968)।

भाप उपचार:

भाप का उपयोग गर्म पानी की तुलना में अधिक सुरक्षित और बीज जनित रोगों को नियंत्रित करने में गर्म हवा की तुलना में अधिक प्रभावी होता है। गन्ने के रोगों के प्रबंधन में इसका व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। गैस के रूप में, यह मिट्टी के माध्यम से आसानी से फैलती है तथा बहुत अधिक गुप्त गर्मी छोड़ने से रोगजनको को नष्ट करती है। मिट्टी की ऊपरी परतों को रोगजनक रहित करने के लिए 15 सेमी की गहराई पर छिद्रित पाइपों के माध्यम से भाप को पारित किया जाता है। यह ज्यादातर ग्लास हाउस और ग्रीन हाउस में किया जाता है।

सौर ताप उपचार:

इस तकनीक का व्यापक रूप से भारत में गेहूं के ढीले कंड के रोगज़नक़ को खत्म करने के लिए उपयोग किया जाता है। 1951 में लूथरा ने उस्टिलागो ट्रिटिकी के बीज जनित संक्रमण को खत्म करने के लिए इस विधि को तैयार किया। इस विधि में बीजों को पूर्वाह्न में 4 घंटे के लिए ठंडे पानी में भिगोया जाता है और इसके बाद तेज गर्मी के दिनों में दोपहर में चार घंटे के लिए बीजों को तेज धूप में सुखाया जाता है।

मृदा सौरीकरण:

इस प्रबंधन विधि में, मिट्टी के तापमान (सामान्य तापमान से 10–15 डिग्री सेल्सियस ऊपर) को बढ़ाने के लिए पारदर्शी पॉलीइथाइलीन शीट की मदद से सौर ऊर्जा को संरक्षित किया जाता है ताकि अधिकांश मिट्टी जनित रोगजनकों और खरपतवारों को भी मार सकें (अख्तर, एट अल , 2008)। पायथियम, फाइटोफ्थोरा, फुसैरियम, रालस्टोनीया , स्क्लेरोटिनिया आदि कवकों के कारण होने वाले कई रोगों को सफलतापूर्वक मृदा सौरीकरण द्वारा प्रबंधित किया गया है।

3. जैविक नियंत्राणः

जैविक नियंत्रण और कुछ नहीं बल्कि जीवों के समुदाय का पारिस्थितिक प्रबंधन है। उसमें पौधों के स्वास्थ्य में सुधार के लिए रोग–दमनकारी सूक्ष्मजीवों का उपयोग करना शामिल है। जैविक नियंत्रण प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों रूप मे पौधों को लाभ पहुंचाते हैं तथा रोगों से मुक्त करते हैं। इनमें हाइपरपैरासिटिज्म, एंटीबायोटिक्स उत्पादन, लिटिक एंजाइम, अनियमित अपशिष्ट उत्पाद, भौतिक/रासायनिक हस्तक्षेप, प्रति. स्पर्धा शामिल हैं (चंद्रशेखर एट अल, 2012)। ट्राइकोडर्मा और स्यूडोमोनास आधारित बायोफॉर्मुलेशन का उपयोग ज्यादातर मिट्टी जनित रोग प्रबंधन में किया जाता है। बायोकंट्रोल का उपयोग बीज उपचार, पौध उपचार तथा खेतों मे डाल कर किया जा सकता है।

4. नियामक (रेगुलेटेरी) तरीकेः

यदि किसी क्षेत्र में कोई विशेष बीमारी बार–बार होती है और वहां से ले जाने वाली सामग्री द्वारा उस विशेष बीमारी से मुक्त क्षेत्र में लाए जाने की संभावना है, तो संबंधित सरकार आवश्यक कानून (विनियम) पारित करती है, जिसे आम तौर पर "संगरोध विनियम" कहा जाता है। इस प्रक्रिया द्वारा रोग वाहक सामग्री का संक्रमित से रोगमुक्त क्षेत्र में प्रवेश को रोक जाता है। इन नियमों को सरकार द्वारा 'प्लांट क्वारंटाइन' नामक एक अलग संगठन के माध्यम से लागू किया जाता है।

5. पादप रोग प्रबंधन में आधुनिक तरीकेः

विभिन्न जैव–प्रौद्योगिकीय उपकरण जैसे, डीएनए मार्कर का उपयोग कर रोग प्रतिरोधी जीन का मानचित्रण, प्रतिरोधी जीनों की मार्कर सहायता प्राप्त पिरामिडिंग, ट्रांसजेनिक का विकास, आरएनए हस्तक्षेप/पोस्ट ट्रांसक्रिप्शनल जीन साइलेंसिंग का अनुप्रयोग और अन्य उपकरण भी पादप रोग प्रबंधन में उपयोग किए जा रहे हैं (कुमार 2014).

निष्कर्षः

बढ़ती जनसंख्या के लिए खाद्यान आपूर्ति के लिए फसल का रोग प्रबंधन जरूरी है। रोग प्रबंधन के विभिन्न तरीकों मे गौर रासायनिक प्रबंधन पर बल दे कर न् सिर्फ रोग प्रबंध किया जा सकता है अपितु पर्यावरण को दूषित होने से भी बचाया जा सकता है।

रबी की प्रमुख सब्जियों में कीट प्रबंधन

रामकेवल[1], देवकरन[1], मांधाता सिंह[1], प्रेम कुमार सुन्दरम[2], धीरज कुमार[2], दुष्यंत कुमार राघव[3], उज्ज्वल कुमार[2], अभय कुमार[2], मो. मोनोबुल्लाह[2] एवं हरि गोविंद[1]

[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर– कृषि विज्ञान केंद्र, बक्सर (बिहार)
[2]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)
[3]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर – कृषि विज्ञान केंद्र, रामगढ़ (झारखंड)

सब्जी उत्पादन में भारतवर्ष विश्व में दूसरे स्थान पर है। यहाँ सब्जी की लगभग 8 करोड़ टन की वार्षिक पैदावार होती है। भारत के पूर्वी एवं मध्य क्षेत्रों में वर्ष भर सब्जियों की खेती होती है जिसके लिए यहाँ का समशीतोष्ण जलवायु का प्रमुख योगदान है। इतने पैदवार के बावजूद लगभग 180 ग्राम सब्जी प्रति व्यक्ति/दिन उपलब्ध हो पाती है जबकि इसकी मात्रा कम से कम 230 ग्राम आवश्यक है। पूर्वी एवं मध्यक्षेत्र की समशीतोष्ण जलवायु में टमाटर, बैगन, फ्रेंचबीन, मटर, शिमला मिर्च, गोभी वर्गीय एवं कद्दू वर्गीय सब्जियों की वर्ष भर मांग अधिक रहती है। परन्तु इन सब्जियों के उत्पादन पर विभिन्न कीटो का प्रकोप हो जाता है जिससे 10–30 प्रतिशत तक क्षति हो जाती है तथा बचे हुए सब्जियों की पैदावार एवं गुणवत्ता प्रभावित होती है जिससे बाजार मूल्य कम मिलता है। यह कीट फसल की बुवाई से लेकर पकने तक की विभिन्न अवस्थाओं में प्रौढ़, सूड़ी, शिशु आदि द्वारा आर्थिक क्षति पहुचाते है। अतः सब्जियों के प्रमुख कीट एवं उनके प्रबंधन की अद्यतन जानकारी यहां दी जा रही है जिससे समय पर रोकथाम कर वांछित उत्पादन एवं आर्थिक लाभ प्राप्त किया जा सके।

सब्जियाँ

1. बैगन

सफेद मक्खी, हरा तैला, माहू

इस कीट के शिशु तथा वयस्क पत्तियॉ तथा पौधे के कोमल भागों से रस चूसते हैं जिससे पौधे कमजोर रह जाते हैं और उनकी बढ़वार रूक जाती है।

प्रबंधन

- मैलाथियान 50 ई0सी. 1.5 मिली या डायमेथोएट 30 ई.सी. 01 मि.ली./लीटर पानी में घोलकर छिडके।

तना व फल छेदक

इस कीट की गिडार आरम्भिक अवस्था में तने में तथा बाद में फलों में छेदकर फसल को नुकसान पहुँचाती है। ग्रसित पौधे की शाखा मुरझाकर सूख जाती है जबकि ग्रसित फलों की गुणवत्ता कम हो जाती है।

प्रबंधन

- बैगन की नर्सरी में खरपतवार न होने दे तथा 25–30 दिन की नर्सरी की रोपाई करें ।
- प्रभावित एवं कीट ग्रसित शाखाओं को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिये
- प्रति हे0 15–20 फिरोमोन टैप (ल्यूसील्यूर) लगाकर प्रौढ़ कीटों को आकर्षित कर नष्ट करना चाहिये।
- ट्राइकोग्रामा प्रजाति के 50 हजार अण्डपरजीवी प्रति एकड़ की दर से रोपाई के 20–25 दिन बाद प्रयोग करना चाहिये।
- पौध रोपाई के 10 दिन पहले खेत के चारो ओर 3 लाइन ज्वार लगाना चाहिये।
- प्रकोप अधिक होने पर क्लोरान्ट्रानिलिप्रोल 18.5 EC की 200 मिली मात्रा या इमामेक्टिन बेजोऐट 5 SG की 200 ग्रा0 मात्रा या थियाक्लोप्रिड 21.7 SC की 750 मिली मात्रा या साइपरमेथ्रिन की 25 EC की 200 मिली0 मात्रा या लेम्डासाइहेलोथ्रिन 5 CS की 300 मिली मात्रा प्रति हे0 की दर से 500 ली0 पानी में मिलाकर सायंकाल छिड़काव करना चाहिये।

बैगन की लाल माइट (मकड़ी)

इसके शिशु तथा प्रौढ़ पत्तियों एवं कोमल शाखाओं से रस चूस लेते हैं जिससे पौधा पीला होकर कमजोर हो जाता है तथा उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है

- इसके नियंत्रण हेतु स्पाइरोमेसिफिन 240 SC की 400 मिली मात्रा या फेनाजिक्वान 10 EC की 1250 मिली मात्रा/हे0 की दर से 500 ली0 पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिये।

टमाटर

पर्ण सुरंगक कीट

इस कीट के प्रकोग से पत्तियों की उपरी सतह पर आड़ी तिरक्षी सुरंगनुमा धारिया दिखाई देती है, जिससे पत्तियां भोजन नहीं बना पाती। परिणामस्वरूप पौधे कमजोर रह जाते हैं और फल उत्पादन प्रभावित होता है।

प्रबंधन

- इमामेक्टिन बेंजोऐट 5 SG की 220 ग्रा0 मात्रा/ हे0 या क्वीनालफास 25 EC की 1250 मिली मात्रा/ हे0 की दर से 500 ली0 पानी में मिलाकर/हे0 की दर से छिड़काव करें।

फल छेदक

इस कीट की सुण्डियॉ आरम्भ में कोमल पत्तियों और फूलों की खाती है और बाद में फल के अन्दर प्रवेश कर गूदा खाती है। फलस्वरूप फल उत्पादन प्रभावित होता है।

प्रबंधन

- टमाटर की पौध रोपाई के समय 25 दिन का टमाटर की पौध के साथ 40 दिन की गेंदा पौध की रोपाई करनी चाहिये। टमाटर की 16 पंक्ति के बाद 2 पंक्ति गेंदे की लगायें।
- 15–20 फिरोमोन ट्रैप (हेलील्यूर) प्रति हे0 लगाकर वयस्क नर पतंगों को आकर्षित करके नष्ट कर देना चाहिये।
- सूडी की प्रारम्भिक अवस्था में तथा फूल आने पर बीटी (कर्सटकी) पाउडर की 1 कि.ग्रा. मात्रा 500 ली0 पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिये या HaNPV की 250 LE की 100 मिली0 मात्रा प्रति एकड़ की दर से प्रयोग करना चहिये प्रकोप अधिक होने पर इमामेक्टिन बेंजोऐट 5 SG की 200 ग्राम मात्रा या फ्लूबेन्डीमाइड 480 SC की 120 मिली0 मात्रा 500 ली0 पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

गोभी वर्ग (पत्ता गोभी, फूल गोभी, ब्रोकली)

कटुआ कीट

इस कीट की सुण्डियॉ काली भूरी तथा मटमैले रंग की होती है एवं रात के समय सक्रिय होकर पौधों को जमीन की सतह से काट देती है।

प्रबंधन

- अच्छी प्रकार से गली सड़ी देसी कम्पोस्ट खाद का प्रयोग करें।
- कीट आक्रमण दिखाई देने पर फसल की सिंचाई करें।
- रोपाई के बाद क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी 2ली0 प्रति हे0 की दर से सिचाई जल के साथ प्रयोग करें।

चितकबरा कीट

इस कीट के शिशु तथा प्रौढ़ मुलायम तने एवं पत्तियों से रस चूसते है। परिणामस्वरूप पत्तियाँ पीली पड़ जाती है और फल की बढ़वार रूक जाती है।

प्रबंधन

कीट का फसल में प्रकोप दिखाई देने पर मैलाथियान 5 प्रतिशत धूल का 25 किग्रा0/हे0 का बुरकाव करें या डाइमोथोएट 30 ई.सी. 1 लीटर/हे0 का छिड़काव करें।

माहू

इस कीट के प्रौढ़ एवं शिशु दोनों ही फसल को हानि पहुचाते हैं। ये कीट पौधो की जड़ों को छोड़कर शेष भागों का रस चूसते हैं तथा पौधों पर स्थाई रूप से समूह में चिपके रहते हैं। इनके प्रकोप से पौधों की बढ़वार रूक जाती है तथा पौधे पीले पड़कर सूखने लगते है।

प्रबंधन

- प्रकोप की शुरूआती अवस्था में कीट ग्रसित पत्तियों को तोड़कर नष्ट करने से कीट का प्रसार रूक जाता है।
- एसिटामिप्रिड 20 SP की 75 ग्रा0 मात्रा या फेनवेलरेट 20 EC की 375 मिली0 मात्रा 500 ली0 पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

गोभी की तितली

इस कीट की सूड़ी हानिकारक होती है। यह पत्ती की मुख्य शिरा को छोड़ते हुये शेष पत्ती को खा जाती है तथा फसल को अत्यधिक नुकसान पहुंचाती है।

प्रबंधन

मैलाथियान 50 ई.सी 1 मिली0/ली0 पानी में मिलाकर 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

तम्बाकू की सूड़ी

इस कीट की सूड़ी पत्तियों खाकर उनमें गोल छेद बना देती है। यह गोभी के फूल को भी अंदर की ओर से खाकर नुकसान पहुंचाती है।

प्रबंधन

मैलाथियान 50 ई.सी. (1 मिली0 प्रति ली0 पानी) या साइपरमेथ्रिन 10 ई.सी. का 1 मिली0 प्रति ली0 पानी में छिड़काव करें। नोवाल्यूरान 10 EC की 375 मिली0 मात्रा 500 ली0 पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिये।

हीरक तितली

इसकी सूड़ियाँ पत्तियों को खाती है जिससे फसल की बढ़वार प्रभावित होती है। ग्रसित पत्तियों में छोट–छोटे छेद बन जाते हैं छोटे फूलों पर भी आक्रमण कर इन्हें खाती है जिससे बाजार में उनका कम मूल्य मिलता है।

प्रबंधन

- कीट के अंडे तथा सूड़ियाँ एकत्र कर नष्ट कर दें।
- सरसों की पंक्ति गोभी की 16 पंक्तियों के बाद लगाने से हीरक तितली का प्रकोप कम हो जाता है।
- नीम की गिरी का 5 प्रतिशत घोल फसल पर छिड़के।
- जीवाणुयुक्त कीटनाशी बी0टी0 (डाइपेल 8 एल0 या बायोलेप या बायोविट 1.5–2.0) मिली0 प्रति ली0 में मिलाकर छिड़कने की लैपीडोप्टेरा कुल गिडारों का प्रकोप कम होता है।
- कीटों की संख्या अधिक होने पर इमामेक्टिन बेंजोऐट 5 SG की 200 ग्रा. मात्रा या स्पाइनोसाड 2.5 SC की 700 मिली0 मात्रा 500 ली0 पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिये।
- कीट प्रकोप की सघनता अधिक होने पर मैलाथियान 50 ई.सी. या करटाप हाइड्रोक्लोराइड का 0.05 प्रतिशत घोल 15 दिन के अंतराल पर छिड़कें।

आलू

सफेद गिडार

इस कीट की गिडारें पौधों की जड़ों को काटती है जिससे पौधे सूख जाते हैं। यह कीट बलूई एवं रेतीली भूमि में बोई गई फसल पर अधिक आक्रमण करता है।

प्रबंधन

- मई के अन्तिम सप्ताह से सितम्बर तक प्रकोप प्रपंच लगाना चाहिये ।
- फफूंद जनित कीटनाशी ब्यूवेरिया वेसियाना एवं मेटारिजियम का प्रयोग बुवाई के समय करना चहिये।
- क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी. या क्यूनालफास 25 ई.सी. की 2 लीटर मात्रा 50 कि.ग्रा. सूखी रेत या बालू में मिलाकर फसल में मिट्टी चढ़ाने के पहले प्रति हे0 के हिसाब से मिट्टी में मिलायें।

फुदका या जैसिड कीट

शंकु के आकार के हरे रंग के फुदके के शिशु व वयस्क पत्तियों का रस चूसते है। जिसके कारण पत्तियाँ भूरे रंग की होकर सूख जाती है। इस कीट का प्रकोप अगेती फसल पर अधिक होता है।

प्रबंधनः

थायोमेथाक्जाम 25 WSG की 50 ग्राम मात्रा/ हे0 या डाईमेथेएट 30 ई.सी की 2.0 ली0 मात्रा 1000 ली0 पानी में मिलाकर 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

माहू

शिशु तथा वयस्क कीट कोमल पत्तियों से रस चूसते है जिससे पत्तियाँ मुड़ जाती है। अधिक ग्रसित पौधों में कन्द नहीं बन पाते या उनका आकार छोटा रह जाने से उपज प्रभावित होती है। यह कीट एक विषाणु रोग भी फैलाता है जिससे फसल को अधिक नुकसान होता है।

प्रबंधन

- आलू की बुवाई उत्तर प्रदेश के पश्चिमोत्तर मैदानी भागों में 15 अक्टूबर तक तथा पूर्वोत्तर भागों में 25 अक्टूबर तक कर लें।
- खेत में प्रति 100 कम्पाउण्ड पत्तियों पर जैसे ही माहू की संख्या 20 से उपर होने लगे तो डण्ठलों की कटाई करना आवश्यक है।
- बीज के लिए उगाई गई फसल में मिट्टी पहली चढ़ाते समय फोरेट 10 जी 10 किग्रा/हे0 मिट्टी में मिलाने से कठवर्म माहू तथा अन्य सभी कीटों से 2 माह तक सुरक्षा मिलती है।
- माहू कीट की अधिक कुप्रभाव दिखाई पड़ने पर डाइमिथेएट 30 ई.सी या मिथाइल डमेटान 25 ई. सी. की 1.25 ली0 मात्रा पानी में मिलाकर प्रति हे0 की दर से छिड़काव करें।

प्याज तथा लहसुन

थ्रिप्स

पीले से गहरे भूरे रंग के कीट पत्तियों से रस चूसते है जिससे पत्तियों पर चांदीनुमा सफेद धब्बे बन जाती है। ग्रसित पत्तियॉ समय से पहले मुड़कर सूख जाती है। प्रकोपित पौधों में कन्द जल्दी बन जाते है तथा आकार छोटा रह जाता है।

प्रबंधन

लेम्डासाइहेलोथ्रिन 5 EC की 300 मिली0 मात्रा या इमामेक्टिन बेंजोऐट 5 SG की 200 ग्रा0 मात्रा 500 ली0 पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिये।

शलजम, गाजर, मूली

माहू

कीट के शिशु व प्रौढ़ तनों के उपरी भाग एवं पत्तियों का रस चूसते हैं, जिससे पत्तियॉ मुड़ जाती है तथा पीली पड़कर सूख जाती है।

प्रबंधनः

जड़ वाली फसलों पर मैलाथियान 50 ई.सी (2 मिली/ली0 पानी) का 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

आरा मक्खी

इस मक्खी की गहरे हरे रंग की गिडार शुरू में पत्ती में छेद करती है और बाद में पूरे पत्तों को खा जाती है।

प्रबंधन

मैलाथियान 50 ई.सी या साइपरमेथ्रिन 10 ई.सी (1 मिली/ली0 पानी) का छिड़काव करें।

आम के शूट गॉल सिल्ला कीट : जानकारी एवं प्रबंधन

जयपाल सिंह चौधरी, बिकाश दास एवं अरुण कुमार सिंह

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर – कृषि प्रणाली का
पहाड़ी एवं पठारी अनुसंधान केंद्र, राँची (झारखंड)

आम (मैंजीफेरा इंडिका) भारत की मुख्य व्यवसायिक फल फसल है जिसको ''फलों के राजा'' की संज्ञा दी गई है। आम उत्पादन में भारत का विश्व में प्रथम स्थान है। आम के पूरे क्षेत्रफल का लगभग 41 प्रतिशत भाग भारत में निहित है। तथा यह लगभग 46 प्रतिशत हिस्सा पूरे विश्व का आम उत्पादित भी करता है। आम की खेती वैसे तो पूरे भारत में की जाती है परन्तु उत्तर प्रदेश, बिहार, तेलंगाना, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, झारखण्ड, उड़ीसा व मध्य प्रदेश में मुख्यता की जाती है। भारत मे आम का उत्पादन कुछ वर्षों से जलवायु परिवर्तन के कारण बहुत प्रभावित हो रहा है। आम मे कई कींट एवं व्याधियां के प्रकोप मे पहले की तुलना मे जलवायु परिवर्तन के कारण वृद्धि देखी गयी है। वर्तमान समय मे आम वृक्षों पर शूट गॉल सिल्ला (एपीसाइला सिस्टीलाटा) जिसको घुंडी कीट भी कहते है, के आक्रमण का मुख्य कारण भी जलवायु परिवर्तन ही है। इस कीट के प्रभाव से आम के पेड़ों के प्ररोहों में नुकीली गांठें बन जाती हैं जिससे उसमें फूल व फलन बाधित होता है। इस कीट का आक्रमण मुख्यतः उत्तर प्रदेश के तराई भागों, उत्तराखण्ड, बिहार, झारखण्ड एवं पश्चिमी बंगाल में अधिक होता है। कीटग्रसित गॉलें अक्तूबर माह में दिखाई देना आरम्भ होती हैं। आरम्भ की अवस्था मे ये गांठे पुष्पन प्रक्रिया की ही लगती है परन्तु बाद मे प्ररोहों के अग्र भाग पर इनकी संख्या बढ़ती जाती है। कीट ग्रसित प्ररोहों पर पुष्पन आने की प्रक्रिया प्रभावित होती है जिसके कारण अंतत उपज में काफी कमी आ जाती है ।

कीट की पहचान एवं क्षति के लक्षण

इस कीट के प्रौढ़ 3–4 मिलीमीटर लंबे होते है जिनका शिर व वक्ष काले भूरे रंग का एवं उदर हल्के भूरे रंग का होता है। निम्फ पीले रंग के होते है जो समय के साथ रंग बदलते रहते है। इस कीट की प्रौढ़ मादा पत्तियों की मध्यशिरा के अंदर समानांतर रूप मे सफेद रंग के अंडे देती है। सतह से रस चूसने वाले सिल्लिड कीट उष्णकटिबंधीय देशो मे बहुतायत मे पाये जाते है। इस कीट की क्षति का मुख्यः लक्षण प्ररोहो पर शंक्वाकार गाँठो का बनना है (चित्र 1)। कीट ग्रसित प्ररोह नुकीली हरे रंग की शंक्वाकार गाँठो मे परिवर्तित हो जाते हैं जिनमें कीट का विकास होता है। कीट के लगातार रस चूसने व हार्मोन्स के असंतुलन की वजह से प्ररोंह की पत्तिया परतदार छिलकों मे रूपांतरित हो जाती है। गाँठो के अंदर कीट सफेद रंग का चिपचिपा तरल द्रव्य छोड़ता है जो बाद मे सुख जाता है। कीट के प्रौढ़ बाहर निकलने के लिए गाँठो के उपरी सिरो को खोलकर बाहर निकलते है। इसके बाद कीट ग्रसित भाग सुख जाता है एवं उन पर फलन नही होता है।

कीट का जीवन चक्र

मादा कीट पत्तियों की मध्यशिरा के अंदर सफेद रंग के एक–एक करके समानांतर रूप मे लगभग 150 अण्डे मार्च से अप्रैल माह तक देती है, जो सुसुप्तावस्था में रहते हैं (चित्र 2)। इनमें से अगस्त– सितम्बर में निम्फ निकलकर प्ररोहों के मुलायम भाग पर रस चूसते हैं जिसके प्रभाव से नुकीली एवं गोल गांठे बन जाती हैं। ये गाँठे अक्टूबर – नवंबर माह में वृक्षो पर दिखायी देती है। लगभग 140 दिनो की पाँच स्तरिय निंफल अवस्था इन्ही शंक्वाकार गाँठो मे गुजरती है जो फरवरी–मार्च माह मे प्रौढ़ कीट बनकर बाहर निकलते है। इस तरह यह कीट लगभग 1 वर्ष में अपना जीवनचक्र पूरा करता है। मौसम में अधिक आर्द्रता इस कीट की संख्या व इसके आक्रमण में सहायक होती हैं ।

कीट प्रबंधन की विधियाः

कृषि एवं यांत्रिक विधियां:

- पेड़ों के बीच नियमित रूप से जुताई, साफ–सफाई एवं कटाई–छँटाई करते रहना चाहिए।
- बगीचों मे हवा के आदान प्रदान एवं प्रकाश की उचित मात्रा के लिए समय – समय पर छत्रक प्रबंधन फलो की तुड़ाई के बाद अगस्त – सितम्बर माह में करना चाहिए
- मार्च माह मे अंडे दी हुई पत्तियों को हटाकर जला देना चाहिए। यदि संभव हो तो कीट सहित गाँठो को पौधो से हटाकर नष्ट कर देना चाहिए।
- संतुलित उर्वरको का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि नाइट्रोजन युक्त उर्वरको की अधिकता इस कीट के प्रकोप को बढ़ाते है।
- जैविक नियंत्रण करने वाली परभक्षी जैसे मेलाडा बोनीनसीस, क्राइसोपा स्पीसीज इत्यादि की संख्या बढ़ाने के उपाय करने चाहिए।

रासायनिक विधियाँ :

- इस कीट के नियंत्रण के लिए इसके जीवन चक्र के बारे मे जानकारी अतियावश्यक है।
- रासायनिक कीटनाशको के छिड़काव का कीट के अंडे देने के समय या अंडे से निंफ निकलने के समय के साथ से मेल होना चाहिए।
- बगीचे जो पूर्णतया जैविक विधि आधारित है उनमे नीम आधारित कीटनाशक जैसे नीम का तेल 40 मि.ली. एवं 10 ग्राम साबुन का पाउडर प्रति 10 लीटर पानी के हिसाब से मध्य अगस्त से सितम्बर माह में 2 से 3 छिड़काव 10 दिनो के अंतराल पर करें।
- प्रौढ़ कीटो के नियंत्रण एवं उनको अंडे देने से रोकने के लिए मार्च – अप्रैल माह में प्रोफेनोफॉस 50% ई. सी. 2 मि.ली. अथवा डेल्टामैथ्रिन 2.8% ई. सी. 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से कम से कम 10 दिनों के अंतराल से दो छिड़काव करना चाहिए।
- मध्य अगस्त एवं सप्तम्बर माह में थीयोमेथाक्साम 25 डब्लू. जी. 0.75 ग्राम एवं प्रोफेनोफॉस 50% ई. सी. 2 मि.ली. का प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 15 दिनों के अंतराल पर दो से तीन छिड़काव करें। यह छिड़काव अंडे से निकले निंफ को रोकने मे काफी सहायक होता है। बारिश का महीना होने की वजह से छिड़काव मे स्टीकर (चिपकाने वाले) जरूर मिलाएं ।
- दिसम्बर माह में 2–4 डी (150 मिलीग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव गॉलो के परिपक्वन अवस्था से पहले खोलने मे सहायक होता है।

चित्र 1 : शूट गॉल सिल्ला प्रभावित प्ररोह

चित्र 2 : शूट गॉल सिल्ला के अंडे देने से प्रभावित पत्तियाँ

कीट प्रबंधन में सूक्ष्मजीवों की भूमिका

मो. मोनोब्बुल्लाह[1] एवं सुदीपा कुमारी झा[2]

[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)
[2]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद– अटारी, पटना

सारांश

सूक्ष्मजीव जैसे जीवाणु, विषाणु, कवक, प्रजीवगण, सूत्रकृमि के विष का उपयोग कीटनाशक के रूप किया जाता है। ये सूक्ष्मजीव विभिन्न तरीकों से कीटोंके शरीर में प्रवेश कर रोग फैलाता है। यह रासायनिक कीटनाशकों का एक अच्छा विकल्प है क्योंकि ये मानव और पर्यावरण दोनों के लिए सुरक्षित है। ये बाजार में आसानी से उपलब्ध हैं तथाइसका उपयोग रासायनिक कीटनाशकों जितना ही सुगम है। पिछले कुछ वर्षों में इसकी लोकप्रियता बढ़ी है लेकिन अभी भी ध्यान देने की आवश्यकता है।

मनुष्यो की तरह सूक्ष्म जीव कीटों में भी रोग पैदा करता हैं। सूक्ष्मजीवी कीटनाशक का उपयोग कीटों में रोग फैलाकर उनके प्रबंधन के लिए किया जाता है। इसे सूक्ष्मजीव जैसे जीवाणु, विषाणु, कवक, प्रजीवगण, सूत्रकृमि के विष से तैयार किया जाता है। ये कीटनाशक कीट विशिष्ट होते है तथा पर्यावरण को भी नुकसान नहीं पहुंचाता हैं। यह रासायनिक कीटनाशकों का एक अच्छा विकल्प है। रसायनिक कीटनाशकों से जुड़ी सबसे बड़ी समस्या कीटों में कीटनाशकों के विरुद्ध प्रतिरोध का उत्पन होना है। सामान्यता कोई भी कीट सूक्ष्मजीवी कीटनाशकों के खिलाफ प्रतिरोध विकसित नहीं करता है। यदि रासायनिक कीटनाशकों का इसी तरह अंधाधुन उपयोग होता रहा तो वे दिन दूर नहीं जब कीट सभी कीटनाशकों के विरुद्ध प्रतिरोध उत्पन कर लेगा। पिछले पांच वर्षों (2014–15 से 2018–19) में भारत में जैव कीटनाशकों की खपत में लगभग 40 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है लेकिन अभी भी यह रासायनिक कीटनाशकों की मात्रा से बहुत कम है। किसान को इसके इस्तेमाल पर बल देना चाहिए ताकि वे भविष्य में भी अपने फसल को कीटों से सुरक्षित रख सके। यह धूल,तरल या दानेदार सूत्रीकरण के रूप में बाजार में उपलब्ध है तथा इसका उपयोग रासायनिक कीटनाशकों के तरह ही किया जाता है। इसका उपयोग रासायनिक कीटनाशकों के साथ भी किया जा सकता है।

रासायनिक और सूक्ष्मजीवी कीटनाशक के बीच तुलना

रासायनिक कीटनाशक	सूक्ष्मजीवी कीटनाशक
अधिक जहरीला होता है	कम जहरीला होता है
एक जैसे सभी कीड़ों के लिये कार्य करता है	कीट विशेष होता है
गैर–लक्षित कीटों में विषाक्तता के कारण लाभकारी कीटों को भी हानि पहुंचाता है	लाभकारी कीटोंको प्रभावित नहीं करता है
भोजन में रासायनिक अवशेष पाया जाता है जो स्वास्थ्य सम्बंधित समस्या उत्पनकरता है	अवशेष खतरनाक नहीं होता है
कटाई के लिए प्रतीक्षा अवधि अधिक होती है	कटाई के लिए प्रतीक्षा अवधि कम होती है
आसानी से विघटित नहीं होता है इसलिए रसायन जलभृत में मिल जाता हैं और जल निकायों को दूषित कर देता हैं	आसानी से विघटित हो जाता है इसलिए मानव और पर्यावरण के लिए सुरक्षित है
अचल जीवन कम होता है	अचल जीवन अधिक होता है
कीट प्रतिरोध की समस्या बहुत अधिक है	कीट प्रतिरोध की समस्या न के बराबर है

विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीवी कीटनाशक

जीवाणु कीटनाशक

जीवाणु बेसिलस थुरिंगेनेसिस के विष का प्रयोग कीटनाशक के रूप में किया जाता है। यह जीवाणु कीट के भोजन के साथ पेट में चला जाता है तथा पेट का पीएच अधिक होने के कारन वहां घुल कर सक्रिय हो जाता है। बेसिलस थुरिंगेनेसिस जीवाणु से ग्रसित सुंडी का सिर शरीर की तुलना में बड़ा होता है। यह निष्क्रिय, हो जाता है तथा खाना बंद कर देता है। कीट का मल पतला हो जाता है। आम तौर पर जीवाणु के सेवन के 3–4 दिन बाद सुंडी मर जाता है तथा सड़ने पर भूरे–काले रंग में बदल जाता है।

बीटी की उप–प्रजातियां	उपयोग के लिये लक्षित कीट वर्ग
बीटी कुर्स्ताकी	लेपिडोप्टेरा
बीटीगैलेरिया	लेपिडोप्टेरा
बीटी ऐज़वई	डिप्टेरा
बीटी इसरालेन्सि	डिप्टेरा
बीटी मॉरिसोनी	कोलोप्टेरा
बीटी टेनेब्रियोन्सिस	कोलोप्टेरा

बीटी से ग्रसीतसुंडी

इसके अलावा मिट्टी में रहने वाले जीवाणु के किण्वन से भी कीटनाशक बनाया जाता है।

जीवाणु (किण्वन से कीटनाशक)	कीटनाशक	लक्षित कीट वर्ग
स्ट्रेप्टोमाइसेस एवरमाइटिस,	एबामेक्टिन	घुन(माईट), पत्ती में सुरंगवाला कीट, सूत्रकृमि
	मिलाबामेक्टिन	घुन (माईट), सूत्रकृमि
सैकरोपॉली. स्पोरा स्पिनोसा	स्पिनोसैड	लेपिडोप्टेरा सुंडी

विषाणु कीटनाशक

सबसे अधिक प्रयोग होने वाला विषाणु कीटनाशक न्यूक्लियर पॉलीहेड्रोसिस वायरस (एन पी वी) है उसके के बाद ग्रैनुलोसिस वायरस (जीवी) का स्थान आता है। जीवाणु की तरह विषाणु का भी कीट के कीटनाशक की तरह काम करने के लिए कीट के पेट में जाना जरुरी है। यह जीवाणु कीटनाशक की तुलना में अधिक कीट विशिष्ट होता है। विषाणु कीटनाशक के सेवन केलगभग एक सप्ताह के बाद सुंडी मर जाता है। विषाणु से ग्रसीत कीट की सुंडी (लार्वा) को आसनी से पहचाना जा सकता है। मृत लार्वा पौधे के ऊपर से लटकता हैं और उल्टे ट की तरह दिखता हैं। जिसे शीर्ष पेड़ (ट्री टॉप) या मुरझाया हुआ सुंडी रोग कहा जाता है। सुंडी का दूसरा या तिसरा निरुप विषाणु कीटनाशक के लिये अतिसंवेदनशील होता है।

विषाणु कीटनाशक का नाम	लक्षित कीट
ए ए एनपीवी	मूंगफली पर लाल बालों वाली सुंडी
एच ए एनपीवी	चना और मूंगफली का फलि बेधक
एस एल एनपीवी	तंबाकू, मूंगफली, उड़द और कपास में तंबाकू की इल्ली
जी वी	गन्ना के तना बेधक

एनपीवीसे ग्रसीतसुंडी

प्रजीवगण (प्रोटोजोआ)

जीवाणु और विषाणु की तरह प्रजीवगण का भी कीटों के संक्रमण के लिए खाना अनिवार्य है। संक्रमित कीट सुस्त और आकार में छोटा होता है। प्रजीवगण लार्वा के जीवन काल को बढ़ा देता है। इस प्रकार कीट को प्राकृतिक शत्रुओं के लिए लंबे समय तक उपलब्ध

कराता है। तथा वयस्कों कीटों की प्रजनन क्षमता को भी कम कराता है। संक्रमण का स्तर अधिक होने पर कीट मर सकता है।

प्रजीवगण का नाम	लक्षित कीट
नोसेमा लोकास्टिया	टिड्डा और क्रिकेट
वैरिमोरफा नेकाट्रिक्स	लेपिडोप्टेरा
नोसेमा मेलोलोन्था	कोकचाफ़ भृंग
फारिनोसिस्टिस ट्रिबोलि	आटा का लाल भृंग (भंडारण कीट)

कवक कीटनाशक

भारत में जैविक कीटनाशकों में सबसे अधिक खपत कवक कीटनाशक का ही है। कवक कीटनाशक के संपर्क में आने से कीट में रोग उत्पन्न होता है लेकिन इसके लिए नमी जरुरी है। जब कवक के बीजाणु संवेदनशील कीटों के संपर्क में आता है तो त्वचा के माध्यम से सीधे कीटों के शरीर के आंतरिक हिस्सा में प्रवेश कराता है। धीरे धीरे कवक कीट के पूरे शरीर में फैल जाता तथा विषाक्त पदार्थों का उत्पादन करता है और पोषक तत्वों को नष्ट कर देता है। संक्रमित कीट खाना बंद कर देता है और सुस्त हो जाता है। अंततः कवक इसे मार देता है और कीट का शरीर कठोर होता जाता है। कवक कीट के शरीर को बुकनीदार पदार्थ (कोनिडिया) से ढका हुआ छोड़ देता है।

ब्यूवेरिया बसियानासे ग्रसीतसुंडी

मेटारिज़ियम अनिसोप्लियासे ग्रसित सफेदग्रब

कवक का नाम	लक्षित कीट
ब्यूवेरिया बसियाना	लेपिडोप्टेरा सुंडी, सफेद मक्खी
मेटारिज़ियम अनिसोप्लिया	दीमक, नारियल के गेंडा भृंगए,सफेद ग्रब
मेटारिज़ियम फ्लवोविरिडा	टिड्डी
वर्टिसिलियम लेकेनि	सफेद मक्खी, तुर्रा (थ्रिप्स)
पेकिलोमाइक्स फ्यूमोसोरोसियस	सफेद मक्खी, तुर्रा
हिर्सुटेला सिट्रीफोर्मिस	धान के पौधा का भूरा फुदका

सूत्राकृमि

स्टाइनरनेमा कार्पोकैप्साई और हेटेरोरहबिट्स बैक्टीरियोफोरा सबसे अधिक इस्तेमाल किए जाने वाले सूत्रकृमि हैं। ये बाध्यकारी रोगज़नक़ हैं और इसके आंत मे सहजीवी जीवाणु पाया जाता है। सूत्रकृमि छिद्र जैसे मुंह, साँस लेने का रास्ता,मलद्वार के माध्यम से कीट के शरीर में प्रवेश करता है। जीवाणु मेजबान कीट को मार देता हैं और सूत्रकृमि जीवाणुओं द्वारा उपापचयित कीट और जीवाणुओं को खाने लगता हैं। इसका उपयोग मिट्टी में प्रवेश करने वाले कीटों जैसे दीमक और ऊतक बेधक कीटों के खिलाफ किया जाता है।

सूक्ष्मजीवी कीटनाशक के उपयोग के लिए अनुशंसित मात्रा

सूक्ष्मजीवी कीटनाशक	फसल का नाम	कीट का नाम	सूत्रीकरण (प्रति हे.)	पानी में विलयन (लीटर प्रति हे.)
बीटी गैलेरिया 1.3 एफ पी	पत्ता गोभी और फूलगोभी	हीरक प्रिसथ पतंगा	0.6–1.0 किग्रा	500
	टमाटर, भिडी	फल छेदक	1–1.5 किग्रा	500
	मिर्च	फल छेदक	1.5–2.0 किग्रा	1000
	कपास	गोला बेधक	2–2.5 किग्रा	1000
	धान	पत्ता मोरक	3.0 किग्रा	1000

सूक्ष्मजीवी कीटनाशक	फसल का नाम	कीट का नाम	सूत्रीकरण (प्रति हे.)	पानी में विलयन (लीटर प्रति हे.)
बीटी कुर्स्ताकी 0.5 डब्ल्यूपी	अंडी	अर्धकुंडलिया कीट	0.25 किग्रा	250–300
	अरहर	फली छेदक	1–1.5 किग्रा	500
बीटी कुर्स्ताकी 2.5 ए एस	चना	फली छेदक	0.4 ली.	750–1000
स्पिनोसैड 45 एस सी	कपास	गोला बेधक	0.16–0.22 ली.	500
	मिर्च	फल छेदक, तुर्रा	0.16 ली.	500
	अरहर	फली छेदक	0.12–0.16 ली.	800–1000
स्पिनोसैड 20 एस सी	पत्ता गोभी और फूलगोभी	हीरक प्रिसथ पतंगा	0.60–0.70 ली.	500
एच ए एनपीवी 0.43 ए एस	कपास	गोला बेधक	2.7 ली.	400–600
	टमाटर	फल छेदक	1.5 ली.	400–600
एच ए एनपीवी 2 ए एस	अरहर, चना	फली छेदक	0.25–.05 ली.	500–750
स एल एनपीवी 0.5 ए एस	तम्बाकू	तंबाकू की इल्ली	1.5 ली.	400–600
ब्यूवेरिया बसियाना 1.15 डब्ल्यूपी	कपास	गोला बेधक	0.4 किग्रा	750–1000
ब्यूवेरिया बसियाना 1 डब्ल्यूपी	धान	पत्ता मोरक	2.5 किग्रा	750–850
	चना	फली छेदक	3 किग्रा	500
	भिंडी	फल छेदक	3.75–5 किग्रा	400–500
ब्यूवेरिया बसियाना 5 डब्ल्यूपी	पत्ता गोभी	हीरक प्रिसथ पतंगा	2 किग्रा	500
ब्यूवेरिया बसियाना 5 एस सी	टमाटर	फल छेदक	0.5 ली.	500
	धान	पौधा का भूरा फुदका	2.5 ली.	500
मेटारिज़ियम अनिसोप्लिया 1.15 डब्ल्यूपी	धान	पौधा का भूरा फुदका	2.5 किग्रा	500
वर्टिसिलियम ले. केनि 1.15 डब्ल्यूपी	कपास	सफेद मक्खी	2.5 किग्रा	500
	नींबू	भूर्णी बग	2.5 किग्रा	500
वर्टिसिलियम लेकेनि 3.0 ए एस	प्याज	तुर्रा	2–2.5 ली.	500
वर्टिसिलियम लेकेनि 5 एस सी	पत्ता गोभी	हीरक प्रिसथ पतंगा	0.5 ली.	500

सफलता की कहानीः एकीकृत कृषि प्रणाली

[1]सुनीति शमा भेंगरा, [1]सनी उरांव, [1]राय ओमप्रकाश अग्निवेश, [2]पवनजीत,
[1]अजीत कुमार झा, [1]जयपाल सिंह चौधरी, [3]दुष्यंत कुमार राघव, [1]अरुण कुमार सिंह एवं [1]बिकाश दास

[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर– कृषि प्रणाली का पहाड़ी एवं पठारी अनुसंधान केन्द्र, राँची (झारखंड)
[2]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)
[3]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर– कृषि विज्ञान केन्द्र, रामगढ़ (झारखंड)

कृषि के पहाड़ी और पठारी क्षेत्रों में कुल मिलाकर विविध, जटिल और जोखिम के क्षेत्र हैं। धान के बाद परती छोड़ना, अम्लीय मिट्टी, नमी की कमी, वर्षा जल संचयन संरचनाओं की कमी, भूमि क्षरण, कम बीज प्रतिस्थापन दर आदि मुख्य बाधाएँ हैं जो इस प्रकार के आदिवासी बहुल क्षेत्र मे उत्पादकता में सुधार के लिए बाधक है। यहाँ की आदिवासी आबादी मुख्य फसल के रुप में चावल तथा रागी के एकल (मोनो) फसल प्रणाली का पालन करते हैं। हालांकि यह देखा गया है कि फसल उत्पादकता साल में 6–7 महीने से अधिक है तथा यह किसान परिवार के भरण– पोषण के लिए भी पर्याप्त नहीं है। इसके अलावा भूमि, जोत क्रमिक गिरावट के कारण, कृषक समुदाय के लिए खेत के माध्यम से अपने परिवार की आजीविका सुरक्षा सुनिश्चित करना कठिन होता जा रहा है। खासकर वर्षा आधारित तथा पूर्वी भारत के असिंचित क्षेत्रों में आजीविका सुरक्षा केवल कृषि पर ही निर्भर करते हुए प्राप्त कर पाना असंभव है।

समेकित कृषि प्रणाली, कृषि के सभी घटकों का उपयोग कर स्थिरता के आधार पर प्राकृतिक संसाधनों जैसे– फ़सलों, जानवरों, पेड़– पौधों, मछलियों आदि को उपयोग कर किसानों की आय को बढ़ाने का प्रयास करती है। समेकित कृषि प्रणाली जिसे संबंधित उद्यमों के साथ फ़सल उत्पादन को एकीकृत कर के प्राप्त किया जा सकता है। कृषक परिवारों की आजीविका मे सुधार के लिए एकीकृत कृषि प्रणाली की क्षमता को ध्यान मे रखते हुए झारखंड में राँची जिला के सरवल, हहाप और कोइरीबेड़ा गाँवों में **''डी.बी.टी बायोटेक किसान हब''** परियोजना की कार्यान्वयन की गई। यह परियोजना डी.बी.टी वित्त पोषित परियोजना है जो आइ.सी.ए.आर पटना द्वारा 2019– 2021 तक संचालित योजना है। इस परियोजना से जुड़े गांव 18 से 21 कि.मी राँची शहर पर अवस्थित है।

कृषि– ग्रामीणों का प्राथमिक व्यवसाय है जिसके द्वारा परिवार की कुल आय मे 73% से अधिक का योगदान होता है। परियोजना की शुरुआत में परिवारों की औसत शुद्ध वार्षिक आय का योगदान लगभग 26% था। गाँव में मौजुदा कृषि उत्पादन प्रणालियों का सर्वेक्षण वहाँ प्रचलित 12 प्रमुख कृषि प्रणालियों का जो विभिन्न घटक थे उनमें से खेत की फ़सलें + बागवानी + बकरीपालन + मुर्गीपालन ज्यादा पाया गया। यह लगभग 20.2% कृषक परिवारों की सबसे प्रमुख कृषि प्रणाली थी। यद्यपि कृषि प्रणालियों से कुल वार्षिक आय रुपये 0.4 लाख प्रति हेक्टेयर से रुपये 1.3 लाख प्रति हेक्टेयर और प्रणाली उत्पादकता 7.0 टन प्रति हेक्टेयर वाली कृषि प्रणालियों जैसे बागवानी + डेयरी + बकरी + बैकयार्ड + पोल्ट्री थे और खेत की फ़सलें + बागवानी + डेयरी + मुर्गीपालन + लाह उत्पादन। इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए मुख्य रूप से समग्र उत्पादकता बढ़ाने के लिए एकीकृत कृषि प्रणाली पर प्रौद्योगिकी का प्रदर्शन करना अनिवार्य महसूस किया गया।

1. उन्नत सब्जी, दाल, तिलहन और रागी के तहत क्षेत्र बढ़ाना
2. लाह मेजबान पौधों के उपयोग में बढ़ोतरी
3. फल उत्पादन तकनीकों में सुधार पर प्रौद्योगिकी प्रदर्शन
4. पशु वृद्धि दर बकरी की उन्नत नस्ल की शुरुआत, पशु स्वास्थ्य और पोषण मे सुधार और पोल्ट्री को बढ़ावा देने के माध्यम से उत्पादकता को बढ़ावा देना
5. उपुक्त स्टॉकिंग घनत्व और फीड प्रबंधन पर प्रौद्योगिकी प्रदर्शन
6. सीप मशरुम की खेती और वर्मि कम्पोस्टिंग पर प्रौद्योगिकी प्रदर्शन

तकनीकी प्रदर्शन के कारण खेती की औसत वार्षिक आय 0.55 लाख रुपये प्रति हेक्टेयर से बढ़ाकर 1.23 लाख प्रति हेक्टेयर किया गया। परिणामस्वरूप विभिन्न कृषि प्रणालियों की खाद्य पर्याप्तता की स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। दो साल के पश्चात समेकित कृषि प्रणाली पर तकनीकी हस्तक्षेप द्वारा 78.32 हेक्टेयर के अतिरिक्त क्षेत्र को खेती के तहत लाया गया था। परिणामस्वरूप किसानों को 77.7 लाख रुपये की अतिरिक्त कृषि आय हुई। इसके अलावा अतिरिक्त 4031 की संख्या में अति. रिक्त कार्य दिवस का सृजन हुआ। गोद लिये गए गाँवों में विभिन्न किसानों द्वारा प्राप्त सफलता के आधार पर आसपास के क्षेत्र के किसानों की संख्या ने एकीकृत पर दृष्टिकोण अपनाना शुरु कर दिया है। यह आशा की जाती है कि आने वाले समय में विभिन्न राज्यों के राज्य सरकार के सक्रिय समर्थन से पूर्वी पठार और पहाड़ी क्षेत्र अर्थात झारखंड, छत्तीसगढ़, उड़ीसा राज्यों में बड़े पैमाने पर समेकित कृषि प्रणाली को लोकप्रिय बनाया जा सकता है।

सफलता की कहानियाँ

1. **श्री शहरनाथ मुंडा** पिता गंदुरा मुंडा, ग्राम सरवल के निवासी हैं। वे 30 वर्ष के हैं तथा परिवार में 6 सदस्य हैं, तथा जीविका के लिये खेती पर निर्भर हैं। इनकी कुल जमीन 4 हेक्टेयर है। जिसमें पहले खेत कि फ़सलें + सब्जियाँ + ड्राफ्ट कैटल + मुर्गी पालन + लाह उत्पादन कर कुल सालाना आमदनी रुपये 0.95 लाख प्रति हेक्टेयर प्राप्त कर पाते थ। डी.बी.टी परियोजना,**''डी.बी.टी बायोटेक किसान हब''** के विभिन्न प्रत्यक्षणों जैसे उरद–किस्म PU–31, सुरगुजा–किस्म BIRSA NIGER –1, रागी –किस्म BIRSA RAGI –1, सब्जियों की उन्नत किस्में, मिनिरल मिक्सचर, ओयेस्टर मशरुम, केचुआ खाद उत्पादन साथ ही साथ लाह उत्पादन फ्लेमेंजिय सेमियालता द्वारा इनकी आमदनी सालाना 2 लाख प्रति हेक्टेयर बढ़ गई। आज इनका परिवार अपना नया घर बनाने में सक्षम हो पाया है। इस परियोजना ने इनके सपनों को साकार करने मे महत्वपूर्ण भुमिका निभाई है।

2. **श्री धनकुमार मुंडा** पिता लाल सिंह मुंडा, ग्राम कोइरीबेड़ा 28 वर्षीय युवा हैं, जिनकी कुल भूमि 4.85 हेक्टेयर है। पहले वे फिल्ड क्रौप्स + बागवानी + डेयरी + मुर्गी पालन+ बकरी पालन + मत्स्य + लाह उत्पादन कर अपने परिवार के लिए सालाना आमदनी 2.74 लाख रुपये प्रति हेक्टेयर अर्जित कर पाते थे। युवा होने के कारण वे अपने खेतों से और अधिक आमदनी पाने की तकनीकों को सीखने की अभिलाषा रखते थे तथा गांव की अन्य महिलाओं की भांति इन्होंने भी मशरुम उत्पादन किया और **''डी. बी.टी बायोटेक किसान हब''** परियोजना द्वारा विभिन्न तकनीकी प्रत्यक्षणों जैसे उरद –किस्म PU–31, सुरगुजा–किस्म BIRSA NIGER –1, रागी–किस्म BIRSA RAGI –1, सब्जियों की उन्नत किस्में, बकरी में उन्नत प्रजाति के लिये ब्लैक बंगाल बक, बत्तख खाखी कैम्पबेल का समायोजन, मछली पालन, वृहद पैमाने पर कुश्मि लाह का उत्पादन कर आज उसी भूमी से 3.83 लाख प्रति हेक्टेयर अर्जित कर पाए हैं। इन्होने इस आमदनी से अपनी कृषि योग्य भूमि को जाली तार से घेराव कर सुरक्षित किया साथ ही इन्होंने अपने नये मकान का निर्माण भी कराया।

भारतीय लघु एवं सीमांत किसानों के लिए कृषक उत्पादक संगठन का महत्व

अनिर्बाण मुखर्जी[1], धीरज कुमार सिंह[1], कुमारी शुभा[1], श्रेया आनंद[2], राजू कुमार[1] एवं उज्ज्वल कुमार[1]

[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)
[2]विश्व–भारती, शांति निकेतन, पश्चिम बंगाल

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है एवं गरीबी उन्मूलन तथा समग्र विकास के लिए कृषि एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। हालांकि देश के सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) में इसका योगदान करीब 15 फीसदी है, लेकिन कुल रोजगार में इसकी हिस्सेदारी 50 फीसदी से भी अधिक है। हरित क्रांति के साथ, पिछले पांच दशकों में खाद्यान्न उत्पादन छह गुना (1950–51 में 51 मिलियन टन से बढ़कर 2020–21 के अंत तक 308.65 मिलियन टन) वृद्धि हुई है।

भारत कृषि में आत्मनिर्भरता एक प्रशंसनीय स्थिति में पहुंच गई है लेकिन किसानों को आज भी बहुत चुनौतियों का सामना करना पर रहा है हालांकि सरकारी एवं निजी कंपनियां कृषि के लिए निरंतर काम कर रही है लेकिन किसानों की दुर्दशा को कम करने में इसका परिणाम सुखद नहीं है। आज भी खेती के लिए किसानों तक आवश्यक संसाधनों और आदानों की पहुंच नहीं है। इस परिदृश्य में, वाई. के. अलग समिति की सिफारिशों के आधार पर भारतीय कंपनी अधिनियम, 1956 में एक नई धारा IX। को शामिल करके, भारत सरकार ने उत्पादक कंपनी अधिनियम बनाया एवं 2002 में, भारतीय कंपनी अधिनियम में एक संशोधन के माध्यम से कृषक उत्पादक कंपनियों (एफ.पी.सी.) को अपने सदस्यों की जरूरतों को पूरा करने के लिए पेश किया गया।

कंपनी अधिनियम, 2002 धारा 58 1बी के अनुसार, उत्पादक कंपनी या संगठन के मुख्य उद्देश्य आदान की खरीदारी, उत्पादन, कटाई, ग्रेडिंग, पूलिंग, हैंडलिंग, भंडारण तथा विपणन के अलावा कंपनी के सदस्यों की प्राथमिक उपज को निर्यात करने या उसके लिए आयात करना है। इसके अलावा इसका उद्देश्य सदस्यों के लिए माल या सेवाओं का उत्पादन, निर्माण, उपभोग्य सामग्रियों की बिक्री या मशीनरी की आपूर्ति, प्रशिक्षण और जागरूकता कार्यक्रम, फसल और पशुधन का बीमा एवं सदस्यों को कुशल प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन आदि के लिए मार्गदर्शन प्रदान करना भी है। इसके साथ ही एक सरोकार यह है कि किसान संगठन, कृषि और ग्रामीण विकास के लिए एक संभावित चालक बल के रूप में कार्य कर सकते हैं। किसान संगठन, विकास के कार्यतर इंजन के रूप में काम कर रहे हैं, जो स्थानीय स्तर से भी आगे के विकास को बढ़ावा दे सकते हैं तथा सम्पूर्ण समाज को लाभ प्रदान करते हैं।

कोई भी दस या अधिक व्यक्ति, प्राथमिक उत्पादक होने के नाते या कोई दो या अधिक प्राथमिक उत्पादक संगठन, भारतीय कंपनी अधिनियम, 2002 के तहत इसे पंजीकृत करके एक कृषक उत्पादक कंपनी या संगठन बना सकता है। कंपनी की सदस्यता और स्वामित्व केवल प्राथमिक उत्पादकों के पास रहेगा। सदस्यों की इक्विटी का कारोबार नहीं किया जा सकता है, हालांकि, इसे निदेशक मंडल की अनुमति से स्थानांतरित किया जा सकता है।

कोई भी दस या अधिक व्यक्ति, प्राथमिक उत्पादक होने के नाते या कोई दो या अधिक प्राथमिक उत्पादक संगठन, भारतीय कंपनी अधिनियम, 2002 के तहत इसे पंजीकृत करके एक कृषक उत्पादक कंपनी या संगठन बना सकता है। कंपनी की सदस्यता और स्वामित्व केवल प्राथमिक उत्पादकों के पास रहेगा। सदस्यों की इक्विटी का कारोबार नहीं किया जा सकता है, हालांकि, इसे निदेशक मंडल की अनुमति से स्थानांतरित किया जा सकता है।

कृषक उत्पादक कंपनी या संगठन किसानों को सामूहिक रूप से संगठित कर सक्षम बनाती है एवं कृषि के लिए एक व्यावसायिक दृष्टिकोण और बाजार के लिए लिंक प्रदान करती है। भारत में सहकारी संस्थाओं का अनुभव बहुत सुखद नहीं रहा है, क्योंकि

सहकारी समितियों को राज्य सरकारों द्वारा बड़े पैमाने पर बढ़ावा दिया गया है, जिसके कारण व्यापार के बजाय सिर्फ किसान कल्याण पर ही ध्यान केंद्रित किया गया है। भले ही कई राज्यों ने समानांतर सहकारी कानून पेश किए हैं, और केन्द्रीय कानूनों को भी अधिक उदार बनाया गया है परन्तु सुधार की गति बहुत धीमी है। कई राज्यों ने सुधारों के सभी प्रयासों का विरोध किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि नीति निर्माताओं के बीच एक बढ़ती जागरूकता है कि कृषि आपूर्ति (ऋण, बीज, उर्वरक, मूल्य प्रोत्सा. हन, प्रौद्योगिकी आदि) को मांग पक्ष पर निवेश के साथ संतुलित होना चाहिए। किसानों द्वारा स्वयं के संस्थानों के निर्माण और प्रबंधन की क्षमता, स्थानीय समस्याओं और चुनौतियों का समाधान करने के लिए एक प्रासंगिक रणनीति के रूपम मे उभरी है। कृषक उत्पादन कंपनी या संगठन (एफ. पी. सी.) एक ऐसी संस्था हैं जो इस भूमिका को पूरा करने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

तालिकाः 1 किसान उत्पादक कंपनी के साथ मौजूदा समूहों और संगठनों की तुलना

विभिन्न कारक	सहकारी समितियाँ	निजी संस्थान	कृषक उत्पादक कंपनी (एफ. पी. सी.)	किसान समूह (एस. एच.जी., एफ.आई. जी., आदि)
पंजीकरण	सहकारी सोसायटी अधिनियम	भारतीय कंपनी अधिनियम	भारतीय कंपनी अधिनियम	कोई औपचारिक पंजीकरण की आवश्यकता नहीं
सदस्यता	कोई दस या अधिक व्यक्ति जो एक ही परिवार से संबंधित न हो याए	दो या अधिक व्यक्ति (प्राथमिक उत्पादक होना जरुरी नहीं)	कोई भी दस या अधिक व्यक्ति, समूह, एसोसिएशन, (माल या सेवाओं के निर्माता होने चाहिए)	कोई दस या अधिक व्यक्ति
उद्देश्य	एकल उद्देश्य	कई उद्देश्य	कई उद्देश्य	कई उद्देश्य
संचालन का क्षेत्र	गाँवों, जिलों तक, अधि. कतम राज्य स्तर तक	देश भर में काम कर सकते हैं	देश भर में काम कर सकते हैं	गांवों तक सीमित, अधिकतम जिलों तक
पंजीकरण ऑथोरिटी की भूमिका	महत्वपूर्ण	कम से कम	कम से कम	कम से कम
मताधिकार	एक सदस्य एक वोट, लेकिन सरकार और सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार वीटो पावर रखते हैं।	संघ के अनुच्छेद द्वारा शासित	एक सदस्य, एक वोट, बिना सदस्यता के वोट नहीं दे सकते	कोई औपचारिक नहीं, बैठकों के आधार पर निर्णय
कैश रिजर्व	अगर मुनाफा हुआ तो बनाया जाता हैं।	कंपनी की नीति पर निर्भर करता हैं।	हर साल अनिवार्य रुप से	हर साल अनिवार्य रुप से
अन्य संगठनों के साथ व्यापार का दायरा	एक ही प्रकार के संगठन के साथ व्यापार समझौते किये जा सकते हैं।	संघ के अनुच्छेद के अनुसार व्यावसायिक लचीलापन है और कानून द्वारा प्रतिबं. धित नहीं है।	कंपनी राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किसी अन्य व्यावसायिक संगठन के साथ समझौते कर सकती है	सीमित
शेयर	व्यापार योग्य नहीं	व्यापार योग्य	व्यापार के लिए नहीं पर सदस्यों के बीच हस्तांतरणीय	लागू नहीं

विभिन्न कारक	सहकारी समितियाँ	निजी संस्थान	कृषक उत्पादक कंपनी (एफ. पी. सी.)	किसान समूह (एस. एच.जी., एफ.आई. जी., आदि)
उधार लेने की शक्ति	प्रतिबंधित	निदेशक मंडल में पूर्ण स्वतंत्रता निहित है	अधिक स्वतंत्रता और विकल्प	सदस्यों पर पूर्ण स्वतंत्रता
सरकारी नियंत्रण	अत्यधिक हस्तक्षेप की हद तक संरक्षण	न्यूनतम, कानूनी आवश्यकताओं तक सीमित	न्यूनतम, कानूनी आवश्यकताओं तक सीमित	कम से कम

किसान उत्पादक (एफ.पी.सी.) कंपनी के लाभ

किसान उत्पादक संगठन में जुड़ने पर किसानों को कई फायदे होते हैं। सबसे प्रमुख फायदा उनके उत्पाद के विपणन में होता है। यदि पारंपरिक तरीके से वो विपणन करते हैं तो ज्यादातर मुनाफा बिचौलिये कमा लेते हैं। एफ पी सी के माध्यम से विपणन करने पर बिचौलियों की संख्या काफी कम हो जाती है एवं किसान अपना उत्पाद सीधे तरीके से उपभोक्ताओं को बेच सकते हैं।

एफ. पी. सी. से होने वाले अन्य लाभों की सूची निम्नलिखित है:

- छोटे किसानों को वैश्वीकरण के दुष्प्रभाव से बचाने के लिए एफपीसी में जबरदस्त क्षमता है।
- छोटे और सीमांत किसानों को आर्थिक और सामाजिक रूप से सशक्त करता है।
- सहकारी जोखिम साझाकरण तंत्र के माध्यम से किसानों की जोखिम में कमी लाती है।
- एफपीसी पैमाने की अर्थव्यवस्थाओं का उपयोग करता है जो उत्पादन की लागत में कमी लाती है।
- एफपीसी सदस्य किसानों के लिए बेहतर सौदेबाजी और बातचीत की स्थिति प्रदान की जाती है।
- सदस्यों की क्षमता निर्माण एक महत्वपूर्ण उदेश्य है जो ज्यादातर एफपीसी में निहित है।
- समन्वयन और मूल्य श्रृंखला प्रबंधन किसानों की आय बढ़ाने वाली एफपीसी की प्रमुख गतिविधियां हैं।
- मूल्य श्रृंखला की लंबाई कम करने के माध्यम से उत्पादकों का उपभोक्ता के भुगतान में हिस्सा बढ़ाता है।
- एफपीसी सामाजिक पूंजी के उत्पादन और निर्माण में तकनीकी सहायता प्रदान करता है।

चित्र 1– किसानों को कंपनी द्वारा प्रदान करने वाली सेवाएँ

कृषक उत्पादन कंपनी या संगठन द्वारा प्रदान की गई सेवाएँ

कृषक उत्पादन कंपनी या संगठन अपने सदस्य किसानों को कई सेवाएं प्रदान कर सकती हैं। ये सेवाएं उत्पादन, संगठन, वित्तीय मदद, तकनीकी सेवाएं, सामाजिक सेवाएं, शैक्षिक सेवाएं, विपणन, संसाधन प्रबंधन, सामान्य कल्याण और नीति अधिवक्ता आदि हैं। उत्पादन के मामले में, एफपीसी सदस्य किसानों को खाद, बीज जैसे इनपुट प्रदान करने में मदद करता है। सही समय पर आदानों की आपूर्ति बाजार की लागत से भी कम कीमत पर करता है जो योजनाबद्ध तरीके से वस्तुओं का उत्पादन करने में मदद करते हैं और एक स्वस्थ संगठनात्मक वातावरण बनाने के लिए कई गतिविधियाँ करता है जो समग्र रूप से संगठन की भलाई के लिए किसानों सदस्यों के बीच कृषि–व्यवसायों को प्रोत्साहित करता है। यह विशेष रूप से बैंकों की वित्तीय

सेवाओं में भी मदद करता है क्योंकि आमतौर पर बैंक व्यक्तिगत ऋणों की तुलना में समूह ऋण को जल्दी मंजूरी देते हैं। यह फसलों, पशुपालन, मत्स्य और अन्य उद्यमों में कई तकनीकी सेवाएं भी प्रदान करता है जो कृषक उत्पादन कंपनी या संगठन संचालित करती है। इसके अलावा, यह कई स्वास्थ्य और जागरूकता शिविरों की व्यवस्था करके किसानों की सामाजिक जागरूकता और सामान्य भलाई में मदद करता है। कुछ कंपनियां, सदस्य किसानों और उनके परिवार के शैक्षिक विकास में अच्छे स्कूलों और कॉलेजों में प्रवेश लेने और शैक्षिक ऋण प्रदान करने में मदद करती हैं। मार्केटिंग, कृषक उत्पादन कंपनी या संगठन का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा है, जहां कंपनी द्वारा नियुक्त सीईओ, उन उत्पादों के विपणन में मदद करता है, जो कंपनी को लाभ के रूप में एक अच्छी राशि प्राप्त कराते हैं। यह लाभ सदस्यों को बोनस या लाभांश के रूप में वर्ष के अंत में वितरित किया जाता है। यह कई अनुसंधान और शैक्षिक संगठनों जैसे आईसीएआर संस्थानों, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों, केवीके आदि के माध्यम से किसानों के लिए आवश्यक प्रशिक्षण के माध्यम से मानव संसाधन विकास में मदद करता है।

निष्कर्ष

कृषक उत्पादक कंपनियां सहकारी के साथ निजी कंपनी का सबसे अच्छा समामेलन हैं। इसने किसानों के सर्वांगीण सशक्तीकरण के आदर्श वाक्य के साथ बाजार के दृष्टिकोण वाले इन दो संस्थाओं से सर्वोत्तम कार्यों को चुना है। एफ. पी. सी. किसानों द्वारा चलाए जा रहे है और किसानों के विकास के लिए काम कर रही है। कृषक उत्पादन कंपनी या संगठन के माध्यम से छोटे और सीमांत किसानों को अधिक से अधिक लाभ पहुंचाया जा रहा है अतः वैश्विक प्रतियोगिता के इस दौर में सभी किसानों, खास तौर पर छोटे एवं सीमांत किसानों को कृषक उत्पादक कंपनियों से जुड़ कर इस से लाभ उठाना चाहिए। ये कदम उनकी उपज के साथ–साथ प्रतिवर्ष आय बढाने में भी मदद करेगा।

जैविक कृषि एवं जैव प्रमाणिकीकरण

बाल कृष्ण झा, सुशांत कुमार नायक, जयपाल सिंह चौधरी, अरुण कुमार सिंह, रेशमा शिंदे, अणिमा प्रभा एवं निर्मला कुमारी

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर– कृषि प्रणाली का पहाड़ी एवं पठारी अनुसंधान केंद्र, राँची (झारखंड)

जैविक खेती कृषि की वह तकनीक है जिसमें रासायनिक उत्पादों (रासायनिक उर्वरक, कीटनाशी, फफूँदनाशी, खरपतवारनाशी, वृद्धि नियामक, आदि) का प्रयोग न करते हुए कार्बनिक पदार्थों (कार्बनिक खादें, जैव उर्वरक, जैविक कीटनाशी, जैविक फफूँदनाशी एवं हरी खाद, इत्यादि) का प्रयोग करते हैं। जैविक खेती का मुख्य उद्देश्य मिट्टी, पौधे, पशुओं एवं मनुष्यों के स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए फसलोत्पादन को बढ़ाना है। फसलोत्पाद में रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशी दवाओं के अत्यधिक प्रयोग से मृदा की उर्वरता एवं मनुष्य के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः जैविक फसलोत्पाद की मांग राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर तेजी से बढ़ रही है। भारत सरकार द्वारा जैविक खेती को प्रोत्साहन हेतु चलाए जा रहे योजनाओं में भारतीय प्रम्परागत कृषि विकाश योजना एवं राष्ट्रीय कृषि विकाश योजना है। इनके अंतर्गत विभिन्न जैविक खेती हेतु मुख्य योजनाएं जैसे प्राकृतिक कृषि, गौव कृषि, होमा कृषि, ऋषि कृषि, वैदिक कृषि एवं जीरो बजट नैचुरल फार्मिंग सरकार द्वारा चलाई जा रही है।

रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशी दवाओं के हानिकारक अवशेष फल–सब्जियों एवं विभिन्न प्रकार के अनाजिये दलहनी एवं तिलहनी फसलोत्पाद के माध्यम से मानव एवं पशुओं में रोग एवं विकार उत्पन्न करते हैं। इस दुष्प्रभाव से फसलोत्पाद की जैविक खेती अपनाकर ही बचा जा सकता है। शोध परिणामों से यह सिद्ध हो चुका है कि वर्षों तक लगातार असंतुलित एवं अपर्याप्त पोषण तथा पोषक तत्वों में जैविक स्रोतों का सामान्यतः अभाव भूमि की उर्वरा शक्ति एवं उत्पादकता में ह्रास के लिए प्रमुख रूप से उत्तरदायी होता है। रसायनिक उर्वरकों का प्रयोग, भूमि की उर्वरता एवं फसलोत्पादकता को लम्बे समय तक बनाये रखने में अक्षम है। जबकि जैविक खेती तकनीक भूमि की उर्वरता एवं फसलोत्पादकता को लम्बे समय तक स्थिर बनाये रखने के साथ–साथ मृदा के भौतिक, रसायनिक एवं जैविक गुणों को भी बरकरार रखती है। इससे द्वितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी नहीं होने पाती। राष्ट्रीय स्तर पर उर्वरकों की बढ़ती कीमत एवं माँग तथा पूर्ति के बीच बढ़ते अंतर को ध्यान में रखते हुए जैविक कृषि तकनीक को ज्यादा महत्व दिया जाना चाहिए। जैविक खेती तकनीक में जै. विक खाद, दलहनी फसलें, हरी खाद, फसल अवशेष, जीवाणु खाद एवं केंचुआ खाद द्वारा पोषण प्रबंधन तथा कीट एवं बीमारियों का जैविक नियंत्रण सम्मिलित हैं जिनकी सफलता हेतु किसानों की सहभागिता अत्यावश्यक है। जैविक खेती के उत्पादों को सत्यापित कर उनका उचित बाजार मूल्य प्राप्त होने से जैविक खेती की लोकप्रियता में वृद्धि होगी एवं किसान इसे बड़े पैमाने पर अपनायेंगे।

जैविक पोषण प्रबंधन

जैविक खादों का प्रयोगः मृदा में जैविक पदार्थों की पर्याप्त उपलब्धता के लिए जैविक खादों का प्रयोग अनिवार्य है। जैविक खाद मृदा की भौतिक संरचना तथा रसायनिक एवं जैविक गुणों पर लाभदायक प्रभाव डालते हैं। एक टन गोबर की खाद तथा ग्रामीण कम्पोस्ट के प्रयोग से 5–8 किग्रा. नत्रजन, 3.0–3.5 किग्रा. फास्फोरस एवं 5–6 किग्रा. पोटाश मिलता है।

शहरी कम्पोस्ट में औसत पोषक तत्वों की मात्रा थोड़ी ज्यादा होती है। एक टन करंज, नीम, अरंडी, मूंगफली, नारियल, सरगुजा, तिल इत्यादि की खली के प्रयोग से 30–70 किग्रा. नत्रजन, 8–20 किग्रा. फास्फोरस एवं 10–20 किग्रा. पोटाश मिलता है।

हरी खाद के पौधों की जुताई उसी समय करना चाहिए जब फसल की लम्बाई 1 से 1.5 फुट हो तथा उसमें काफी पत्तियाँ आ जायें परंतु वे कड़ी न हों जिससे पलटाई के बाद वे आसानी से सड़ जायें। साधारणतः बुआई से 45–50 दिन बाद हरी खाद पलट कर जुताई करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त वनखेती फसल तंत्र के अनुसार गिरिपुष्प (ग्लिरिसिडिआ मैकुलाटा) एवं सुबबूल (ल्यूकायना लुकोसेफाला) लगाकर उनके पत्तों का हरी खाद के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। ग्लिरिसिडिआ की एक टन हरी पत्तियों में 30–40 किग्रा. नत्रजन, 3.0–3.2 किग्रा. फास्फोरस एवं 15–25 किग्रा. पोटाश होता है। एक टन सुबबूल की पत्तियों के प्रयोग से 30–35 किग्रा. नत्रजन 2.5–2.8 किग्रा. फास्फोरस एवं 14–15 किग्रा. पोटाश मिलते हैं।

पशु अवशिष्ट में नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश की औसत मात्रा			
पशु अवशिष्ट पदार्थ	**नाइट्रोजन (%)**	**फास्फोरस (%)**	**पोटाश (%)**
मवेशियों के गोबर एवं मूत्र का मिश्रण (ताजा)	0.60	0.15	0.45
कुक्कुट विष्ठा (ताजा)	1.0–1.8	1.4–1.8	0.8–0.9
सड़े गोबर की खाद (सूखी)	0.5–1.5	0.4–0.8	0.5–1.9

दलहनी फसलों का प्रयोगः दलहनी फसलों को सब्जियों के साथ अंतःफसल के रूप में या हरी खाद के रूप में उगाया जा सकता है। दलहनी फसलों को सम्मिलित करने से सब्जियों की पैदावार में उत्साहजनक वृद्धि तथा उपज में स्थिरता देखी गई है। दलहनी फसलें खेत में उगाने से इनके द्वारा किये जाने वाले वायुमंडलीय नत्रजन यौगिकीकरण का लाभ मिलता है। लोबिया, मटर, सोयाबीन, मूंगफली, बीन इत्यादि दलहनी फसलों से 40–90 किग्रा./हे. की दर से यौगिकीकृत नत्रजन का लाभ मिलता है।

हरी खाद का प्रयोगः हरी खाद के प्रयोग से जैविक पदार्थ के अतिरिक्त मृदा में नत्रजन की मात्रा बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त जैव–रसायनिक प्रक्रिया में तीव्रता आती है तथा पोषक तत्वों का संरक्षण व उपलब्धता बढ़ती है। बरसात में उगायी जाने वाली हरी खाद में ढैंचा (सेस्बेनिया एक्युलियाटा) एवं सनई, (प्रोटोलेरिया जन्सिया) तथा शुष्क मौसम में उगायी जाने वाली हरी खादों में सेंजी (मेलिलोटस अल्वा) एवं बरसीम (ट्राईफोलियम अलेक्जेन्ड्रिनम) प्रमुख हैं।

नाम	वनस्पतिक नाम	हरित पदार्थ की औसत उपज	नाइट्रोजन (%)	भूमि में समाहित नाइट्रोजन (किग्रा./हे.)
खरीफ				
सन हेम्प	*Crotalaria aculeata*	152	0.43	84.0
ढैंचा	*Sesbania aculeata*	144	0.42	77.1
मूंग	*Vigna radiata*	57	0.53	38.6
लोबिया	*Vigna unguiculata*	108	0.49	56.3
रबी				
सेन्जी	*Mellilotus alba*	206	0.51	134.4
खेसारी	*Lathyrus sativus*	88	0.54	61.4
बरसीम	*Trifolium alexandrmum*	111	0.43	60.7

फसल अवशेषः धान, मूंगफली की भूसी तथा ज्वार एवं मडुआ के तनों आदि के प्रयोग से जमीन में जैविक का. र्बन में वृद्धि के साथ–साथ मृदा की भौतिक संरचना भी उत्कृष्ट हो जाती है। फसल अवशेष के एक टन में 3–15 किग्रा. नत्रजन, 2–7 किग्रा. फास्फोरस एवं 3–20 किग्रा. पोटाश होता है।

जीवाणु खादों का प्रयोगः कुछ जीवाणु पौधों की जड़ों में या उसके आसपास रहकर वायुमंलीय नत्रजन का यौगिकीकरण करते हैं या भूमि में उपलब्ध अघुलनशील फास्फोरस को पौधों के लिए उपयोगी बनाते हैं। इस प्रकार पौधों की वृद्धि एवं उपज बढ़ाने में ये सक्रिय योगदान देने के साथ–साथ भूमि की उर्वरा शक्ति भी बनाये रखते हैं। इन्हें जीवाणु खाद के रूप में फसलों में दिया जाता है। नत्रजन उपलब्ध कराने वाली जीवाणु खादों में उपस्थित जीवाणु वातावरण में उपलब्ध नत्रजन गैस को अमोनिया में परिवर्तित करके पौधों को आसानी से उपलब्ध कराते हैं। दलहनवर्गीय सब्जियों जैसे – लोबिया, मटर, बीन आदि में नत्रजन की उपलब्धता को बढ़ाने के लिए राइजोबियम जीवाणु खाद का प्रयोग करना चाहिए। अन्य सब्जी फसलों में नत्रजन की उपलब्धता बढ़ाने वाली जीवाणु खाद एजोटोबैक्टर तथा एजोस्प्रिल्लियम हैं।

विभिन्न जीवाणु खाद की क्षमता

क्र.सं.	जीवाणु	भूमि में समाहित पोषक तत्व की मात्रा
1.	राइजोबियम	30.100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/हे.
2.	एजोटोबैक्टर	20.35 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/हे.
3.	एजोस्प्रिल्लियम	30.35 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/हे.
4.	एसीटोबैक्टर	70.150 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/हे.
5.	फास्फोरस सॉल्यूबलाजिंग बैक्टीरिया (पी.एस.बी.)	20.30 कि.ग्रा. फास्फोरस/हे.
6.	वैसीक्यूलर आरबुसक्यूलर माइकोराइजा (वी.ए.एम.)	30.50 कि.ग्रा. फास्फोरस/हे.

फास्फोरस उपलब्ध कराने वाली जीवाणु खादों में ऐसे जीवाणु होते हैं जो भूमि में उपस्थित अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील रूप में बदल देते हैं जिससे पौधे आसानी से इसे अपने भोजन के रूप में प्रयोग कर पाते हैं। अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील बनाने वाली जीवाणु खाद फॉस्फोबैक्ट्रीन तथा फास्फोटिका नाम से बाजार में उपलब्ध हैं।

विभिन्न जीवाणु खादों का प्रयोग करने की विधियाँः

1. **जीवाणु खादों से बीज/कन्द को उपचारित करनाः** बीजोपचार विधि में 250 ग्रा. गुड़ एक लीटर पानी में उबाल कर ठण्ढा करने के बाद उसमें 500 ग्रा. जीवाणु खाद तथा एक हेक्टेयर के लिए पर्याप्त बीज को अच्छी तरह मिलाकर आधा घंटा तक छायादार स्थान में सुखाने के बाद इस उपचारित बीज की बुआई करनी चाहिए। जीवाणु कल्चर को धूप से बचाना आवश्यक होता है। कंद उपचार के लिए 2 किग्रा. कल्चर 5 लीटर पानी में अच्छी तरह मिलाकर एक हेक्टेयर के लिए पर्याप्त कन्दों को इसमें उपचारित करके, आधा घंटा तक छायादार स्थान में सुखाने के बाद बुआई करनी चाहिए।
2. **जीवाणु खादों को भूमि में मिलानाः** मिट्टी उपचार के लिए 2 किग्रा. कल्चर को 25 किग्रा. सड़ी गोबर की खाद एवं 25 किग्रा. मिट्टी के साथ अच्छी तरह मिलाकर जूट के गीले बोरे से ढँककर छायादार स्थान पर रखें तथा 5 दिन के अंतराल पर दो बार पलटें। उपरोक्त मिश्रण को 15 दिन के बाद एक हेक्टेयर क्षेत्र में समान रूप से बिखेर देना चाहिए। इस प्रक्रिया को चार्जिंग कहा जाता है। जीवाणु खादों का प्रयोग करते समय उर्वरक तथा रसायनिक दवाओं का उपयोग नहीं करना चाहिए।

जड़ को उपचारित करनाः इस विधि में टमाटर, मिर्च, प्याज, फूलगोभी, पातगोभी इत्यादि का उपचार करने हेतु 1 किग्रा. कल्चर को लगभग 5–10 ली. पानी में मिलाकर घोल तैयार करें। यह घोल 1 एकड़ के पौधों को शोधित करने हेतु पर्याप्त होता है। इस तैयार किये गये घोल में पौधों की जड़ों को कम से कम आधा घण्टा तक डुबोने के पश्चात् ही पौधों का रोपण किया जाता है। केंचुआ खाद (वर्मी कम्पोस्ट) का प्रयोगः यह

एक उच्च कोटि की संतुलित जैविक खाद है जो एसीनिया फोटिडा तथा युड्रिलस युजनी प्रजाति के केंचुओं द्वारा तैयार की जाती है। इसमें नत्रजन (0.8–1.2%), फास्फोरस (0.7–1.2%) तथा पोटाश (1.0–1.5%) के अतिरिक्त सूक्ष्म पोषक तत्व एवं एन्जाइम उपलब्ध होते हैं जो पौधों के विकास के लिए आवश्यक होते हैं। यह भूमि की उर्वरा शक्ति तथा मिट्टी की जलधारण क्षमता को भी बढ़ाती है। बुआई/रोपाई से पहले 20–30 क्विंटल/हेक्टेयर की दर से केंचुआ खाद जमीन में मिलाना चाहिए। केंचुआ खाद के प्रयोग के बाद भूमि की सतह को पुआल, सूखी पत्तियाँ आदि बिछाकर (मल्चिंग) ढँक देने से इसका प्रभाव अच्छा होता है। इसका उपयोग करते समय उर्वरक तथा रसायनिक दवाओं का उपयोग नहीं करना चाहिए।

कीट एवं बीमारियों के जैविक नियंत्रण

रसायनिक दवाओं द्वारा कीट एवं बीमारियों का प्रबंधन एक सरल एवं प्रभावशाली तरीका है। परंतु रसायनिक दवाओं का अत्यधिक उपयोग, प्रबंधन के साथ–साथ कृषि व्यवस्था के लिए कई नई समस्याओं को जन्म देता है। इसमें कीट में कीटनाशक की प्रतिरोधक क्षमता का पैदा होना, वातावरण एवं भूमिगत–जल प्रदूषण, कृषि उत्पाद में रसायनिक दवा के अवशेष की मात्रा का मानव स्वास्थ्य पर कुप्रभाव, फसल के कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं की संख्या का ह्रास, फसलों की भंडारण क्षमता में ह्रास प्रमुख हैं। कीट एवं बीमारियों के नियंत्रण के लिए विभिन्न जैविक उपायों को अपनाया जा सकता है। स्वस्थ पौधों के उत्पादन हेतु मिट्टी का सौर्यीकरण तथा नायलॉन जाली के प्रयोग से विषाणुजनित बीमारियों से बचाव, रोग–प्रतिरोधी पौधों का प्रयोग, खेत में करंज एवं नीम की खली का

प्रयोग, गंधपाश (फेरोमॉन टैप) द्वारा कीड़ों को पकड़ना, प्राकृतिक शत्रुओं द्वारा कीड़ों एवं बीमारियों के कारकों की रोकथाम, वानस्पतिक पदार्थों जैसे – नीम, तुलसी, लेनटाना, करंज इत्यादि की पत्तियों के घोल के प्रयोग से बीमारी एवं कीड़ों की समस्या को कम करना, पाश फसल (ट्रैप क्रॉप) जैसे– सरसों (पातगोभी के हीरकपीट फतिंगों या डायमंड बैक मॉथ के नियंत्रण के लिए) तथा गेंदा (टमाटर की फलबेधक सूंडी के नियंत्रण के लिए) इत्यादि का प्रयोग करना। इन सभी उपायों द्वारा कम खर्च में फसल की समुचित सुरक्षा की जा सकती है।

प्रमुख जैविक कीट एवं रोग नाशक

ट्राइकोडर्मा: यह एक जैविक फफूँदनाशक है जो मुख्यतः ट्राइकोडर्मा विरिडी पर आधारित है। यह आलू, हल्दी, अदरक, प्याज, लहसुन आदि फसलों के जड़ सड़न, तना गलन, झुलसा आदि फफूँदजनित रोगों, में प्रभावकारी पाया गया है। साथ ही साथ टमाटर एवं बैंगन के जीवाणुज मुरझा रोग के लिए भी यह उपयुक्त पाया गया है। बाजार में ट्राइकोडर्मा मॉनीटर, बायोडर्मा, अनमोलडर्मा, ट्राइको एस.पी, ट्राइकोडर्मा बायोनैब टी एवं फुले ट्राइकोकिल आदि विभिन्न नामों से उपलब्ध है।

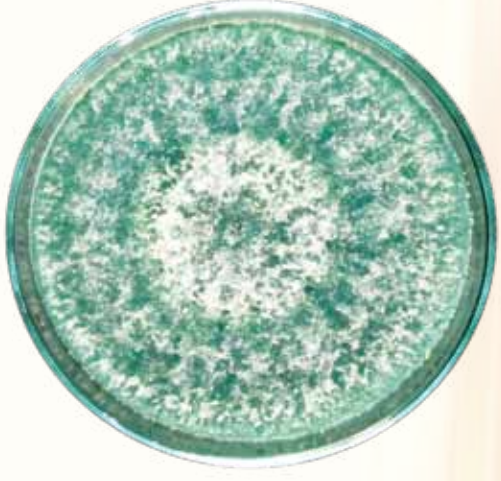

इसके प्रयोग से अनेक मिट्टीजनित बीमारियों की रोक. थाम की जा सकती है। साथ ही पौधों की बढ़वार अच्छी होती है। उपचार के लिए सब्जियों में नर्सरी लगाने के पहले 2–4 ग्रा. ट्राइकोडर्मा प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बीज की बुआई करें। खेत में ट्राइकोडर्मा का प्रयोग करने के लिए 1 बैलगाड़ी सड़ी गोबर की खाद (250–300 किग्रा.) में 1 किग्रा. ट्राइकोडर्मा पाउडर छिड़ककर अच्छी तरह से मिलायें। पाँच दिन के अंतराल

पर 2 बार इसे पलटें ताकि ट्राइकोडर्मा अच्छी तरह खाद में मिल जाये तथा फफूँद पूरी खाद में फैल जाये। खाद में नमी बनाये रखने के लिए गर्मी के दिनों में गीले जूट के बोरे या अखबार से इसे ढँक दें। जाड़े में इसे पॉलीथीन से ढँका जा सकता है। यह ध्यान रहे कि इसमें हल्की नमी (20%) बनी रहे या तापमान 50 डिग्री सेंटीग्रेड से ज्यादा न बढ़ने पाये। इस प्रक्रिया को चार्जिंग कहते हैं। इस प्रकार से तैयार गोबर की खाद को सब्जी एवं फलों की फसलों में डालना चाहिए।

बैसिलस थुरिनजेन्सिस: यह संक्षेप में बी.टी. के नाम से जाना जाता है जो फूलगोभी एवं पातगोभी पर हीरकपीट फतिंगों (डायमंड बैक मॉथ) का नियंत्रण करता है। इसका 500–1000 ग्रा. कल्चर प्रति हेक्टेयर की दर से 650 लीटर पानी में घोलकर 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए। बाजार में यह डेल्फिन के नाम से उपलब्ध है।

ट्राइकोग्रामा: यह छोटे ततैया पर आधारित है जो पतंगों के अंडे के परजीवी होते हैं। इसके 8 से 12 कार्ड प्रति हेक्टेयर की दर से 10 से 15 दिनों के अंतराल पर 3–4 बार शाम के समय फसल में लगा दिये जाते हैं। ट्राइकोग्रामा बैक्ट्री फूलगोभी एवं पातगोभी के लिए तथा ट्राइकोग्रामा किलोनिस अन्य सब्जियों में प्रयोग किया जाता है।

जैविक सूत्रकृमिनाशक: यह पेसीलोमाईसीस लीलासिनस नामक फफूँद से बनाया जाता है जो जमीन में रहकर कृमि के अंडे और कई बार मादा सूत्रकृमि को खाकर उनका नियंत्रण करती है। सब्जी की फसलों में बुआई के समय या उसके तुरंत बाद इसे 50 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से पौधे के आसपास देना चाहिए। अगर खेत में नमी नहीं है तो शीघ्र ही पानी का प्रबंध करना चाहिए। नर्सरी के लिए 1 वर्गमीटर में 20 ग्रा. जैविक सूत्रकृमिनाशक का इस्तेमाल करें।

ब्युवेरीया बेसीयाना: यह फफूँद पर आधारित जैविक कीटनाशक है जो हरी इल्ली, डायमंड बैक मौथ, सफेद मक्खी, माहू (लाही), लीफ माइनर, बोरर आदि कीड़ों में बीमारी फैलाकर उनका नियंत्रण करता है। इसके लिए 4 से 5 ग्रा. ब्युवेरीया बेसीयाना प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। जमीन में प्रयोग करने के लिए 1 किग्रा. ब्युवेरीया बेसीयाना मिट्टी में मिलाना अच्छा रहता है।

वार्टिसिलियम लीकानी: यह भी फफूँफद पर आधारित जैविक कीटनाशक है, जो सफेद मक्खी, माहू (लाही), थ्रिप्स आदि में बीमारी फैलाकर इनपर नियंत्रण करता है। इसके लिए 2 किग्रा. वार्टिसिलियम लीकानी 500 लीटर पानी में घोलकर खड़ी फसल पर छिड़काव करें।

एन.पी.वी.: यह हरी इल्ली (इसे अमेरिकन बॉलवर्म, हेलियोथिस या हेलिकोवर्पा भी कहते हैं) के शरीर से निकाला गया विषाणु तत्व है जो टमाटर की फलछेदक से रक्षा करता है। इसके प्रयोग के लिए 250 एल.ई. (लार्वा इक्विवैलेन्ट) प्रति हेक्टेयर के हिसाब से 500 लीटर पानी में 250 ग्रा. गुड़ तथा 250 मिली. डिटर्जेंट के साथ घोलकर उपयोग करें।

नीम आधरित कीटनाशक: इसका प्रयोग सफेद मक्खी, भृंग, फुदका (जैसिड्स), कटुआ कीट, टहनी तथा फलबेधक सूंडी पर किया जाता है। यह कीड़ों के जीवनचक्र को कमजोर बनाता है। नीम के बीज का घोल बनाने के लिए 35 किग्रा. नीम के बीज पानी में पीसकर 100 ली. घोल तैयार कर टब में जमा करें। इसे 12 घंटे बाद कपड़े से छानकर प्रति ली. घोल को 6 ली. पानी में मिलाकर छिड़काव करें। एक हेक्टेयर में लगी सब्जी फसल पर छिड़काव के लिए लगभग 700 ली. नीम के बीज के घोल की आवश्यकता होती है।

जैविक प्रमाणिकीकरण

जैविक प्रमाणिकीकरण (ऑर्गेनिक सर्टिफिकेशन) वह प्रक्रिया है जिसके तहत अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त संस्थायें यह प्रमाणित करती हैं कि फार्म यूनिट पर की जाने वाली

खेती जैविक कृषि के लिए निर्धारित नियमों के अनुसार की गई है। जैविक प्रमाणिकीकरण को मूलतः एक प्रकार से गुणवत्ता के प्रमाणिकीकरण की प्रक्रिया कहा जा सकता है। जैविक प्रमाणिकीकरण वस्तुतः जैविक उत्पाद की गुणवत्ता एवं सत्यता को प्रमाणित करने के लिए तृतीय पक्ष द्वारा कराए जानेवाले मूल्यांकन की व्यवस्था है।

जैविक प्रमाणिकीकरण की आवश्यकता

वर्तमान समय में किसानों को जैविक प्रमाणिकीकरण की पूरी जानकारी होने से ही उन्हें जैविक कृषि का पूरा लाभ मिल सकता है। ग्राहक के समक्ष जैविक खेती के उत्पादों एवं रासायनिक तरीकों से प्राप्त कृषि उत्पादों का वर्गीकरण आवश्यक है। वर्तमान समय में उपभोक्ता स्वास्थ्यवर्धक एवं पर्यावरणाकूल उत्पाद के लिए वांछित मूल्य देने को तैयार हैं, जिससे किसान जैविक कृषि अपनाकर अच्छा लाभ प्राप्त कर सकते हैं। जैविक गुणवत्ता को बनाये रखने के लिये चार मुख्य स्तम्भ हैं – विश्वसनीयता, मानक, निरीक्षण तथा प्रमाणन। जैविक उत्पादों की बढ़ती माँग को ध्यान में रखते हुए सभी देशों ने जैविक कृषि करने के कुछ मापदण्ड तैयार किये हैं। जैविक प्रमाणिकीकरण, मापदण्डों के अन्तर्गत कुछ विशिष्ट उद्देश्यों को प्राप्त करने की नीयत से होता है। अतः सभी प्रमाणिकीकरण संस्थायें अपने देश में अपनाये जा रहे मापदण्डों के आधार पर सरकार द्वारा बनायी गयी सरकारी संस्था जैसे भारत में कृषि एवं प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपिडा) से अनुमोदन प्राप्त करती हैं।

जैविक प्रमाणिकीकरण का उद्देश्य

प्रमाणिकीकरण किसानों द्वारा अपनाये गये मानकों की सत्यता को निर्धारित करता है तथा साथ ही साथ प्रमाण पत्र की सहायता से किसान अपने जैविक उत्पाद पर लाभ भी प्राप्त करता है। जैविक उत्पादों को विदेशों में निर्यात करने के लिए उस देश के द्वारा अपनाये जा रहे मापदण्डों पर आधारित प्रमाण पत्र की आवश्यकता होती है। प्रमाणिकीकरण संस्था द्वारा प्रतिवर्ष उस भूमि पर ली जाने वाली फसल तथा दस्तावेजों का निरीक्षण कर यह सुनिश्चित किया जाता है कि संस्था तथा किसान निर्धारित मापदण्डों को अपना रहे हैं या नहीं। प्रमाणीकरण संस्था इन जानकारियों का विश्लेषण कर उनमें से त्रुटियों को निकाल कर उन त्रुटियों की एक सूची संस्था/किसान के पास भेजती है और किसान उन त्रुटियों को सुधार करता है। तत्पश्चात एक प्रतिवेदन प्रमाणिकीकरण संस्था को भेजा जाता है और प्रमाणिकीकरण सस्ंथा प्राप्त जानकारियों को कृषि एवं प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपिडा) तक पहुँचाती है। अन्ततः एपिडा के अनुमोदन के पश्चात प्रमाणिकीकरण संस्था प्रमाण पत्र निर्गत करती है। भारत में जैविक प्रमाणिकीकरण मुख्यतः दो प्रकार से कराये जा सकते हैं – तृतीय पक्षीय प्रमाणिकीकरण तथा भागीदारी गारंटी प्रणाली।

1. **तृतीय पक्षीय प्रमाणीकरणः** तृतीय पक्षीय मूल्यांकन किसी भी प्रमाणिकीकरण संस्था द्वारा कराया गया प्रमाणिकीकरण है जिसमें किसान समूह प्रमाणिकीकरण संस्था को निर्धारित प्रमाणिकीकरण शुल्क अदा करता है।
2. **भागीदारी गारंटी प्रणालीः** विकासशील देश जैसे भारत, जहाँ कमजोर आर्थिक स्थिति वाले किसानों के जैविक उत्पाद को स्थानीय बाजारों में बेचने के लिए भागीदारी गारंटी प्रणाली प्रमाणिकीकरण का एक सस्ता एवं सरल माध्यम है। इस प्रणाली में किसान समूह स्वयं निरीक्षण कर यह सत्यापित करता है कि उसका उत्पाद पूर्णतः जैविक है। इस प्रणाली में किसान द्वारा एक आंतरिक नियंत्रण प्रणाली को लागू किया जाता है तथा एक किसान समूह दूसरे किसान समूह का निरीक्षण कर मापदण्डों का अवलोकन कर सत्यता को निर्धारित करता है। इस प्रकार से जैविक प्रमाणिकीकरण का व्यय कम होता है तथा किसान स्थानीय बाजार में अपना उत्पाद अच्छी कीमत पर बेच सकता है।

कृषि उत्पादन का जैविक प्रमाणिकीकरण की प्रक्रिया

यह प्रमाणित करता है कि खेती निर्धारित नियमों के अनुसार की गई है। यह उत्पादक और उपभोक्ता के बीच विश्वास पैदा करता है। यह उत्पादक को अपने उत्पाद का अधिक मूल्य दिलाने में सहायता करता है। सबसे पहले किसान को किसी मान्यता प्राप्त सर्टिफिकेशन एजेन्सी या संस्थान से जो कृषक समूहों का सर्टिफिकेशन करवाती है, के साथ अपना पंजीकरण करवाना होगा।

यह पंजीकरण पूर्णतः निःशुल्क होता है। पंजीकरण के लिए सभी स्थानीय भाषाओं में छपे हुए फार्म संस्था के कार्यालय में एवं अधिकृत प्रतिनिधियों के पास हर समय उपलब्ध रहते हैं। किसान को ऑर्गेनिक तौर–तरीकों से खेती की जानकारी तथा सर्टिफिकेशन एजेन्सी या संस्थान, किसान की फार्म यूनिट का डाक्यूमेन्टेशन तथा किसान की सहायता एवं फील्ड वर्कर सर्टिफिकेशन एजेंसी एवं किसान के बीच संवाद स्थापित करता है।

जैविक प्रमाणिकीकरण की कार्य पद्धति

इसके अंतर्गत क्षेत्र निरीक्षण तथा सूचनाओं का एकत्रीकरण, किसानों का चयन, किसानों के समूह गठन, किसानों का प्रशिक्षण, निरीक्षण प्रणाली की स्थापना एवं प्रशिक्षण, जैविक निविष्टि का वितरण, बाह्यनिरीक्षण, प्रमाणिकीकरण, मार्केट लिंकेज (जैविक उत्पाद बिक्री व्यवस्था) एवं इसके अंतर्गत नियंत्रण तथा बिक्री व्यवस्था एजेन्सी द्वारा की जाती है।

जैविक खेती के लाभ

जैविक खेती से मिट्टी की उर्वरा क्षमता बढ़ती है। जैविक खेती वाली फसल को स्वस्थ एवं विश्वसनीय माना जाता है एवं फसल का उचित मूल्य प्राप्त होता है। इससे उत्पादनों के निर्यात के अवसर का सृजन एवं अर्थव्यवस्था मजबूत होगी। इसमें खर्च कम होता है जिससे आमदनी में वृद्धि होती है। जैविक खेती से सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरण संरक्षण होता है। अतः वर्तमान समय में राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जैविक उत्पादों की तेजी से बढ़ती मांग को देखते हुए किसान उपरोक्त जैविक खेती कृषि तकनीकों का लाभ उठा सकते हैं। इसके अलावा वे स्वयं सहायता समूह बनाकर पशुधन प्रबंधन के साथ जैविक कृषि को अपना सकते हैं। साथ ही साथ साधारण किसान भी कम खर्च में जैविक उत्पाद प्रमाणिकीकरण व्यवस्था से अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

कृषि में सूचना प्रौद्योगिकी की महत्ता

हिमानी बिष्ट[1], शालू[1] एवं मनीषा टम्टा[2]

[1]भा. कृ. अनु. प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
[2]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

भारत में खाद्य सुरक्षा, पोषण सुरक्षा और टिकाऊ विकास एवं गरीबी उन्मूलन के लिए कृषि एक प्रमुख क्षेत्र है। यह सकल घरेलू उत्पाद का 18% लगभग योगदान देता है। भारत में कृषि विकास में हरित क्रांति, सदाबहार क्रांति, ब्लू क्रांति, श्वेत क्रांति, पीली क्रांति, जैव प्रौद्योगिकी क्रांति मील के पत्थर साबित हुए है, और सबसे हाल ही में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी क्रांति जो सटीक कृषि के लिए नए तरीकों जैसे कि कंप्यूटरीकृत खेती, उर्वरक और कीटनाशकों के लिए मशीनरी का समर्थन करता है। कृषि क्षेत्र के प्रमुख आईटी उपकरण में पर्सनल कंप्यूटर, मोबाइल टेलीफोन और अन्य दूरसंचार उपकरण शामिल हैं। प्रतिकूल मौसम की स्थिति संबंधित जानकारी, बाजार की जानकारी, सरकार के नीतियों और कार्यक्रमों की जानकारी, किसानों के लिए योजनाएं, अच्छी कृषि पद्धतियां, नए कृषि आदानों (उच्च उपज देने वाले बीज, नए उर्वरक आदि), मृदा प्रबंधन, जल प्रबंधन, बीज प्रबंधन, उर्वरक प्रबंधन, कीट प्रबंधन, हार्वेस्ट प्रबंधन और पोस्ट–हार्वेस्ट प्रबंधन की नई तकनीकों को सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से किसानों को प्रसारित किया जाता है।

खेती में आईटी का अधिक उन्नत उपयोगः

- **स्मार्ट फोन के माध्यम से सिंचाईः** सिंचाई प्रणाली की निगरानी और नियंत्रण में मोबाइल एक बड़ी भूमिका निभा रहा है। किसान फोन या कंप्यूटर से अपनी सिंचाई प्रणाली को नियंत्रित कर सकता है।
- **जमीन में नमी सेंसरः** यह सेंसरमिट्टी की कुछ गहराई पर मौजूद नमी के स्तर के बारे में जानकारी देने में सक्षम हैं। यह पानी और अन्य आदानों का अधिक सटीक नियंत्रण देता है जैसे उर्वरक जो सिंचाई धुरी द्वारा लागू किया जाता है।
- **जीपीएस मानचित्रणः** यह किसान को मिट्टी की आवश्यकता के अनुसार उन्हें उर्वरक या सिंचाई या अन्य कृषि सम्बंधितमदद प्रदान कर रही है। जीपीएस सक्षम सेवाएं उपज, नमी, फ़ील्ड ड्रेनेज आदि के बारे में खेत के नक्शे के दस्तावेज बनाने में भी मदद कर रही हैं।

तालिका 1: भारत में मौजूद मोबाइल–आधारित कृषि सलाहकार सेवाएं

क्र. सं.	कृषि सलाहकार सेवाएं
1	किसान सुविधा ऐप
2	इफको किसान कृषि ऐप
3	पूसा कृषि
4	एम किसान
5	एम कृषि
6	बेहतर जिंदगी
7	फार्मबी – आरएमएल फार्मर
8	एग्री एप
9	खेती बाड़ी
10	व्हाट्स एप
11	कृषि ज्ञान
12	फसल बीमा
13	एग्री मार्केट
14	किसान कॉल सेंटर (केसीसी)
15	कृषि–मौसमविद क्षेत्रीय इकाइयां और कृषि सलाहकार
16	उत्तर–पूर्व भारत में मोबाइल आधारित कृषि–सलाहकार प्रणाली (एम –4 कृषि)
17	किसान (कृषक सूचना प्रणाली सेवाएं और नेटवर्किंग) केरला
18	खेती (ज्ञान सहायता एक्सटेंशन प्रौद्योगिकी पहल) इलेक्ट्रॉनिक सॉल्यूशंस

क्र. सं.	कृषि सलाहकार सेवाएं
19	आईसीएआर–केवीके द्वारा किसान मोबाइल सलाहकार
20	चंबल फर्टिलाइजर्स एंड केमिकल्स लिमिटेड द्वारा नमस्ते उत्तम
21	कृषि मित्र
22	किसान सुविधा
23	किसानों के लिए बुद्धिमान सलाहकार प्रणाली (आईएडीएस)
24	लाइफलाइन इंडिया
25	महागरी एसएमएस
26	यूएएस धारवाड़ द्वारा होमामाना कृषि
	बीएसएनएल द्वारा डिजिटल मंडी
	आवाज कृषि विज्ञान केंद्र (वीकेवीके)
	इंटरएक्टिव सूचना प्रसार प्रणाली (आईआईडीएस)

किसान सुविधा ऐप (Kisan SuvidhaApp)

यह मोबाइल ऐप हिंदी, अंग्रेजी, पंजाबी, तमिल, गुजराती भाषाओं में उपलब्ध है। यह निम्न जानकारी प्रदान करता है:

- वर्तमान मौसम और अगले पांच दिनों के लिए पूर्वानुमान
- निकटतम शहर में वस्तुओं / फसलों के बाजार के बाजार मूल्य
- उर्वरक, बीज, मशीनरी, कृषि सलाहकार, पौधे संरक्षण, आईपीएम व्यवहार आदि पर ज्ञान
- निकटतम क्षेत्र में कमोडिटी के मौसम अलर्ट और बाजार मूल्य इत्यादि जानकारी

इफको किसान ऐप (IFFCO KisanApp)

"इफको किसान" नवीनतम मंडी कीमतों, मौसम पूर्वानुमान, कृषि सलाहकार, कृषि, पशुपालन, बागवानी से संबंधित सुझाव, खरीदार और विक्रेता मंच, और सभी कृषि संबंधी समाचार और सरकारी योजनाओं की जानकारी प्रदान करता है। यह ऐप किसानों की सुविधा के लिए 11 भारतीय भाषाओं में कृषि सलाह के साथ ही साथ कृषि संबंधी संवाद की जानकारी भी प्रदान करता है। इस ऐप के माध्यम से, किसान कृषि विशेषज्ञों से बात कर सकते हैं और एक क्लिक पर कृषि सलाह ले सकते हैं। यह उन किसानों के लिए भी बहुत उपयोगी है जिन्हें लिखने में कठिनाइ होती है,वे सिर्फ संयंत्र या संबंधित क्षेत्र / रोग की एक तस्वीर ले सकते हैं और इस एप्लिकेशन के माध्यम से इस समस्या का अध्ययन करने के लिए विशेषज्ञों को भेज सकते हैं। विशेषज्ञों तक पहुंच पाने के लिए किसान "इफको ग्रीन सिम कार्ड" के माध्यम से विशेष आईकेएसएल '534351' कृषि हेल्पलाइन सेवा का उपयोग कर सकते हैं और ऐप से किसान कॉल सेंटर सेवाओं की संख्या "18001801551" के लिए कनेक्टिविटी भी प्राप्त कर सकते हैं।

पूसा कृषि (Pusa Krishi)

यह ऐप 2016 में केंद्रीय कृषि मंत्री द्वारा शुरू किया गया था और इसका उद्देश्य किसानों को भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (आईएआरआई) द्वारा विकसित प्रौद्योगिकियों के बारे में जानकारी तथा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) द्वारा विकसित फसलों की नई किस्मों से संबंधित जानकारी प्राप्त करने में मदद करना है, जो कि किसानों को लाभ बढ़ाने में मदद करेगा।

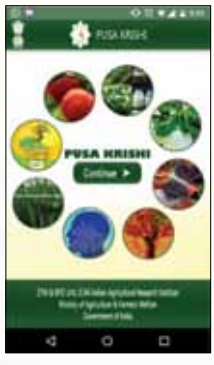

एम किसान (M Kisan)

सेवा प्रकार: एसएमएस, आईवीआर और मोबाइल वेब (वीडियो)

इस ऐप के अंदर निम्न जानकारी हैं:

- **कृषि संबंधी समाचार और अलर्ट:** ग्रामीण क्षेत्रों में सरकार या सहकारी योजनाओं के बारे में समाचार और अद्यतित सूचनाएं
- **कृषि:** फसल चक्र के विभिन्न चरणों को कवर करने वाली 50 से अधिक विभिन्न फसलों पर कृषि संबंधी सलाह

- **पशुधनः** पांच पशुधन प्रकारों के लिए भोजन, आवास, स्वच्छता और रोग प्रबंधन पर जानकारी
- **बाजार मूल्यः** चयनित फसलों के लिए बाजार मूल्य पर अद्यतित जानकारी
- **मौसमः** 1–5. दिन का मौसम पूर्वानुमान

बेहतर जिंदगी (Behtar Zindagi)

- **कवरेजः** 20 क्षेत्रीय भाषाओं में पैन इंडिया
- **सेवा प्रकारः** आवाज संदेशों को वितरित करने के लिए इंटरएक्टिव वॉयस रिस्पांस सिस्टम; किसान टोल फ्री नंबर (556780) के माध्यम से भी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।
- **सेवाएंः** मौसम पूर्वानुमान और सलाहकार, कृषि, पशुधन प्रबंधन और सलाहकार, अंतर्देशीय और तटीय मत्स्य पालन, मंडी मूल्य आदि।

फार्मबी – आरएमएल फार्मर (FarmBee & RML Farmer)

यह ऐप सरकार की कृषि नीतियों और योजनाओं के बारे में नवीनतम जानकारी, वस्तु और मंडी की कीमतों, कीटनाशकों और उर्वरक, खेत और किसान संबंधी समाचार, मौसम पूर्वानुमान और सलाहकार, कृषि सलाह और समाचार के बारे में जानकारी प्रदान करता है।

एग्रीएप (AgriApp)

यह फसल उत्पादन, फसल संरक्षण और अन्य सभी कृषि पद्धतियों पर पूरी जानकारी प्रदान करता है। यह किसानों को उच्च मूल्य, कम उत्पाद श्रेणी की किस्मों, मिट्टी / जलवायु, **कटाई** और भंडारण प्रक्रिया से संबंधित सभी सूचनाओं का उपयोग करने में सक्षम बनाता है। वीडियो आधारित शिक्षा, नवीनतम समाचार, उर्वरकों के लिए ऑनलाइन बाजार, कीटनाशकों आदि के साथही विशेषज्ञों से बातचीत करने का एक विकल्प भी इस ऐप पर उपलब्ध है।। griApp अब कन्नड़, अंग्रेजी, हिंदी, तेलगु, तमिल और मराठी भाषाओं में उपलब्ध है।

खेती–बाड़ी (Kheti & Badi)

खेती–बाड़ी एक सामाजिक पहल ऐप है, जिसका उद्देश्य भारत में किसानों से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारी / मुद्दों को बढ़ावा देना और 'जैविक खेती' को बढ़ावा देना है। प्राकृतिक खेती वर्तमान समय की आवश्यकता है क्योंकि कृषि आज आनुवंशिक रूप से संशोधित बीज, रासायनिक कीटनाशकों और उर्वरकों पर भारी निर्भर है; यह ऐप किसानों को अपने रासायनिक खेती को जैविक खेती में बदलने में मदद करता है। यह ऐप वर्तमान में चार भाषाओं (हिंदी, अंग्रेजी, मराठी और गुजराती) में उपलब्ध है।

वाट्सएप (WhatsApp)

यह कई लोगों के लिए यह एक आश्चर्य हो सकता है, लेकिन यह ऐप सबसे व्यापक रूप से इस्तेमाल किए जा रहे ऐप में से एक है और किसानों के बीच बहुत प्रचलित हो रहा है। कुछ राज्यों के कृषि विभागों ने इस ऐप का इस्तेमाल प्रगतिशील किसानों के समूह बनाने के लिए किया है जो कि किसानों को आपस में तथा शीर्ष अधिकारियों से जोड़ता है।

कृषि ज्ञान (Krishi Gyan)

यह ऐप भारतीय किसानों को कृषि विशेषज्ञों के साथ जुड़ने और कृषि से संबंधित अपने प्रश्न पूछने और सूचना के माध्यम से उत्तर प्राप्त करने में सक्षम है।

किसान और कृषि उत्साही भी एक दूसरे के साथ अपने उत्तर साझा कर सकते हैं।

फसल बीमा (Crop Insurance)

फसल बीमा मोबाइल ऐप का इस्तेमाल क्षेत्र, कवरेज राशि और ऋण राशि, ऋणदाता किसान के मामले में कट–ऑफ के आधार पर अधिसूचित फसलों के लिए बीमा प्रीमियम की गणना के लिए किया जा सकता है। इसका इस्तेमाल किसी भी अधिसूचित क्षेत्र में किसी भी फसल की सामान्य बीमा राशि, विस्तारित बीमा राशि, प्रीमियम विवरण और

सब्सिडी की जानकारी के लिए भी किया जा सकता है। इसके आगे यह अपने वेब पोर्टल से जुड़ा हुआ है जिसमें किसानों, राज्यों, बीमा कंपनियों और बैंकों सहित सभी हितधारकों की जानकारी है।

एग्रीमार्केट (Agrimarket)

एग्रीमार्केट मोबाइल ऐप का उपयोग उपकरण के स्थान के 50 किलोमीटर के भीतर बाजारों में फसलों का बाजार मूल्य प्राप्त करने के लिए किया जा सकता है। यह ऐप स्वचालित रूप से मोबाइल जीपीएस का इस्तेमाल करके व्यक्ति के स्थान को कैप्चर करता है तथा उन बाजारों में फसल का बाजार मूल्य प्राप्त करता है जो कि 50 किमी की सीमा के भीतर आते हैं। यदि कोई व्यक्ति अपने स्थान के जीपीएस का उपयोग नहीं करना चाहता है तो किसी भी बाजार और किसी भी फसल की कीमत प्राप्त करने का दूसरा विकल्प भी मौजूद है।

किसान कॉल सेंटर (केसीसी):

यह एक विशेषज्ञ सलाहकार प्रणाली है जिसमें किसानों को टोल फ्री नंबर 1800–180–1551 के माध्यम से कृषि और संबद्ध क्षेत्रों से संबंधित विभिन्न मामलों पर विशेषज्ञ सलाह दी जाती है।

कृषि–मौसमविद क्षेत्रीय इकाइयां और कृषि सलाहकार

पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय द्वारा स्थापित।MFU जिलावार कृषि सलाह तैयार करता है। ये इकाइयां आईएमडी से अनुदान सहायता प्रदान करके राज्य कृषि विश्वविद्यालयों (एसएयू), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर), भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) में काम कर रही हैं। संबंधित विश्वविद्यालय ने नोडल अधिकारी और तकनीकी अधिकारियों को नियुक्त किया है, जो पहले से ही इन इकाइयों में बनाए गए विशेषज्ञों के पैनल के परामर्श से कृषि सलाहकार बुलेटिन तैयार करते हैं। कृषि बुलेटिनों में खेत की फसलों, बागवानी फसलों और पशुधन आदि पर विशेष सलाह शामिल है, जिन पर किसानों को कार्य करने की आवश्यकता है। इसकी आवृत्ति सप्ताह में दो बार मंगलवार और शुक्रवार है। 130 एएमएफयू द्वारा जनरेट किए गए एग्रोमेट जिला परामर्श, किसानों को बड़े पैमाने पर मीडिया (रेडियो, प्रिंट और टीवी), इंटरनेट आदि के माध्यम से प्रसारित किया जा रहा है। लघु संदेश सेवा (एसएमएस), आवाज संदेश और आईएमडी, एसएयू, आईसीएआर के वेब पेज द्वारा भी जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

स्मार्ट जल प्रबंधन हेतु आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस तकनीकों का उपयोग

सोनका घोष, पवन जीत, अनिल कुमार सिंह एवं शिवानी

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

कृषि में पानी की बढ़ती कमी और उसका प्रभाव

कृषि उत्पादन पानी पर निर्भर है और पानी के जोखिमों के प्रति अधिक संवेदनशील होता जा रहा है। इस प्रकार कृषि जल प्रबंधन में सुधार उत्पादक और टिकाऊ कृषि–खाद्य क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण है। विश्व बैंक के अनुसार, दुनिया भर में कुल जल निकासी का लगभग 70 प्रतिशत कृषि खाता है। साथ ही, सिंचाई प्रदर्शन संकेतकों की अक्षमता के कारण बड़ी मात्रा में सिंचाई का पानी बर्बाद हो जाता है। अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुसार, यदि प्रति व्यक्ति पानी की उपलब्धता 1700 मीटर^3 और 1000 मीटर^3 के नीचे आती है, तो एक देश को क्रमशः पानी की कमी और पानी की कमी के रूप में सूचीबद्ध किया जाता है। भारत 1544 मीटर^3 पानी की उपलब्धता के साथ पानी की कमी वाले देश में बदल गया है और पानी की कमी वाले देश में बदलने की ओर बढ़ रहा है। ओईसीडी के पर्यावरणीय दृष्टिकोण 2050 के अनुसार, भारत को 2050 तक पानी की गंभीर कमी का सामना करना पड़ेगा। पानी का उपयोग और वितरण अक्षम और असमान रूप से किया जाता है। भारत का 54 प्रतिशत पहले से ही मध्यम से गंभीर जल संकट का सामना कर रहा है। समग्र जल प्रबंधन सूचकांक (सीडब्ल्यूएमआई) के अनुसार, देश के 21 शहरों में जल्द ही पानी की भारी कमी होगी। भविष्य के जल जोखिम वाले हॉटस्पॉट के ओईसीडी आकलन के अनुसार, अगर कुछ नहीं किया जाता है, तो पूर्वोत्तर चीन, उत्तर–पश्चिम भारत और दक्षिण–पश्चिम संयुक्त राज्य घरेलू और वैश्विक नतीजों के साथ सबसे गंभीर रूप से प्रभावित क्षेत्रों में से होंगे। इन जल चुनौतियों का कृषि पर एक महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ने की उम्मीद है, जो पानी पर बहुत अधिक निर्भर है , विशेष रूप से कुछ देशों और क्षेत्रों में वर्षा आधारित और सिंचित फसलों के साथ–साथ पशुधन गतिविधियों की उत्पादकता को कम करता है। इन परिवर्तनों का बाजारों, व्यापार और समग्र खाद्य सुरक्षा पर और भी अधिक प्रभाव पड़ सकता है। पौधे की वृद्धि जड़ क्षेत्र में हरे पानी की उपलब्धता से निर्धारित होती है। कमी की स्थिति में हरित जल सुरक्षा प्राप्त करने के लिए, सिंचाई के माध्यम से नीला पानी जोड़ा जा सकता है। जल की कमी मानव स्वास्थ्य, खाद्य आपूर्ति, ऊर्जा आपूर्ति और औद्योगिक उत्पादन के लिए जल आपूर्ति को जटिल बनाकर जल सुरक्षा में बाधा डालती है। कृषि उद्योग जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप जल जोखिमों का सामना करता है और योगदान देता है और बाद में बाढ़ और उष्णकटिबंधीय तूफान से लेकर सूखे और घटते भूजल भंडार तक की आपदा घटनाओं में वृद्धि होती है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोग कर स्मार्ट जल प्रबंधन

पानी की खपत को कम करने का महत्व महत्वपूर्ण है, विशेष रूप से यह देखते हुए कि कृषि का अनुमान वैश्विक जल उपयोग के 70 प्रतिशत से अधिक के लिए है। केवल खाद्य की मांग बढ़ने के साथ, इस मांग को पूरा करने के लिए पानी के उपयोग में 15 प्रतिशत की वृद्धि होने की उम्मीद है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई), मशीन लर्निंग (एमएल), और इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) सेंसर ने हाल ही में उद्योगों को उनकी विविध क्षमताओं के साथ बाधित किया है, जिसमें मानव बुद्धि को बढ़ाना और भारी मात्रा में डेटा को संसाधित करना शामिल है। एआई ने फसलों को जलवायु परिवर्तन, जनसंख्या वृद्धि और खाद्य सुरक्षा मुद्दों जैसे विभिन्न कारकों से बचाया है, और यह कृषि जल दक्षता में सुधार करने में अधिक से अधिक प्रगति कर रहा है। एआई–पावर्ड उपकरण और मशीनों ने आज की कृषि प्रणाली को नई ऊंचाइयों तक पहुंचाया है। इस तकनीक ने वास्तविक समय में फसल उत्पादन, कटाई,

प्रसंस्करण और विपणन में सुधार किया है। नवीनतम स्वचालित प्रणाली प्रौद्योगिकियों, जैसे कि कृषि रोबोट और ड्रोन, ने कृषि–आधारित क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। एआई तकनीक मौसम और अन्य कृषि स्थितियों जैसे भूमि की गुणवत्ता, भूजल, फसल चक्र, कीट हमले आदि की भविष्यवाणी करने में उपयोगी होगी। स्मार्ट सिंचाई पानी के उपयोग को कम करती है, मानव प्रयास को कम करती है, मिट्टी की विशेषताओं के बारे में एक एकीकृत दृष्टिकोण प्रदान करती है, और पैसे की बचत करते हुए दीर्घकालिक परिदृश्य स्वास्थ्य में सुधार करती है। इन लाभों को प्राप्त करने के लिए, विभिन्न प्रकार की जल सिंचाई प्रणाली जैसे स्प्रिंकलर सिंचाई, केंद्र धुरी सिंचाई, ड्रिप और सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली बड़े पैमाने पर आईओटी सेंसर और एआई सिस्टम का उपयोग करती हैं। आईओटी सेंसर तकनीक में सफलता मिट्टी और मौसम के अलावा पौधों के व्यवहार को मापकर अधिक सटीक सिंचाई निर्णय लेने में सक्षम बनाती है।

चित्र 1. कृषि में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का अनुप्रयोग
(स्रोतः रेड्डु एट अल, 2022)

सैटेलाइट, प्लेन या ड्रोन इमेजरी से डेटा फीड को शक्तिशाली एआई इंजन द्वारा संसाधित और विश्लेषण किया जा सकता है। डीप–लर्निंग एल्गोरिदम, विशेष रूप से, छवियों से डेटा की व्याख्या करने और सिंचाई के मुद्दों को उजागर करने वाले पैटर्न की पहचान करने में हमारी सहायता कर सकते हैं। जब इमेजरी को मिट्टी और पौधे–आधारित सेंसर के साथ जोड़ा जाता है, तो डेटा हमें संभावित समस्याओं के प्रति सचेत करते हुए वास्तविक समय में सिंचाई की जरूरतों का एक अत्यंत सटीक पठन प्रदान कर सकता है। इस तकनीक का उपयोग अन्य कृषि संबंधी प्रक्रियाओं जैसे कि निषेचन और फसल संरक्षण में भी किया जाएगा। वास्तविक समय में पानी के नुकसान का विश्लेषण करने के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता को लागू करना और जब भी कोई रिसाव हो तो पाइप को स्वचालित रूप से बंद करना पानी की बर्बादी को कम करने में मदद कर सकता है। एआई भंडारण टैंकों में लीक की भविष्यवाणी कर सकता है और बहुत देर होने से पहले उनकी मरम्मत में सहायता कर सकता है। एआई का उपयोग जल उपचार संयंत्रों को डिजाइन करने और जल संसाधनों की स्थिति निर्धारित करने के लिए किया जा सकता है। जल प्रबंधक और सरकारी एजेंसियां एआई का उपयोग एक स्मार्ट जल प्रणाली बनाने के लिए कर सकती हैं जो जल प्रबंधन के लिए कुशल बुनियादी ढांचे के निर्माण और बदलती परिस्थितियों के अनुकूल होने में सक्षम हो। एआई तकनीक कृषि में सीमित जल संसाधनों के अधिक कुशल उपयोग की अनुमति देती है, जिसके परिणामस्वरूप कम लागत और किसानों के लिए उच्च आय होती है। एआई में विभिन्न जल–बचत प्रौद्योगिकियां शामिल होनी चाहिए, जैसे कि जल परिवहन हानि को कम करने के लिए उचित सिंचाई प्रणाली डिजाइन और स्प्रिंकलर और ड्रिप सिंचाई प्रणाली जैसी जल–बचत प्रौद्योगिकियों को अपनाना। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस तकनीकों के साथ–साथ, नई कृषि संबंधी प्रथाएं जैसे कि उठी हुई क्यारी रोपण, रिज–फ़रो बुवाई, उपसतह सिंचाई, और सटीक खेती जल संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण अवसर प्रदान कर सकती है। जल उद्योग थिंक टैंक ग्लोबल वाटर इंटेलिजेंस के अनुसार, अगले दशक में स्मार्ट जल प्रौद्योगिकियों को अपनाने से संभावित बचत औसत जल उपयोगिता के कुल वार्षिक व्यय का लगभग 11 प्रतिशत हो सकती है।

जल उपयोग दक्षता बढ़ाने के लिए आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का अनुप्रयोग

एआई एनालिटिक्स के माध्यम से जल प्रबंधन निर्णयों में सुधार

भारत समेत कई देश फसल उत्पादन के लिए मानसूनी बारिश पर निर्भर हैं। वे विशेष रूप से वर्षा आधारित कृषि के लिए विभिन्न विभागों के मौसम पूर्वानुमानों पर बहुत अधिक निर्भर करते हैं। एआई–

आधारित कृषि प्रणालियाँ जो उपग्रह इमेजरी, तापमान, आर्द्रता, जलवायु और मौसम की भविष्यवाणियों जैसे विभिन्न डेटा सेटों का उपयोग करती हैं, एक नए सिंचाई स्वचालन नियंत्रण के विकास में सहायता कर सकती हैं। इससे किसानों को बेहतर जल प्रबंधन निर्णय लेने, कम पानी बर्बाद करने और ऊर्जा की बचत करने में मदद मिलेगी। आधुनिक उपग्रह इमेजरी, मौसम पूर्वानुमान, और रिमोट सेंसिंग साइट–विशिष्ट अंशांकन की आवश्यकता के बिना दैनिक वर्षा और संभावित वाष्पीकरण के आकलन और सुधार में किसानों की सहायता करते हैं। जीआईएस–आधारित प्रणाली के डेटा के साथ संयुक्त मौसम सेंसर भी अधिक सटीक जल भविष्यवाणियों के निर्माण में सहायता कर सकते हैं। डीप–लर्निंग द्वारा संचालित आईओटी नियंत्रित पंप संचालन में इष्टतम, साइट–विशिष्ट संचालन को सक्षम करने की क्षमता है। डॉ टोफेल अहमद (एसोसिएट प्रोफेसर, सुकुबा विश्वविद्यालय, जापान) के अनुसार थर्मल इमेजरी, ड्रोन का उपयोग करके फ़ील्ड से छवियों को एकत्र किए जाने पर नमी की मात्रा निर्धारित करने का एक आशाजनक तरीका है। ऑर्थोमोसिक डेटासेट के साथ थर्मल इमेज प्रोसेसिंग का उपयोग जल–तनाव मानचित्र बनाने के लिए किया जा सकता है, जो उन क्षेत्रों की पहचान करने में सहायता करता है जहां फसलों में पर्याप्त पानी की कमी होती है।

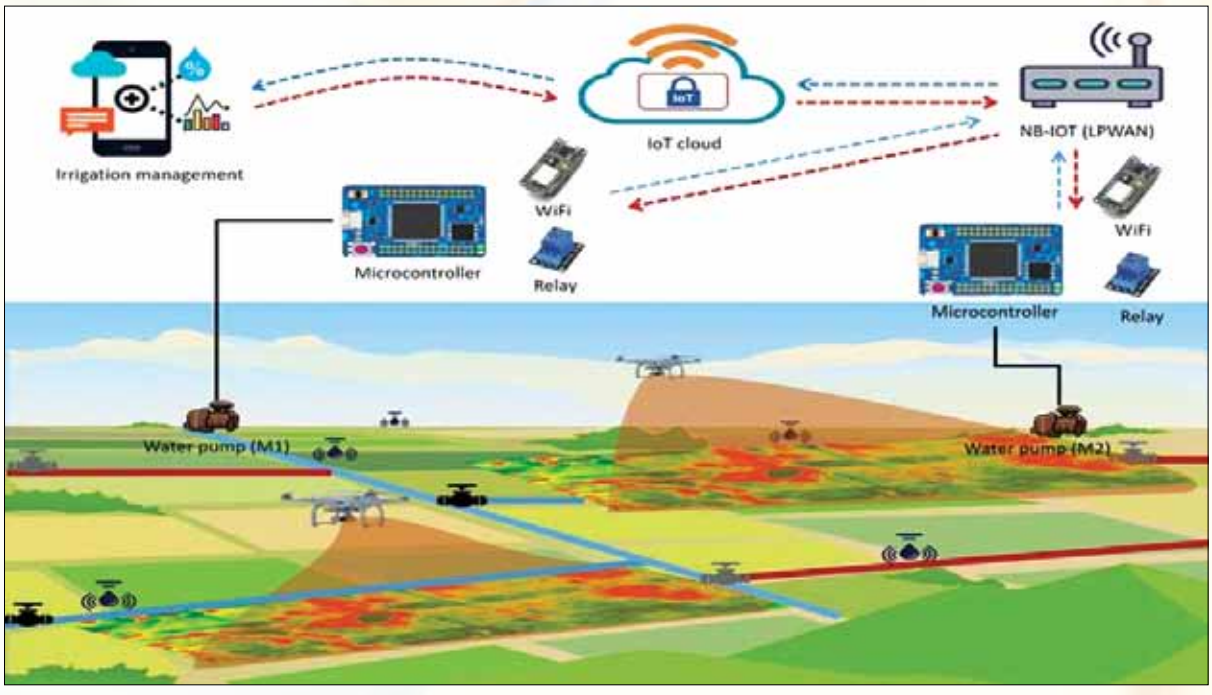

चित्र 2. सिंचाई प्रबंधन के लिए पंप संचालन के लिए डीप–लर्निंग आईओटी आधारित प्रणाली (स्रोतः अहमद, 2019)

एआई का उपयोग करके सिंचाई की खराबी का पता लगाना

दुनिया भर के किसानों और खाद्य उत्पादकों के लिए पानी की बर्बादी एक बहुत बड़ा खर्च है, खासकर उन क्षेत्रों में जहां पानी की कमी है। एआई का उपयोग सिंचाई प्रणाली की खराबी जैसे लीक का पता लगाने के लिए मैन्युअल निरीक्षण की आवश्यकता के बिना किया जा सकता है। एक सिंचाई सेंसर एक अनियमितता का पता लगा सकता है और इसे मूल कारण या चर से जोड़ सकता है, खासकर अगर यह अन्य डेटा बिंदुओं जैसे कि मौसम डेटा से जुड़ा हो, जो इसे अन्य संभावित कारणों को रद्द करने की अनुमति देता है। एआई सेंसर का उपयोग करके, स्मार्ट फार्म लीक को कम करने और पौधों की स्थिति और उनकी पानी की जरूरतों को निर्धारित करने के लिए मिट्टी का विश्लेषण करने में सक्षम होंगे।

सेंसर–आधारित एआई के माध्यम से सिंचाई शेड्यूलिंग का अनुकूलन

एआई फसलों के लिए इष्टतम सिंचाई शेड्यूलिंग की अनुमति देता है, जो न केवल उपज और गुणवत्ता को अनुकूलित करता है बल्कि पानी के उपयोग को भी नियंत्रण में रखता है। मिट्टी आधारित सेंसर का उपयोग प्रासंगिक डेटा जैसे वॉल्यूमेट्रिक पानी की मात्रा, लवणता और अन्य महत्वपूर्ण मापदंडों को एकत्र करने के लिए

किया जा सकता है, जिनका उपयोग मिट्टी की जरूरतों में त्वरित अंतर्दृष्टि प्राप्त करने और वास्तविक समय में सिंचाई आवश्यकताओं की भविष्यवाणी करने के लिए किया जा सकता है। मृदा नमी सेंसर मिट्टी की नमी को मापने के लिए कई तकनीकों में से एक का उपयोग करते हैं। इसे फसल जड़ क्षेत्रों के पास दफनाया जाता है। सेंसर नमी के स्तर को सटीक रूप से निर्धारित करने और इस रीडिंग को सिंचाई के लिए नियंत्रक को प्रेषित करने में सहायता करते हैं। मृदा नमी सेंसर भी बहुत सारे पानी को बचाने में मदद कर सकते हैं। संयंत्र आधारित सेंसर पौधे की जल स्थिति की निगरानी भी कर सकते हैं। इस प्रकार, कृषि में कृत्रिम बुद्धिमता क्षेत्र में जल स्तर को समझने और अधिकतम सकारात्मक परिणामों के लिए सिंचाई शेड्यूलिंग गतिविधियों को उचित रूप से अनुकूलित करने में काफी उपयोगी हो सकती है।

भूजल स्तर का पता लगाना

सिंचाई के लिए भूजल पंपिंग एक्वीफर्स को कम कर देता है और इसके परिणामस्वरूप नकारात्मक पर्यावरणीय बाहरी परिणाम हो सकते हैं, जिससे इस क्षेत्र और उससे आगे के लिए महत्वपूर्ण आर्थिक परिणाम हो सकते हैं। एआई सिस्टम भूजल स्तर का पता लगा सकते हैं और स्प्रिंकलर सिस्टम का मार्गदर्शन करके पानी के उपयोग को संतुलित करने के लिए कृषि जरूरतों का अनुमान लगा सकते हैं। स्मार्ट इरीगेशन पानी की खपत को कम करने के लिए एआई सिस्टम का उपयोग करेगा जबकि अपशिष्ट से बचने के लिए जल संसाधनों का अनुकूलन भी करेगा।

एआई का उपयोग करके अपशिष्ट जल उपचार

एआई का उपयोग जल प्रदूषण और स्वच्छ पानी की कमी को कम करने के लिए किया जा सकता है। क्योंकि एआई प्रकाशिकी पर आधारित है, यह जहरीले संदूषकों की मात्रा और संरचना का पता लगा सकता है, जो अपशिष्ट प्रबंधन प्रणालियों की दक्षता में सुधार कर सकता है। पानी की गुणवत्ता की लगातार निगरानी की जा सकती है, और मशीन लर्निंग और बिग डेटा का उपयोग करके गुणवत्ता पर रीयल–टाइम डेटा प्राप्त किया जा सकता है। तंत्रिका नेटवर्क और आईओटी के कारण ऊर्जा की लागत कम हो जाएगी।

निष्कर्ष

जल संसाधन प्रबंधन में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के अनुप्रयोग ने लागत प्रभावी जल वितरण और जल–बचत प्रणालियों का मार्ग प्रशस्त किया है। इसके अलावा, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस विषम व्यवहार और रोबो–शिकारी का पता लगाने के लिए व्यवहार विश्लेषण के साथ संयुक्त गहन शिक्षण एल्गोरिदम को नियोजित करके साइबर सुरक्षा के लिए बार बढ़ा रही है। हाइब्रिड आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस मॉडल दुनिया भर में जल प्रणालियों के सुधार में सहायता कर सकते हैं। इस तरह के एक मूल्यवान संसाधन के सतत उपयोग में योगदान करने के लिए, वैज्ञानिकों और विश्लेषकों को वैश्विक स्तर पर सहयोग करना चाहिए। देश में व्यक्तियों को जल संसाधनों के जिम्मेदार उपयोग के बारे में भी शिक्षित किया जाना चाहिए।

आई ओ टी आधारित स्मार्ट कृषि प्रणाली

**मणिभूषण, आशुतोष उपाध्याय, अनिल कुमार सिंह,
अकरम अहमद एवं आरती कुमारी**

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

सारांश

कृषि मानव जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखता है और इसमें आईओटी तकनीक का उपयोग करके उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। आईओटी कृषि में स्वचालन एवं स्मार्ट प्रणाली की शक्ति को बढ़ाने के लिए एक तकनीक प्रदान करती है। स्मार्ट कृषि प्रणाली जो अरुडिनो और वायरलेस सेंसर नेटवर्क जैसी अत्याधुनिक तकनीकों के लाभों का उपयोग करती है। यह लेख कृषि के लिए आई ओ टी (इंटरनेट ऑफ थिंग्स) में सेंसर की अवधारणा और विशेषताओं को दर्शाता है जिसका उपयोग फसलों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए किया जाता है। इस लेख के माध्यम से कृषि कार्य अरुडिनो/ रास्पबेरी पाई सेंसर बोर्ड तकनीक के साथ एकीकृत है और विभिन्न संवेदक (सेंसर) के साथ मिश्रित है जिन्हें मोबाइल फोन के माध्यम से लाइव डेटा फीड ऑनलाइन प्राप्त की जा सकती है। इस लेख की विशेषता में एक ऐसी प्रणाली का विकास शामिल है जो तापमान, आर्द्रता, नमी और यहां तक कि जानवरों की आवाजाही की निगरानी अरुडिनो बोर्ड का उपयोग करके सेंसर के माध्यम से कर सकती है। इस तरह आईओटी तकनीक का उपयोग करके कम लागत में कृषि उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है और ऊर्जा की भी बचत की जा सकती है।

परिचय

इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) भौतिक वस्तुओं का एक नेटवर्क है जो इन्टरनेट पर थिंग्स/ चीजे प्रदान करने के उद्देश्य से अन्य उपकरणों, सिस्टम और डेटा को जोड़ने के साथ सेंसर, सॉफ्टवेर और अन्य तकनीकों के साथ जुदा रहता है। इंटरनेट ऑफ थिंग्स में वस्तुओं को एक नेटवर्क के द्वारा इन्टरनेट के माध्यम से जोड़ा जाता है। ये वस्तुएं या चीजे मानवीय संपर्क के बिना वायरलेस तरीके से जानकारी स्थानांतरित कर सकती हैं। यह चीज कोई भी वस्तु व्यक्ति, कंप्यूटर या मोबाइल हो सकती है जिसे एक आईपी दिया जा सकता है और उसे एक नेटवर्क पर स्थानांतरित करने की क्षमता प्रदान की जा सकती है। इंटरनेट ऑफ थिंग्स एक आर्किटेक्चर है जिसमें विशेष हार्डवेयर बोर्ड, सॉफ्टवेयर सिस्टम, वेब एपीआई, प्रोटोकॉल शामिल हैं जो एक साथ एक सहज वातावरण बनाता है जो स्मार्ट एम्बेडेड उपकरणों को इंटरनेट से जोड़ने की अनुमति देता है ताकि संवेदी डेटा तक पहुँचा जा सके और नियंत्रण प्रणाली/ कन्ट्रोल को ट्रिगर किया जा सकता है। साथ ही वाईफाई, ईथरनेट आदि विभिन्न माध्यमों का उपयोग करके उपकरणों को इंटरनेट से जोड़ा जा सकता है। इंटरनेट ऑफ थिंग्स के लिए प्रोग्रामिंग कोड लिखने के लिए जावा, सी, सी++, जावास्क्रिप्ट और पायथन शीर्ष पांच कंप्यूटर लैंग्वेज है।

सामग्री और तरीके

आईओटी सिस्टम के बुनियादी निर्माण खंड सेंसर, प्रोसेसर और एप्लिकेशन हैं। नीचे दिया गया ब्लॉक आरेख हमारी परियोजना का प्रस्तावित मॉडल है जो इन ब्लॉकों के अंतर्संबंध को दर्शाता है। सेंसर माइक्रोकंट्रोलर के साथ जुड़े हुए होते हैं एवं सेंसर से डेटा उपयोगकर्ता के मोबाइल ऐप पर प्रदर्शित होता है। एक मोबाइल ऐप सेंसर से निरंतर डेटा तक पहुंच प्रदान करता है और तदनुसार किसान को मिट्टी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कार्रवाई करने में मदद करता है। खेती एक श्रमसाध्य कार्य है जिसमें बहुत समय और प्रयास की आवश्यकता होती है। किसान इन श्रम–गहन कार्यों को रोबोटिक्स और स्वचालन–आधारित समाधानों के द्वारा कर सकते हैं। इस तरह के समाधान बीज बोने और पानी देने से लेकर कटाई और छंटाई तक के कार्य कर सकते हैं। आखिरकार, इस प्रौद्योगिकी एकीकरण के

परिणामस्वरूप न्यूनतम संसाधन अपव्यय के साथ उच्च उत्पादकता प्राप्त की जा सकती है। रोबोटिक मशीनरी कृषि मशीनरी को मदद करती है। यह बुवाई, कटाई और अन्य सेवाओं के लिए उपयोगी है और मानवीय त्रुटियों से बचने में मदद करता है। खेत में कीटनाशक छिड़काव, कटाई, खेती और ऐसी अन्य गतिविधियों के लिए रोबोट सिस्टम का उपयोग किया जा सकता हैं।

आईओटी के स्टेज/ चरण

आईओटी आर्किटेक्चर के चार स्टेज/ चरण हैं:

1. सेंसर और एक्चुएटर्स का उपयोग। आईओटी आर्किटेक्चर का पहला चरण पर्यावरण में भौतिक परत की स्थापना से संबंधित है।
2. इंटरनेट गेटवे जो लेयर्स/ परतों और डेटा प्राप्ति का उपयोग करता है।
3. एज सूचना प्रौद्योगिकी।
4. क्लाउड एनालिटिक्स और डेटा सेंटर का उपयोग

आई ओ टी डिवाइस और कार्य

इंटरनेट ऑफ थिंग्स परस्पर संबंधित कंप्यूटिंग उपकरणों, यांत्रिक और डिजिटल मशीनों, वस्तुओं, जानवरों या लोगों की एक प्रणाली है जिसे विशिष्ट पहचानकर्ता (यूआईडी) प्रदान की जाती है जिसमे मानव के बिना नेटवर्क पर डेटा स्थानांतरित करने की क्षमता होती है।

आईओटी हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर एप्लीकेशन

आई ओ टी क्लाउड सेवाओं के रूप में लोगों, कंप्यूटरों, मोबाइल, सेंसर और सॉफ़्टवेयर से जुड़ा होता है (चित्र 1)

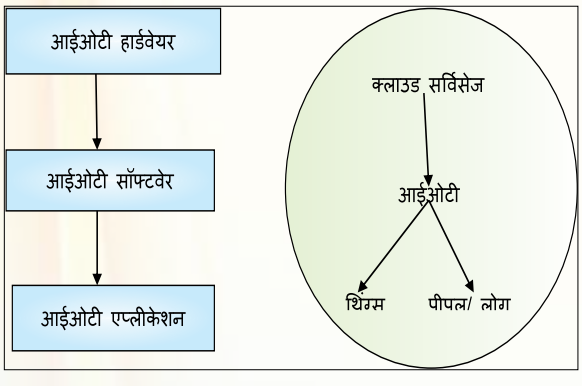

चित्र संख्या 1: आईओटी कंपोनेंट्स/ अंग

आईओटी संरचना/ आर्किटेक्चर

आईओटी संरचना/ आर्किटेक्चर में मुख्य रूप से नेटवर्क इंफ्रास्ट्रक्चर, थिंग्स, गेटवे और क्लाउड इंफ्रास्ट्रक्चर शामिल होते है (चित्र संख्या 2)

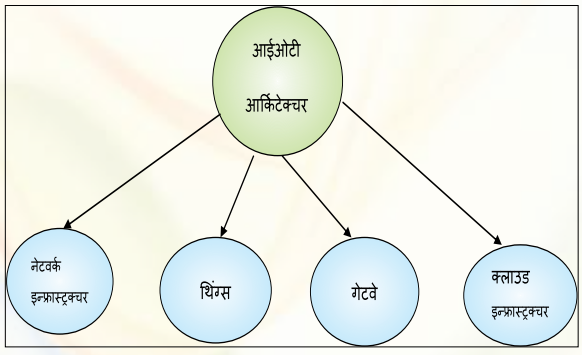

चित्र संख्या 2: आईओटी संरचना/ आर्किटेक्चर

आईओटी में इकाइयाँ

प्रसंस्करण/ प्रोसेसिंग इकाई

अरुडिनो और रास्पबेरी पाई सबसे अच्छे आ. ईओटी बोर्ड हैं, जिन पर कई एप्लिकेशन निष्पादित किए जा सकते हैं। प्रत्येक बोर्ड की एक दूसरे पर अपनी विशेषताएं, फायदे और नुकसान होते हैं।

सेंसिंग यूनिट

आमतौर पर दो उप इकाइयाँ बनती हैं: सेंसर और एनालॉग–टू–डिजिटल कन्वर्टर्स (एडीसी)। सेंसर द्वारा उत्पादित एनालॉग सिग्नल को एडीसी द्वारा डिजिटल सिग्नल में बदल दिया जाता है, और प्रोसेसिंग यूनिट में फीड किया जाता है।

नियंत्रण इकाई (कंट्रोलिंग यूनिट)

अर्दुइनो उनो और रस्पेबेरी पाई उपयोग में आसान हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर पर आधारित ओपन–सोर्स इलेक्ट्रॉनिक्स प्लेटफॉर्म हैं। प्रसंस्करण प्रोसेसिंग पैर आधारित अर्दुइनो भाषा/ लैंग्वेज और सॉफ़्टवेयर आईडीइ का उपयोग कार्यान्वयन के लिए किया जाता है। सेंसर द्वारा महसूस की गई नमी और तापमान को अर्दुइनो उनो और रस्पेबेरी पाई माइक्रोकंट्रोलर में संदाधित/ सेंस्द किया जाता है। जब मान थ्रेशोल्ड मान से परे होता है तो नियंत्रक परिभाषित कार्य करता है।

परिणाम और चर्चा

कृषि में आईओटी

कृषि में आईओटी फसल जल प्रबंधन जैसी गतिविधियों के प्रबंधन और नियंत्रण के माध्यम से फसल उत्पादकता बढ़ाने में मदद करता है। पर्याप्त पानी की आपूर्ति कृषि के लिए एक जरूरत है जबकि पानी की अधिकता या कमी की स्थिति में फसलों को नुकसान हो सकता है। आईओटी एक महत्वपूर्ण टूल साबित हो सकता है क्योंकि यह जल संसाधन की बर्बादी को रोकता है और सीमित जल आपूर्ति को स्मार्ट तरीके से प्रबंधित करता है।

कृषि में इंटरनेट ऑफ थिंग्स का उपयोग निस्संदेह बढती जनसंख्या की भोजन आपूर्ति का सबसे आसान एवं आधुनिक तरीका है। यह बढ़ती आबादी को स्थायी रूप से भोजन दिलाने के कुछ यथार्थवादी तरीकों में से एक है। आईओटी फसल की निगरानी को बढ़ाता है और प्रत्यारोपण की अधिकतम शक्ति पर फसलों का उत्पादन करता है। इस आधुनिक दुनिया में इंटरनेट ऑफ थिंग्स और जुड़े उपकरणों के प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता है। आज यह घर से लेकर स्वास्थ्य क्षेत्र, स्मार्ट सिटी, फिटनेस से लेकर औद्योगिक क्षेत्र, कृषि तक लगभग हर जगह पहुंच गया है। इसकी उपस्थिति अधिकांश उद्योगों में देखी जा सकती है, और कृषि का क्षेत्र अलग नहीं है। आईओटी और जुड़े उपकरणों का खेती के तरीकों पर अविश्वसनीय प्रभाव पड़ता है, इसलिए किसानों को अब घोड़ों और बैलों पर निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं होगी। आईओटी उपभोक्ता से जुड़े उपकरणों के रूप में बहुत लोकप्रिय है। खेती में आईओटी की भूमिका उच्च उत्पादन के कारक को कम दर से उच्च दर तक ले जाती है और अच्छी खेती का परिणाम बन जाती है और यह तकनीक किसानों के मुनाफे के लिए कार्य करता है।

कृषि कार्यों में इंटरनेट ऑफ थिंग्स प्रौद्योगिकी का एकीकरण स्वचालन के साथ मैनुअल श्रम की आवश्यकता को कम करता है, दूरस्थ और वास्तविक समय की निगरानी के साथ मशीनरी कमांड को तेज करता है, और साथ ही, यह किसानों को एहतियाती रखरखाव और पर्यावरण भविष्यवाणी के साथ संसाधनों का अधिक कुशलता से उपयोग करने की क्षमता प्रदान करता है। एक बार कृषि क्षेत्र में इन प्रगतियों को लागू करने के बाद, वे निश्चित रूप से राजस्व में वृद्धि करेंगे और किसानों को अधिक जमीन का प्रबंधन करने में सक्षम बनाएंगे। स्मार्ट कृषि प्रौद्योगिकी किसानों को फसल उगाने और पशुधन पालन की प्रक्रिया पर बेहतर नियंत्रण रखने में सक्षम बनाती है। इस तरह यह बड़े पैमाने पर दक्षता लाता है, लागत में कटौती करता है, और पानी जैसे दुर्लभ संसाधनों को बचाने में मदद करता है। किसान और उत्पादक कचरे का उपयोग करके उर्वरक की मात्रा को कम कर सकते हैं जिससे कम लागत में अधिक फसल उत्पादन हमारे किसान कर सकते है। कृषि कार्य के लिए आईओटी एक अच्छा साधन है। यह भी सुनिश्चित करना होता है की सेंसर की गुणवत्ता बढ़िया है क्योंकि यह आईओटी आधारित/बेस्ड कृषि की सफलता के लिए महत्वपूर्ण है। सफलता एकत्र किए गए डेटा की सटीकता और विश्वसनीयता पर निर्भर करती है। साथ ही, मिट्टी की गुणवत्ता और प्रत्येक मिट्टी में फसल की वृद्धि की जांच के लिए सिस्टम को एकीकृत किया जा सकता है। सेंसर और माइक्रोकंट्रोलर को सफलतापूर्वक इंटरफ़ेस किया जाता है और विभिन्न नोड्स के बीच वायरलेस संचार प्राप्त किया जाता है। भविष्य के काम में विशेष रूप से कीट नियंत्रण से संबंधित अधिक डेटा प्राप्त करने के लिए सेंसर बढ़ाने पर अधिक ध्यान केंद्रित करना और इस आईओटी उपकरण में जीपीएस मॉड्यूल को एकीकृत करना शामिल होता है ताकि इस कृषि आईओटी प्रौद्योगिकी से कृषि उत्पादन बढ़ाया जा सके। किसानों को अपनी सिंचाई प्रणाली को अधिक कुशलता से प्रबंधित करने में मदद करने के लिए कृषि में मिट्टी की नमी को मापना महत्वपूर्ण है। किसान न केवल फसल उगाने के लिए आम तौर पर कम पानी का उपयोग करने में सक्षम होते हैं, बल्कि महत्वपूर्ण पौधों के विकास के चरणों के दौरान मिट्टी की नमी के बेहतर प्रबंधन से पैदावार और फसल की गुणवत्ता भी बढ़ा सकते हैं।

निष्कर्ष

इस लेख के माध्यम से विकसित की जा रही आई. ओटी आधारित कृषि किसानों को कृषि उपज बढ़ाने और खाद्य उत्पादन की कुशल देखभाल करने में मदद करेगी क्योंकि यह हमेशा किसानों को पर्यावरण के तापमान और मिट्टी की नमी की सटीक लाइव डेटा प्राप्त करने में मदद करेगी। इन प्रणालियों की मदद से किसानों के दैनिक जीवन में आने वाली विभिन्न समस्याओं का

काफी हद तक समाधान किया जा सकता है। इसलिए, यह प्रणाली अत्यधिक सिंचाई, कम सिंचाई, मिट्टी के कटाव से बचाती है और पानी की बर्बादी को कम करती है। मुख्य लाभ यह है कि पौधों, जलवायु, मिट्टी, आदि के आधार पर सिस्टम की क्रिया को बदला जा सकता है। इसलिए, यह आईओटी सिस्टम अन्य प्रकार के स्वचालन प्रणालियों की तुलना में सस्ता और अधिक कुशल है। बड़े अनुप्रयोगों के लिए, कृषि भूमि के बड़े क्षेत्रों पर भी इसका प्रदर्शन किया जा सकता है। एक मृदा नमी स्तर निगरानी प्रणाली विकसित की जा सकती है और परियोजना में मौजूदा प्रणालियों, साथ ही साथ उनकी विशेषताओं और बाधाओं का अध्ययन करने का अवसर प्रदान किया जा सकता है। प्रस्तावित प्रणाली का उपयोग मिट्टी की नमी के स्तर के अनुसार पानी के छिड़काव/ बहाव को बंद करने के लिए किया जा सकता है, जिससे सिंचाई प्रक्रिया को अधिक सुगम बनाया जा सके एवं पानी की भी बचत की जा सके क्योंकि कृषि कार्य में पानी का बहुत उपयोग होता है।

आईओटी स्मार्ट तकनीक नई डिजिटल कृषि को सक्षम बनाती है। वर्तमान चुनौतियों का सामना करने के लिए आज यह प्रौद्योगिकी एक आवश्यकता बन गई है और कई क्षेत्र अपने कार्यों को स्वचालित करने के लिए इस नवीनतम तकनीक का उपयोग कर रहे हैं जिसमे कृषि भी शामिल है। इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) प्रौद्योगिकियों पर आधारित स्मार्ट कृषि की परिकल्पना उत्पादकों और किसानों को पौधों की दक्षता को बढ़ावा देने के लिए, उर्वरकों के उपयोग को अनुकूलित करके कचरे को कम करने और उत्पादकता में सुधार करने में सक्षम बनाने के लिए की गई है। आईओटी आधारित स्मार्ट खेती किसानों को उनके पशुधन, फसल उगाने, लागत में कटौती और संसाधनों के लिए बेहतर नियंत्रण प्रदान करने के साथ कम लागत में अधिक उत्पादन एवं आमदनी को बढ़ाने में सक्षम है।

मोबाइल ऐप : आधुनिक कृषि के लिए एक वरदान

रोहन कुमार रमण, धीरज कुमार सिंह, सुदीप सरकार,
अभय कुमार, उज्ज्वल कुमार एवं राकेश कुमार

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

सारांश

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था में प्रमुख योगदान देने के साथ–साथ आधी से अधिक आबादी को रोजगार भी प्रदान करती है। कृषि में आधुनिक तकनीक को बड़ी संख्या में किसानों तक पहुंचना कृषि विस्तार प्रणाली के लिए एक बड़ी चुनौती रही है। आधुनिक डिजिटल उपकरण जैसे मोबाइल ऐप, इंटरनेट विशेषज्ञ प्रणाली आदि इसमें प्रमुख भूमिका निभाते है। इसके उपयोग से बीज उर्वरक कीट–रोग प्रबंधन, मौसम की स्थिति पानी की उपलब्धता खाद्य प्रसंस्करण बाजार मूल्य इत्यादि समय में किसानों तक पहुँच जाती है जिससे किसान कृषि क्षेत्र में अधिकतम लाभ प्राप्त करते है। इस अध्ययन में फसल प्रबंधन पशुपालन मत्स्य पालन मुर्गी पालन रिमोट सेंसिंग/जीपीएस कृषि मशीनरी और विपणन जैसे विभिन्न उद्देश्यों के लिए सामान्य रूप से उपलब्ध कृषि ऐप्स को वर्गीकृत किया है जिसका उपयोग करके किसान लाभान्वित खेती कर सकते है तथा अपनी उत्पादकता के साथ आमदनी भी बढा सकते हैं।

परिचय

भारत एक कृषि प्रधान देश है एवं कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था में प्रमुख योगदान देती है। भारत की आधी से अधिक आबादी जीवन यापन के लिए कृषि पर आश्रित है। आधुनिक तकनीक का उपयोग करके कृषि से अधिक लाभ लिया जा सकता है। इन तकनीकों को बड़ी संख्या में किसानों तक पहुँचाना भारतीय कृषि विस्तार प्रणाली के लिए एक बड़ी चुनौती है। आधुनिक डिजिटल उपकरण जैसे मोबाइल ऐपए इंटरनेट विशेषज्ञ प्रणाली आदि इसमें प्रमुख भूमिका निभा सकते हैं। इन तकनीक द्वारा बीज उर्वरक कीट रोग प्रबंधन मौसम की स्थिति पानी की उपलब्धता खाद्य प्रसंस्करण बाजार मूल्य एवं संशोधित कृषि पद्धतियों की जानकारी किसानों को समय पर उपलब्ध कराया जा सकता है। हाल ही में विकासशील देशों में डिजिटल उपकरणों ने कृषि उत्पादन प्रणाली और विपणन को बदलने की अपनी क्षमता दिखाई है। यह जानकारी डेटा पारिस्थितिकी तंत्र के विशाल नेटवर्क पर आधारित है जो सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) और इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) द्वारा समर्थित है। डिजिटल उपकरणों के माध्यम से जानकारी लेकर किसानों ने कृषि क्षेत्र में अधिकतम लाभ प्राप्त किया है। ये उपकरण छोटे और सीमांत किसानों के लिए बहुत उपयोगी हैं जो आवश्यक जानकारी के अभाव के कारण फसल उत्पादन में बड़े नुकसान का सामना करते हैं। ऑनलाइन मार्केटिंग प्लेटफॉर्म का प्रसार किसानों को बिचौलियों के हस्तक्षेप के बिना अप्रतिबंधित बाजार में प्रवेश प्रदान करता है। किसान स्मार्ट मोबाइल फोन के माध्यम से मार्केटिंग पोर्टलों तक आसानी से पहुंच सकते हैं। इंटरनेट के माध्यम से, वे वर्तमान बाजार मूल्यों और फसल संबंधी कई तथ्यों से संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकते हैं जो उन्हें अधिक लाभ प्रदान करते हैं। दुनिया भर में अधिकांश किसानों के पास यहां तक कि दूर दराज के इलाकों में भी मोबाइल फोन उपलब्ध हैं। उन्हें बिना इंटरनेट के भी टेक्स्ट और वॉयस मैसेज के जरिए जरूरी कृषि सलाह से लैस किया जा सकता है। कम लागत पर समय पर दी गई ये सलाह कृषि आय बढ़ाने के लिए उपयोगी हैं। डिजिटल उपकरण सरकारी और निजी क्षेत्र को किसानों को सब्सिडी वितरित करने या सरकारी भंडारण सुविधाओं में आपातकालीन इनपुट स्टॉक की सूची के प्रबंधन के लिए भी सहायता प्रदान करते हैं। फसल उत्पादन और उत्पादों के मूल्यवर्धन में वृद्धि करके छोटे एवं सीमांत किसानों के साथ.साथ स्थानीय कृषि कंपनियों के आय स्तर में भी सुधार किया जा सकता है।

कोविड–19 महामारी के लॉकडाउन अवधि के दौरान कृषि क्षेत्र के निर्णय निर्माताओं ने देश के भीतर किसानों को बेहतर नकद हस्तांतरण के लिए कृषि सूचना उपलब्धता की स्थिति का आकलन करने के लिए वास्तविक समय के आंकड़ों पर पूरी तरह से भरोसा किया। इसने सार्वजनिक भलाई की सेवा में निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों के बीच अधिक डेटा साझा करने को प्रोत्साहित किया। भारत जैसा देश, जहां कृषक समुदाय के बीच भाषाओं का विविधीकरण मौजूद है; मिट्टी जलवायु पोषक तत्व प्रबंधन और लागत मूल्य की जानकारी के साथ क्षेत्रीय रूप से उपयुक्त डिजिटल उपकरण प्रभावी रूप से सहायक हो सकते हैं। युवा किसानों की पीढ़ियां अपने मोबाइल फोन से बहुत जुड़ी हुई हैं और इसलिए डिजिटल एप्लिकेशन के माध्यम से कृषि–सूचनाएं बहुत जल्दी पहुंच सकती हैं।

कृषि प्रौद्योगिकी प्रसार और सही निर्णय लेने के लिए मोबाइल ऐप का उपयोग

कृषि सूचना हस्तांतरण दक्षता में सुधार और कृषि.व्यवसाय को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करने के लिए किसानों के लाभ के लिए कई नए डिजिटल टूल जैसे मोबाइल ऐप विकसित किए गए हैं। इस अध्ययन में फसल प्रबंधन, पशुपालन, मत्स्य पालन, मुर्गी पालन, रिमोट सेंसिंग/जीपीएस कृषि मशीनरी विपणन और अन्य उद्देश्यों के लिए सामान्य रूप से उपलब्ध कृषि ऐप्स में से कुछ को वर्गीकृत किया है। इनमें से कई मोबाइल ऐप सीधे नीति निर्माताओं या प्रशासकों द्वारा किसानों के लक्षित समूह से संपर्क करने के लिए उपयोग किए जा सकते हैं। वे नीति.निर्माण निर्णयों में सुधार के लिए भी प्रासंगिक हैं क्योंकि ये ऐप नीति.प्रासंगिक डेटा का उत्पादन साझाकरण प्रबंधन या विश्लेषण करने में सक्षम हैं। कुछ ऐप का इस्तेमाल निजी क्षेत्र अपने उत्पादों को किसानों के बीच बेचने या लोकप्रिय बनाने के लिए करते हैं।

कृषि में डिजिटल उपकरणों के महत्व को समझने के लिए रूपरेखा

डिजिटल उपकरण कृषि आय को पांच प्रमुख तरीकों से बढ़ा सकते हैं (1) योजना (2) इनपुट व्यवस्था (3) प्रबंधन (4) पहुंच और अभिग्रहण (5) विपणन। योजना के तहत कौन सी फसल चुननी है और कब बोनी है, इसकी जानकारी मिट्टी और जलवायु परिस्थितियों के अनुसार दी जाती है। इनपुट सुविधाओं में शामिल हैं, इनपुट आवश्यकताएं उनकी उपलब्धता विभिन्न इनपुट–आउटपुट विकल्प और गुणवत्ता युक्त इनपुट तक पहुंच।जैसे बीज उर्वरक कीटनाशक शाकनाशी आदि। फसल प्रबंधन सुविधाओं में पोषक तत्व प्रबंधन, रोग.कीट प्रबंधन भंडारण और प्रसंस्करण शामिल हैं। डिजिटल उपकरण ऑडियो–विजुअल सेवाओं के माध्यम से कृषक समुदायों के बीच नई तकनीकों को पेश करने के लिए आसान पहुंच और अपनाने के अवसर प्रदान करते हैं और समय पर पूर्वानुमान और अलर्ट भी प्रदान करते हैं। कृषि उत्पादों का विपणन कई क्षेत्रों में प्रमुख समस्याओं में से एक है। डिजिटल उपकरण विक्रेता और खरीदार के बीच बेहतर संबंध प्रदान कर सकते हैं, बाजार मूल्य अपडेट प्रदान कर सकते हैं मांग–आपूर्ति को ट्रैक कर सकते हैं और परिवहन लागत, पहुंच और विपणन विकल्पों की उपलब्धता को प्रभावित कर सकते हैं। इस प्रकार, डिजिटल उपकरणों के उपयोग से फसल के नुकसान को कम किया जा सकता है, विभिन्न जोखिमों को कम किया जा सकता है पैदावार में वृद्धि की जा सकती है, उत्पादन में लागत प्रभावशीलता में सुधार किया जा सकता है, सुरक्षा जाल बनाया जा सकता है, भंडारण बढ़ाया जा सकता है उत्पाद खराब होने से रोका जा सकता है और आय में वृद्धि हो सकती है। मूल्य श्रृंखला में प्रौद्योगिकी का उपयोग बढ़ती आबादी के लिए खाद्य सुरक्षा में महत्वपूर्ण सुधार करता है।

कृषि मोबाइल ऐप का उपयोग करने के लाभ

कृषि क्षेत्र में मोबाइल ऐप का उपयोग करने के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं:

- टेक्स्ट और वीडियो मैसेजिंग सेवाओं के माध्यम से कृषि सलाह प्रदान करता है।
- वास्तविक समय मौसम डेटा जैसे तापमान, वर्षा धूप के घंटे आदि की जानकारी तक पहुंच जो सीधे कृषि क्षेत्र में निर्णय लेने की क्षमता को प्रभावित करती है।
- देश भर के विभिन्न बाजारों में विभिन्न कृषि वस्तुओं की कीमतों, गुणवत्ता और आगमन की मात्रा पर डेटा उपलब्ध कराना

- मोबाइल एप के माध्यम से फसलों/पशुधन/कुक्कुट/मत्स्य पालन आदि की ऑनलाइन निगरानी और प्रबंधन संभव है।
- कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में किसानों और अन्य हितधारकों से फीडबैक का प्रावधान उपलब्ध कराता
- हैाइन ऐप्स का उपयोग करके महत्वपूर्ण मशीनरी और उपकरणों की जानकारी आसानी से प्राप्त की जा सकती है।
- मोबाइल ऐप का उपयोग सरकार द्वारा किसानों को इनपुट और सब्सिडी वितरण के रूप में दी जाने वाली सेवाओं को वितरित करने के लिए किया जा सकता है।
- इसका उपयोग बड़े क्षेत्र में सिंचाई प्रणालियों के प्रबंधन, सेंसर आधारित खेती, विभिन्न प्रकार की मिट्टी की पहचान आदि में किया जा सकता है।
- यह डेटा को रिकॉर्ड करके, उसका विश्लेषण करके और विभिन्न उद्यमों के लिए उपयुक्त सिफारिश देकर प्रभावी कृषि प्रबंधन की सुविधा प्रदान करता है।
- कम समय में श्रेणीवार महत्वपूर्ण जानकरी की आसान पुनर्प्राप्ति।
- यह कृषि उपज के बेहतर विपणन और भंडारण में मदद करता है।

आई.सी.ए.आर. संस्थानों द्वारा विकसित महत्वपूर्ण मोबाइल ऐप और उनके कार्य

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद अपने संस्थानों, एनआरसी एआईसीआरपी एसएयू केवीके आदि के विशाल नेटवर्क के माध्यम से कृषि अनुसंधान और विस्तार करने के लिए भारत में नोडल एजेंसी है। आईसीएआर और इसके घटक संगठनों द्वारा कई ऐप विकसित किए गए हैं। निजी संगठनों द्वारा विकसित ऐप भी बहुत लोकप्रिय हैं। कृषि विकास के लिए कुछ महत्वपूर्ण ऐप्स और उनके कार्यों की सूची तालिका–1 में दी गई है।

तालिका–1: आईसीएआर संस्थानों द्वारा विकसित मोबाइल ऐप और उनके कार्य

क्र. सं.	ऐप्स का नाम	लोगो	प्रमुख कार्य	संस्थान द्वारा विकसित
1.	आई.सी.ए.आर. टेक्नोलॉजीज		फसल सुधार बागवानी डेयरी मत्स्य पालन कृषि इंजीनियरिंग और सामाजिक विज्ञान।	आई.सी.ए.आर. आई.एस.आर.आई.
2.	आई.सी.ए.आर. डायरेक्टरेट ऑफ पोल्ट्री रिसर्च		पोल्ट्री प्रजनन जर्मप्लाज्म उपलब्धता चूजे उत्पादन नवीनतम समाचार आदि से संबंधित जानकारी प्रदान करता है।	आई.सी.ए.आर. डी..पी..आर.
3.	आई.सी.ए.आर. डायरेक्टरेट ऑफ ओनियन एंड गारलिक रिसर्च		आई. सी. ए. आर. डी. ओ. जी. आर. द्वारा विकसित किस्में और उनकी उपयुक्तता प्याज और लहसुन के फसल प्रबंधन के बारे में जानकारी प्रदान करता है।	आई.सी.ए.आर. डी.ओ.जी.आर.
4.	इंडियन इनस्टीचूट ऑफ हॉर्टीकल्चर रिसर्च		फलों और सब्जियों के फसल प्रबंधन प्रमुख विशेषज्ञों द्वारा मेल उत्तर के माध्यम से किसानों की मदद करता है।	आई.सी.ए.आर. आई.आई.एच.आर.
5.	आई.ए.आर.आई.पूसा नयी दिल्ली पूसा डिजीफार्म		ग्रामीण किसानों के लिए एक चैट एप जो अपने ज्ञान, अनुभव, मुद्दों और समस्याओं को शेयर करना चाहते हैं।	आई.सी.ए.आर. आई.ए.आर.आई.
6.	इनडियन वेटनरी रिसर्च इनस्टीच्यूट डीजीज कनट्रोल एप	ivri Disease Control App	इसका लक्ष्य स्नातक पशु चिकित्सकों, क्षेत्र के पशु चिकित्सकों, पशुधन, मुर्गी पालन और पालतू जानवरों के मालिकों को ज्ञान प्रदान करना है।	आई.सी.ए.आर. आई.वी.आर.आई.

क्र. सं.	ऐप्स का नाम	लोगो	प्रमुख कार्य	संस्थान द्वारा विकसित
7.	सेन्ट्रल इनस्टीच्यूट फॉर रिसर्च ऑन बॉफेलो भैंस पोषहार		यह भैंस पोषण, भैंस और बछड़ा चारा प्रबंधन पर जानकारी प्रदान करना है।	आई.सी.ए.आर. सी.आई.आर.बी.
8.	सेन्ट्रल इनस्टीच्यूट फॉर रिसर्च ऑन गोट बकरीमित्र		इसका उद्देश्य बकरी के दूध और मांस उत्पादन को बढ़ाना है।	आई.सी.ए.आर सी.आई.आर.जी.
9.	ऑरगेनिक लाईवस्टॉक फॉरमिंग		यह एप्लिकेशन जैविक पशुपालन प्रणाली के बारे में जानकारी प्रदान करता है।	आई.सी.ए.आर. आई.वी.आर.आई.

भारत में मोबाइल ऐप्स का उपयोग करने की चुनौतियाँ

- मोबाइल ऐप संचालित करने के लिए कुशल जनशक्ति की आवश्यकता होती है जिसके लिए डिजिटल साक्षरता आवश्यक है।
- देश भर में भाषा में विविधता के कारण स्थानीय भाषाओं में ऐप्स बनाना मुश्किल हो जाता है।
- सामग्री को कई चरणों में अनुवाद की आवश्यकता होती है जो इसकी गुणवत्ता को प्रभावित कर सकती है और कृषक समुदाय के बीच स्वीकार्यता को कम कर सकती है।
- मोबाइल ऐप्स का उपयोग करने के लिए बेहतर इंटरनेट स्पीड की आवश्यकता है। कई बार ग्रामीण क्षेत्र में इंटरनेट कनेक्शन और स्पीड एक प्रमुख मुद्दा है जो मोबाइल एप्लिकेशन सेवाओं को प्रभावित करता है।
- मोबाइल एप्लिकेशन का उपयोग करने के लिए किसान आवश्यक ज्ञान और कौशल से पर्याप्त रूप से सुसज्जित नहीं हैं।
- कई मोबाइल ऐप इसके उपयोग के लिए पैसे वसूल रहे हैं, इसलिए छोटे एवं सीमांत किसान इन ऐप की भुगतान सेवाओं का खर्च नहीं उठा सकते हैं।

निष्कर्षः

मोबाइल ऐप संभावित डिजिटल उपकरण हैं जिनका उपयोग कम समय में बड़ी संख्या में किसानों तक कृषि संबंधी जानकारी तक पहुंचने के लिए प्रभावी ढंग से किया जा सकता है। किसानों को नीतिगत सहायता के लिए सही जानकारी बेहतर इनपुट और कृषि प्रबंधन, आसान विपणन और सरकारी एजेंसी के साथ जुड़ाव आदि प्रदान करके उनका उपयोग कृषि आय और उत्पादकता बढ़ाने के लिए किया जा सकता है। हालांकि, ग्रामीण भारत में कम स्मार्ट फोन प्रवेश दर परिवर्तनीय इंटरनेट कनेक्टिविटी, किसानों के बीच कम डिजिटल साक्षरता, स्थानीय भाषाओं में कृषि संबंधी जानकारी की सीमित उपलब्धता जैसी चुनौतियां हैं। इसके बावजूद ये मोबाईल एप किसानों के लिए वरदान सावित होंगे।

मेघदूत ऐपः मौसम की जानकारी के लिए एक वरदान

**दुष्यंत कुमार राघव, शशि कान्त चौबे, इन्द्रजीत,
धर्मजीत खेरवार एवं सन्नी कुमार**

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर– जी. के.एम.एस., कृषि विज्ञान केंद्र, रामगढ़ (झारखंड)

डिजिटल इंडिया के तहत किसानों को तकनीक से जोड़ने के लिए कृषि मंत्रालय और पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय ने मेघदूत मोबाइल ऐपलॉन्च किया है। अन्नदाता कहे जाने वाले किसान की फसल को मौसम और सूखे से भारी नुकसान उठाना पड़ता है, किसी भी किसान के लिए मौसम में होने वाले बदलाव को भांपना आसान नहीं होता है। किसानों को फसल की सही देखभाल के लिए कई अन्य जानकारियों की भी जरूरत होती है। अगर सही समय पर मौसम के पूर्वानुमान सही सूचना मिल जाए तो किसान अपनी फसल को बचा सकते हैं। बदले मौसम के कारण किसान न तो फसल काट पाते हैं और न ही खेतों में छोड़ पाते हैं। कई बार किसान सुबह फसल की सिंचाई करते हैं और शाम को बारिश हो जाती है, जिससे किसानों कि मेहनत, समय बर्बाद होता है

साथ ही साथ खेती में लागत भी बढती है। मौसम विभाग द्वारा एक ऐसा मोबाइल ऐप (MobileApp) तैयार किया गया है, जिसके जरिए किसानों को मौसम का मिजाज बदलने की जानकारी मिल पाएगी। इस मोबाइल ऐप का नाम 'मेघदूत ऐप' है। इस ऐप की सहायता से किसानों को घर बैठे मौसम के पूर्वानुमान सारी जानकारी 'मेघदूत ऐप' से प्राप्त हो जाती है। किसानों को मौसम की जानकारी उपलब्ध कराने और फसलों व पशुओं संबंधी विशेष कृषि सलाह लाभार्थीयों तक पहुंचाने के लिए मेघदूत ऐप को वर्ष 2020 को शुरु किया गया है। मेघदूत ऐपदेश के विभिन्न राज्यों के 668 जिला के किसानों के लिए क्रियान्वित है। जिसके माध्यम से किसानों व अन्य वर्ग के लोगों को मौसम की सटीक भविष्यवाणी मिलती है, जिसमें पिछले 10 दिन तथा अगले 5 दिन के मौसम मापदंड जैसे– तापमान, नमी, बारिश, हवा की गति तथा हवा की दिशा संबंधी जानकारी इस ऐपके द्वारा मिलती है। इसमें हर जिले के लिए बारिश, तूफान, ओलावृष्टि, तेज हवाएं आदि के लिए अगले 3 घंटों की मौसम भविष्यवाणी की जानकारी मिलती है। इसकी सहायता से किसान अपनी फसलों को मौसम की मार से बचा सकेगें और उन्हे फसलों की सिंचाई करने व खाद–दवाइयों का प्रयोग करने से पहले मौसम की स्थिति का भी पता चल जाता है।

उद्देश्य

मेघदूत ऐप को लॉन्च करने का मुख्य उद्देश्य किसानों की फसलों को बारिश, आंधी , तूफान आदि से बचाने के लिए मौसम की स्टीक भविष्यवाणी उपलब्ध करवाना है। इस ऐपको किसानो की सुविधा के अनुसार ही तैयार किया गया है, ताकि किसानो की फसलों को नुकसान हो ने से बचाया जा सके और किसानों की आमदनी में भी बढ़ोत्तरी हो सके।

मेघदूत ऐप से लाभ

- यह ऐप अलग–अलग क्षेत्रों में किसानों को उनकी क्षेत्रीय भाषा में मौसम के पूर्वानुमान के आधार पर खेती से जुड़ी राय देता है।

- पिछले 10 दिन तथा अगले 5 दिन के मौसम मापदंड जैसे तापमान, नमी, बारिश, हवा की गति तथा हवा की दिशा संबंधी जानकारियां हर घंटे अपडेट होती रहती हैं।
- इस ऐप से कब कौन सी फसल की बुवाई करनी है, ऐसी कई जानकारियां मिलती हैं। मौसम के साथ ही इस ऐप में खेती किसानी और पशुपालन की भी सारी जानकारियां मिलती हैं। जिससे किसान अपनी फसल और पशुओं की देखभाल कर सकते हैं।
- मेघदूत हिंदी, मराठी, बंगाली, गुजराती और उड़िया समेत 10 भाषाओं में सलाह देता है।
- इस ऐप में हफ्ते में दो दिन मंगलवार और शुक्रवार को सारी जानकारी अपडेट होती है।
- फसलों की सिंचाई करने व खाद–दवाइयों का प्रयोग करने से पहले मौसम की स्थिति को जान सकेंगे और इससे किसान मौसम के अनुसार विभिन्न कृषि क्रियाकलाप कर सकेगें।
- किसान मौसम के मामले मे हर समय अपडेट रहेगें और मौसम की पूर्व जानकारी मिलने से फसल उत्पादन पर भी असर देखने को मिलेगा।

मेघदूत ऐप की विशेषताए

- फसलों को मौसम की मार से बचाने के लिए पहले ही सटीक जानकारी मिल जाएगी। फसलो को खराब होने से बचाने में कारगर सिद्ध होगी।
- लाभार्थियों को नुकसान का सामना नहीं करना पडेगा।
- किसान आत्म–निर्भर बनेंगे व किसानों की आय मे बढोत्तरी होगी।
- उपयोगकर्ता इस मोबाइल ऐपपर अपना नाम और लोकेशन के साथ खुद को रजिस्टर कर सकते हैं जिससे उन्हें स्थानीय क्षेत्र के हिसाब से सूचनाएं मिलती रहेगी।

कैसे करें डाउनलोड

1. 'मेघदूत ऐप' ऐंड्रॉयड और iOS, दोनों के लिए उपलब्ध है। अपने मोबाइल में 'मेघदूत ऐप' को डाउनलोड और इंस्टाल करने के लिए सबसे पहले गूगल प्ले स्टोर मे जाना है।
2. अब आपको search box में MeghdootApp टाइप कर enter बटन पे किल्क कर देना है।

3. यहां किल्क करते ही आप अगले पेज मे आ जाएगे।

4. अब आपको दिए गए लिंक पर किल्क करना है।

5. यहां किल्क करने के बाद आपको मेघदूत ऐपको डाउनलोड और इंस्टाल करना है।

मेघदूत ऐपका कैसे करें इस्तेमाल

1. मेघदूत ऐपको डाउनलोड करने के बाद आपको अपने मोबाइल फोन मे इस ऐपका आइकन दिखाई देगा।
2. आपको उस पर किल्क कर उसे ऑन करना है।
3. इसके बाद साइनअप करना होगा और भाषा का चयन कर आगे बढना है।
4. अब आपको इसमे मांगी गई जा नकारी भरनी होगी।

नाम,
मोबाइल नंबर,
भाषा,
जेंडर,
स्टेट
जिला
ब्लॉक
पंचायत

5. इसके बाद पंजीकृत पर क्लिक करने से पंजीकरण हो जायेगा।

सारी प्रक्रिया होने के बाद आप इस ऐपका इस्तेमाल कर सकते हैं। अब आपको अपने प्रदेश और जिले के हिसाब से आपको सारी जानकरियां मिलने लगेंगी। ये ऐपअंग्रेजी और देश की क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध है। फसलों और जानवरों की विशेष खेती की सलाह सीधे तौर पर डैशबोर्ड पर उपलब्ध होगी। इसके अलावा लाभार्थी को मौसम से सम्बंधित सटीक जानकारी मिलेगी।

भारतीय गरीबी का संभावित समाधान!

पुष्पनायक
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

आज विकसित देशों के विपरीत, लेकिन अन्य विकासशील देशों की भांति हमारे देश में असली समस्या भोजन तथा अन्य आवश्यक सुविधाओं की पर्याप्त आपूर्ति की ही है। आखिर इन्हीं चीजों के लिए तो तमाम लोग इधर–उधर आग भाग रहे हैं, नाना प्रकार की ऊल–जलूल हरकतें कर रहे हैं, और फिर इन्हीं चीजों को दिलाने का आश्वासन तो हमारे नेतागण बार–बार जनता को देकर भी कभी आश्वासन पूरा नहीं कर पाते!

अगर सब लोग सब कुछ एक बार एक साथ पालें, तो शायद पल भर के लिए दुनिया की तमाम हलचल जैसे रुक सी जाएगी। लेकिन दुनिया ऐसी है कि सब लोग सब कुछ एक साथ एक बार कभी नहीं पाते, और बस इसीलिए दुनिया की हलचल कभी रुक नहीं सकती – तब तक, जब तक यह दुनिया खुद कायम है!

आएँ, किसी देश की अर्थव्यवस्था को समझने–परखने के पहले किसी परिवार की अर्थव्यवस्था को समझें। और फिर परिवार की अर्थव्यवस्था को समझने के पूर्व परिवार को समझा जाए। स्वयं मेंने परिवार को जैसा समझा है, उसे अपनी निम्नलिखित हिंदी कविता के माध्यम से अभिव्यक्त किया है:

धरती पर बसा परिवार

वहाँ होता है शोर कभी–कभी,
खुशी कभी–कभी और गम भी कभी–कभी;
जहाँ पा लेता है मानव जन्म और मृत्यु का साक्ष्य
कि हैं ये प्रकृति के मिथक नहीं, बल्कि जीवन ही के सत्य!

यहाँ हुई नहीं कभी कोई लूट–पाट,
खुशी तो खुशी, लोग लेते हैं गम भी बाँट।
बड़ी मछली खाए छोटी को, ऐसी नहीं यहाँ मार–धार,
समर्थ से बढ़कर मिला है निर्बल ही को प्यार।

बँटते आए हैं यहाँ आपस में सारे छोटे–बड़े **काम**,
कभी **हुई नहीं शिकायत** किसी भी कोने में कोई **आम**।
हर कोई **कर डालता है पूरा** अपना **काम–धाम**,
किसी को **जरूरत नहीं पड़ी** आज तक,**पुकारने की**,**नाम**।

कभी **बाजार में बिका नहीं** ऐसा **व्यवहार**,
बसा जिसके लिए **धरती पर** घर में **परिवार**!

घर या परिवार का बाहर से सबसे बड़ा फर्क तो यही है कि घर के अन्दर जो सबसे कमजोर, सबसे बेबस होता है, उसे ही सबसे अधिक सेवा, सबसे अधिक आराम और सबसे अधिक प्यार मिला करता है। माँ उसी बेटे को सबसे ज्यादा अपने सीने से लगाये रखती है, जो लंगड़ा भी हो, लूला भी हो! समर्थ पुत्र को वह लकड़ी काटने ओर मजबूत कंधों पर बोझ उठाने के लिए तैनात करती है!

लेकिन बाहर क्या है ! बाहर का रिवाज तो यही है कि बाहर जो सबसे अधिक शक्तिशाली, सबसे समर्थ होता है, उसे ही सब सर–आँखों पर चढ़ाते हैं। कमजोर और लाचार के प्रति सच्ची सेवा–भावना, सच्ची सहानुभूति और सच्चा प्यार, बस घर की चहारदीवारी तक सीमित रहते हैं। बाहर आते ही कमजोर, लाचारों और बेबसों के प्रति **प्यार की जगह नफरत और हिकारत** आ जाती है।

इसलिए घर से बाहर की दुनिया के तमाम कानून ऐसे बनाये जाते हैं कि घर और बाहर का फर्क मिट जाए, पर यह फर्क तब भी बना रहता है। खैर! घर या परिवार को अब हम समझ चुके हैं, तो परिवार की अर्थव्यवस्था पर आ जाते हैं!

सबसे पहले परिवार के **खाने–पीने के प्रबंध** को लिया जाए। अगर किसी परिवार में **कुल 10 सदस्य** हों और परिवार के पास **सिर्फ 8 सदस्यों के लायक भोजन** हो, तो क्या किया जा सकता है! एक हल तो

यह है कि पहले 8 सदस्य भोजन कर लें और अंतिम 2 सदस्यों को भूखा रहने दें! दूसरा अधिक सही हल यहनजर आता है कि पहले 8 सदस्य अपने–अपने भोजन को थोड़ा–थोड़ा घटाकर आखिरी 2 सदस्यों के लिए भी उसी अनुपात में भोजन बचा रहने दें।

अब जरा उसी परिवार के **पहनने–ओढ़ने के प्रबंध** का उदाहरण लिया जाए। मान लीजिए, 10 सदस्यों के इस परिवार के पास दुबारा **सिर्फ 8 सदस्यों के सिलवाने लायक ही कपड़ा** हो, तो क्या हल है? कपड़े का मानव से जो संबंध है, वह निम्नलिखित कविता के माध्यम से शायद व्यक्त हो सके:

धरती पर कपड़ा

बड़े जोरों का शोर है मचा,
रंगीन परत के लिए मचलती हर त्वचा।
त्वचा का यह भाव है मानव ही तक सीमित,
जिसका बल कम, बुद्धि अधिक, ऐसा है कथित।

इसके अभाव में जीते हैं कुछ लोग शर्म में गड़े हुए।
इसे उतारकर भी जीते हैं लोग चंद शोहरत के लिए:
उतारकर देने को सूझता नहीं इन्हें कोई नंगा, फकीर बेहाल,
जो आज भी तलाशता फिरे जानवर की खालया पेड़ ही की छाल।

मानव-बुद्धि को ही ढका इसने बनकर जीवन-स्तर का प्रतीक,
पर ढक न पाया क्षुर्चिमड़े के रंग को जो बना सबसे बड़ा ही प्रतीक!
खैर! खूबी है कि नखरे चाहे लाख दिखा लें गर्मी–बरसात–जाड़ा,
पर घुटने टेकने को इसके आगे मजबूर है हर मौसम बेचारा।

करता आया है इतना सारा लफड़ा,
धरती को ढकता हुआ ही कोई कपड़ा!

ऐसी स्थिति में अगर 8 सदस्यों के सिलवा सकने लायक कपड़े से 10 सदस्यों की पोशाकें बनायी जाएँ, तो किसी सदस्य की पोशाक सही नहीं बन पाएगी। अतः यहाँ यही हल तर्कसंगत है कि कोई 8 सदस्य तो अपने कपड़े सिलवा लें, लेकिन कोई 2 सदस्य चुप बैठ जाएँ!

अब उपर्युक्त उदाहरणों के सन्दर्भ में अगर हम भारत की अर्थव्यवस्था का अध्ययन करें, तो पाते है कि यहाँ भी वही हालत है, जो हालत उपर्युक्त परिवार की कपड़े सिलाने के मामले में हुई, यानी कि कुल 10 सदस्यों में 8 सदस्यों के पास तो कपड़े होंगे, पर आखिरी 2 सदस्य कतार में लगे रहेंगे! और शायद इसीलिए हम कहते हैं कि हाँ, भारत में जनाधिक्य है!

लेकिन सवाल यह है कि क्या सचमुच भारत में सारी आर्थिक समस्याएँ उपर्युक्त कपड़े की समस्याजैसी ही हैं, जो उनका हश्र उपर्युक्त कपड़े की समस्या के हल जैसा हो रहा है?

उत्तर है कि नहीं, संभवतः कोई भी समस्या उपर्युक्त कपड़े की परिवारस्तरीय समस्या जैसी नहीं है, बल्कि लगभग सारी आर्थिक समस्याएँ, उपर्युक्त परिवार की भोजन की समस्या जैसी ही हैं, और इसलिए इन सभी राष्ट्रीय आर्थिक समस्याओं का हल भी उपर्युक्त भोजन की समस्या के हल की तर्ज पर मुमकिन है।

अभी मैंने उदाहरण दिया था कि 10 सदस्यों के परिवार के पास 8 सदस्यों के लायक ही भोजन हो, तो सभी सदस्यों को भोजन में इस कमी को बराबर–बराबर बाँट लेना चाहिए। लेकिन भोजन में कमी की समस्या का यह समाधान तात्कालिक ही था, न कि स्थायी। स्थायी समाधान यही होता कि परिवार के सभी सदस्य मिलकर अपने परिश्रम एवं बुद्धिमत्ता से भोजन के उत्पादन एवं आपूर्ति में वृद्धि का प्रयास साथ–साथ जारी रखते। और तब तात्कालिक समाधान एवं स्थायी समाधान के संयोग से ही समस्या का पूर्ण समाधान संभव होता।

इसी तरह, हमारी राष्ट्रीय आर्थिक समस्याओं का पूर्ण समाधान भी यही होना चाहिए कि तात्कालिक आर्थिक अभावों को बराबर–बराबर बाँटकर झेलने के साथ–साथ हमें उन अभावों को दूर करने के स्थायी प्रयत्न जारी रखने चाहिए।

आएँ, हम आखिरी बार जरा गौर से परिवार के भोजन की समस्या को परखें। परिवार में 10 सदस्य थे, पर भोजन 8 सदस्यों ही के लायक था। अतः **तात्कालिक समस्या** परिवार के सदस्यों के बीच भोजन के **पुनर्वितरण** या **बँटवारे** की भले ही रही हो, लेकिन **स्थायी समस्या** तो परिवार के सदस्यों के लिए पर्याप्त भोजन के **पुनः उत्पादन** की ही हुई!

आज हमारे देश में क्या हो रहा है? किसी भी वस्तु का उत्पादन आवश्यकता से कम हुआ या अधिक, यह कोई नहीं देखता, लेकिन उस उत्पाद या वस्तु के पुनर्वितरण या बँटवारे में अपना अधिक–से–अधिक हिस्सा जल्दी–से–जल्दी निकाल लेने के लिए सब लोग लूट मचा देते हैं। यह ऐसा ही है, जैसे रूस में कभी 1990

के दशक में डबल–रोटी की दुकान में डबल–रोटी के आने के पहले ही उस डबल–रोटी के लिए एक लंबी कतार लग चुकी होती थी और कतार में खड़ा हर आदमी आशकित रहता था कि डबल–रोटी मिलनी शुरू हुई, तो कहीं खुद उस आदमी के काउण्टरपर पहुँचने के पहले ही डबल–रोटी खत्म न हो जाए।

दरअसल, पुनर्वितरण या बँटवारे या थोड़ा खालिस शब्दों में कहें, तो छीन–झपट आदि की तात्कालिक समस्या को तो व्यक्ति (नागरिक) अपनी व्यक्तिगत समस्या समझता है और इसके तात्कालिक समाधान के लिए तत्पर रहता है, तो इस दृष्टिकोण से, कि उसे (व्यक्ति को) अधिक–से–अधिक हिस्सा मिले;बराबर बँटवारा सचमुच उसके बस से बाहर की बात है, कम भी मिले, तो वह बेबस है। इस बेबसी का हाल जाहिर होता हे, बाजार में, जो पुनर्वितरण या आर्थिक बँटवारे या क्रय–विक्रय का केन्द्र है, वह भी ऐसे:

धरती पर बाजार!

है वहाँ सर्वत्र शोर ही शोर,
वेगवान है जीवन चारों ओर।
उद्देश्य आने का है क्रय या विक्रय,
संकुचित बचे शेष जन साख–शून्य!

वस्तु और धन का होता रहता यूं ही आदान–प्रदान,
जुट ना सके जब तक हर एक के भोजन का सामान।
कभी–कभी बदले वस्तु से वस्तु और धातु से धातु,
जब मिली दोनों ही पार्टियों की फेहरिश्तें और बोलीं 'तथास्तु'।

मानव-बुद्धि को ही ढका इसने बनकर जीवन-स्तर का प्रतीक,
पर ढक न पाया क्षुद्र चमड़े के रंग को जो बना सबसे बड़ा ही प्रतीक!
खैर! खूबी है कि नखरे चाहे लाख दिखा लें गर्मी–बरसात–जाड़ा,
पर घुटने टेकने को इसके आगे मजबूर है हर मौसम बेचारा।

करता आया है इतना सारा लफड़ा,
धरती को ढकता हुआ ही कोई कपड़ा!

बाजार में इंसान भी बिकते हैं। कैसे–कैसे इंसान बिकते हैं और किस–किस रीति से बिकते हैं, जरा यह भी देख लें:–

पृथ्वी–रूपी अपराजिता!

शोर, गया है, थम और सहम!
जला रही है उसे हया औ' शर्म!
माँगती है वह कि मुट्ठी–भर भात या एक भी रुपया
से पहले नसीब हो मौत या हत्या!

बेचे हैं उसने अपने जीवन के कुछ क्षण,
जिन्हें गुजारने को न मिली कोई 'पति की शरण'!
इन तरसते–तड़पते क्षणों की पीड़ा
ने छुरा बनकर है उसे बार–बार चीरा!

पृथ्वी जनती आयी थी रोटी,
नारी जनती आयी बेटा या बेटी!
पर जब **नर ने छीन ली रोटी,**
तो **नारी जनती बस रोटी**, *नहीं कोई बेटा–बेटी!*

यह सब है सत्य तथ्य,
पृथ्वी–रूपी अपराजिता का मूक जीवन–कथ्य!

अक्सर नादान लोग यह कहते मिल जाते हैं कि उत्पादन ही आवश्यकता से कम होता है, इसलिए कुछ आदमी तो भूखे बचेंगे ही! पल भर के लिए मैं यह बात मान लेता हूँ। लेकिन अब मैं पूछता हूँ कि जिस नारी को यूँ कोई रोटी नहीं देता कि उत्पादन ही आवश्यकता से कम हुआ है, उसी नारी को कोई पुरुष उसका शरीर खरीद लेने के बाद रोटी कहाँ से दे देता है! आखिर, नारी का शरीर बिकते ही रोटी एकाएक धरती से पैदा होकर बाहर आ गयी हो, ऐसा भी नहीं है!

वास्तविकता यह है कि उत्पाद या सुविधाओं या चीजों या वस्तुओं के पुनर्वितरण या बँटवारे में ही कहीं भारी खोट है, न कि उत्पाद या चीजों के उत्पादन में। और, बाजार में बिकने को मजबूर हुई अबला नारी जैसा ही हाल एक मजबूर रिक्शा–चालक का भी हुआ करता है। जब तक वह अपना खून–पसीना न बेच ले, एक दाना तक उसे मयस्सर नहीं होता। जरा देखें :

पृथ्वी पर रिक्शा–वाला

गूंज न पाया जरा भी शोर,
थके चीख–चीख कर उसके गूंगे पैर!
सुन–सुन कर बहरा हुआ उसका खूनी पेट, क्रूर
बिन दाना–पानी ही सुन्न पैरों से रिक्शे को खींच
रहा दूर औ' दूर!

इस खूनी पेट ने माँगा है रोटी का भोजन,
धमकाता है बिन रोटी कि आसन्न है मरण!
पर भोजन की रोटी जनती है **धरती,**
जहां उसके जन्म–पूर्व ही न थी कहीं भी **रिक्ति!**

तब दिया खूनी पेट ने पैरों को यह हुक्म कि ऐ बेदम,
चल, सेवा कर **पृथ्वी–पतियों** की, पर माँगी न भीख एकदम!
छलका जब इन लाचार पैरों पर एक बूंद भी पसीना,
तब बँधी आस खूनी पेट को कि मयस्सर होगा अब खाना या पीना!

जब–जब बाजार में बिका इंसान ऐसा,
तब–तब हाजिर हुआ पृथ्वी पर एक रिक्शा!

आवश्यकता से **अधिक** उत्पादन होने पर भी लोग **भूखे** या **अभावग्रस्त** रह जाएँ, जैसा अतीत में अमेरिका में नीग्रो, हब्शियों और मूलवासियों के साथ होता रहा था, तो दोष निस्सन्देह वस्तुओं के पुनर्वितरण या बंटवारे में निहित है। लेकिन आवश्यकता से **कम** उत्पादन होने के बावजूद कोई **भूखा न रह पाए**, जैसा राम–राज्य में था, तो यह उपलब्धि भी निस्सन्देह पुनर्वितरण–प्रक्रिया की ही है।

पुनर्वितरण की प्रक्रिया में **सरकार** कोई भूमिका निभाये या न निभाये, लेकिन **व्यक्ति** की एक खास भूमिका हमेशा होती है। **पुनर्वितरण की तात्कालिक समस्या** को अपनी व्यक्तिगत समस्या समझते हुए इसके तात्कालिक समाधान हेतु **व्यक्ति** हमेशा कुल उत्पादन में अपने वास्ते **अधिकतम संभव हिस्से के लिए प्रयासरत** रहता है, क्योंकि चाहकर भी बराबर बँटवारा उसके वश में कभी नहीं होता, और बराबर से कम हिस्सा भी मिले तो वह बिल्कुल बेबस है।

वस्तुतः आवश्यकता से कम उत्पादन होने पर पुनर्वितरण के तौर पर, उत्पाद के वितरण के साथ–साथअभाव (उत्पाद का अभाव) का वितरण भी जरूरी होता है, और तभी यह प्रक्रम वितरण मात्र से बढ़कर पुनर्वितरण कहला पाता है। लेकिन अकेले व्यक्ति द्वारा इस अभाव (कमी) का आपस में वितरण (बँटवारा) कर पाना भले ही परिवार के स्तर पर संभव (मुमकिन) हो, परन्तु राष्ट्र (मुल्क) के स्तर पर अभाव का यह वितरण, व्यक्ति (इंसान) की क्षमता (बूते) के परे (बाहर) हो जाता है। तब अभाव के वितरण के लिए सरकार ही कुछ करना चाहे, तो कर सकती है।

हम देख चुके हैं कि आवश्यकता से कम उत्पादन होने पर, पुनर्वितरण या अभाव के वितरण की तात्कालिक चुनौती के अतिरिक्त, भविष्य में वांछित उत्पादन हेतु **उत्पादन–वृद्धि** (**वर्त्तमान उत्पादन में आवश्यक वृद्धि**) की **स्थायी चुनौती** भी बनी रहती है। इस उत्पादन–वृद्धि की दिशा में व्यक्ति, स्वयं व्यक्ति के तौर पर कुछ खास तो नहीं कर सक रहा है, लेकिन अगर वही **व्यक्ति** किसी संगठन या फिर **सरकार ही का एक अंग** हो, तो **उत्पादन–वृद्धि** की दिशा में उसके (उस व्यक्ति के) कुछ कर सकने की संभावना (उम्मीद) सचमुच काफी बढ़ जाती है – व्यक्तिगत और संगठनात्मक, दोनों ही स्तरों पर।

उत्पादन (उपज) के **पुनर्वितरण** के लिए दुनिया में **पूँजीवादी** (निजी या गैर–सरकारी पूँजीवादी) अर्थ–व्यवस्था, तथाकथित **साम्यवादी** (वस्तुतः सरकारी पूँजीवादी) अर्थव्यवस्था और **मिश्रित** (निजी–सह–सरकारी पूँजीवादी) अर्थव्यवस्था, सभी मौजूद हैं। लेकिन भारत के लिए इनसे अलग एक **नयी आधुनिक अर्थव्यवस्था** का विकल्प अनिवार्य है, और यह नयी अर्थव्यवस्था न सिर्फ पुनर्वितरण, बल्कि पुनरुत्पादन या उत्पादन–वृद्धि के लिए भी जिम्मेदार होगी। इस दिशा में हमें राम–राज्य का स्मरण कराने वाले गाँधी जी की ट्रस्ट व्यवस्था ही आवश्यक वितरण–व्यवस्था का सही विकल्प जान पड़ती है। आएँ, जरा उपर्युक्त विकल्पों की गहराई से पड़ताल करें।

हमारी आज की अर्थव्यवस्था में कुछ लोग एवं कुछ उपकरण वस्तुतःभोजन एवं अन्य सुविधाओं के **वितरण** एवं **पुनर्वितरण** में लगे हैं और शेष लोग एवं शेष उपकरण इन सुविधाओं के **उत्पादन** में। मेरी समझ में, हमारे देश में भोजन एवं अन्य सुविधाओं की पर्याप्त आपूर्त्ति में कमी का कारण दरअसल उनके मूल उत्पादन में कमी का होना है।

अतः अपनी अर्थव्यवस्था के अंतर्गत, हमें वितरण–पुनर्वितरण में लगे लोगों एवं उपकरणों को **घटा** कर, उत्पादन–पुनरुत्पादन के लिए **अतिरिक्त** लोगों एवं उपकरणों की व्यवस्था करनी पड़ेगी। उदाहरणार्थ, बीज या पूँजी या हाथ आदि की कमी के कारण जितने **खेत** हर साल **परती** रह जाते हैं, उनके सर्वेक्षण तथा उन्हें बुनवाने के लिए हमें वैज्ञानिक उपकरण लगाने होंगे और उन उपकरणों का उपयोग कर सकने वाले लोग भी लगाने होंगे। खेत या जमीन का अब तक मानव से जो सबंध रहा है, उसे मैंने ऐसे अभिव्यक्त किया है:

पृथ्वी की भूमि

धान रोपती बालाओं के कृषि गीतों का मधुर शोर,
कुदाल चलाते कृषि पुत्रों का भरपूर जोर!
ताकि माँ अन्नपूर्णा हो जाएं द्रवित,
कि वे कभी न हों कुपित!

जुतना ही है भूमि की प्रकृति,
तभी सिंचती हैउसकी संतति!
जिसे सजाते–सँवारते मानव–हस्त प्रसन्न,
जो उपजाती स्वर्णिम अन्न–कण!
भूमि जनती आयी है भोजन,

बिन जिसके निश्चित है **मरण**!
पर काट न डालो सारे **वन**,
कि हो जाए भूमि का ही **क्षरण**!

यह सब है सत्य तथ्य,
पृथ्वी की भूमि का जीवन–कथ्य!

पृथ्वी एवं भूमि से हमें मिलता रहा है हमारा भोजन, सारी लकड़ी और वह कपास, जिससे हमारे कपड़े बनते हैं और वह पटुआ (जूट), जिसमे बोरे, क्षौम वस्त्र इत्यादि बनते हैं।

हमारा भोजन क्या है? हमारा भोजन है, हमारे शरीर की तात्कालिक आवश्यकता के अनुरूप एक निश्चित अनुपात में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, विटामिन, लवण एवं सेल्युलोज के सुखाद्य एवं सुपाच्य रूप। क्या हैं ये सुखाद्य, सुपाच्य एवं प्रकृतिजन्य रूप। आप इन्हें अच्छी तरह जानते हैं। **कार्बोहाइड्रेट** के कुछ प्रमुख सुखाद्य एवं सुपाच्य रूप हैं आलू, चावल, गेहूँ, चीनी, गुड़, शकरकन्द इत्यादि। **प्रोटीन** के कुछ प्रसिद्ध सुखाद्य–सुपाच्य रूप हैं, दालें (दलहन), मछलियाँ, दूध, सोयाबीन, मांस इत्यादि। **सेल्युलोज**, **लवण** एवं **विटामिन** हमें हरी सब्जियों से एक साथ मिल जाते हैं। **वसा** के लिए हम दूध से बने घी, वनस्पति घी या खाद्य तेल का इस्तेमाल करते हैं। **लवण** के लिए हरी सब्जियों के अतिरिक्त साधारण नमक या आयोडीनयुक्त नमक का प्रयोग आज सामान्य है। भोजन की इन प्रसिद्ध वस्तुओं की आपूर्त्ति के मामले में हमारी अर्थव्यवस्था की क्या स्थिति है और आगे भविष्य में हमारी अर्थव्यवस्था के लिए इस क्षेत्र में क्या संभव है, जरा इसे विचारा जाए।

सबसे पहले कार्बोहाइड्रेट पर आएँ। कार्बोहाइड्रेट के स्रोतों में चावल एवं गेहूं पर ही, हमारे देश के लोग, सबसे ज्यादा निर्भर रहे हैं। आलू तीन–चार सौ सालों पहले ही हमारे देश में दक्षिण अमेरिका महाद्वीप से यूरोप होते हुए पहुँचा है, लेकिन अब आलू की उपज और खपत साल–दर–साल बढ़ती जा रही है। भारत में, खासकर बिहार में, रबी सीजन में, **आलू** की अधिकतम उत्पादन–दर लगभग **चार सौ चालीस क्विण्टल प्रति एकड़** तक आँकी गयी है, जबकि भारत ही में **धान** की अधिकतम उत्पादन–दर लगभग **नब्बे क्विण्टल प्रति एकड़** तक आँकी गयी है, *जिससे अधिकतम लगभग* ***60 क्विण्टल चावल प्रति एकड़*** *प्राप्य होगा*, और **गेहूं** की अधिकतम उत्पादन दर न्यूजीलैंड में लगभग **सत्तर क्विण्टल प्रति एकड़** तक आँकी गयी है। इस प्रकार, कार्बोहाइड्रेट की आपूर्त्ति के दृष्टिकोण से हमारी अर्थव्यवस्था के लिए, आलू के उत्पादन एवं उपभोग में निरन्तर वृद्धि, एक स्वतः अनुकूल प्रक्रिया है। आलू की इस वृद्धि से, हमारे चावल एवं गेहूं जैसे अपेक्षाकृत कम उपज–क्षमता वाले कार्बोहाइड्रेट–आहार–स्रोतों पर बढ़ता जा रहा बोझ घटाना संभव है, लेकिन तत्काल **सिर्फ तकनीकी और कागजी तौर** पर।

दरअसल, **व्यावहारिक तौर पर** ऐसा है कि हमारे लोग आलू का इस्तेमाल सब्जी के विकल्प के रूप में करते हैं, न कि चावल या गेहूँ जैसे कार्बोहाइड्रेट–आहार–स्रोतों के विकल्प के रूप में! नतीजे के तौर पर, एक तरफ हमारी अर्थव्यवस्था में चावल एवं गेहूँ की माँग में वृद्धि कायम है, दूसरी तरफ हमारे लोगों का **स्वास्थ्य** आलू को सब्जी के बदले इस्तेमाल करने के कारण, **हरी सब्जी की शारीरिक कमी** एवं **कार्बोहाइड्रेट के शारीरिक आधिक्य** जैसे भोजन–असन्तुलनों का शिकार हो रहा है।

इस दिशा में उचित कदम यही होगा कि आनेवाली पीढ़ी को इस प्रकार शिक्षित किया जाए कि उसके लिए **कार्बोहाइड्रेट** का प्रमुख आहार–स्रोत, **चावल** या **गेहूँ** नहीं, बल्कि अधिक उपज–क्षमता वाले एवं अधिक सुपाच्य **आलू** या **शकरकन्द** हों! ध्यान रहे कि पिछले हजारों वर्षों से **कार्बोहाइड्रेट** के स्रोत के रूप में **कन्द–मूल** का उपभोग करते आये **हमारे देश के गरीब लोग** पिछले **दो–तीन सौ सालों** से, मकई से भी बढ़कर **शकरकन्द** (स्वीटपोटैटो) का ही उपभोग कन्द–मूल समझकर करते आ रहे हैं। इसी तरह, दक्षिण अमेरिका के आम लोग **कार्बोहाइड्रेट** के स्रोत के रूप में **आलू** का उपभोग सदियों से करते आये हैं। यूरोप के गोरे लोगों ने भी पुनर्जागरण–युग के बाद इसका उपभोग शुरू किया और आज आलू उनके भोजन का सबसे प्रमुख आहार बन चुका है।

चावल–गेहूँ का उपभोग घटे, और उसके स्थान पर, भारतीय भोजन में आलू का उपभोग बढ़े–इस भवितव्य को साकार करने के लिए हमारे देश की जनता को निस्सन्देह अपनी भोजन–संबंधी आदतें बदलनी होगी, और भोजन–संबंधी आदतों को बदलने के लिए जरूरी है आहार–संयम! और, आहार–संयम का फल हमेशा आर्थिक दृष्टि से मीठा होता है।

उदाहरणार्थ, भारत के ही वैश्य एवं व्यापारी समुदाय, जैसे मारवाड़ी, पंजाबी, जैन इत्यादि बुद्ध और महावीर इत्यादि के ही युग से मदिराहार, मांसाहार जैसे महँगे आहारों का त्याग करने की परम्परा का यथासंभव पालन करते आ रहे हैं, फलस्वरूप वे आज भी अन्य भारतीयों की तुलना में पर्याप्त धनी हैं। आशा है, सारे भारतीय आलू का उपभोग बढ़ाने के प्रति, और चावल–गेहूं पर बढ़ते बोझ को घटाने के प्रति समय रहते जागरुक एवं सचेत हो सकेंगे, तभी हमारी खाद्य–समस्या का पर्याप्त स्थायी समाधान ढूंढा जा सकता है।

प्रोटीन की शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए वर्त्तमान काल में हमारा सबसे बड़ा स्रोत **दालें** (**दलहन**) हैं। लेकिन **भविष्य** के लिए मैं प्रोटीन के सबसे महत्वपूर्ण वैकल्पिक स्रोत के रूप में **मछली** को चुनता हूँ। दरअसल, आज की किसी भी समस्या का हल, *भविष्य की कई गुनी जनसंख्या को ध्यान में रखकर*, ढूँढ़ना ही एकमात्र औचित्यपूर्ण है। इस दृष्टिकोण से, मछली ही हमारी बढ़ती जनसंख्या के लिए प्रोटीन की बढ़ती मांग को भविष्य में पूरा कर सकती है। वह ऐसे कि एक तो विश्व में तीन चौथाई जल है; फिर दालों की **प्रति एकड़** वार्षिक उपज के मुकाबले, **एक एकड़** क्षेत्रफल के तालाब से मछली की वार्षिक उपज कहीं ज्यादा है। साथ ही, मछली से प्राप्त प्रोटीन वस्तुतःगुणवत्ता की दृष्टि से भी अन्य सभी प्रोटीन–स्रोतों से प्राप्त प्रोटीनों से श्रेष्ठतर है।

खीरा, हरी मिर्च, बैंगन, टमाटर इत्यादि जैसी प्रमुख हरी सब्जियों तथा गन्ना, केला आदि जैसे फलों की अधिकतम उत्पादन–दर भी चार सौ क्विण्टल से छः सौ क्विण्टल प्रति एकड़ तक आँकी गयी है। इनकी उच्च उत्पादन–क्षमता के कारण, हम **विटामिन**, **सेल्युलोज** तथा **लवण** की आवश्यकता–पूर्त्ति के संदर्भ में निश्चिन्त रह सकते हैं।

कुल मिलाकर, भारत के आम नागरिकों को **अल्पपोषण–सह–कुपोषण–जन्य गरीबी** से **मुक्त** करने हेतु, मेरी भावी खाद्य नीति का लक्ष्य या निष्कर्ष है :**कार्बोहाइड्रेट** के लिए **आलू**, **प्रोटीन** के लिए **मछली**, तथा **विटामिन–सेल्युलोज–लवण** के लिए **हरी सब्जियों** के अधिकाधिक उत्पादन पर अपनी निर्भरता बढ़ाना।

अब प्रश्न है कि नागरिकों की अल्पपोषण–सह–कुपोषण–जन्य गरीबी से मुक्ति के इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए कौन–सी प्रक्रिया (तरकीब) सबसे उपयुक्त होगी। **सर्वप्रथम**, अपने नागरिकों को इस लक्ष्य–प्राप्ति की दिशा में **जागृत** या **मोबिलाइज्** (**गतिमान**) करना होगा, और कार्यकर्त्ताओं (वोलण्टियर्स) की सच्ची इच्छा–शक्ति के सामने यह जागृति ज्यादा मुश्किल नहीं है। उदाहरण के तौर पर, सन 1965–66 ई. में आये अकाल का सामना करने के लिए **तत्कालीन प्रधानमंत्री, श्री लाल बहादुर शास्त्री** ने स्वयं का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए, अपने नागरिकों से दिन में कम–से–कम एक भोजन–वेला में **चावल** के बदले **गेहूँ** को भोजन के रूप में अपनाने, तथा इसके अलावे पूरे सप्ताह में एक वेला **उपवास** रखने, की सफलीभूत (सफल) प्रार्थनाएं (विनतियां) की थीं।

लेकिन इस संबंध में सिर्फ जागृति काफी नहीं है। समाज के निचले आर्थिक तबके के नागरिक सब कुछ चाहकर भी कुछ शुरुआत करने की भौतिक सामर्थ्य नहीं रखते हैं। अपने भौतिक–सह–बौद्धिक अस्तित्व को अक्षुण्ण रखने के लिए लगातार जूझ रहे मध्यम आर्थिक वर्ग के नागरिक भी इस दिशा में कुछ खास शुरुआत करने में सक्षम नहीं हैं। सिर्फ उच्च आर्थिक वर्ग के नागरिक ही इस दिशा में कुछ खास शुरुआत कर सकते हैं, लेकिन इनमें से ज्यादातर नागरिक इस संबंध में संवेदना–शून्य हैं, जिसका कारण उनकी यह **भयपूर्ण** (**भीरु**) **मानसिकता** है कि *जिस अर्थप्रणाली (इकोनोमी) के अन्तर्गत उन्होने धनोपार्जन किया है, उसमें किसी भी तरह का परिवर्तन उनके लिए आत्मघाती सिद्ध हो सकता है।* अतः, उच्च आर्थिक वर्ग के गिने–चुने **प्रबुद्ध** एवं **संवेदनशील** नागरिकों से ही हम इस दिशा में आगे बढ़ने की उम्मीद कर सकते हैं।

उदाहरणार्थ, इन्फोसिस के उद्यमी रहे **नंदन निलेकणि** ने नागरिकों की "आधार **संख्या**" की संकल्पना न सिर्फ अपनी पुस्तक में प्रस्तुत की, बल्कि भारत सरकार द्वारा अवसर दिये जाने पर उस संकल्पना को सफलतापूर्वक साकार भी किया, *जिससे आगे चलकर अधिकतम नागरिकों के बैंक खाते खुलवाये जा सके, और तत्पश्चात उन करोड़ों बैंक खातों में हमारी सेवारत सरकारों द्वारा लाभार्थी नागरिकें को आवश्यकतानुसार* ***प्रत्यक्ष लाभ–***

हस्तांतरण (डाइरेक्ट बीनिफिट ट्रांसफर) *मुमकिन हो सका।*

जहाँ तक उच्च आर्थिक वर्ग में आनेवाली सार्वजनिक क्षेत्र की संस्थाओं द्वारा इस दिशा में कुछ कर सकने का सवाल है, तो पाया यह जाता है कि इन संस्थाओं पर **लोकमत** का दबाव इतना ज्यादा, और **कर्मचारी–मत** का दबाव इतना कमहोता है कि इसके परिणामस्वरूप **संस्थागत लक्ष्यों** और **कर्मचारी–लक्ष्यों** में मेल नहीं रह जाता, और फिर इस विसंगति से **लोकहित** को ही सर्वाधिक क्षति पहुंचती है।

उदाहरणार्थ, हमारे देश में पुत्री के विवाह के अवसर पर, उस पुत्री के हिस्से की सम्पत्ति (स्त्री–धन) को उसके नाम में समतुल्य दहेज के रूप में देने की अनिवार्य **लोक–परंपरा** रही है, और इसीलिए पुत्री के पिता के लिए अपनी अचल संपत्ति को यथासंभव बचाते हुए पुत्री के विवाह के अवसर पर दहेज का खर्च जुटाना एक अनिवार्य जीवन–लक्ष्य होता है, *परन्तु इसके बावजूद सार्वजनिक संस्थाओं के कर्मचारियों के लिए अनिवार्य रहे इस जीवन–लक्ष्य को "न्यूनतम* ***अनिवार्य कर्मचारी–जीवन–लक्ष्यों****" की गणना में शामिल नहीं किया जाता है, क्योंकि स्वयं लोकमत इस लोक–परंपरा से मेल नहीं रख पाया।* नतीजतन, इन सार्वजनिक संस्थाओं के कर्मचारियों में –अपने *परिवार की पुत्रियों को उनके विवाह–अवसर पर दहेज–रूपी* ***स्त्री–धन*** *देने के लिए वांछित* ***धनोपार्जन*** *करने हेतु* –अपनी संस्थाओं के कार्यों में, **आर्थिक** प्रकृति की **बेईमानियां** करने की **कुप्रवृत्ति** व्याप्त होती दिख रही है। यहां यह कहावत भी लागू हो जाती है कि टोकरी में यदि एक भी आम सड़ जाए, तो उस टोकरी में रखे बाकी आम भी जल्द ही सड़ जाते हैं।

अब जरा इस पर विचार किया जाए कि भारत के आम नागरिकों की **अल्पपोषण–सह–कुपोषण–जन्य गरीबी से मुक्ति** की लक्ष्य–प्राप्ति हेतु शुरुआत करने वाले व्यक्ति या संस्थाएं चाहे जो भी हों, पर उनके शुरुआती कदम या प्रयास क्या हों! मेरी समझ में, हमें विकेंद्रीकृत (डीसेण्ट्रलाइज्ड) तरीके से कार्यकर्त्ता–स्तर पर बिल्कुल खेत से शुरू करना चाहिए।

उदाहरण के तौर पर, मान लीजिए कि बिहार के नालंदा जिला के सोहडीह गाँव के विश्व–रिकार्ड–धारी आलू–उत्पादक कृषक, श्री राकेश कुमार के पास पंद्रह एकड़ जमीन हो, और उस जमीन में वे अपने विशिष्ट तरीके से वांछित पूंजी को इन्वेस्ट (निवेश) करके आलू बोएँ, तो लगभग साढ़े छः हजार क्विण्टल आलू उपज सकेगा। अगर आलू की ऐसी दो लगातार फसलें एक ही रबी सीजन (मौसम) में बोयी जाएँ, जिनमें एक अर्ली–सीजन क्रॉप (रबी सीजन के शुरुआती भाग के लिए उपयुक्त फसल) हो तथा दूसरी लेट–सीजन क्रॉप (रबी सीजन के बाद वाले भाग के लिए उपयुक्त फसल) हो, तो इस पंर्हि एकड़ जमीन से चार–पाँच महीनों के एक क्रॉप–सीजन (फसली मौसम) के दरम्यान कुल तेरह हजार (13,000) क्विण्टल आलू उपज सकेगा। यदि अर्ली–सीजन क्रॉप के लिए सही मार्केटिंग नेटवर्क (विपणन संरचना, या बाजार का सही ढाँचा) उपलब्ध हो, तथा लेट–सीजन क्रॉप के लिए सही स्टोरिंग–प्रोसेसिंग सुविधाएँ (जैसे कोल्डस्टोरेज, चिपप्रोसेसर्स इत्यादि) हासिल हों, तो प्रति किलो आलू पर चार रुपये तक का लाभ या मुनाफा संभव है। इस प्रकार हिसाब करने पर, एक रबी सीजन में पंर्हि एकड़ जमीन से बावन लाख रुपये तक लाभार्जन मुमकिन है।

यदि उपर्युक्त श्री राकेश कुमार इन बावन लाख रुपयों में दस लाख रुपये, अगले क्रॉप–सीजन (खरीफ) में निवेश हेतु तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्त्ति के लिए सुरक्षित रख लें, तो शेष बयालीस लाख रुपयों से वे अतिरिक्त खेतों को लीज के आधुनिक व्यावसायिक करार (अनुबन्ध) के अन्तर्गत हासिल कर उन खेतों में अगली फसल बोने हेतु निवेश या इन्वेस्ट कर सकते हैं।यदि ऐसे अनेक राकेश कुमार हो जाएं, और वे सभी कृषि–उद्यमी इसी तरीके सेकार्बोहाइड्रेट–दायक आलू तथा अन्य वांछित फसलें उगाते रहें, तो एक दिन ऐसा आएगा, जब भारत–सहित पूरा विश्व भोजनादि की अभावग्रस्तता से पूर्णतः मुक्त हो चुकेगा।

वस्तुतः, खाद्य–सामग्रियों के प्रचुर उत्पादन, उचित संरक्षण एवं न्यायोचित वितरण से निस्संदेह नागरिकों की **अल्पपोषण–सह–कुपोषण–जन्य गरीबी से मुक्ति** की लक्ष्य–प्राप्ति सुनिश्चित हो सकेगी। भारत सरकार के **राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, 2013** के पूर्णरूपेण अनुपालन द्वारा हमारे देश के जरूरतमंद नागरिकों कोसबसिडाइज्ड दरों पर अथवा आवश्यकतानुसार निःशुल्क आधार पर पर्याप्त मात्रा में

वांछित स्वादिष्ट **कैलोरी–युक्त भोजन** का न्यायोचित वितरण सुनिश्चित किया जाना संभव है।

जहाँ हजारों–लाखों अर्थशास्त्री, नेता, बुद्धिजीवी इत्यादि भारत की गरीबी का समाधान ढूँढ़ते–ढूँढते अभी तक बुरी तरह नाकामयाब ही रहे हैं, वहाँ ही ऊपर लिखी इस मामूली स्कीम (योजना) से भारत की गरीबी दूर करने की बात करना हमारे कई लोगों को एक दीवाने का काम ही नजर आएगा। लेकिन इस संदर्भ में मैं वर्त्तमान भारत की वर्त्तमान अमेरिका से तुलना करने में नहीं चुकूँगा। अमेरिका क्षेत्रफल में भारत से लगभग तीन गुना बड़ा है, परन्तु आबादी में वह भारत से चार गुना कम है। इसके बावजूद 138 करोड़ की आबादी वाले भारत की लगभग 55 प्रतिशत कृषिरत आबादी 33 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल वाले भारत के सारे खेत नहीं आबाद कर पाती है, जबकि लगभग 33 करोड़ की आबादी वाले अमेरिका की संभवतः मात्र 10 प्रतिशत आबादी, अपने 95 लाख वर्ग किलोमीटर वाले देश अमेरिका का एक कोना भी अप्रयुक्त (अनयूटिलाइज्ड या बेकार) नहीं रहने देती। मैं यही कहना चाहता हूँ कि जो अमेरिका के लिए संभव है, वह भारत के लिए भी पूर्णतः संभव है; लेकिन उस अनैतिक तरीके से हर्गिज नहीं, जिस अनैतिक तरीके से अमेरिका ने अपने लिए यह सब मुमकिन (संभव) किया।

अमेरिका ने अपने जर्रे–जमीन की जो तरक्की हासिल की, उस तरक्की के लिए उस अमेरिका ने लाखों–करोड़ों अफ्रीकी हब्शियों और स्वदेशी अश्वेत इंसानों को जबरन् गुलाम बनाया, उनसे जबरन् श्रम लिया, और इस शोषण–प्रक्रिया में उसने (अमेरिका ने) इन लाखों–करोड़ों निर्दोष, निरीह जानों की बलि ले ली; वे निर्दोष लोग जब मरे, तो अपना सारा महान जीवन, उस अमेरिका के नाम अर्पित कर मरे, जो अमेरिका आज भी उनका अहसान मानने को तैयार नहीं!

ऐसा सब कुछ यूरोप के देशों ने भी किया। उन्होंने न सिर्फ इंसानों (अन्य देशों के वासियों) को गुलाम बनाया, बल्कि उनके जर्रे–जमीन को भी गुलाम बना लिया, और इस प्रकार यूरोप ने न सिर्फ लोगों की बलि ली, बल्कि उनके जर्रे–जमीन का भी दोहन किया; अमेरिका को दूसरों की जर्रे–जमीन के दोहन की जरूरत इसलिए नहीं पड़ी कि इतिहास के मोड़ पर उसे (अमेरिका को) खुद ही काफी जर्रे–जमीन हासिल हो गयी थी।

ऐसी ही तरक्की हासिल करने का इरादा तथाकथित साम्यवादी देशों का भी रहा है। उन्होंने क्या तरीका आजमाया है? उन्होंने किन्हीं अन्य देशों के नागरिकों को नहीं, बल्कि अपने ही नागरिकों की मौलिक स्वतंत्रता पर अंकुश लगाकर, या कहें, एक तरह से उन्हें गुलाम या बंधुआ मजदूर बनाकर, यह सब हासिल करने का प्रयास किया है।

निस्सन्देह, मानव द्वारा भौतिक तरक्की हासिल करने के उपर्युक्त सारे तरीके अमानवीय ही हैं और भारत के लिए इनमें से कोई तरीका आजमाना अनैतिक ही नहीं, बल्कि भारत की अपनी विशिष्ट संस्कृति तथा साथ ही आधुनिक विश्व के नवजागृत मानवीय विवेक के कारण भी, असंभव एवं अतार्किक है!

अब उपर्युक्त ऐतिहासिक तथ्यों के प्रकाश में, भारत की भौतिक तरक्की के लिए सुझायी गयी मेरी स्कीम (योजना) के सूक्ष्म पहलुओं को टटोला जाए। जरा सोचें कि भूमि–लीज का वह करार (अनुबन्ध) क्या हो, जिसके अंतर्गत एक प्लॉट (उदाहरणार्थ, मान लें कि श्री राकेश कुमार जैसे विश्व–रिकॉर्ड–धारी आलू–उत्पादक कृषक के पास नालंदा में 15 एकड़ का उल्लिखित प्लॉट हो) के सरप्लस प्रोडक्शन (अतिरिक्त उत्पाद) या आय (जैसे लाभार्जन के बावन लाख रुपयों में शेष बचे हुए उपर्युक्त बयालीस लाख रुपये) को अतिरिक्त खेतों पर इन्वेस्ट करना लगातार संभव हो।

मेरी समझ में, अतिरिक्त खेतों पर इस निवेश के लिए वही जमीन चुनी जानी चाहिए, जिनके मालिक यह करार करें कि वे (नये खेतों के पुराने मालिक) भावी सरप्लस उत्पादन के एक निश्चित अंश (शेयर) पर पूर्ण अधिकार के अलावे, शेष अंश पर सिर्फ औपचारिक मालिकाना हक (शेयर्स होल्डर्स राइट) भले ही रखें, परन्तु उसके (भावी सरप्लस के) निवेश या इन्वेस्टमेण्ट के निर्णय पर उनके मूल निवेशकों अर्थात प्रोमोटर्स का ही हक (इन्वेस्टमेण्ट/निवेश की स्ट्रेटजी/रणनीति का विवेकाधिकार) रहे।

मूलनिवेशकों (प्रोमोटर्स) का यह निवेशनीति–निर्धारण–अधिकार भी तभी तक सुरक्षित रहे, जब तक वे मूलनिवेशक स्वयं निवेश की मूल भावना के प्रति वफादार रहें। कुल मिलाकर, कृषि क्षेत्र के उपर्युक्त **अतिरिक्त उत्पाद (सरप्लस प्रोडक्शन) का**

कृषि–क्षेत्र से बहिर्गमन, सामान्य परिस्थितियों में, तब तक रोक रखा जाएगा, जब तक हमारे देश के **सारे खेतों की पूँजीनिवेश की माँग** पूरी नहीं हो जाती। इसी क्रम में, यदि नये खेतों परहोने वाले पूँजीनिवेश के लिए चयनित जमीनों (खेतों) के मालिक भी भविष्य में सक्रिय तौर पर इस **इन्वेस्टमेण्ट–चेन (कृषि–निवेश शृंखला)** में भागीदार (पार्टनर) बनना चाहें, तो उन्हें उनकी योग्यतानुसार **सक्रिय भागीदार (स्ट्रेटजी–डिसाईडिंग पार्टनर)** बनाया जाएगा।

खैर, यह तो हुई करार की बात! इस करार को पूरा करने के लिए जो संस्था रूप लेगी, उसे आप एक ट्रस्ट भी कह सकते हैं। 'ट्रस्ट' शब्द का उपयोग **गाँधीजी** ने भी **आर्थिक सुधारों** के संदर्भ में किया था। कुल मिलाकर, मेरी सुझायी हुई ऐसी संस्था का मूल आर्थिक सिद्धान्त है: पूँजीवादी तरीके से **उत्पादन**, लेकिन राम–राज्य के सिद्धांतों के अनुरूप अथवा तथाकथित साम्यवादी तरीके से अतिरिक्त आय का **वितरण।**

स्पष्टतः, उत्पादन (प्रोडक्शन) के लिए मेरी स्कीम में बड़ी–बड़ी मशीनों, बड़े–बड़े यंत्रों इत्यादि का इस्तेमाल होगा, लेकिन अतिरिक्त उत्पाद (सरप्लस प्रोडक्ट) या आय को निरंतर आगे और आगे बढ़ते कृषि निवेश(फर्दर एण्ड फर्दर इन्वेस्टमेण्ट) के जरिये वितरित (डिस्ट्रीब्यूट) करने की नीति (स्ट्रेटजी) बिल्कुल पवित्र (होलिस्टिक), लोकहितकारी एवं जनवादी (एगेलिटेरियन) है।

एक प्रसिद्ध ट्रस्ट के उदाहरण के तौर पर मैं महान स्वीडिश वैज्ञानिक, **स्वर्गीय अल्फ्रेडनोबेल** की मृत्युपूर्व इच्छा द्वारा उनके मरणोपरान्त, उनकी जमा संपत्ति से स्थापित **नोबेल ट्रस्ट** को याद रखता हूँ। इस ट्रस्ट की संपत्ति पर मिलने वाले वार्षिक ब्याज से ही विश्वस्तरीय मनीषियों को वर्षतःनोबेल पुरस्कार दिये जाते हैं।

(शेष लेख पश्चप्रकाशनीय अगले अंक में)

खाना बस मखाना

पुष्पनायक
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

खाना बस मखाना,
कुपोषण पे हो जब निशाना।
खूब खाना तुम मखाना,
कमजोरी को हो मिटाना।

मखाना का राज जिसने जाना,
जानेगा जिनको जमाना।
है वह हर वैज्ञानिक मस्ताना,
जिनमें हैं एक बकुल रंजन जाना।

मखाना को इन्होंने खूब पहचाना,
इंदु शेखर है वो दीवाना।
किसानों को है बताना,
तो मनोज ही बतलाएं मखाना।

मखाना संग जीना,
मछली खोजे ठिकाना।
शैलेन्द्र राउत ने उनको जाना,
ढूंढ़ा रहस्य अनजाना।

मखाना की खीर है खाना,
तवे पर जरूर उसे तलना।
चीनी या गुड़ उसमें मिलाना,
खाना बस मखाना।

दरभंगा के जीरो माइल जाना,
है वहां मखाना ही मखाना।
जानें वे मखाना ही चखाना,
खाना बस मखाना।

कोई नही बनना चाहता किसान

सरफराज अहमद
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार)

बच्चे बनना चाहते हैं डॉक्टर, इंजीनियर और सूचना तंत्र के विद्वान
पर कोई नहीं बनना चाहता किसान

किसान पर सब करते हैं राजनीति
पर कोई नहीं सुनता उनकी आपबीती
उनके बेटे भी छोड़ गये साथ
तभी तो गाँव हो रहे श्मशान से वीरान

बच्चे बनना चाहते हैं डॉक्टर,
इंजीनियर और सूचना तंत्र के विद्वान
पर कोई नहीं बनना चाहता किसान

मानता हूँ शहरों में खूब पैसे कमायेंगे हम
फिर क्या पैसों को ही खायेंगे हम

इतनी भी नहीं दूरदर्शिता तो
फिर क्यों कहलाये हम ज्ञानवान

बच्चे बनना चाहते हैं डॉक्टर,
इंजीनियर और सूचना तंत्र के विद्वान
पर कोई नहीं बनना चाहता किसान

क्यो न हर नागरिक दे अपना योगदान
और जीवन के किसी हिस्से मे बने किसान

तभी होगा देश सुरक्षित और समृद्ध
होंगे खेत–खलिहान

बच्चे बनना चाहते हैं डॉक्टर,
इंजीनियर और सूचना तंत्र के विद्वान
पर कोई नहीं बनना चाहता किसान

संपदकीय संकलनः बदलता भारत

भारत अपनी आजादी से अब तक बहुत कुछ हासिल कर चुका है और बहुत तेजी से हासिल करने में जुटा भी है, आइए जानते हैं आजादी के समय कैसा था भारत और अब तक कितना बदल चुका है भारत।

- आज भारत की गिनती विश्व के बड़े और शक्तिशाली देशों में होती है।
- दुध उत्पादन में आज भरत विश्व में सर्वप्रथम है।
- अनाज का सबसे बड़ा भंडार आज भारत में है। वहीं, दुनिया में सबसे ज्यादा गेहूं और चावल का उत्पादन चीन के बाद भारत में होता है।
- हालांकि, भारत में अब रिकॉर्ड प्रोडक्शन होता है. आजादी के समय 508 लाख टन कृषि उत्पादन हुआ था, जो अब बढ़कर 3,145 लाख टन हो गया है।
- आजादी के समय भारत की अर्थव्यस्था काफी हद तक कृषि पर निर्भर थी. लेकिन आज देश की जीडीपी में कृषि का योगदान 20% से भी कम है।
- आज भारत का खुद का स्पेस एजेंसी है और भारत चांद तक पहुंच चुका है।
- भारत परमाणु संपन्न विश्व के शक्तिशाली देशों में से एक है साथ ही डिफेंस के क्षेत्र में हम धीरे–धीरे आत्मनिर्भर हो रहे हैं??
- साथ ही हमें यह नहीं भुलना चाहिए जब हम आजाद हुए थे तब देश की आबादी 34 करोड़ के आसपास थी. 1951 में देश की पहली जनगणना हुई. उस वक्त हमारी आबादी 36 करोड़ से थोड़ी ही ज्यादा थी. आखिरी बार 2011 में जनगणना हुई थी, तब आबादी बढ़कर 121 करोड़ के पार पहुंच गई थी।
- 1950–51 में देश की जीडीपी 2.93 लाख करोड़ रुपये थी, जो 2021–22 में बढ़कर 147.36 लाख करोड़ रुपये हो गई??
- इस साल भारत के दुनिया की 5वीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनने का अनुमान है।
- इसी तरह 1950–51 में देश में हर आदमी की सालाना औसतन कमाई 274 रुपये थी, जो 2021–22 में बढ़कर 1.50 लाख रुपये के पार हो गई।
- बेरोजगारी को लेकर 1972–73 में नेशनल सैम्पल सर्वे ऑफिस (NSSO) ने पहला सर्वे किया था. उसके मुताबिक, उस समय देश में बेरोजगारी दर 8.4% थी, जो 2020–21 में घटकर 4.2% पर आ गई।
- आजादी के समय देश की 80% आबादी गरीब थी, जो अब घटकर 10% के आसपास आ गई है।
- आजादी के समय देश में 30 मेडिकल कॉलेज थे, लेकिन अब 612 हैं।
- इतना ही नहीं, आजादी के समय 2,014 सरकारी अस्पताल थे, जिनकी संख्या अब 41 हजार से ज्यादा है।
- आजादी के समय औसत आयु 34 साल थी, जो अब बढ़कर 69.7 साल हो गई है।
- मार्च 1948 तक देश में 1.50 लाख के आसपास स्कूल थे, लेकिन आज 15 लाख से ज्यादा स्कूल हैं।
- उस वक्त महज 414 कॉलेज और 34 यूनिवर्सिटीज थी. आज 42 हजार से ज्यादा कॉलेज और 1 हजार से ज्यादा यूनिवर्सिटीज हैं।
- इतना ही नहीं, 1951 में साक्षरता दर 18% थी, जो 2017 तक बढ़कर 78% हो गई है।

हिन्दी पखवाड़ा – 2021 : शुभारंभ एवं समापन रिपोर्ट

हिन्दी पखवाड़ा – 2021 का शुभारंभ

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना में दिनांक 14.09.2021 को हिंदी दिवस के आयोजन के साथ हिन्दी पखवाड़ा–2021 समारोह का शुभारंभ हुआ। कार्यक्रम की शुरुआत आईसीएआर गीत से हुई, जिसके बाद संस्थान के निदेशक डॉ. उज्ज्वल कुमार ने दीप प्रज्ज्वलित किया। इस समारोह में संस्थान के विभिन्न प्रभागों/अनुभागों/प्रकोष्ठों/इकाइयों के अधिकारीगण एवं कर्मचारीगण उपस्थित थे। मंच का संचालन डॉ. कुमारी शुभा ने किया। तत्पश्चात्, डॉ. शिवानी, प्रधान वैज्ञानिक–सह–उपाध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने इस पखवाड़ा के दौरान आयोजित होने वाली विभिन्न प्रतियोगिताओं के बारे में जानकारी दी।

डॉ. आशुतोष कुमार उपाध्याय, प्रभागाध्यक्ष, भूमि एवं जल प्रबंधन ने संस्थान के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को हिंदी दिवस के सुअवसर पर बधाई देते हुए राजभाषा के महत्त्व पर चर्चा की। उन्होंने बताया कि संस्थान के सभी वैज्ञानिकों को यह कोशिश करनी चाहिए कि वे जो भी प्रकाशन का कार्य करे, वे यथासंभव हिंदी में हो, ताकि हमारे देश के किसानों को इनका लाभ मिल सके।

डॉ. ए. के. चौधरी, प्रभागाध्यक्ष, फसल अनुसंधान ने सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को संबोधित करते हुए यह आह्वान किया कि हम अपनी राजभाषा हिंदी को हिंदी पखवाड़ा या मास तक ही सीमित न रखें, बल्कि यह हमारा यह दायित्व है कि पूरे वर्ष भर हम ज्यादा से ज्यादा अपने कार्यालयीन कार्यों में इसका प्रयोग करें।

डॉ. कमल शर्मा, प्रभागाध्यक्ष, पशुधन एवं मात्स्यिकी प्रबंधन ने बताया कि हिंदी बहुत सरल,सहज और सुगम भाषा होने के साथ–साथ विश्व की संभवतः सबसे वैज्ञानिक भाषा है। इसमें अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति करना बहुत आसान है। उन्होंने बताया कि कृषि में किये गए अनुसंधान को सरल हिंदी लेखनीबद्ध कर कृषकों तक पहुंचा कर देश को प्रगति के पथ पर अग्रसर करने में हमें यथासंभव योगदान करना चाहिए।

श्री पुष्पनायक, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी–सह–सदस्य सचिव, राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने बताया प्रबंधन में प्रभावशाली संवाद का बहुत अधिक महत्व है, एवं हिंदी समृद्ध भाषा होने के कारण इस क्षेत्र में सक्षम है। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि हमारे ज्यादा से ज्यादा पत्राचार हिंदी में ही हो।

संस्थान के माननीय निदेशक महोदय–सह–अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति डॉ. उज्ज्वल कुमार ने संस्थान के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को हिंदी दिवस के सुअवसर पर बधाई देते हुए कहा कि हमारा संस्थान 'क' क्षेत्र में आता है। यह हमलोगों की अनन्य जिम्मेदारी है कि हम अपने सभी कार्यालयीन कार्य 100% हिंदी में ही करें, ताकि राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा दिए गए लक्ष्य को पूरा कर सकें। उन्होंने सभी वैज्ञानिकों को सरल हिंदी का प्रयोग करते हुए कृषि से संबंधित तकनीकों को संकलित एवं प्रकाशित करने के लिए भी प्रोत्साहित किया।

इस समारोह में संस्थान के वैज्ञानिक डॉ. तन्मय कुमार कोले एवं डॉ. अनिर्बाण मुखर्जी ने हिंदी गीतों की प्रस्तुति से कार्यक्रम में उपस्थित सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों का दिल जीत लिया।

कार्यक्रम के अंत में डॉ. शिवानी, प्रधान वैज्ञानिक – सह – उपाध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने उपस्थित सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों

तथा कार्यक्रम को सफल बनाने में राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सभी सदस्यों; डॉ. तारकेश्वर कुमार, डॉ. रजनी कुमारी, डॉ. कीर्ति सौरभ, डॉ. कुमारी शुभा, श्रीमती प्रभा कुमारी एवं हिंदी अनुवादक–सह–संयोजक श्री उमेश कुमार मिश्र को बधाई देते हुए धन्यवाद ज्ञापित किया।

हिंदी पखवाड़ा–2021 की कुछ झलकियाँ

हिन्दी पखवाड़ा – 2021 का समापन समारोह

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना में हिंदी पखवाड़ा–2021 का समापन समारोह दिनांक 01 अक्टूबर 2021 को संपन्न हुआ। कार्यक्रम की शुरुआत आईसीएआर गीत से हुई। डॉ. रजनी कुमारी, वैज्ञानिक ने मंच का संचालन करते हुए उपस्थित सभी कर्मियों के प्रति आभार व्यक्त किया, जिसके उपरांत डॉ. शिवानी, उपाध्यक्ष, संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने राजभाषा हिंदी की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए इस पखवाड़ा में दिनांक 14.09.2021 से 29.09.2021 तक आयोजित प्रतियोगिताओं के बारे में जानकारी दी।

इसी कड़ी में संस्थान के निदेशक डॉ. उज्ज्वल कुमार ने अपने अभिभाषण में राजभाषा हिंदी में अधिकाधिक कार्यालयीन कार्य करने पर बल दिया। उन्होंने बताया कि हमारा संस्थान 'क' क्षेत्र में आता है। यह हम लोगों की अनन्य जिम्मेदारी है कि हम अपने सभी कार्यालयीन कार्य 100% हिंदी में ही करें, ताकि राजभाषा

विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा दिए गए लक्ष्य को पूरा कर सकें। उन्होंने सभी वैज्ञानिकों को सरल हिंदी का प्रयोग करते हुए कृषि से संबंधित तकनीकों को संकलित एवं प्रकाशित करने के लिए भी प्रोत्साहित किया एवं हिंदी पखवाड़ा के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में प्रतिभागियों के प्रदर्शन के आधार पर उन्हें प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं सांत्वना पुरस्कार प्रदान कर उत्साहवर्धन किया।

कार्यक्रम के दौरान डॉ. आशुतोष उपाध्याय, प्रभागाध्यक्ष, भूमि एवं जल प्रबंधन ने अपने प्रेरणात्मक हिंदी कविता से और डॉ. अनिर्बाण मुखर्जी, वैज्ञानिक ने हिंदी गीत से सभागार में उपस्थित कर्मियों का दिल जीत लिया।

पखवाड़ा कार्यक्रम के सफल आयोजन में संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति; डॉ. शिवानी, श्री पुष्पनायक, डॉ. रजनी कुमारी, डॉ. कीर्ति सौरभ, डॉ. तारकेश्वर कुमार, डॉ. कुमारी शुभा, श्रीमती प्रभा कुमारी एवं हिंदी अनुवादक उमेश कुमार मिश्र की भूमिका सराहनीय रही।

कार्यक्रम के अंत में डॉ. शिवानी, प्रधान वैज्ञानिक–सह– उपाध्यक्ष, संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने उपास्थित सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को धन्यवाद ज्ञापित किया।

हिंदी पखवाड़ा–2021 के समापन समारोह की कुछ झलकियाँ

राजभाषा अधिनियम, 1963 (यथासंशोधित, 1967)

(1963 का अधिनियम संख्यांक 19)

उन भाषाओं का, जो संघ के राजकीय प्रयोजनों, संसद में कार्य के संव्यवहार, केन्द्रीय और राज्य अधिनियमों और उच्च न्यायालयों में कतिपय प्रयोजनों के लिए प्रयोग में लाई जा सकेंगी, उपबन्ध करने के लिए अधिनियम। भारत गणराज्य के चौदहवें वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो:–

1. संक्षिप्त नाम और प्रारम्भ–

1. यह अधिनियम राजभाषा अधिनियम, 1963 कहा जा सकेगा।
2. धारा 3, जनवरी, 1965 के 26 वें दिन को प्रवृत्त होगी और इस अधिनियम के शेष उपबन्ध उस तारीख को प्रवृत्त होंगे जिसे केन्द्रीय सरकार,शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे और इस अधिनियम के विभिन्न उपबन्धों के लिए विभिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी।

2. परिभाषाएं––इस अधिनियम में जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो,

क. 'नियत दिन' से, धारा 3 के सम्बन्ध में, जनवरी, 1965 का 26वां दिन अभिप्रेत है और इस अधिनियम के किसी अन्य उपबन्ध के सम्बन्ध में वह दिन अभिप्रेत है जिस दिन को वह उपबन्ध प्रवृत्त होता है;

ख. 'हिन्दी' से वह हिन्दी अभिप्रेत है जिसकी लिपि देवनागरी है।

3. संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए और संसद में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा का रहना

1. संविधान के प्रारम्भ से पन्द्रह वर्ष की कालावधि की समाप्ति हो जाने पर भी, हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा, नियत दिन से ही,

क. संघ के उन सब राजकीय प्रयोजनों के लिए जिनके लिए वह उस दिन से ठीक पहले प्रयोग में लाई जाती थी; तथा

ख. संसद में कार्य के संव्यवहार के लिए प्रयोग में लाई जाती रह सकेगी :

परंतु संघ और किसी ऐसे राज्य के बीच, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, पत्रादि के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा प्रयोग में लाई जाएगी:

परन्तु यह और कि जहां किसी ऐसे राज्य के, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है और किसी अन्य राज्य के, जिसने हिन्दी को

अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, बीच पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी को प्रयोग में लाया जाता है, वहां हिन्दी में ऐसे पत्रादि के साथ–साथ उसका अनुवाद अंग्रेजी भाषा में भेजा जाएगा :

परन्तु यह और भी कि इस उपधारा की किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी ऐसे राज्य को, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संघ के साथ या किसी ऐसे राज्य के साथ, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है, या किसी अन्य राज्य के साथ, उसकी सहमति से, पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी को प्रयोग में लाने से निवारित करती है, और ऐसे किसी मामले में उस राज्य के साथ पत्रादि के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग बाध्यकर न होगा।

2. **उपधारा (1) में अन्तर्वष्ट किसी बात के होते हुए भी, जहां पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी या अंग्रेजी भाषा––**

i. केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग या

कार्यालय के और दूसरे मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के बीच ;

ii. केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के और केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी या उसके किसी कार्यालय के बीच ;

iii. केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी या उसके किसी कार्यालय के और किसी अन्य ऐसे निगम या कम्पनी या कार्यालय के बीच ;

प्रयोग में लाई जाती है वहां उस तारीख तक, जब तक पूर्वोक्त संबंधित मंत्रालय, विभाग, कार्यालय या विभाग या कम्पनी का कर्मचारीवृद हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेता, ऐसे पत्रादि का अनुवाद, यथास्थिति, अंग्रेजी भाषा या हिन्दी में भी दिया जाएगा।

3. **उपधारा (1) में अन्तद्रवष्ट किसी बात के होते हुए भी हिन्दी और अंग्रेजी भाषा दोनों ही––**

i. संकल्पों, साधारण आदेशों, नियमों, अधिसूचनाओं, प्रशासनिक या अन्य प्रतिवेदनों या प्रेस विज्ञप्तियों के लिए, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा या उसके किसी मंत्रालय, विभाग या कार्यालय द्वारा या केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी द्वारा या ऐसे निगम या कम्पनी के किसी कार्यालय द्वारा निकाले जाते हैं या किए जाते हैं ;

ii. संसद के किसी सदन या सदनों के समक्ष रखे गए प्रशासनिक तथा अन्य प्रतिवेदनों और राजकीय कागज–पत्रों के लिए ;

iii. केन्द्रीय सरकार या उसके किसी मंत्रालय, विभाग या कार्यालय द्वारा या उसकी ओर से या केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या

कम्पनी द्वारा या ऐसे निगम या कम्पनी के किसी कार्यालय द्वारा निष्पादित संविदाओं और करारों के लिए तथा निकाली गई अनुज्ञप्तियों, अनुज्ञापत्रों, सूचनाओं और निविदा–प्ररूपों के लिए, प्रयोग में लाई जाएगी।

4. **उपधारा (1) या उपधारा (2) या उपधारा (3)** के उपबन्धों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना यह है कि केन्द्रीय सरकार धारा 8 के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा उस भाषा या उन भाषाओं का उपबन्ध कर सकेगी जिसे या जिन्हें संघ के राजकीय प्रयोजन के लिए, जिसके अन्तर्गत किसी मंत्रालय, विभाग, अनुभाग या कार्यालय का कार्यकरण है, प्रयोग में लाया जाना है और ऐसे नियम बनाने में राजकीय कार्य के शीघ्रता और दक्षता के साथ निपटारे का तथा जन साधारण के हितों का सम्यक ध्यान रखा जाएगा और इस प्रकार बनाए गए नियम विशिष्टतया यह सुनिश्चित करेंगे कि जो व्यक्ति संघ के कार्यकलाप के सम्बन्ध में सेवा कर रहे हैं और जो या तो हिन्दी में या अंग्रेजी भाषा में प्रवीण हैं वे प्रभावी रूप से अपना काम कर सकें और यह भी कि केवल इस आधार पर कि वे दोनों ही भाषाओं में प्रवीण नहीं है उनका कोई अहित नहीं होता है।

5. **उपधारा (1) के खंड (क) के उपबन्ध और उपधारा (2),** उपधारा (3) और उपधारा (4), के उपबन्ध तब तक प्रवृत्त बने रहेंगे जब तक उनमें वद्रणत प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग समाप्त कर देने के लिए ऐसे सभी राज्यों के विधान मण्डलों द्वारा, जिन्होंने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संकल्प पारित नहीं कर दिए जाते और जब तक पूर्वोक्त संकल्पों पर विचार कर लेने के पश्चात् ऐसी समाप्ति के लिए संसद के हर एक सदन द्वारा संकल्प पारित नहीं कर दिया जाता।

4. राजभाषा के सम्बन्ध में समिति –

1. जिस तारीख को धारा 3 प्रवृत्त होती है उससे दस वर्ष की समाप्ति के पश्चात, राजभाषा के सम्बन्ध में एक समिति, इस विषय का संकल्प संसद के किसी भी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी से प्रस्तावित और दोनों सदनों द्वारा पारित किए जाने पर, गठित की जाएगी।

2. इस समिति में तीस सदस्य होंगे जिनमें से बीस लोक सभा के सदस्य होंगे तथा दस राज्य सभा के सदस्य होंगे, जो क्रमशः लोक सभा के सदस्यों तथा राज्य सभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।

3. इस समिति का कर्तव्य होगा कि वह संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी के प्रयोग में की गई प्रगति का पुनद्रवलोकन करें और उस पर सिफारिशें करते हुए राष्ट्रपति को प्रतिवेदन करें और राष्ट्रपति उस प्रतिवेदन को संसद् के हर एक सदन के समक्ष रखवाएगा और सभी राज्य सरकारों को भिजवाएगा।

4. राष्ट्रपति उपधारा (3) में निर्दिष्ट प्रतिवेदन पर और उस पर राज्य सरकारों ने यदि कोई मत अभिव्यक्त किए हों तो उन पर विचार करने के पश्चात् उस समस्त प्रतिवेदन के या उसके किसी भाग के अनुसार निदेश निकाल सकेगा :

परन्तु इस प्रकार निकाले गए निदेश धारा 3 के उपबन्धों से असंगत नहीं होंगे।

5. केन्द्रीय अधिनियमों आदि का प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद–

1. नियत दिन को और उसके पश्चात् शासकीय राजपत्र में राष्ट्रपति के प्राधिकार से प्रकाशित–
   - क. किसी केन्द्रीय अधिनियम का या राष्ट्रपति द्वारा प्रख्यापित किसी अध्यादेश का, अथवा
   - ख. संविधान के अधीन या किसी केन्द्रीय अधिनियम के अधीन निकाले गए किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि का हिन्दी में अनुवाद उसका हिन्दी में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।
2. **नियत दिन से ही उन सब विधेयकों के, जो संसद** के किसी भी सदन में पुनःस्थापित किए जाने हों और उन सब संशोधनों के, जो उनके समबन्ध में संसद के किसी भी सदन में प्रस्तावित किए जाने हों, अंग्रेजी भाषा के प्राधिकृत पाठ के साथ–साथ उनका हिन्दी में अनुवाद भी होगा जो ऐसी रीति से प्राधिकृत किया जाएगा, जो इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित की जाए।

6. कतिपय दशाओं में राज्य अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद–

जहां किसी राज्य के विधानमण्डल ने उस राज्य के विधानमण्डल द्वारा पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में प्रयोग के लिए हिन्दी से भिन्न कोई भाषा विहित की है वहां, संविधान के अनुच्छेद 348 के खण्ड (3) द्वारा अपेक्षित अंग्रेजी भाषा में उसके अनुवाद के अतिरिक्त, उसका हिन्दी में अनुवाद उस राज्य के शासकीय राजपत्र में, उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से, नियत दिन को या उसके पश्चात् प्रकाशित किया जा सकेगा और ऐसी दशा में ऐसे किसी अधिनियम या अध्यादेश का हिन्दी में अनुवाद हिन्दी भाषा में उसका प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

7. उच्च न्यायालयों के निर्णयों आदि में हिन्दी या अन्य राजभाषा का वैकल्पिक प्रयोग

नियत दिन से ही या तत्पश्चात् किसी भी दिन से किसी राज्य का राज्यपाल, राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से, अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी या उस राज्य की राजभाषा का प्रयोग, उस राज्य के उच्च न्यायालय द्व ारा पारित या दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश के प्रयोजनों के लिए प्राधिकृत कर सकेगा और जहां कोई निर्णय, डिक्री या आदेश (अंग्रेजी भाषा से भिन्न) ऐसी किसी भाषा में पारित किया या दिया जाता है वहां उसके साथ–साथ उच्च न्यायालय के प्राधिकार से निकाला गया अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद भी होगा।

8. नियम बनाने की शक्ति –

1. केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, बना सकेगी।
2. इस धारा के अधीन बनाया गया हर नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद के हर एक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा। वह अवधि एक सत्र में, अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी। यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात वह ऐसे परिवर्तित रुप में ही प्रभावी होगा। यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात यह निस्प्रभाव हो जाएगा। किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या निस्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

9. कतिपय उपबन्धों का जम्मू–कश्मीर को लागू न होना–

धारा 6 और धारा 7 के उपबन्ध जम्मू–कश्मीर राज्य को लागू न होंगे।

राजभाषा नियम, 1976

राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 (यथा संशोधित, 1987, 2007 तथा 2011)

सा.का.नि. 1052 ––राजभाषा अधिनियम, 1963 (1963 का 19) की धारा 3 की उपधारा (4) के साथ पठित धारा 8 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, केन्द्रीय सरकार निम्नलिखित नियम बनाती है, अर्थातः–

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारम्भ–

क. इन नियमों का संक्षिप्त नाम राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 है।

ख. इनका विस्तार, तमिलनाडु राज्य के सिवाय सम्पूर्ण भारत पर है।

ग. ये राजपत्र में प्रकाशन की तारीख को प्रवृत्त होंगे।

2- परिभाषाएं– इन नियमों में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो:–

a. 'अधिनियम' से राजभाषा अधिनियम, 1963 (1963 का 19) अभिप्रेत है;

b. 'केन्द्रीय सरकार के कार्यालय' के अन्तर्गत निम्नलिखित भी है, अर्थातः–

c. केन्द्रीय सरकार का कोई मंत्रालय, विभाग या कार्यालय;

d. केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किसी आयोग, समिति या अधिकरण का कोई कार्यालय; और

e. केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में या नियंत्रण के अधीन किसी निगम या कम्पनी का कोई कार्यालय;

f. 'कर्मचारी' से केन्द्रीय सरकार के कार्यालय में नियोजित कोई व्यक्ति अभिप्रेत है;

g. 'अधिसूचित कार्यालय' से नियम 10 के उपनियम (4) के अधीन अधिसूचित कार्यालय, अभिप्रेत है;

h. 'हिन्दी में प्रवीणता' से नियम 9 में वर्णित प्रवीणता अभिप्रेत है ;

i. 'क्षेत्र क' से बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड़, उत्तराखंड राजस्थान और उत्तर प्रदेश राज्य तथा अंडमान और निकोबार द्वीप समूह, दिल्ली संघ राज्य क्षेत्र अभिप्रेत है;

j. 'क्षेत्र ख' से गुजरात, महाराष्ट्र और पंजाब राज्य तथा चंडीगढ़, दमण और दीव तथा दादरा और नगर हवेली संघ राज्य क्षेत्र अभिप्रेत हैं;

k. 'क्षेत्र ग' से खंड (च) और (छ) में निर्दिष्ट राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों से भिन्न राज्य तथा संघ राज्य क्षेत्र अभिप्रेत है;

l. हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान' से नियम 10 में वद्रणत कार्यसाधक ज्ञान अभिप्रेत है।

3. राज्यों आदि और केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों से भिन्न कार्यालयों के साथ पत्रादि

1. केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र 'क' में किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र को या ऐसे राज्य या संघ राज्य क्षेत्र में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि असाधारण दशाओं को छोड़कर हिन्दी में होंगे और यदि उनमें से किसी को कोई पत्रादि अंग्रेजी में भेजे जाते हैं तो उनके साथ उनका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाएगा।

2. **केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से––**

a. क्षेत्र 'ख' में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य या संघ राज्य क्षेत्र में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) को पत्रादि सामान्यतया हिन्दी में होंगे और यदि इनमें से किसी को कोई पत्रादि अंग्रेजी में भेजे जाते हैं

तो उनके साथ उनका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाएगाः परन्तु यदि कोई ऐसा राज्य या संघ राज्य क्षेत्र यह चाहता है कि किसी विशिष्ट वर्ग या प्रवर्ग के पत्रादि या उसके किसी कार्यालय के लिए आशयित पत्रादि संबद्ध राज्य या संघ राज्यक्षेत्र की सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट अवधि तक अंग्रेजी या हिन्दी में भेजे जाएं और उसके साथ दूसरी भाषा में उसका अनुवाद भी भेजा जाए तो ऐसे पत्रादि उसी रीति से भेजे जाएंगे ;

b. क्षेत्र 'ख' के किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र में किसी व्यक्ति को पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में भेजे जा सकते हैं।

3. केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र 'ग' में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि अंग्रेजी में होंगे।

4. उप नियम (1) और (2) में किसी बात के होते हुए भी, क्षेत्र 'ग' में केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र 'क'या'ख'में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं। परन्तु हिन्दी में पत्रादि ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या,हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे आनुषंगिक बातों को ध्यान में रखते हुए समय–समय पर अवधारित करे।

4. केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि–

a. केन्द्रीय सरकार के किसी एक मंत्रालय या विभाग और किसी दूसरे मंत्रालय या विभाग के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं;

b. केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग और क्षेत्र 'क' में स्थित संलग्न या अधीनस्थ कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी में होंगे और ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार, ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या, हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे संबंधित आनुषंगिक बातों को ध्यान में रखते हुए, समय–समय पर अवधारित करे;

c. क्षेत्र 'क' में स्थित केन्द्रीय सरकार के ऐसे कार्यालयों के बीच, जो खण्ड (क) या खण्ड (ख) में विनिर्दिष्ट कार्यालयों से भिन्न हैं, पत्रादि हिन्दी में होंगे;

d. क्षेत्र 'क' में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों और क्षेत्र 'ख' या 'ग'में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं;

परन्तु ये पत्रादि हिन्दी में ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या,हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे आनुषंगिक बातों को ध्यान में रखते हुए समय–समय पर अवधारित करे ;

e. क्षेत्र 'ख' या 'ग' में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं;

परन्तु ये पत्रादि हिन्दी में ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या,हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे आनुषंगिक बातों को ध्यान में रखते हुए समय–समय पर अवधारित करे ;

परन्तु जहां ऐसे पत्रादि––

i. क्षेत्र 'क' या क्षेत्र 'ख' किसी कार्यालय को संबोधित हैं वहां यदि आवश्यक हो तो, उनका दूसरी भाषा में अनुवाद, पत्रादि प्राप्त करने के स्थान पर किया जाएगा;

ii. क्षेत्र 'ग' में किसी कार्यालय को संबोधित है वहां, उनका दूसरी भाषा में अनुवाद, उनके साथ भेजा जाएगा;

परन्तु यह और कि यदि कोई पत्रादि किसी अधिसूचित कार्यालय को संबोधित है तो दूसरी भाषा में ऐसा अनुवाद उपलब्ध कराने की अपेक्षा नहीं की जाएगी।

5. हिन्दी में प्राप्त पत्राादि के उत्तर–

नियम 3 और नियम 4 में किसी बात के होते हुए भी, हिन्दी में पत्रादि के उत्तर केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से हिन्दी में दिए जाएंगे।

6. हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग–

अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (3) में निर्दिष्ट सभी दस्तावेजों के लिए हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग किया जाएगा और ऐसे दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्तियों का यह उत्तरदायित्व होगा कि वे यह सुनिश्चित कर लें कि ऐसी दस्तावेजें हिन्दी और अंग्रेजी दोनों ही में तैयार की जाती हैं, निष्पादित की जाती हैं और जारी की जाती हैं।

7. आवेदन, अभ्यावेदन आदि

1. कोई कर्मचारी आवेदन, अपील या अभ्यावेदन हिन्दी या अंग्रेजी में कर सकता है।
2. जब उपनियम (1) में विनिर्दिष्ट कोई आवेदन, अपील या अभ्यावेदन हिन्दी में किया गया हो या उस पर हिन्दी में हस्ताक्षर किए गए हों, तब उसका उत्तर हिन्दी में दिया जाएगा।
3. यदि कोई कर्मचारी यह चाहता है कि सेवा संबंधी विषयों (जिनके अन्तर्गत अनुशासनिक कार्यवाहियां भी हैं) से संबंधित कोई आदेश या सूचना, जिसका कर्मचारी पर तामील किया जाना अपेक्षित है, यथास्थिति, हिन्दी या अंग्रेजी में होनी चाहिए तो वह उसे असम्यक विलम्ब के बिना उसी भाषा में दी जाएगी।

8. केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में टिप्पणों का लिखा जाना –

1. कोई कर्मचारी किसी फाइल पर टिप्पण या कार्यवृत्त हिंदी या अंग्रेजी में लिख सकता है और उससे यह अपेक्षा नहीं की जाएगी कि वह उसका अनुवाद दूसरी भाषा में प्रस्तुत करे।
2. केन्द्रीय सरकार का कोई भी कर्मचारी, जो हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखता है, हिन्दी में किसी दस्तावेज के अंग्रेजी अनुवाद की मांग तभी कर सकता है, जब वह दस्तावेज विधिक या तकनीकी प्रकृति का है, अन्यथा नहीं।
3. यदि यह प्रश्न उठता है कि कोई विशिष्ट दस्तावेज विधिक या तकनीकी प्रकृति का है या नहीं तो विभाग या कार्यालय का प्रधान उसका विनिश्चय करेगा।
4. उपनियम (1) में किसी बात के होते हुए भी, केन्द्रीय सरकार, आदेश द्वारा ऐसे अधिसूचित कार्यालयों को विनिर्दिष्ट कर सकती है जहां ऐसे कर्मचारियों द्वारा,जिन्हें हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है, टिप्पण, प्रारूपण और ऐसे अन्य शासकीय प्रयोजनों के लिए, जो आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएं, केवल हिन्दी का प्रयोग किया जाएगा।

9. हिन्दी में प्रवीणता–

यदि किसी कर्मचारी ने–

क. मैट्रिक परीक्षा या उसकी समतुल्य या उससे उच्चतर कोई परीक्षा हिन्दी के माध्यम से उत्तीर्ण कर ली है;या

ख. स्नातक परीक्षा में अथवा स्नातक परीक्षा की समतुल्य या उससे उच्चतर किसी अन्य परीक्षा में हिन्दी को एक वैकल्पिक विषय के रूप में लिया हो; या

ग. यदि वह इन नियमों से उपाबद्ध प्ररूप में यह घोषणा करता है कि उसे हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है;

तो उसके बारे में यह समझा जाएगा कि उसने हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त कर ली है।

10. हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान

1. **यदि किसी कर्मचारी ने–**

i. मैट्रिक परीक्षा या उसकी समतुल्य या उससे उच्चतर परीक्षा हिन्दी विषय के साथ उत्तीर्ण कर ली है; या

ii. केन्द्रीय सरकार की हिन्दी परीकाा योजना के अन्तर्गत आयोजित प्राज्ञ परीक्षा या यदि उस सरकार द्वारा किसी विशिष्ट प्रवर्ग के पदों के सम्बन्ध में उस योजना के अन्तर्गत कोई निम्नतर परीक्षा विनिर्दिष्ट है, वह परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है;या

iii. केन्द्रीय सरकार द्वारा उस निमित्त विनिर्दिष्ट कोई अन्य परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है; या यदि वह इन नियमों से उपाबद्ध प्ररूप में यह घोषणा करता है कि उसने ऐसा ज्ञान प्राप्त कर लिया है;

तो उसके बारे में यह समझा जाएगा कि उसने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

1. यदि केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय में कार्य करने वाले कर्मचारियों में से अस्सी प्रतिशत ने हिन्दी का ऐसा ज्ञान प्राप्त कर लिया है तो उस कार्यालय के कर्मचारियों के बारे में सामान्यतया यह समझा जाएगा कि उन्होंने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है।
2. केन्द्रीय सरकार या केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट कोई अधिकारी यह अवधारित कर सकता है कि केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय के कर्मचारियों ने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है या नहीं।
3. केन्द्रीय सरकार के जिन कार्यालयों में कर्मचारियों ने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है उन कार्यालयों के नाम राजपत्र में अधिसूचित किए जाएंगे;

परन्तु यदि केन्द्रीय सरकार की राय है कि किसी अधिसूचित कार्यालय में काम करने वाले और हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले कर्मचारियों का प्रतिशत किसी तारीख में से

उपनियम (2) में विनिर्दिष्ट प्रतिशत से कम हो गया है, तो वह राजपत्र में अधिसूचना द्वारा घोषित कर सकती है कि उक्त कार्यालय उस तारीख से अधिसूचित कार्यालय नहीं रह जाएगा।

11. मैनुअल, संहिताएं, प्रक्रिया संबंधी अन्य साहित्य, लेखन सामग्री आदि–

1. केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों से संबंधित सभी मैनुअल, संहिताएं और प्रक्रिया संबंधी अन्य साहित्य, हिन्दी और अंग्रेजी में द्विभाषिक रूप में यथास्थिति, मुद्रित या साइक्लोस्टाइल किया जाएगा और प्रकाशित किया जाएगा।
2. केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय में प्रयोग किए जाने वाले रजिस्टरों के प्ररूप और शीर्षक हिन्दी और अंग्रेजी में होंगे।
3. केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय में प्रयोग के लिए सभी नामपट्ट, सूचना पट्ट, पत्रशीर्ष और लिफाफों पर उत्कीर्ण लेख तथा लेखन सामग्री की अन्य मदें हिन्दी और अंग्रेजी में लिखी जाएंगी, मुद्रित या उत्कीर्ण होंगी;

परन्तु यदि केन्द्रीय सरकार ऐसा करना आवश्यक समझती है तो वह, साधारण या विशेष आदेश द्वारा, केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय को इस नियम के सभी या किन्हीं उपबन्धों से छूट दे सकती है।

12. अनुपालन का उत्तरदायित्व–

1. केन्द्रीय सरकार के प्रत्येक कार्यालय के प्रशासनिक प्रधान का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह––
   i. यह सुनिश्चित करे कि अधिनियम और इन नियमों के उपबंधों और उपनियम (2) के अधीन जारी किए गए निदेशों का समुचित रूप से अनुपालन हो रहा है; और
   ii. इस प्रयोजन के लिए उपयुक्त और प्रभावकारी जांच के लिए उपाय करे।
2. केन्द्रीय सरकार अधिनियम और इन नियमों के उपबन्धों के सम्यक अनुपालन के लिए अपने कर्मचारियों और कार्यालयों को समय–समय पर आवश्यक निदेश जारी कर सकती है।

(भारत का राजपत्र, भाग–2, खंड 3, उपखंड (i) में प्रकाशनार्थ,
भारत सरकार
गृह मंत्रालय
राजभाषा विभाग
नई दिल्ली, दिनांकः अगस्त, 2007
अधिसूचना

का.आ. (अ). – केन्द्रीय सरकार, राजभाषा अधिनियम, 1963 (1963 का 19) की धारा 3 की उपधारा (4) के साथ पठित धारा 8 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 का और संशोधन करने के लिए निम्नलिखित नियम बनाती है, अर्थातः–

1. i. इन नियमों का संक्षिप्त नाम राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) संशोधन नियम, 2007 है।
   ii. ये राजपत्र में प्रकाशन की तारीख को प्रवृत्त होंगे।
2. राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 में

नियम 2 के खंड (च) के स्थान पर निम्नलिखित खंड रखा जाएगा, अर्थात्:–

''क्षेत्र क'' से बिहार, छत्तीसगढ, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली तथा अंडमान और निकोबार द्वीप समूह संघ राज्य क्षेत्र' अभिप्रेत हैं; '

[(फा.सं. I/14034/02/2007–रा.भा.(नीति–1)]

(पी.वी.वल्सला जी.कुट्टी)

संयुक्त सचिव, भारत सरकार

भारत के राजपत्र, भाग–II, खंड 3, उपखंड (i) में प्रकाशित,

पृष्ठ संख्या 576–577

दिनांक 14–5–2011

भारत सरकार

गृह मंत्रालय

राजभाषा विभाग

***

नई दिल्ली, 4 मई, 2011

अधिसूचना

सा.का.नि. 145 केन्द्रीय सरकार, राजभाषा अधिनियम, 1963 (1963 का 19) की धारा 3 की उपधारा (4) के साथ पठित धारा 8 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 का और संशोधन करने के लिए निम्नलिखित नियम बनाती है, अर्थात्:–

1. i. इन नियमों का संक्षिप्त नाम राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) संशोधन नियम, 2011 है।

   ii. ये राजपत्र में प्रकाशन की तारीख को प्रवृत्त होंगे।

2. राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 के नियम 2 के खण्ड (छ) के स्थान पर निम्नलिखित खंड रखा जाएगा, अर्थात्:–

''क्षेत्र ख'' से गुजरात, महाराष्ट्र और पंजाब राज्य तथा चंडीगढ़, दमण और दीव तथा दादरा और नगर हवेली संघ राज्य क्षेत्र अभिप्रेत हैं;'

[(फा.सं.I/14034/02/2010–रा.भा. (नीति–1)]

डी.के. पाण्डेय, संयुक्त सचिव

टिप्पण:– मूल नियम भारत के राजपत्र में सा.का.नि.संख्यांक 1052 तारीख 17 जुलाई, 1976 द्वारा प्रकाशित किए गए थे और सा.का.नि.संख्यांक 790, तारीख 24 अक्तूबर, 1987 तथा सा.का.नि.संख्यांक 162 तारीख 03 अगस्त, 2007 द्वारा उनमें पश्चातवर्ती संशोधन किए गए।

प्रशासनिक टिप्पणियाँ

A brief note is placed below	संक्षिप्त टिप्पणी इसके साथ रखी है।
A revised statement is submitted below	संशोधित विवरण अवलोकनार्थ प्रस्तुत है।
Above mentioned	उपर्युक्त।
Accepted conditionally	सशर्त स्वीकृत।
Accepted in principle	सिद्धांत रूप में स्वीकृत
Accord sanction	स्वीकृति प्रदान करें।
According to facts	तथ्यों के अनुसार।
Accordingly it has been decided	तदनुसार यह निर्णय लिया गया है।
Acknowledge receipt of this letter	इस पत्र की पावती भेजिए।
Action as at "A" above may be taken	उपर्युक्त ''क'' के अनुसार कार्रवाई की जाए।
Act accordingly	तदनुसार कार्रवाई करें।
Action confirmed	कार्रवाई की पुष्टि की जाती है।
According to merit	योग्यता के अनुसार।
Action may be taken as proposed	यथा प्रस्तावित कार्रवाई की जाए।
Administrative approval may be taken	प्रशासनिक अनुमोदन लिया जाए।
Inform accordingly	तदनुसार सूचित करें।
After adequate consideration	पर्याप्त विचार के बाद।
After proper examination	उचित जांच के बाद।
Agreed	सहमत हूँ।
Agenda of the meeting is put up	बैठक की कार्यसूची प्रस्तुत है।
All concerned to note	सभी संबंधित ध्यान दें।
Approved as per remarks	टिप्पणी के अनुसार अनुमोदित।
Approved as proposed	यथा प्रस्तावित अनुमोदित
Approval may be obtained	अनुमोदन प्राप्त किया जाए।
Appropriate action may be taken	उचित कार्रवाई की जाए।
Arrangements may be made	व्यवस्था की जाए।
Arrange early disposal of the case	मामले को जल्दी निबटाने की व्यवस्था की जाए।
As amended	यथा संशोधित।
As desired	यथा वांछित।
As directed	निदेशानुसार।

As early as possible	यथाशीघ्र।
As may be necessary	यथा आवश्यक/ जैसा आवश्यक हो।
As modified	यथा संशोधित।
As per details given below	निचे दिए गए ब्योरे के अनुसार।
As per list enclosedèattached	संलग्न सूची के अनुसार।
As proposed	यथा प्रस्तावित।
As revised	यथा संशोधित।
As required	आवश्यकतानुसार।
As usual	हमेशा की तरह।
As approved	यथा अनुमोदित।
As you are aware	जैसा आप जानते हैं।
Ascertain the position	स्थिति का पता लगाएं।
At an early date	यथाशीघ्र।
At once	तुरंत
Await further report	आगे की रिपोर्ट की प्रतीक्षा करें।
Await reply	उत्तर की प्रतीक्षा करें।
Before issue	जारी करने से पूर्व।
Bill may be paid	बिल का भुगतान किया जाए।
Bill has been scrutinized and found in order	बिल की जांच की गई और सही पाया गया।
Bill has not been prepared correctly	बिल सही नहीं बनाया गया है।
Brief resume of the case is given	मामले का संक्षिप्त सार दिया गया है।
Brief note is attached	संक्षिप्त नोट संलग्न है।
By mistake, it was mentioned	इसका उल्लेख गलती से किया गया।
Call for explanation	स्पष्टीकरण मँगाएं।
Call for the report	रिपोर्ट मँगाएं।
Call for quotation	भाव मँगाएं।
Cannot be acceded to	स्वीकार नहीं किया जा सकता।
cancelled	निरस्त/ रद्द।
Case is to be reviewed	मामले की समीक्षा करनी होगी।
Case may be kept pending	मामले को लंबित रखा जाए।
Carry out the instruction	अनुदेशों का पालन करें।
Carry out orders	आदेशों का पालन करें।
Check and give remarksè comments	जांच करें और टिप्पणी दें।
Checked and found correct	जांच की और सही पाया।
Clarify the position	स्थिति स्पष्ट करें।
Claim accepted	दावा स्वीकृत।
CompetentAuthority's sanction is necessary	सक्षम प्राधिकारी की स्वीकृति आवश्यक है।

Comply with the instructions	अनुदेशों का अनुपालन करें।
Comply with the requirements	अपेक्षाएं पूरी करें।
Confirm please	कृपया पुष्टि करें।
Consolidated report may be furnished	समेकित रिपोर्ट प्रस्तुत करें।
Copy enclosed for ready reference	सुलभ संदर्भ हेतु प्रतिलिपि संलग्न।
Copy forwarded for information	प्रतिलिपि सूचनार्थ प्रेषित।
Copy may be sentè forwarded	प्रतिलिपि भेजी जाए।
Declined	नामंजूर।
Delay in submitting the case is regretted	मामले को प्रस्तुत करने में विलंब के लिए खेद है।
Delay should be avoided	विलंब न किया जाए।
Delete	हटा दीजिए।
Delete the following lines	नीचे की पंक्तियों को हटा दीजिए।
Department may be informed accordingly	विभाग को तदनुसार सूचित किया जाए।
Depending upon the circumstances	परिस्थितियों के अनुसार।
Details may be submitted	ब्योरे प्रस्तुत किए जाएं।
Discussed	चर्चा की।
Discrepancy may be reconciled	विसंगति का समाधान कर लिया जाए।
Do the needful in the matter	इस संबंध में आवश्यक कार्रवाई करें।
Draft for approval	मसौदा अनुमोदनार्थ प्रस्तुत।
Draft reply is put up for approval	उत्तर का मसौदा अनुमोदन के लिए प्रस्तुत है।
Duly approved	उचित रूप से अनुमोदित।
Duly sanctioned	विधिवत् स्वीकृत।
Duly verified	विधिवत् सत्यापित।
During the course of discussion	चर्चा के दौरान।
Early orders are solicited	शीघ्र आदेश का अनुरोध है।
Expedite action	शीघ्र कार्रवाई करें।
Ensure prompt implementation	शीघ्र कार्यान्वयन सुनिश्चित करें।
Entered in the register	रजिस्टर में प्रविष्टि की गई।
Error be corrected	भूल सुधारी जाए।
Error is regretted	भूल के लिए खेद है।
Ensure compliance	अनुपालन सुनिश्चित करें।
Expedite its prints	इसकी छपाई शीघ्र करें।
Explanation may be called for	स्पष्टीकरण माँगा जाए।
Expedite submission of the report	रिपोर्ट शीघ्र प्रस्तुत करें।
Facts of the case may kindly be furnished	कृपया मामले के तथ्य प्रस्तुत करें।
Figures do not tally	आंकड़े मेल नहीं खाते हैं।
File an application	आवेदन प्रस्तुत करें।

File papers	कागजात फ़ाइल करें।
File a suit against them	उनके विरुद्ध मुकदमा दायर करें।
Final bill is not in the prescribed form	अंतिम बिल निर्धारित फॉर्म में नहीं है।
Fix date for meeting	बैठक की तारीख निश्चित करें।
Follow up action	अनुवर्ती कार्रवाई।
For approval	अनुमोदनार्थ।
For comments	टिप्पणी के लिए।
For compliance	अनुपालन के लिए।
For consideration	विचार के लिए।
For concurrence	सहमति के लिए।
For disposal	निपटान के लिए।
For favour of doing the needful	आवश्यक कार्रवाई करने के लिए।
For favourable action	अनुकूल कार्रवाई के लिए।
For further action	आगे की कार्रवाई के लिए।
For guidance	मार्गदर्शन के लिए।
For information and necessary action	सूचनार्थ एवं आवश्यक कार्रवाई हेतु।
For information before issue	जारी करने से पूर्व सूचनार्थ।
For kind perusal	अवलोकन हेतु।
For reconsideration	पुनर्विचार हेतु।
Forwarded	अग्रेषित।
Furnish information urgently	सूचना शीघ्र प्रस्तुत करें।
Further action is not necessary	आगे कार्रवाई आवश्यक नहीं है।
Get clarification of the staffs concerned	संबंधित कर्मचारियों से स्पष्टीकरण माँगा जाए।
Give details	विस्तृत विवरण दें।
Give information in details	विस्तारपूर्वक सूचना दें।
Give top priority to this work	इस काम को उच्च प्राथमिकता दें।
Give necessary facilities	आवश्यक सुविधा प्रदान करें।
Granted	स्वीकृत।
Hand over charge today	आज कार्यभार सौंप दीजिए।
Highly objectionable	अत्यंत आपत्तिजनक।
Hisè her request be agreed to	उनका अनुरोध स्वीकार किया जाए।
Held in abeyance	रोककर रखा गया।
I agree with "A" above	मैं ऊपर ''क'' से सहमत हूँ।
I appreciate the good work	मैं अच्छे कार्य की प्रशंसा करता हूँ।
I fully agree with the Office Note	मैं कार्यालय टिप्पणी से पूर्णतः सहमत हूँ।
Immediate action	तत्काल कार्रवाई।
Immediate disposal of the case is requested	मामले को तत्काल निपटाने का अनुरोध है।

In accordance with the existing rules	वर्तमान नियमों के अनुसार।
I have no further comments	मुझे और कुछ नहीं कहना है।
I have no remarks to offer	मुझे कोई टिप्पणी नहीं करनी है।
Issue may be settled	मामला निपटाया जाए
Information is being collected and will be furnished soon	सूचना एकत्रित की जा रही है और शीघ्र प्रस्तुत की जाएगी।
Information is not complete	सूचना पूर्ण नहीं है।
Initiate action	कार्रवाई शुरू करें।
Issue as amended	यथा संशोधित जारी करें।
Issue immediately	तत्काल जारी करें।
Issue today only	आज ही जारी करें।
Issue notice accordingly	तदनुसार नोटिस जारी करें।
Justification has been accepted	औचित्य मान लिया गया है।
Justify the proposal	प्रस्ताव को न्यायसंगत सिद्ध करें।
Keep in abeyance	रोककर रखा जाए।
Keep pending	स्थगित रखें।
Keep with the file	फ़ाइल के साथ रखिए।
Keep me briefed about the status	मुझे स्थिति से अवगत रखें।
Kindly accord concurrence	कृपया सहमति प्रदान करें।
Kindly acknowledge	कृपया पावती भेजिए।
Kindly see the enclosed paper	कृपया संलग्न पत्र देख लें।
Leave granted	छुट्टी स्वीकृत।
Leave may be sanctioned	छुट्टी मंजूर की जाए।
Legal objection is likely to arise	कानूनी आपत्ति उठने की संभावना है।
Lenient view may be taken	उदार दृष्टिकोण अपनाया जाए।
Letter of acceptance should be obtained	स्वीकृति पत्र प्राप्त किया जाए।
Look after the assigned work	सौंपे गए कार्य का ध्यान रखें।
Make interim arrangement	अंतरिम व्यवस्था करें।
Matter is under consideration	मामला विचाराधीन है।
Matter has already been considered	मामले पर विचार किया जा चुका है।
Matter may be referred to the Board of Directors.	मामला निदेशक मंडल को भेजा जाए।
May be considered	विचार किया जाए।
May be commenced	प्रारंभ किया जाए।
May be confirmed	पुष्टि की जाए।
May be cancelled	निरस्त किया जाए।
May be filed	फ़ाइल किया जाए।
May be informed accordingly	तदनुसार सूचित किया जाए।

May be kept in view	ध्यान में रखा जाए।
May be obtained	प्राप्त किया जाए।
May be passed for payment	भुगतान के लिए पारित किया जाए।
May be paid	भुगतान किया जाए।
May be permitted	अनुमति दी जाए।
May be sanctioned	मंजूरी दी जाए।
May be seen before issue please	जारी करने से पूर्व कृपया देख लें।
May be treated as urgent	इसे अति आवश्यक समझा जाए।
May be treated as closed	बंद समझा जाए।
May not pursue the matter	इस विषय को आगे न बढ़ाएं।
Memorandum placed	ज्ञापन प्रस्तुत है।
Minutes may be drawn up	कार्यवृत्त तैयार किया जाए।
Most immediate	अति तत्काल।
Most urgent	अति आवश्यक।
Name has been entered in the list	सूची में नाम दर्ज कर लिया गया है।
Necessary draft is put up	आवश्यक मसौदा प्रस्तुत है।
Necessary steps should be taken	आवश्यक कदम उठाये जाने चाहिए।
Necessary action is being taken	आवश्यक कार्रवाई की जा रही है।
Necessary arrangements are being made	आवश्यक व्यवस्था की जा रही है।
Needs amendment	संशोधन अपेक्षित है।
Needs no comments	टिप्पणी आवश्यक नहीं है।
No assurance can be given at this stage	अभी कोई आश्वासन नहीं दिया जा सकता है।
No further action is necessary	आगे कोई कार्रवाई आवश्यक नहीं है।
No progress has been made in the matter	इस मामले में कोई प्रगति नहीं हुई है।
No objection certificate may be obtained	अनापत्ति प्रमाण–पत्र प्राप्त किया जाए।
Noted and returned	नोट करके वापस किया जाता है।
Not satisfactory	संतोषजनक नहीं है।
Notice in writing may be sent	लिखित नोटिस भेजा जाए।
Objection is not valid	आपत्ति मान्य नहीं है।
Objection is withdrawn	आपत्ति वापस ली जाती है।
Obtain formal sanction	औपचारिक स्वीकृति प्राप्त करें।
Office to note and comply	कार्यालय ध्यान दें और अनुपालन करें।
On leave/tour	छुट्टी/ दौरे पर।
Order may be issued	आदेश जारी किया जाए।
Orders are solicited	आदेश अपेक्षित है।
Papers are sent herewith	इसके साथ कागज़–पत्र भेजे जा रहे हैं।
Papers put for perusal	कागज़–पत्र अवलोकनार्थ प्रस्तुत।

Passed for payment	भुगतान के लिए पारित।
Permitted	अनुमति दी जाती है।
Personal attention is required	व्यक्तिगत ध्यान देने की आवश्यकता है।
Please call for the report	कृपया रिपोर्ट मँगाएं।
Please carry out the orders	कृपया आदेशों का पालन करें।
Please compliment from my side	कृपया मेरी ओर से बधाई दें।
Please circulate and file	कृपया परिचालित कर फाइल करें।
Please discuss	कृपया चर्चा करें।
Please expedite compliance	कृपया शीघ्र अनुपालन करें।
Please expedite reply	कृपया शीघ्र उत्तर भेजें।
Please give top priority to it	कृपया इसे सर्वोच्च प्राथमिकता दें।
Please inform immediately	कृपया तत्काल सूचित करें।
Please prepare a precise of the case	कृपया मामले का सार तैयार करें।
Please put up a draft	कृपया मसौदा प्रस्तुत करें।
Please see the case and offer your comments	कृपया मामले को देखकर अपनी टिप्पणी दें।
Please send us a copy	कृपया हमें प्रतिलिपि भेजें।
Please submit without delay	कृपया अविलंब प्रस्तुत करें।
Please treat as most urgent	कृपया अत्यंत जरूरी समझें।
Please verify	कृपया सत्यापन करें।
Proposal is in order	प्रस्ताव ठीक है।
Proposal is self explanatory	प्रस्ताव स्वतः स्पष्ट है।
Prepare the agenda	कार्यसूची तैयार करें।
Put up for approval	अनुमोदनार्थ प्रस्तुत।
Put up summary	सारांश प्रस्तुत करें।
Quash the order issued	जारी किए गए आदेश को रद्द करें।
Quick action is required	तत्काल कार्रवाई अपेक्षित है।
Quick disposal of case will be appreciated	मामले के निपटान में शीघ्रता सराहनीय होगी।
Quotation of firm is reasonable	फर्म का भाव उचित है।
Quote reference	संदर्भ बताएं।
Reason for delay be explained	विलंब का कारण बताएं।
Recommended and forwarded	अनुशंसित एवं अग्रसारित।
Recommended for sanction	स्वीकृति के लिए अनुशंसित।
Relevant papers are flagged	संबंधित कागज़–पत्रों पर पर्चियां लगाई गई हैं।
Remind after a week	एक सप्ताह के बाद याद दिलाएं।
Reminder may be sent	अनुस्मारक भेजा जाए।
Reply today's immediately	उत्तर आज/ तत्काल भेजें।
Reply may be awaited	उत्तर की प्रतीक्षा करें।

Required information may please be furnished	कृपया अपेक्षित जानकारी प्रस्तुत करें।
Resubmitted as desired	इच्छानुसार पुनः प्रस्तुत।
Revised note may be put up	संशोधित नोट प्रस्तुत करें।
Rules were not enforced properly	नियमों को ठीक से नहीं लागू किया गया।
Retrospective effect cannot be given to this order	इस आदेश को पूर्व–प्रभावी नहीं किया जा सकता।
Sanctioned	स्वीकृत।
Sanctioned as a special case	विशेष मामले के रूप में स्वीकृत।
Seen, thanks	देख लिया, धन्यवाद।
Seen and spoken	देख लिया और बात कर ली।
Signed, sealed and delivered	हस्ताक्षर व मुहर लगाकर भेजा गया।
Speak with related papers	संबंधित कागज़–पत्रों सहित बात करें।
Specific reasons may be given	निश्चित कारण दिए जाएं।
Subject to approval	अनुमोदनाधीन।
Submitted for sympathetic consideration	सहानुभूतिपूर्वक विचारार्थ प्रस्तुत।
Substitute is not available	एवजी उपलब्ध नहीं है।
Suggestion may be accepted	सुझाव मान लिया जाए।
Suitable action may be taken	उचित कार्रवाई की जाए।
The proposal is in order	प्रस्ताव ठीक है।
The proposal is self explanatory	प्रस्ताव स्वतः स्पष्ट है।
This requires administrative approval	इसके लिए प्रशासनिक अनुमोदन की आवश्यकता है।
This subject was discussed in the meeting	बैठक में इस पर विचार–विमर्श हुआ था।
This matter has been finalized	इस मामले को अंतिम रूप दिया जा चुका है।
This may be suitably amended	इसमें उपयुक्त संसोधन किया जाए।
Through proper channel	उचित माध्यम से।
Timely action may be taken	समय पर कार्रवाई की जाए।
Urgent attention may please be given	कृपया शीघ्र ध्यान दें।
Urgent action is required	अविलंब कार्रवाई अपेक्षित है।
Vacancy may be filled in immediately	रिक्त पद तत्काल भरा जाए।
Valid reason may be given	विधिमान्य कारण दिए जाएं।
We may hold the meeting on…….	हमलोग .....को बैठक रखें।
Write to the concerned section for further information	अधिक जानकारी के लिए संबंधित अनुभाग को लिखें।
You are hereby informed	आपको एतद्द्वारा सूचित किया जाता है।

हिन्दी के प्रयोग के लिए वर्ष 2022–23 का वार्षिक कार्यक्रम

क्र. सं	कार्य विवरण	"क" क्षेत्र		"ख" क्षेत्र		"ग" क्षेत्र	
1.	हिन्दी में मूल पत्राचार (इ–मेल सहित)	1. "क" क्षेत्र से "क" क्षेत्र को 2. "क" क्षेत्र से "ख" क्षेत्र को 3. "क" क्षेत्र से "ग" क्षेत्र को 4. "क" क्षेत्र से "क" व "ख" क्षेत्र के राज्य/ संघ राज्य क्षेत्र के कार्यालय/ व्यक्ति	100% 100% 65% 100%	1. "ख" क्षेत्र से "क" क्षेत्र को 2. "ख" क्षेत्र से "ख" क्षेत्र को 3. "ख" क्षेत्र से "ग" क्षेत्र को 4. "ख" क्षेत्र से "क" व "ख" क्षेत्र के राज्य/ संघ राज्य क्षेत्र के कार्यालय/ व्यक्ति	90% 90% 55% 90%	1. "ग" क्षेत्र से "क" क्षेत्र को 2. "ग" क्षेत्र से "ख" क्षेत्र को 3. "ग" क्षेत्र से "ग" क्षेत्र को 4. "ग" क्षेत्र से "क" व "ख" क्षेत्र के राज्य/ संघ राज्य क्षेत्र के कार्यालय/ व्यक्ति	55% 55% 55% 55%
2.	हिन्दी में प्राप्त पत्रों का उत्तर हिन्दी में दिया जाना	100%		100%		100%	
3.	हिन्दी में टिप्पण	75%		50%		30%	
4.	हिन्दी माध्यम से प्रशिक्षण कार्यक्रम	70%		60%		30%	
5.	हिन्दी टंकण करने वाले कर्मचारी एवं आशुलिपिक की भर्ती	80%		70%		40%	
6.	हिन्दी में डिक्टेशन/ की बोर्ड पर सीधे टंकण (स्वयं तथा सहायक द्वारा)	65%		55%		30%	
7.	हिन्दी प्रशिक्षण (भाषा, टंकण, आशुलिपि)	100%		100%		100%	
8.	द्विभाषी प्रशिक्षण सामग्री तैयार करना	100%		100%		100%	

क्र.सं	कार्य विवरण	''क'' क्षेत्र	''ख'' क्षेत्र	''ग'' क्षेत्र
9.	जर्नल और मानक संदर्भ पुस्तकों को छोड़कर पुस्तकालय के कुल अनुदान में से डिजिटल सामग्री अर्थात् हिन्दी ई–पुस्तक, सीडी/ डीवीडी, पैन ड्राइव तथा अंग्रेजी और क्षेत्रीय भाषाओं से हिन्दी में अनुवाद व्यय पर की गई राशि सहित हिन्दी पुस्तकों की खरीद पर किया गया व्यय।	50%	50%	50%
10.	कंप्यूटर सहित सभी प्रकार के इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की द्विभाषी रूप में खरीद	100%	100%	100%
11.	वेबसाइट द्विभाषी हो	100%	100%	100%
12.	नागरिक चार्टर तथा जन सूचना बोर्डों आदि का प्रदर्शन द्विभाषी हो	100%	100%	100%
13.	(i) मंत्रालयों/विभागों और कार्यालयों तथा राजभाषा विभाग के अधिकारियों (उ.स./ निदे./सं.स.) द्वारा अपने मुख्यालय से बाहर स्थित कार्यालयों का निरीक्षण (कार्यालय का प्रतिशत)	25% (न्यूनतम)	25% (न्यूनतम)	25% (न्यूनतम)
	(ii) मुख्यालय में स्थित अनुभागों का निरीक्षण	25% (न्यूनतम)	25% (न्यूनतम)	25% (न्यूनतम)
	(iii) विदेश में स्थित केंद्र सरकार के स्वामित्व एवं नियंत्रण के अधीन कार्यालयों/ उपक्रमों का संबंधित अधिकारियों तथा राजभाषा विभाग के अधिकारियों द्वारा संयुक्त निरीक्षण	वर्ष में कम से कम एक बार		

क्र.सं.	कार्य विवरण	"क" क्षेत्र	"ख" क्षेत्र	"ग" क्षेत्र
14.	राजभाषा संबंधी बैठकें			
	(क) हिंदी सलाहकार समिति	वर्ष में 2 बैठकें		
	नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति	वर्ष में 2 बैठकें (प्रति छमाही एक बैठक)		
	राजभाषा कार्यान्वयन समिति	वर्ष में 4 बैठकें (प्रति तिमाही एक बैठक)		
15.	कोड, मैनुअल, फॉर्म, प्रक्रिया साहित्य का हिंदी अनुवाद	100%	100%	100%
16.	मंत्रालयों/विभागों/ कार्यालयों/बैंकों/ उपक्रमों के ऐसे अनुभाग जहां संपूर्ण कार्य हिंदी में हो।	40%	30%	20%
	(न्यूनतम अनुभाग) **सार्वजनिक क्षेत्र के उन उपक्रमों/निगमों आदि, जहां अनुभाग जैसी कोई अवधारणा नहीं है, का क्षेत्र में कुल कार्य का 40% क्षेत्र में 25% और मा क्षेत्र में 15% कार्य हिंदी में किया जाए।**			

विदेशों में स्थित भारतीय कार्यालयों के लिए कार्यक्रम		
(क)	हिंदी में पत्राचार (भारत/विदेश में स्थित केंद्रीय सरकार के कार्यालयों के साथ)	50%
(ख)	फाइलों पर हिंदी में टिप्पण	50%
(ग)	वर्ष के दौरान नराकास की बैठकों की संख्या (नराकास का गठन किसी नगर में केंद्र सरकार के 7 कार्यालय या अधिक होने की स्थिति में किया जाए)	प्रत्येक वर्ष में एक बैठक
(घ)	वर्ष के दौरान बिराकास (विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति) की बैठकों की संख्या (विराकास का गठन कार्यालय अध्यक्ष की अध्यक्षता में किया जाए)	प्रत्येक तिमाही में एक बैठक
(ङ)	कंप्यूटरों सहित सभी प्रकार के इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की द्विभाषी उपलब्धता	100%
(च)	हिंदी टंकण करने वाले कर्मचारी/ आशुलिपिक	प्रत्येक कार्यालय में कम से कम एक
(छ)	दुभाषिए की व्यवस्था	प्रत्येक मिशन/दूतावास में स्थानीय भाषा से हिंदी में और हिंदी से स्थानीय भाषा में अनुवाद के लिए दुभाषिए की व्यवस्था की जाए।

अख़बारों से

पराली प्रबंधन की तकनीक सीखेंगे किसान
क्षेत्र दिवस के दौरान जलवायु अनुकूल खेती की दी गयी जानकारी
किसानों के लिए वरदान साबित हो रही जलवायु अनुकूल खेती
किसानों को कृषि कार्य में करने को परिभ्रमण कैलेंडर
किसानों को जीरो टिलेज से खेती का मिला प्रशिक्षण
किसानों को सूक्ष्म सिंचाई की दी सलाह
क्षेत्र दिवस के दौरान जलवायु अनुकूल खेती की दी गयी जानकारी
मौसम की मार: पाला से चना व मसूर फसल में उकठा रोग का प्रकोप बढ़ा
प्राकृतिक खेती को अपनाकर किसान बंधु लागत मूल्य में कर सकते हैं कमी
इटखोरी : जीरो टिलेज विधि से गेहूं उत्पादन की दी गयी जानकारी

29.03.2022 | प्रभात खबर | 04

कृषि यंत्रों को चलाने की दी गयी ट्रेनिंग

09.02.2022 | प्रभात खबर | 05

खेती की नयी तकनीक का दिया प्रशिक्षण

बिहार लोक सेवा आयोग

बालापुर गांव में हुआ भूमि समतलीकरण का शुभारंभ

26.04.2022 | प्रभात खबर | 04

राज्यव्यापी भूमि समतलीकरण का मंत्री ने किया ऑनलाइन शुभारंभ

प्राकृतिक खेती को अपनाकर किसान बंधु लागत मूल्य में कर सकते हैं कमी

जलवायु अनुकूल खेती से जोखिम कम, किसानों का होगा विकास

27.04.2022 | प्रभात खबर | 04

जैविक व प्राकृतिक खेती पर दिया गया जोर

किसान मेला

रोहिणी नक्षत्र में बारिश से खुशी

खेतीबारी

अपना बक्सर

धान के बिचड़े को बचाना मुश्किल सूखे की आशंका से सहमे किसान

खेती को उन्नत बनाने के लिए पशुपालन जरूरी : कृषि मंत्री

पटना, शुक्रवार 13.07.2022 प्रभात खबर 02

सूखे खेतों में उड़ने लगी धूल, किसानों की बढ़ी चिंता

न www.livehindustan.com पटना, शुक्रवार, 19 अगस्त 2022 04

मक्के की फसल पर फॉल आर्मीवर्म कीट का हमला

बक्सर/मधुआ जागरण पटना, 19 अगस्त 2022 दैनिक जागरण 7

मक्के पर फाल आर्मी वर्म का प्रकोप

हिन्दुस्तान अपना बक्सर 04

किसानों के लिए वरदान साबित हो रही जलवायु अनुकूल खेती

किसानों को कृषि कार्य में दक्ष करने को परिभ्रमण कैलेंडर जारी

हिन्दुस्तान अपना बक्सर 02

जल छाजन योजना को लाभुकों तक पहुंचाएं

दी जानकारी

प्रभात खबर बक्सर प्रभात रविवार 04.09.2022 03

जलवायु अनुकूल कृषि कार्यक्रम की जांच को लेकर राज्य की टीम ने पांच चयनित गांवों का किया निरीक्षण

प्रभात खबर बक्सर 04-09-2022

6 दैनिक जागरण पटना, 31 अगस्त, 2022 बक्सर/डुमरांव जागरण

पराली प्रबंधन की तकनीक सीखेंगे किसान

3 दिवसीय प्रशिक्षण शिविर में किसानों के लिए जत्था रवाना

खरपतवार से निपटने के लिए खेतों में करें दवा का छिड़काव

बक्सर प्रभात 19.08.2022 प्रभात खबर 04

आत्मा व केवीके के संयुक्त भ्रमण के दौरान मौके पर किया गया निदान

जिले में मक्के की फसल में फॉल आर्मीवर्म का अटैक, परेशानी

हिन्दुस्तान www.livehindustan.com पटना सोमवार 5 सितंबर 2022 03

अपना बक्सर

धान की बुआई तकनीक से अवगत हुए किसान

हिन्दुस्तान 05.09.22

- वैज्ञानिक ने किसानों को नई तकनीक की दी गई जानकारी
- पुनर्पुर, नावानगर, डिहरी व बक्सर के किसानों को शामिल

दैनिक जागरण पटना, 6 सितंबर 2022 5

डुमरांव जागरण

जलवायु अनुकूल खेती से सूखे को अवसर में बदलें

उप निदेशक डा. अनिल बोले- डुमरांव का जलवायु अनुसंधान केंद्र पूरे देश को अलग संदेश देगा

जलवायु अनुकूल खेती से रूबरू हुए किसान और अधिकारी

आईसीएआर में होगा प्राकृतिक खेती पर शोध

पटना। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के पूर्वी अनुसंधान परिसर में प्राकृतिक खेती पर शोध होगा। डॉ. अनिल सिंह के नेतृत्व में प्राकृतिक खेती पर शोध कार्य होगा और इस क्षेत्र में संभावनाओं को तलाशा जाएगा। गुरुवार को आईसीएआर के पूर्वी अनुसंधान परिसर की तीन दिवसीय बैठक में शोध का निर्णय लिया गया। संस्थान के निदेशक डॉ. आशुतोष उपाध्याय ने यह जानकारी दी।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का तीन दिवसीय संस्थान अनुसंधान परिषद की बैठक संपन्न

'शाश्वत यौगिक कृषि' पर व्याख्यान आयोजित

पटना (आससे)। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना में 'शाश्वत यौगिक कृषि' विषय पर ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय की बहन राजयोगिनी सरला देवी तथा उनकी टीम द्वारा संस्थान के वैज्ञानिकों एवं अन्य अधिकारियों व कर्मचारियों के साथ विचार-विमर्श किया गया। संस्थान के निदेशक डा. आशुतोष उपाध्याय ने कार्यक्रम के मुख्य अतिथियों का स्वागत किया एवं संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा किये जा रहे शोध कार्यों से अवगत कराया तथा प्राकृतिक खेती पर आरंभ किये जाने वाली परियोजनाओं की भी चर्चा की। बहन राजयोगिनी सरला देवी ने ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय द्वारा चलाये जा रहे कार्यक्रमों की जानकारी दी एवं कृषि क्षेत्र में यौगिक खेती को बढ़ावा देने के लिए प्रेरित किया। लखनऊ में पदस्थापित सहायक निदेशक (कृषि) बद्री विशाल तिवारी ने अपने व्याख्यान में प्राचीन भारतीय कृषि प्रणाली की महत्ता के बारे में बताया। उन्होंने रासायनिक खाद के अधिकाधिक इस्तेमाल द्वारा मिट्टी को हो रहे नुकसान के बारे में विस्तृत जानकारी दी और संस्थान के सभी वैज्ञानिकों से शाश्वत यौगिक खेती को बढ़ावा देने की अपील की। इस कार्यक्रम में डा. रामेश्वर सिंह, माननीय कुलपति, बिहार पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, पटना सहित संस्थान के समस्त वैज्ञानिकगण एवं कर्मचारीगण उपस्थित थे।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की पहली तिमाही बैठक का आयोजन

कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिषद, पटना में प्राकृतिक खेती पर शोध प्रारंभ

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद पटना की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक

पटना (चौथी वाणी)। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना में दिनांक 25.07.2022 को ...

संस्थान अनुसंधान परिषद की बैठक
INSTITUTE RESEARCH COUNCIL MEETING

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद पटना की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक

पटना(चौथी वाणी)। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना में दिनांक 25.07.2022 को संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की दूसरी तिमाही की पहली बैठक का आयोजन किया गया बैठक का आयोजन संस्थान के निदेशक डॉ. आशुतोष उपाध्याय की अध्यक्षता में किया गया, जिसमें संस्थान की हिंदी पत्रिका ह्यअक्षय खेतीह्र अर्ध वार्षिक के प्रकाशन से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर परिचर्चा की गई डॉ. उपाध्याय ने समिति के सभी सदस्यों को युद्ध स्तर पर कार्य करने का निर्देश दिया ताकि पत्रिका का सफलतापूर्वक विमोचन आगामी हिंदी पखवाड़ा को संपन्न किया जा सके कार्यक्रम के शुरूआत संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के उपाध्यक्ष डॉ. अनिल लुमार सिंह प्रधान वैज्ञानिक ने हिंदी पत्रिका ह्यअक्षय खेतीह्र एवं हिंदी पखवाड़ा की तैयारियों के बारे मे समिति को अवगत करायो जिस पर अध्यक्ष महोदय ने संतोष व्यक्त किया उक्त बैठक में डॉ. शिवानी, प्रधान वैज्ञानिक; डॉ. पंकज कुमार, वरिष्ठ वैज्ञानिक; श्री पुष्पनायक, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी; डॉ. रजनी कुमारी, वरिष्ठ वैज्ञानिक, डॉ. तारकेश्वर कुमार, वैज्ञानिक, डॉ. कुमारी शुभा, वैज्ञानिक एवं श्री उमेश कुमार मिश्र, हिंदी अनुवादक उपस्थित थे

आईसीएआर में प्राकृतिक खेती पर शोध शुरू

पटना | भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूर्वी प्रक्षेत्र में प्राकृतिक खेती पर शोध शुरू हो गया है। सोमवार को शोध की शुरुआत आईसीएआर के निदेशक डॉ. आशुतोष उपाध्याय ने की। डॉ. उपाध्याय ने बताया कि इस परियोजना की जिम्मेदारी संस्थान के प्रधान वैज्ञानिक डॉ अनिल कुमार सिंह को दी गई है। प्राकृतिक खेती के साथ-साथ जैविक खेती, समेकित पोषण प्रबंधन एवं रासायनिक खेती के साथ इनका तुलनात्मक अध्ययन किया जाएगा। इस परियोजना से यह निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया जाएगा कि दीर्घकाल में बदलते जलवायु के परिप्रेक्ष्य में उपर्युक्त विभिन्न कृषि प्रणालियों में कौन सी कृषि प्रणाली बेहतर है और क्यों है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर पटना में हर्षोल्लास के साथ मना स्वतंत्रता दिवस

गोपालगंज(चौथी वाणी)। आजादी के 75वीं वर्षगांठ के सुअवसर पर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना में धूमधाम से स्वतंत्रता दिवस मनाया गया । संस्थान के निदेशक डॉ. आशुतोष उपाध्याय ने झंडोत्तोलन कर संस्थान के सभी कर्मियों को ढेर सारी बधाइयां एवं शुभकामनाएं दी । डॉ. उपाध्याय ने बताया कि हमारा देश शुरू से ही विश्व गुरु रहा है । हमें देश के महापुरुषों की बातों का अनुकरण करते हुए आगे बढ़ना चाहिए । अपने संबोधन के दौरान डॉ. उपाध्याय ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी का नया नारा 'जय जवान, जय किसान, जय विज्ञान और जय अनुसंधान' का भी जिक्र किया एवं बताया कि हमें कृषि अनुसंधान में नई-नई चुनौतियों को पार करना है। उन्होंने कहा आज समय आ गया है, जब हमें नए संकल्प के साथ नई दिशा की ओर कदम बढ़ाने की जरूरत है। इस उपलक्ष्य पर संस्थान के निदेशक द्वारा एक क्रिकेट मैच का भी उद्घाटन किया गया, जिसमें संस्थान के कर्मचारियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया ।

दैनिक भास्कर पटना 28-08-2022

आईसीएआर में पहली बार बनाया गया जीवामृत

पटना | भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर(आईसीएआर) में प्राकृतिक खेती परियोजना के तहत जीवामृत बनाया गया। संस्थान में पहली बार जीवामृत बनाया गया है। इसे बनाने के लिए 10 लीटर देशी गोमूत्र, 10 किलोग्राम ताजा गोबर, 500 ग्राम पेड़ के नीचे की मिट्टी, 1 किलोग्राम देशी गुड़, 1 किलोग्राम चना का आटा मिलाया गया। मिश्रण को 200 लीटर के पानी के ड्रम में मिलाया गया और सूती के कपड़े से ढककर दिन में तीन बार तीन मिनट तक लकड़ी से घड़ी की दिशा में घुमाया गया। संस्थान के निदेशक डॉ. आशुतोष उपाध्याय की देख-रेख में जीवामृत बनाया गया है। निदेशक ने बताया कि प्राकृतिक खेती में जीवामृत एक प्रमुख घटक है, इसके उपयोग के बिना इस खेती की परिकल्पना नहीं की जा सकती है। इसके अलावा बीजामृत, धनजीवामृत, ब्रह्मास्त्र, नीमास्त्र और आग्नेस्त्र भी अन्य प्रमुख घटक हैं। मौके पर डॉ. अनिल कुमार सिंह, डॉ. विकास सरकार, डॉ. पीके सुंदरम, डॉ. रोहन कुमार रमण, डॉ. वेद प्रकाश, डॉ. कीर्ति सौरभ, डॉ अभिषेक दुबे, डॉ. राकेश कुमार मौजूद थे।

हिन्दुस्तान 24/02/2022

मुख्य न्यायाधीश डी.एन. पटेल और

'जैविक खादों का निर्माण जरूरी'

पटना। कृषि मंत्री अमरेन्द्र प्रताप सिंह ने कहा कि कई प्रकार की जैविक खादों का निर्माण करना व गाय के गोबर व मूत्र से बनने वाले वस्तुओं, पादप एंजाइम्स, कीटनाशक, जैविक उत्पाद विक्रय का बाजार विकसित करना जरूरी है।

वे कृषि अनुसंधान परिषद के पूर्वी परिसर में द्वितीय राज्य स्तरीय समन्वय समिति की बैठक के दौरान नैसर्गिक कृषि-असीमित संभावनाओं की खेती पुस्तक का विमोचन कर रहे थे। पुस्तक का विमोचन निदेशक डॉ. उज्ज्वल, पशु विज्ञान विवि के कुलपति रामेश्वर सिंह, कृषि सचिव एन सरवण ने किया। पुस्तक के प्रधान लेखक डॉ. अनिल सिंह हैं।

www.jagran.com पटना जागरण

पूर्वी भारत की जलवायु में तेजी से हो रहा बदलाव, कम पानी वाली फसलें ही कारगर

18वीं अनुसंधान परामर्शदात्री समिति की बैठक में कृषि विज्ञानियों ने दी अपनी राय

27/10/21

डुमरांव आसपास

स्वर्ण श्रेया, स्वर्ण शक्ति तथा स्वर्ण समृद्धि धान का प्रदर्शन कर प्रक्षेत्र दिवस में आये किसानों को उन्नत कृषि की दी गई जानकारी

मिट्टी में जैविक कार्बन की कमी पर्यावरण को कर रहा है प्रदूषित

किसानों में जागरूकता लाने की आवश्यकता है कि वे संतुलित मात्रा में उर्वरकों का इस्तेमाल करें। जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए प्रयास किये जा रहे हैं।

– डॉ. आशुतोष उपाध्याय, निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान पूर्वी ...

कृषि के लिए वरदान बनेगी ड्रोन तकनीक : निदेशक

दैनिक जागरण – 30/4/22

www.jagran.com

120 दिन में तैयार होगी 'स्वर्ण उन्नत'

आइसीएआर ने विकसित की धान की नई प्रजाति, प्रति हे. 50 से 55 क्विंटल होगी उपज

जागरण विशेष

स्वर्ण उन्नत का लंबा एवं पतला होगा दाना

बीमारियों पर होगा नियंत्रण

हिन्दुस्तान

पटना, बुधवार, 20 अप्रैल 2022 | 09

'कोरोना काल में भी किसानों के लाभ के लिए शोधकार्य हुए'

पटना, वरीय संवाददाता। आईसीएआर के निदेशक डॉ. आशुतोष उपाध्याय ने कहा है कि कोरोना काल में भी किसानों के लाभ के लिए शोध के काम हुए हैं। इस साल जलवायु अनुकूल एवं उच्च उत्पादन से युक्त स्वर्ण सुरक्षा एवं स्वर्ण उन्नत धान की प्रजातियां बिहार राज्य में खेती के लिए अनुमोदित की गयीं। वे मंगलवार को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना (बिहार) द्वारा 18वीं अनुसंधान परामर्शदात्री समिति की बैठक को संबोधित कर रहे थे।

उन्होंने कहा कि उच्च पैदावार और भरपूर जिंक एवं लौह से युक्त शून्य टैनिन वाली बाकला की प्रजातियां दो स्वर्ण सुरक्षा एवं स्वर्ण गौरव भारत सरकार द्वारा बिहार राज्य में खेती के लिए अनुमोदित की गयीं। जलवायु सहनशील बाजरा आधारित उत्पादन प्रणाली के माध्यम से चावल-गेहूं फसल प्रणाली की अपेक्षा 84 प्रतिशत ऊर्जा खपत, 87 प्रतिशत कार्बन उत्सर्जन में कमी एवं ऊर्जा दक्षता में 61 प्रतिशत वृद्धि करने में सफलता प्राप्त किया। नैनो डीएपी से बीजशोधन (5 मिली नैनो डीएपी प्रति किलोग्राम बीज) और छह लीटर प्रति... फसल में (2 मिली लीटर नैनो डीएपी प्रति लीटर पानी में मिलाकर) दो बार 20-25 एवं 40-45 दिनों की अवस्था पर छिड़काव करने से 50 % तक फॉस्फोरस की बचत संभव है। संस्थान ने छोटे मछली विक्रेताओं के लिए मानव चालित बिक्री गाड़ी के प्रोटोटाइप विकसित किया। बैठक में परामर्शदात्री समिति के अध्यक्ष डॉ. सुरेन्द्रनाथ, डॉ. एससी भट्टाचार्य ने विचार व्यक्त किए।

दैनिक भास्कर, 02/8/2022

बिहार, पटना

वेबसाइट पर जा सकते हैं।

आईसीएआर में प्राकृतिक खेती पर शोध शुरू

पटना | भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूर्वी प्रक्षेत्र में प्राकृतिक खेती पर शोध शुरू हो गया है। सोमवार को शोध की शुरुआत आईसीएआर के निदेशक डॉ. आशुतोष उपाध्याय ने की। डॉ. उपाध्याय ने बताया कि इस परियोजना की जिम्मेदारी संस्थान के प्रधान वैज्ञानिक डॉ अनिल कुमार सिंह को दी गई है। प्राकृतिक खेती के साथ-साथ जैविक खेती, समेकित पोषण प्रबंधन एवं रासायनिक खेती के साथ इनका तुलनात्मक अध्ययन किया जाएगा। इस परियोजना से यह निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया जाएगा कि दीर्घकाल में बदलते जलवायु के परिप्रेक्ष्य में उपर्युक्त विभिन्न कृषि प्रणालियों में कौन सी कृषि प्रणाली बेहतर है और क्यों है।

दैनिक भास्कर, 16/7/22

बढ़ेगी आय, पैदावार डेढ़ टन प्रति हेक्टेयर

अब जलजमाव वाले खेत में हो सकेगी अरहर की खेती, नई प्रजाति विकसित

भास्कर न्यूज | पटना

हर साल जलजमाव के कारण लगभग दस लाख हेक्टेयर में लगी अरहर की फसल बर्बाद हो जाती है। इस बर्बादी से बचाने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूर्वी प्रक्षेत्र के कृषि वैज्ञानिकों ने जलजमाव वाली भूमि पर उत्पादित होने वाली अरहर की नई प्रजाति विकसित की है। चार साल के अनुसंधान के बाद अरहर की नई प्रजाति विकसित की गई है। अनुसंधान के प्रधान वैज्ञानिक डॉ अनिल कुमार सिंह ने बताया कि राज्य में 25 हजार हेक्टेयर में अरहर की खेती होती है। कई जगहों पर अरहर की खेती की जा सकती है, लेकिन जलजमाव से अरहर में उकठा रोग लग जाता है। किसानों को मुनाफा देने और उत्पादन बढ़ाने के लिए नई प्रजाति विकसित की गई है। उन्होंने बताया कि जल्द ही इस बीज को भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा जारी किया जाएगा। प्रचुर मात्रा में प्रोटीन पाये जाने के कारण अरहर की दाल राज्य में खूब पसंद की जाती है। शादी विवाह के मौके पर अरहर की दाल का प्रचलन भी है। मुंगेर, समस्तीपुर, बाढ़, भोजपुर और रोहतास में अरहर की अच्छी खेती होती है। बिहार की औसत उत्पादकता देश की औसत उत्पादकता से अधिक है। नई प्रजाति की सबसे बड़ी खासियत यह है कि धान के साथ अरहर की खेती कर सकते हैं। इसकी पैदावार डेढ़ टन प्रति हेक्टेयर है। जो सामान्य अरहर के उत्पादन के बराबर है। इसकी बुआई जून के अंतिम सप्ताह से लेकर जुलाई तक होती है। खेत में पानी के कारण यह फ्यूजेरियम नामक कवक से उकठा नामक रोग लग जाता है। इसके कारण सारे फूल झड़ जाते हैं। सितंबर से जनवरी महीने के बीच में रोग लगना शुरू हो जाता है। इससे पौधा पीला होकर सूख जाता है।

हिन्दुस्तान

एकीकृत खेती से बढ़ेगी आमदनी

पटना। जलवायु परिवर्तन के इस दौर में खेती घाटे का सौदा बन रहा है। आज समय आ गया है कि किसान एकीकृत कृषि प्रणाली अपनायें। इस तकनीक के तहत फसल, पशुधन, बागवानी, मत्स्य पालन सभी तरह के काम एक जगह पर किए जाते हैं। ये बातें वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से बीसीकेवी, कल्याणी के कुलपति डॉ. बीएस महापात्रा ने कही।

वे भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर में तीन दिवसीय राष्ट्रीय सम्मेलन को सम्बोधित कर रहे थे। पूर्वी परिसर, पटना के निदेशक डॉ. उज्ज्वल कुमार ने भी विचार रखे।

दैनिक भास्कर - 19/04/2022

'वन डिस्ट्रिक्ट वन प्रोडक्ट' : सरकार के प्रयास से मखाना उत्पादन को मिली राष्ट्रीय पहचान

मखाना के उत्पादन व विकास को लेकर दरभंगा को मिलेगा प्रधानमंत्री अवॉर्ड

पॉलिटिकल रिपोर्टर | पटना

केंद्र सरकार के 'वन डिस्ट्रिक्ट वन प्रोडक्ट' प्रोजेक्ट के तहत मखाना के उत्पादन एवं विकास के लिए दरभंगा जिला को प्रधानमंत्री अवॉर्ड मिलेगा। अवार्ड, 21 अप्रैल को नई दिल्ली में दिया जाएगा। जल संसाधन व सूचना एवं जनसंपर्क मंत्री संजय कुमार झा ने कहा कि यह प्रतिष्ठित अवार्ड, मखाना को लेकर राज्य सरकार द्वारा किए गए प्रयासों का नतीजा है। मखाना उत्पादन को मिली राष्ट्रीय पहचान, बिहार सरकार के जारी प्रयासों को और ताकत देगी। मखाना उद्योग, बेरोजगारी और पलायन की समस्या के निदान में काफी सहायक हो सकता है। मंत्री के अनुसार, मुख्यमंत्री नीतीश कुमार का सपना है कि देश-दुनिया की हर थाली में बिहार का कोई न कोई उत्पाद या व्यंजन जरूर हो। इस सपने को साकार करने में मिथिला का मखाना, सबसे बड़ी भूमिका निभाने की क्षमता रखता है। पौष्टिकता एवं औषधीय गुणों से परिपूर्ण मखाना, मिथिला की बाकायदा पहचान है। दुनिया में मखाना के कुल उत्पादन का करीब 85% हिस्सा अकेले मिथिला में होता है। मंत्री ने कहा कि नीतीश कुमार ने 28 फरवरी 2002 को राष्ट्रीय मखाना अनुसंधान केंद्र (दरभंगा) की स्थापना कराई। केंद्र की तब की कांग्रेस सरकार ने 2005 में इस संस्थान का राष्ट्रीय दर्जा हटा लिया। नतीजा, इसे केंद्र का फंड मिलना बंद हो गया था।

लागत मूल्य का 75% अनुदान

बिहार सरकार के 'मखाना विकास योजना' के तहत मखाना की उच्च प्रजाति के बीज को अपनाने पर लागत मूल्य का 75% (अधिकतम 72,750 रुपये प्रति हेक्टेयर) सहायता अनुदान दिया जाता है। उच्च प्रजाति का बीज अपनाने से मखाना की उत्पादकता 16 क्विंटल प्रति हेक्टेयर से बढ़ कर 28 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक हो सकती है। मुख्यमंत्री के निर्देश पर जलजमाव वाले क्षेत्रों में मखाना-सह-मत्स्यपालन के एक बेहतर मॉडल को विकसित करने का भी काम हो रहा है।

सूखा क्षेत्रों के लिए धान की नई किस्म स्वर्ण शक्ति धान उपयुक्त : डॉ इंद्रजीत

हिन्दुस्तान

तरक्की को चाहिए नया

समय की जरूरत है समेकित कृषि प्रणाली को अपनाना

दैनिक भास्कर रामगढ़ 24-10-2021

स्वर्ण श्रेया धान बेहतर विकल्प : डॉ इंद्रजीत

मांडू/गिद्दी | भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर पटना एवं कृषि विज्ञान केंद्र मांडू के संयुक्त तत्वावधान में ग्राम बड़का चुंबा में प्रक्षेत्र दिवस मनाया गया। केंद्र के वैज्ञानिक डॉ इंद्रजीत प्रजापति ने किसानों को स्वर्ण श्रेया प्रजाति धान की विशेषताओं से अवगत कराया। कहा कि उपरोक्त धान बीज सूखा सहनशील होने के कारण कम पानी वाले क्षेत्र तथा ऊंचाटार वाले स्थान पर बेहतर उपज देती है। इससे किसानों को 40 से 45 प्रतिशत पानी की बचत होती है। बताया कि भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर पटना के वैज्ञानिक डॉ संतोष

दैनिक भास्कर -12/07/2022

रासायनिक खाद के इस्तेमाल से नुकसान की जानकारी दी

पटना | भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना में 'शाश्वत यौगिक कृषि' विषय पर ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय की बहन राजयोगिनी सरला देवी तथा उनकी टीम द्वारा संस्थान के वैज्ञानिकों एवं अन्य अधिकारियों व कर्मचारियों के साथ विचार-विमर्श किया गया। संस्थान के निदेशक डॉ. आशुतोष उपाध्याय ने स्वागत किया। लखनऊ में पदस्थापित सहायक निदेशक (कृषि) बद्री विशाल तिवारी ने रासायनिक खाद के अधिकाधिक इस्तेमाल द्वारा मिट्टी को हो रहे नुकसान के बारे में बताया और शाश्वत यौगिक खेती को बढ़ावा देने की अपील की। इस कार्यक्रम में बिहार पशु विज्ञान विवि के कुलपति डॉ. रामेश्वर सिंह सहित संस्थान के समस्त वैज्ञानिकगण एवं कर्मचारीगण उपस्थित थे।

आज — 12/07/2022

'शाश्वत यौगिक कृषि' पर व्याख्यान आयोजित

पटना (आससे) । भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना में 'शाश्वत यौगिक कृषि' विषय पर ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय की बहन राजयोगिनी सरला देवी तथा उनकी टीम द्वारा संस्थान के वैज्ञानिकों एवं अन्य अधिकारियों व कर्मचारियों के साथ विचार-विमर्श किया गया। संस्थान के निदेशक डा. आशुतोष उपाध्याय ने कार्यक्रम के मुख्य अतिथियों का स्वागत किया एवं संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा किये जा रहे शोध कार्यों से अवगत कराया तथा प्राकृतिक खेती पर आरंभ किये जाने वाली परियोजनाओं की भी चर्चा की। बहन राजयोगिनी सरला देवी ने ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय द्वारा चलाये जा रहे कार्यक्रमों की जानकारी दी एवं कृषि क्षेत्र में यौगिक खेती को बढ़ावा देने के लिए प्रेरित किया। लखनऊ में पदस्थापित सहायक निदेशक (कृषि) बद्री विशाल तिवारी ने अपने व्याख्यान में प्राचीन भारतीय कृषि प्रणाली की महत्ता के बारे में बताया। उन्होंने रासायनिक खाद के अधिकाधिक इस्तेमाल द्वारा मिट्टी को हो रहे नुकसान के बारे में विस्तृत जानकारी दी और संस्थान के सभी वैज्ञानिकों से शाश्वत यौगिक खेती को बढ़ावा देने की अपील की। इस कार्यक्रम में डा. रामेश्वर सिंह, माननीय कुलपति, बिहार पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, पटना सहित संस्थान के समस्त वैज्ञानिकगण एवं कर्मचारीगण उपस्थित थे।

उर्वरकों के कुशल उपयोग पर जागरुकता अभियान

पटना | भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के पूर्वी अनुसंधान पसिसर पटना द्वारा उर्वरकों के कुशल उपयोग पर जागरुकता अभियान सह मृदा प्रक्षेत्र दिवस का आयोजन किया गया। शुभारंभ मुख्य अतिथि वीवी सदामते, नीति आयोग के पूर्व सलाहकार, पूर्वी अनुसंधान पसिसर के निदेशक आशुतोष उपाध्याय, डॉ एके चौधरी, डॉ कमल शर्मा द्वारा किया गया। डॉ आशुतोष उपाध्याय ने बताया कि पोषक तत्वों के संतुलित प्रबंधन से किसान मृद्धा की क्षमता लंबे समय तक बनाए रख सकते हैं।

दैनिक भास्कर - 22/06/22

दैनिक भास्कर - 21/05/22

फसल और फलों के उत्पादन बढ़ाने में भी मधुमक्खी उपयोगी

आईसीएआर के निदेशक डॉ. आशुतोष उपाध्याय ने बताया कि मधुमक्खी पालन किसानों की आय बढ़ाने में मददगार है। परागण में सहायता के कारण फसल और फलों के उत्पादन बढ़ाने में भी मधुमक्खी उपयोगी है। मधुमक्खी, तितली, चिड़िया और चमगादड़ खाद्य फसलों में से 87 प्रतिशत उत्पादन में वृद्धि के साथ ही कई पौधों से दवाएं भी उपलब्ध कराते हैं। 20 मई 2018 से विश्व मधुमक्खी दिवस मनाया जाता है। स्लोवेनिया सरकार के प्रयास के कारण संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 20 मई को विश्व मधुमक्खी दिवस घोषित किया है।

हिन्दुस्तान - 06/5/2022

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की हुई बैठक

पटना। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना में राजभाषा कार्यान्वयन समिति की पहली तिमाही बैठक का आयोजन किया गया। बैठक संस्थान के निदेशक डॉ. आशुतोष उपाध्याय की अध्यक्षता में हुई। उन्होंने बताया कि हम सभी हिंदी भाषा की जानकारी रखते हैं। इसमें सभी जरूरी काम किए जाने चाहिए ताकि लोगों को सहूलियत मिल सके। बैठक में डॉ. अनिल कुमार सिंह, प्रधान वैज्ञानिक पुष्पनायक आदि मौजूद रहें।

धान के सूखा प्रभेद से कम पानी में मिलेगी ज्यादा उपज

स्वर्ण श्रेया, स्वर्ण शक्ति व स्वर्ण समृद्धि धान की प्रजाति देती है कम पानी में अच्छी पैदवार

सुखाड़ में धान की नयी प्रजातियां किसानों के लिए होंगी वरदान

जलवायु में परिवर्तन कृषि के लिए चुनौती

जास, पटना : जलवायु में परिवर्तन कृषि के लिए एक बड़ी चुनौती पैदा कर रहा है। इससे निपटने के लिए विज्ञानियों को उपाय खोजना होगा। ये बातें मंगलवार को मध्य गंगा के मैदानों में कृषि टास्क फोर्स समिति की बैठक में आइसीएआर के क्षेत्रीय निदेशक डा. उज्ज्वल कुमार ने कहीं। उन्होंने कहा कि मध्य गंगा के अधिकांश क्षेत्र कृषि आधारित हैं। उनके विकास के लिए कृषि का विकास बहुत जरूरी है। बैठक में राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विधि के कुलपति डा. आरसी श्रीवास्तव व अन्य मौजूद थे।

किसानों में बांटा गया धान का बीज व वाटर पम्प

पटना। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूर्वी प्रक्षेत्र द्वारा नौबतपुर में आजीविक सुधार के लिए अनुसूचित जाति के किसानों के बीच छोटे कृषि उपकरणों का प्रदर्शन सह वितरण किया गया। इसमें 14 क्विंटल धान बीज (स्वर्ण श्रेया, स्वर्ण समृद्धि और सीआर धन 909) और 180 वाटर पम्प का वितरण किया गया।

कृषि विकास पर टास्क फोर्स समिति की बैठक

फसल, बागवानी, पशुपालन विकास के लिए सरकार को सुझाव देंगे वैज्ञानिक

पटना। मध्य गंगा के मैदानी क्षेत्र बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश आदि क्षेत्रों में फसल, बागवानी और पशुपालन विकास के लिए कृषि और पशुपालन वैज्ञानिक केंद्र और राज्य सरकार को रिपोर्ट देंगे। मंगलवार को मध्य गंगा के मैदानों में कृषि विकास की रणनीति विषय पर टास्क फोर्स समिति की बैठक डॉ. राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विवि के कुलपति डॉ. आरसी श्रीवास्तव की अध्यक्षता में हुई। संयोजक व आईसीएआर के निदेशक डॉ. उज्ज्वल कुमार ने बताया कि विभिन्न क्षेत्रों में रणनीति के लिए बागवानी, जल संसाधन प्रबंधन, फसल प्रजनन रणनीति, पशु विज्ञान, मत्स्य पालन और विस्तार और लिंकेज के तहत छः उप-समितियों का गठन किया गया है। आईसीएआर की प्रधान वैज्ञानिक डॉ. शिवानी ने धन्यवाद दिया। आचार्य नरेंद्र देव कृषि व प्रौद्योगिकी विवि फैजाबाद के कुलपति डॉ. बिजेंद्र सिंह, बिहार पशु विज्ञान विवि के कुलपति डॉ. रामेश्वर सिंह, बिहार कृषि विवि के कुलपति डॉ. अरुण कुमार, अपर निदेशक फसल डीपी त्रिपाठी, अटारी निदेशक डॉ. अंजनी कुमार सहित अन्य संस्थानों के वैज्ञानिक शामिल हुए।

हिन्दुस्तान (पटना संस्करण) - 04/10/2021

वैज्ञानिकों ने लगाई सेहत की दौड़

पटना। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर और उसके क्षेत्रीय कार्यालयों में फिट इंडिया फ्रीडम रन संपन्न हुआ। संस्थान के निदेशक डॉ. उज्ज्वल कुमार ने कहा कि खेलकूद हमारे स्वस्थ जीवन का आधार है। मौके पर खेल समिति के चेयरमैन डॉ. अभिषेक कुमार दुबे, डॉ. अनिर्बान मुखर्जी, डॉ. जसप्रीत सिंह, डॉ. रोहन रमन आदि मौजूद रहे।

हिन्दुस्तान, पटना ...

मिट्टी में जैविक कार्बन की कमी पर्यावरण को कर रहा है प्रदूषित

■ सविता

पटना। बेहिसाब उर्वरकों के इस्तेमाल से मिट्टी में जैविक कार्बन की कमी हो गई है। यह कमी पर्यावरण प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन का बड़ा कारण बन गया है। आजादी के समय राज्य की खेतों की मिट्टी में न्यूनतम 1.5-2.5 के बीच जैविक कार्बन था, जो आज .4 से .5 रह गया है। इसके कारण मिट्टी की पोषक जलधारण की क्षमता कम हो गई है। मिट्टी की पोषक तत्वों को अवशोषित करने की क्षमता भी घट रही है। जलधारण इससे पौधों का विकास प्रभावित हो रहा है। जलधारण की क्षमता कम होने के कारण खेतों को बार-बार सिंचाई की जरूरत हो रही है। पोषक तत्व जड़ों तक नहीं पहुंचने के कारण फसलों की गुणवत्ता प्रभावित हो रही है, साथ में मिट्टी कई तरह की बीमारी की चपेट में आ गई है। इससे वायु का संचरण बेहतर तरीके से नहीं हो पा रहा है। क्योंकि मिट्टी का कार्बन अवशोषित नहीं होने के कारण सारा कार्बन वायुमंडल में फैल रहा है। कृषि वैज्ञानिक इसे चिंताजनक बता रहे हैं।

किसानों में जागरूकता लाने की आवश्यकता है कि वे संतुलित मात्रा में उर्वरकों का इस्तेमाल करें। जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए प्रयास किये जा रहे हैं।

– डॉ. आशुतोष उपाध्याय, निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान पूर्वी प्रक्षेत्र

www.jagran.com दैनिक जागरण ...2021 पटना जागरण

पूर्वी भारत की जलवायु में तेजी से हो रहा बदलाव, कम पानी वाली फसलें ही कारगर

18वीं अनुसंधान परामर्शदात्री समिति की बैठक में कृषि विज्ञानियों ने दी अपनी राय

हिन्दुस्तान 23 फरवरी 2022

कर्मचारियों को पुरस्कृत करते कुलपति डॉ. रामेश्वर सिंह।

समेकित कृषि से गांवों में आयेगी समृद्धि : कुलपति

पटना। बिहार पशु चिकित्सा विवि के कुलपति डॉ. रामेश्वर सिंह ने कहा कि गांवों में समृद्धि लाने के लिए खेती के साथ पशुपालन और मत्स्य पालन साथ में करना होगा। समेकित कृषि को तकनीक आधारित कर किसानों की आय बढ़ायी जा सकती है। इसके लिए किसानों को प्रशिक्षित करना होगा। वे मंगलवार को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के पूर्वी अनुसंधान परिसर के 22वें स्थापना दिवस समारोह को संबोधित कर रहे थे। आईआईटी पटना के निदेशक डॉ. त्रिलोक नाथ सिंह ने कहा खेती में ड्रोन टेक्नोलॉजी को प्रयोगी बनाना होगा। इसमें कर्मियों को सम्मानित भी किया गया।

प्रभात खबर

बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में जल प्रबंधन की बने रणनीति

प्रभात खबर Sun, 17 October 2021 https://epaper.prabhatkhabar.com/...

हिन्दुस्तान, पटना, ...

समेकित मत्स्यपालन से आय बढ़ेगी

पटना। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में समेकित मत्स्य पालन की आधुनिक तकनीक पर पांच दिवसीय कार्यशाला हुई। आईसीएआर निदेशक आशुतोष उपाध्याय ने कहा कि मछली पालन के साथ बतख पालन, मुर्गी पालन, बकरी पालन और गाय-भैंस का पालन कर सकते हैं। मौके पर मछली के प्रधान वैज्ञानिक डॉ. कमल शर्मा, डॉ. पंकज कुमार और डॉ. तारकेश्वर मौजूद रहे।

नोट

नोट

प्रवेशांक
वर्ष 1 ▪ अंक 1 (जून 2014)
अक्षय खेती
कृषि जानकारी से परिपूर्ण, खेत-खलिहान को समर्पित पत्रिका
पूर्वी क्षेत्र के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का अनुसंधान परिसर
आई.सी.ए.आर परिसर, पोस्ट: बिहार वेटरनेरी कॉलेज
पटना–800 014, बिहार

ISSN : 2394 6989
वर्ष 1 ▪ अंक 2 (दिसम्बर 2014)
अक्षय खेती
कृषि जानकारी से परिपूर्ण, खेत-खलिहान को समर्पित पत्रिका
पूर्वी क्षेत्र के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का अनुसंधान परिसर
आई.सी.ए.आर परिसर, पोस्ट: बिहार वेटरनेरी कॉलेज
पटना–800 014, बिहार

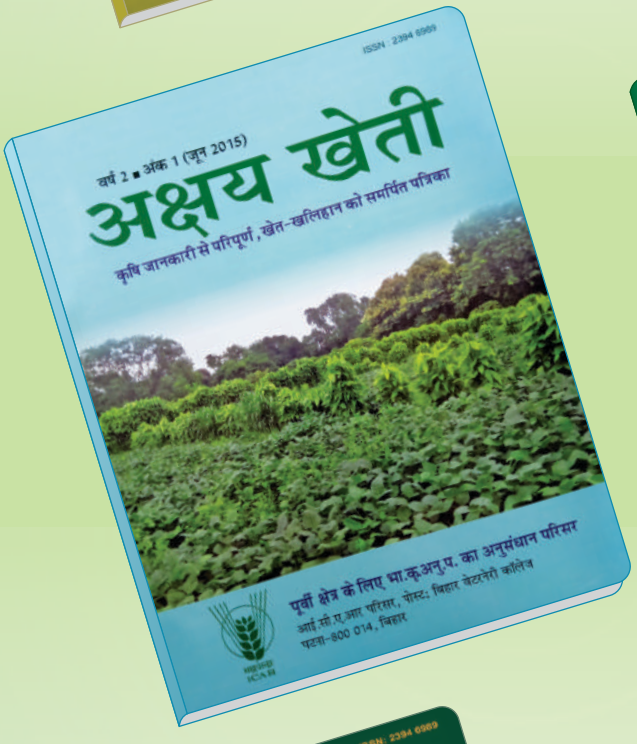
ISSN : 2394 6989
वर्ष 2 ▪ अंक 1 (जून 2015)
अक्षय खेती
कृषि जानकारी से परिपूर्ण, खेत-खलिहान को समर्पित पत्रिका
पूर्वी क्षेत्र के लिए भा.कृ.अनु.प. का अनुसंधान परिसर
आई.सी.ए.आर परिसर, पोस्ट: बिहार वेटरनेरी कॉलेज
पटना–800 014, बिहार

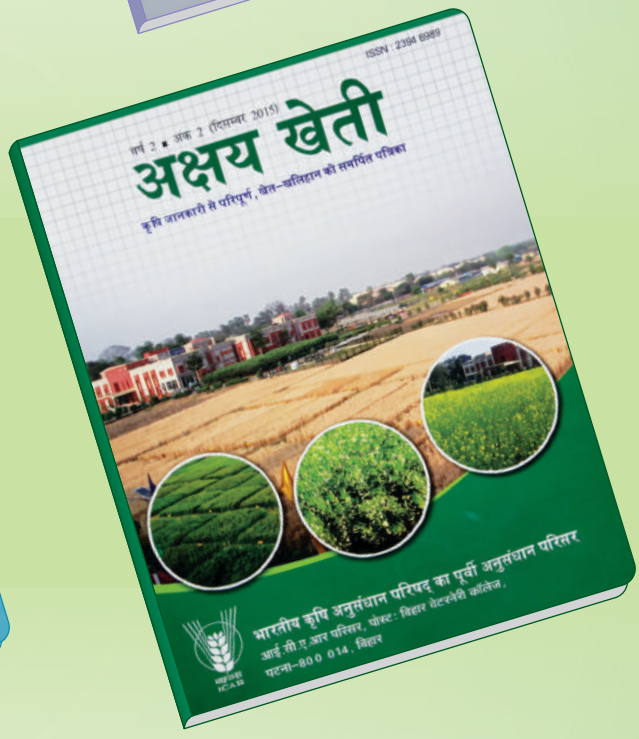
ISSN : 2394 6989
वर्ष 2 ▪ अंक 2 (दिसम्बर 2015)
अक्षय खेती
कृषि जानकारी से परिपूर्ण, खेत-खलिहान को समर्पित पत्रिका
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर
आई.सी.ए.आर परिसर, पोस्ट: बिहार वेटरनेरी कॉलेज,
पटना–800 014, बिहार

ISSN: 2394 6989
अक्षय खेती
कृषि जानकारी से परिपूर्ण, खेत-खलिहान को समर्पित पत्रिका
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर
आई.सी.ए.आर. परिसर, पोस्ट: बिहार वेटरनरी कॉलेज
पटना–800014, बिहार

ISSN :2394 6989
वर्ष 4 ▪ अंक 1 (2020-21)
अक्षय खेती
कृषि जानकारी से परिपूर्ण, खेत-खलिहान को समर्पित पत्रिका
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर
आई.सी.ए.आर. परिसर, पोस्ट: बिहार वेटनरी कॉलेज,
पटना – 800 014, बिहार

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर
पोस्ट ऑफिस : बिहार वेटनरी कॉलेज, पटना – 800 014 (बिहार)